द पावर ऑफ हॅबिट

हम जो भी करते हैं वह क्यों करते हैं और उसे कैसे बदलें

THE POWER OF HABIT

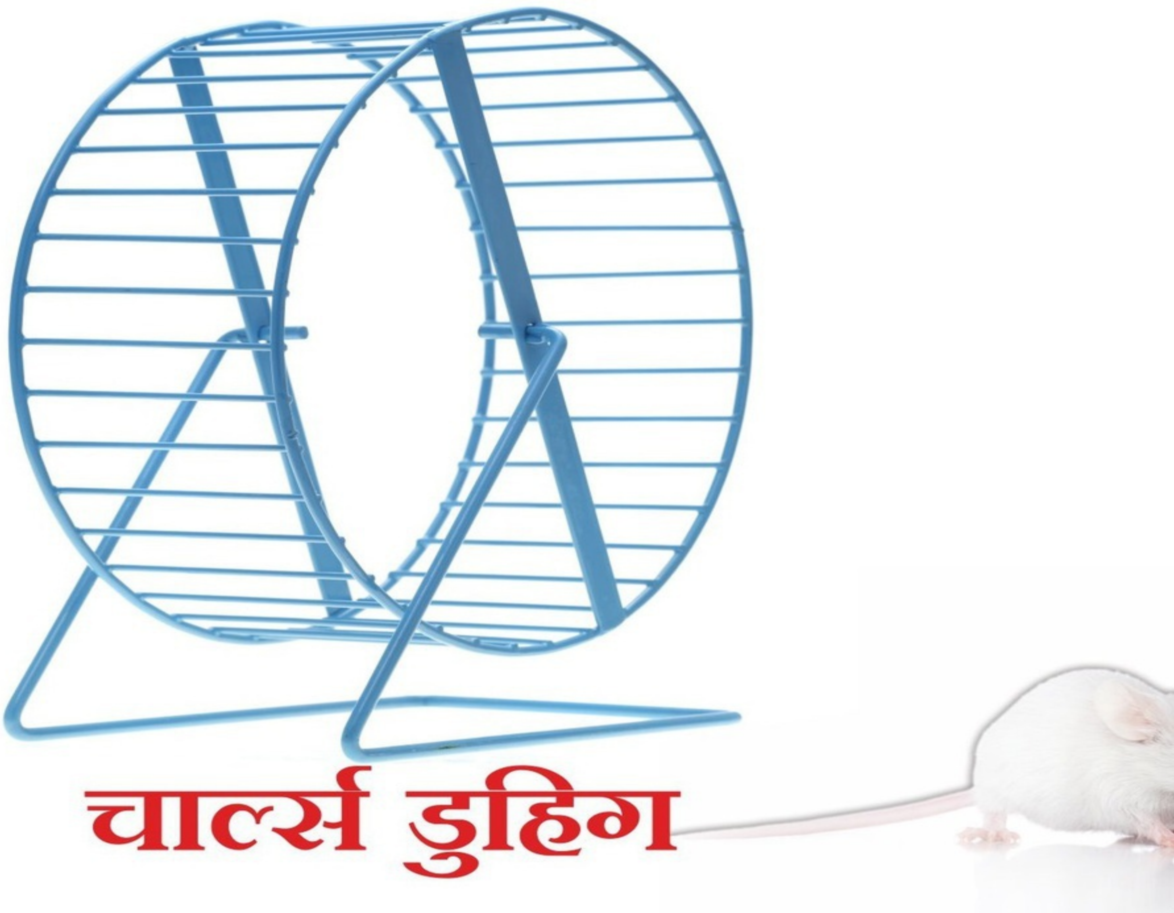

चार्ल्स डुहिग

द पावर ऑफ हॅबिट

हम जो भी करते हैं वह क्यों करते हैं और उसे कैसे बदलें

THE POWER OF HABIT

चार्ल्स डुहिग

द पावर ऑफ
हॅबिट

द पावर ऑफ
हॅबिट

हम जो भी करते हैं वह क्यों करते हैं और उसे कैसे बदलें

चार्ल्स डुहिग

द पावर ऑफ हॅबिट

हम जो भी करते हैं वह क्यों करते हैं और उसे कैसे बदलें

The Power of Habit इस अंग्रेजी पुस्तक का हिंदी अनुवाद

The Power of Habit is a work of nonfiction. Nonetheless, some names and personal characteristics of individuals or events have been changed in order to disguise identities. Any resulting resemblance to persons living or dead is entirely coincidental and unintentional.

THE POWER OF HABIT

Copyright © 2011, Charles Duhigg

All rights reserved

Hindi Translation Copyright © 2019 by WOW Publishings Pvt. Ltd.

All rights reserved.

सर्वाधिकार सुरक्षित

वॉव पब्लिशिंग्ज् प्रा. लि. द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक इस शर्त पर विक्रय की जा रही है कि प्रकाशक की लिखित पूर्वानुमति के बिना इसे व्यावसायिक अथवा अन्य किसी भी रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता। इसे पुनः प्रकाशित कर बेचा या किराए पर नहीं दिया जा सकता तथा जिल्दबंद या खुले किसी भी अन्य रूप में पाठकों के मध्य इसका परिचालन नहीं किया जा सकता। ये सभी शर्तें पुस्तक के खरीददार पर भी लागू होंगी। इस संदर्भ में सभी प्रकाशनाधिकार सुरक्षित हैं। इस पुस्तक का आंशिक रूप में पुनः प्रकाशन या पुनः प्रकाशनार्थ अपने रिकॉर्ड में सुरक्षित रखने, इसे पुनः प्रस्तुत करने की प्रति अपनाने, इसका अनूदित रूप तैयार करने अथवा इलेक्ट्रॉनिक, मैकेनिकल, फोटोकॉपी और रिकॉर्डिंग आदि किसी भी पद्धति से इसका उपयोग करने हेतु समस्त प्रकाशनाधिकार रखनेवाले अधिकारी तथा पुस्तक के प्रकाशक की पूर्वानुमति लेना

अनिवार्य है।

प्रकाशक : वॉव पब्लिशिंग्ज् प्रा. लि. पुणे

मुद्रक : विक्रम प्रिंटर्स प्रा. लि. पुणे

प्रथम आवृत्ती : जनवरी 2019

पुर्नमुद्रण : अप्रैल 2019

अनुवादक : अभिषेक शुक्ला

The Power of Habit

by Charles Duhigg

ऑलिवर, जॉन हैरी,

जॉन और डोरिस

और

हमेशा हमारी लिज़ के लिए समर्पित

विषय सूची

प्रस्तावना: आदतों के उपचार

भाग 1: लोगों की व्यक्तिगत आदतें

1. आदतों का फंदा - आदतें कैसे विकसित होती हैं

2. मस्तिष्क की इच्छा - नई आदतें कैसे विकसित करें

3. आदत परिवर्तन का सुनहरा नियम - परिवर्तन क्यों होता है?

भाग 2: सफलता की ऊँचाईयों पर पहुँचे संगठनों की आदतें

4. मूल आदतें या पॉल ओ'नेल की यशोगाथा - कौनसी आदतें सर्वाधिक महत्त्व रखती हैं

5. स्टारबक्स और सफलता की आदत - जब इच्छा-शक्ति आदत बन जाए

6. संकट की शक्ति - लीडर्स कैसे दुर्घटनाओं और डिज़ाइन के ज़रिए आदतें निर्माण करते हैं

7. आप क्या चाहते हैं, यह आपसे पहले टारगेट कॉरपोरेशन को कैसे पता चल जाता है - जब कंपनियाँ आदतों का पुर्वानुमान लगाती हैं (और चालाकी से उनमें हेरफेर करती हैं)

भाग 3: समाज की आदतें

8. सैडलबैक चर्च और मॉन्टगोमेरी बसों का बहिष्कार - आंदोलन कैसे शुरू होते हैं

9. मुक्त इच्छा का तंत्रिका विज्ञान - क्या अपनी आदतों के लिए हम खुद जिम्मेदार हैं?

आदतों के उपचार

प्रस्तावना

वह वैज्ञानिकों की पसंदीदा प्रतिभागी थी।

चौंतीस वर्षीय लीसा एलन की फाइल के अनुसार, उसने सोलह साल की उम्र में ही शराब और धूम्रपान करना शुरू कर दिया था और उसके जीवन का ज़्यादातर हिस्सा मोटापे से जूझते हुए बीता था। जब वह 25 साल की थी, तो उसके जीवन में एक ऐसा दौर आया, जब उस पर दस हज़ार डॉलर्स का कर्ज हो गया था। कर्ज वसूलनेवाली एजेंसियाँ हाथ धोकर उसके पीछे पड़ी हुई थीं। अपने जीवन में आज तक लीसा कभी किसी नौकरी में लंबे समय तक नहीं टिकी थी। उसके बायोडाटा के अनुसार उसका सबसे लंबा कार्यकाल एक साल से भी कम का था।

पर आज शोधकर्ताओं के सामने जो महिला बैठी थी, वह एक दुबले-पतले पर तंदुरुस्त शरीरवाली महिला थी, जिसके पैर किसी धावक जितने मज़बूत थे। चार्ट में उसकी जो तस्वीरें लगी थीं, उनकी तुलना में आज वह दस साल छोटी नज़र आ रही थी और उसे देखकर ऐसा लग रहा था कि वह उस कमरे में बैठे सभी लोगों को व्यायाम के मामले में आसानी से पछाड़ सकती है। उसकी फाइल में जोड़ी गई सबसे ताजा रिपोर्ट के अनुसार अब लीसा पर कोई कर्ज नहीं था, वह शराब पीना छोड़ चुकी थी और पिछले 39 महीनों से सफलतापूर्वक एक ग्राफिक डिजाइन कंपनी में काम कर रही थी।

‘आपने आखिरी बार सिगरेट कब पी थी?’ सवालों की एक लंबी सूची सामने रखकर एक डॉक्टर ने लीसा से पूछा। अमेरिका के मैरीलैंड के बेथस्डा में स्थित इस प्रयोगशाला में आकर लीसा हर बार इन सवालों के जवाब देती थी।

लीसा ने डॉक्टर के सवाल के जवाब में कहा, ‘लगभग चार साल पहले। तब से मैं अपना 60 पाउंड वज़न घटा चुकी हूँ और अब तो मैं मैराथन में भी दौड़ती हूँ।’ उसने मास्टर्स की डिग्री लेने के लिए पढ़ाई शुरू कर दी थी और साथ ही अपने लिए एक घर भी खरीद लिया था। यह लीसा के जीवन का सबसे रोमांचक समय था।

उस कमरे में बैठे वैज्ञानिकों में न्यूरोलॉजिस्ट (तंत्रिका विज्ञानी), साइकोलॉजिस्ट (मनोवैज्ञानिक) जेनेटिसिस्ट (अनुवांशिकी विज्ञानी) और सोशियोलॉजिस्ट (समाज विज्ञानी) शामिल थे। नेशनल इंस्टिटचूट ऑफ हेल्थ से मिलनेवाली राशि की मदद से ये वैज्ञानिक पिछले तीन सालों से लीसा और उसके जैसे दो दर्जन से अधिक लोगों से सवाल-जवाब कर रहे हैं। इसमें धूम्रपान की लत से ग्रस्त रह चुके लोगों के साथ-साथ अत्याधिक खाने, शराब और अत्याधिक खरीदारी जैसी अन्य लतों से ग्रस्त लोग भी

शामिल थे। इन सभी प्रतिभागियों में एक बात समान थी कि उन्होंने अपेक्षाकृत बहुत ही कम समय में अपने जीवन को एक नई दिशा दी थी। शोधकर्ता उनकी इस सफलता का कारण जानना चाहते थे। इसलिए उन्होंने इन लोगों के वाइटल साइन्स (जीवनसूचक लक्षणों) का मूल्यांकन किया, उनकी दिनचर्या जानने के लिए उनके घरों में कैमरे लगाए और उनके डीएनए के कुछ भागों को एक क्रम में रख दिया। फिर उन्होंने प्रयोग के दौरान प्रतिभागियों को स्वादिष्ट भोजन और सिगरेट के धुएँ की तेज महक जैसे लालच दिए व ठीक उसी समय तकनीकी सहायता से उनके सिर के अंदर झाँका और मस्तिष्क में संचालित रक्त और विद्युत आवेगों पर गौर किया। शोधकर्ता यह समझना चाहते थे कि न्यूरोलॉजिकल लेवल यानी तंत्रिक स्तर पर ये आदतें कैसे काम करती हैं और इन्हें परिवर्तित करने के लिए क्या करना होगा।

सवालों की एक सूची सामने रखते हुए एक डॉक्टर ने लीसा से पूछा, ‘तुमने यह कहानी कई बार दोहराई है, लेकिन मेरे कई सहकर्मियों ने तुम्हारी कहानी तुम्हारे मुँह से नहीं सुनी है। अगर तुम्हें एतराज़ न हो, तो क्या तुम हमें बता सकती हो कि तुमने धूम्रपान की आदत कैसे छोड़ी?’

‘इसकी शुरुआत मिस्र की राजधानी, कायरो में हुई थी,’ लीसा ने बताया। उसके अनुसार वहाँ छुट्टियाँ मनाने का निर्णय जल्दबाजी में लिया गया था। कुछ महीनों पहले ही एक दिन लीसा का पति जब काम से घर लौटा तो उसने लीसा को बताया कि वह किसी और से प्रेम करता है और इसलिए वह लीसा को तलाक दे रहा है। लीसा को अपने पति से मिले धोखे और तलाक को स्वीकार करने में काफी समय लग गया। पहले कुछ दिनों तक वह बहुत दुःखी रही। फिर वह पति की जासूसी से लेकर उसकी प्रेमिका का पूरे शहर में पीछा करने और आधी रात को उसे फोन करके बिना कुछ बोले फोन काट देने जैसी हरकतें करती रही। फिर एक शाम नशे में धुत होकर वह अपने पति की प्रेमिका के घर पहुँच गई और उसका दरवाजा पीटते हुए ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर उसका घर जलाने की धमकी देने लगी।

‘वह मेरे जीवन का सबसे बुरा समय था,’ लीसा ने बताया। ‘मैं हमेशा से मिस्र के पिरामिड देखना चाहती थी, लेकिन तब तक मेरे क्रेडिट कार्डस् की अधिकतम सीमा समाप्त हो चुकी थी...।’

मिस्र की राजधानी कायरो में पहले दिन सुबह-सुबह लीसा की नींद पास की एक मस्ज़िद से आती अजान की आवाज़ से खुली। उसके होटल के कमरे में अंधेरा था। हवाई जहाज की यात्रा से थकी हुई लीसा अंधेरे में ही सिगरेट ढूँढ़ने लगी।

उस समय वह मानसिक रूप से इतनी अस्थिर थी कि जब उसे प्लास्टिक जलने की बदबू आई, तब जाकर उसे एहसास हुआ कि वह सिगरेट की जगह पेन जला रही है। पिछले चार महीनों में लीसा कई बार रोई थी। वह मन बहलाने के लिए दिन-रात खाती थी और ठीक से सो नहीं पाती थी। इस दौरान वह बहुत शर्मिंदा, असहाय, उदास और

क्रोधित महसूस करती थी। ये सब सोचकर बिस्तर पर लेटे-लेटे ही उसे रोना आ गया। वह बुरी तरह से टूट चुकी थी। लीसा कहती है, 'मुझ पर उदासी की लहर सी छा गई थी। जीवन में मैंने जो कुछ भी चाहा, वह सब टूटकर बिखर चुका था। मेरी हालत इतनी खराब थी कि मैं ढंग से एक सिगरेट तक नहीं जला पा रही थी।'

लीसा आगे बताती है, 'फिर मैं अपने पूर्व पति के बारे में सोचने लगी। मुझे लगा कि वापस जाकर अपने लिए नई नौकरी ढूँढ़ना कितना कठिन होगा और मुझे जो काम मिलेगा, वह मुझे कितना नापसंद होगा। मैं हर वक्त खुद को अस्वस्थ महसूस करती हूँ। इन्हीं सब विचारों में गुम मैं बिस्तर से उठी और अचानक बिस्तर के पास की मेज़ पर रखे पानी के जग को मेरा हाथ लगा और वह जमीन पर गिरकर टूट गया; यह देखकर मैं और भी ज़्यादा रोने लगी। मुझे बहुत बेचैनी और निराशा महसूस होने लगी। मुझे लगा कि मुझे अपनी जिंदगी को बदलना होगा या कम से कम अपनी एक ऐसी चीज़ को तो बदलना ही होगा, जो मेरे नियंत्रण में हो।'

लीसा नहा-धोकर उस होटल से बाहर निकली। कायरो की गड्ढों से भरी कच्ची सड़कों पर चलते हुए लीसा ने एक टैक्सी पकड़ी, जो कुछ ही देर में एक पथरीली सड़क पर पहुँच गई। स्फिंक्स, गीज़ा के पिरामिड और उस विशाल, अंतहीन रेगिस्तान से गुज़रती लीसा को पलभर के लिए खुद पर ही तरस आ गया। उसे महसूस हुआ कि उसे जीवन में एक निश्चित लक्ष्य बनाने की ज़रूरत है। कोई ऐसा लक्ष्य जिसे हासिल करने के लिए उसे सचमुच काम करना पड़े।

उस टैक्सी के अंदर बैठे-बैठे ही लीसा ने निर्णय लिया कि वह एक बार फिर मिस्र वापस आएगी और इस रेगिस्तान की ट्रेकिंग (पैदल यात्रा) करेगी।

लीसा जानती थी कि यह एक सनक भरा विचार था। उसका वजन बहुत ज़्यादा और शरीर भारी-भरकम था। उसका बैंक खाता भी खाली हो चुका था। उसे तो यह भी नहीं पता था कि जो रेगिस्तान उसकी आँखों के सामने है, उसका नाम क्या है और उसकी पैदल यात्रा संभव भी है या नहीं। हालाँकि लीसा के लिए इनमें से कोई भी बात महत्वपूर्ण नहीं थी। क्योंकि उसे तो बस कुछ ऐसा चाहिए था, जिस पर वह अपना ध्यान केंद्रित कर सके। लीसा ने खुद को इसकी तैयारी करने के लिए एक वर्ष का समय दिया। लीसा जानती थी कि इस कठिन अभियान को पूरा करने के लिए उसे त्याग करना होगा।

सबसे महत्वपूर्ण बात! कि उसे धूम्रपान छोड़ना होगा।

इस घटना के ग्यारह महीनों बाद लीसा उस रेगिस्तान की यात्रा पर थी। हालाँकि यह यात्रा छह लोगों के साथ एक एअर कंडिशन गाड़ी में की गई थी और हाँ, उनकी गाड़ी में इतना सामान था, जैसे पानी, खाना, टेंट, नक्शे, जीपीएस और टू-वे रेडियो वगैरह कि उसमें सिगरेट का एक डिब्बा रख देने से कोई फर्क नहीं पड़नेवाला था।

लेकिन टैक्सी में बैठी लीसा को यह सब नहीं पता था। प्रयोगशाला में वैज्ञानिकों के

लिए भी लीसा की इस यात्रा की विस्तृत जानकारी महत्वपूर्ण नहीं थी। क्योंकि उनकी दिलचस्पी तो बस लीसा की आदतों में थी और अब धीरे-धीरे वे समझने लगे थे कि उस दिन कायरो में धूम्रपान छोड़ने का निर्णय लेकर लीसा अपने स्वभाव में ऐसा बदलाव लाने में सफल हो गई, जिससे उसके जीवन में परिवर्तनों का एक सिलसिला शुरू हो गया। जिनका सकारात्मक प्रभाव उसके जीवन के हर पहलू में स्पष्ट नज़र आने लगा। अगले छह महीनों में लीसा की धूम्रपान की आदत का स्थान रोज सुबह की जॉगिंग ने लिया। जिससे उसकी खाने-पीने, नींद और काम से जुड़ी आदतें भी बदल गईं। अब तो लीसा पैसों की बचत भी करने लगी थी। वह हर रोज अपनी एक कार्य-योजना भी बनाती थी और साथ ही अपना भविष्य सुनियोजित करने की योजनाएँ भी बनाने लगी थी। इसके बाद लीसा ने पहले हाफ-मैराथन में हिस्सा लिया और फिर वह फुल-मैराथन में भी दौड़ने लगी। उसने अपनी उच्च शिक्षा पूरी करके अपने लिए एक घर भी खरीद लिया और फिर एक अच्छे लड़के से उसकी सगाई भी हो गई। आखिरकार उसे वैज्ञानिकों के अभ्यास के लिए चुना गया। शोधकर्ताओं ने लीसा के दिमाग की छवियों का परीक्षण किया, तो उन्हें कुछ उल्लेखनीय बातें दिखाई दी : उसके न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका संबंधी) पैटर्न्स यानी उसकी पुरानी आदतों की जगह कुछ नए किस्म के पैटर्न्स यानी नई आदतों ने ले ली थी। वे अब भी उसकी पुरानी आदतों की न्यूरल एक्टिविटीज (तंत्रिका संबंधी गतिविधियाँ) देख सकते थे। पर अब उसकी पुरानी इंपल्सेज (मनोवेगों) पर नए अर्जेस (आवेग) हावी थे। जैसे-जैसे लीसा की आदतें बदलीं, उसका मस्तिष्क भी बदल गया।

वैज्ञानिकों का मानना था कि लीसा में आए इस बदलाव का कारण कायरो की वह यात्रा नहीं थी और न ही इसका संबंध लीसा के तलाक या रेगिस्तान की यात्रा से था। लीसा ने सबसे पहले धूम्रपान की आदत बदलने पर ध्यान केंद्रित किया और यही उसके अंदर आए बदलाव का मुख्य कारण था। इस अभ्यास में हिस्सा लेनेवाले अन्य प्रतिभागी भी ठीक इसी प्रकार की प्रक्रिया से गुज़रे थे। अपने सिर्फ एक पैटर्न - जिसे 'प्रधान आदत' कहा जाता है - पर ध्यान केंद्रित करके लीसा अपने जीवन के अन्य रूटीन्स यानी तयशुदा आदतों को बदलना भी सीख गई थी।

ऐसा नहीं है कि ऐसे बदलाव केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही संभव हैं। अगर कोई संगठन भी अपनी आदतें बदलने पर ध्यान केंद्रित करता है, तो उसमें बदलाव संभव है। प्रॉक्टर एंड गैंबल, स्टारबक्स, एल्कोआ और टारगेट जैसी कंपनियों ने इस अंतर्दृष्टि को अच्छी तरह समझा है। इसीलिए अब ये कंपनियाँ अपने ग्राहकों व कर्मचारियों की हर तरह की आदतों को प्रभावित करने में सक्षम हो गई हैं, जैसे काम कैसे पूरा हो, कर्मचारियों से संवाद कैसे हो और ग्राहक को पता चले बिना उनकी खरीदारी को प्रभावित कैसे किया जाए वगैरह।

'मैं आपको आपका हाल ही में लिया गया स्कैन दिखाना चाहता हूँ,' लीसा के परीक्षण के अंत में एक शोधकर्ता ने उससे कहा। उसने कंप्यूटर स्क्रीन पर लीसा को उसके मस्तिष्क की छवियाँ दिखाईं और मस्तिष्क के मध्यवाले हिस्से की ओर इशारा करते हुए बताया, 'यह आपके दिमाग का वह हिस्सा है, जो भूख और तृष्णा से संबंधित है और अब

भी सक्रिय है। आपका मस्तिष्क अब भी ऐसी इच्छाएँ पैदा करता रहता है, जो आपको बार-बार अत्यधिक खाने के लिए प्रेरित करते हैं।'

इसके बाद उसने लीसा के माथे के करीब स्थित एक हिस्से की ओर इशारा करते हुए कहा, 'लेकिन इस स्थान पर नई गतिविधियाँ नज़र आ रही हैं। हमारा मानना है कि यहाँ व्यवहार-नियंत्रण और आत्म-अनुशासन की आदतों का निर्माण होता है। जबसे आप इस प्रयोगशाला में आने लगी हैं, तब से आपकी ये गतिविधियाँ और अधिक स्पष्ट हो गई हैं।'

लीसा वैज्ञानिकों की प्रिय प्रतिभागी थी क्योंकि उसके मस्तिष्क की छवियाँ यह समझने में बहुत उपयोगी थीं कि इंसानी व्यवहार से जुड़े पैटर्न्स या आदतों का निर्माण मस्तिष्क के किस हिस्से में होता है। डॉक्टर ने उसे बताया, 'इस तरह आप यह समझने में हमारी मदद कर रही हैं कि कोई एक निर्णय इंसान का स्वचालित व्यवहार कैसे बनता है।'

उस कमरे में बैठे हर व्यक्ति को यह महसूस होने लगा था कि वे एक बहुत ही महत्वपूर्ण खोज की कगार पर है खड़े हैं; और वे सही थे।

***

आज सुबह उठकर आपने सबसे पहले क्या किया? क्या आप सबसे पहले नहाने गए या फिर पहले अपने ई-मेल देखे या फिर रसोईघर में घुसकर कुछ खाने को ले आए? आपने अपने दाँत नहाने से पहले साफ किए या बाद में। जूते पहनते समय आपने दांया जूता पहले पहना या बांया? घर से निकलते समय अपने बच्चों से आपने क्या कहा? आपने ऑफिस जाने के लिए कौन सा रास्ता चुना? ऑफिस में अपने केबिन में पहुँचकर आपने सबसे पहले अपने ई-मेल देखे, सहकर्मी से बात की या सीधे दिनभर के कार्यों की सूची बनाने में लग गए? दोपहर के खाने में आपने सलाद खाया या हैम्बर्गर? शाम को वापस घर पहुँचने के बाद आप अपने स्पोर्ट्स शूज पहनकर दौड़ने निकल गए या टी.वी. के सामने बैठकर खाना खाने लगे?

1892 में विलियम जेम्स् ने लिखा था कि 'हमारा संपूर्ण जीवन केवल आदतों का परिणाम है।' दिनभर में हम जो भी चुनाव करते हैं, उनमें से ज़्यादातर सोच-समझकर लिए गए निर्णय लग सकते हैं, पर असल में ऐसा नहीं है। वे बस हमारी आदतें हैं। हम क्या खाते-पीते हैं... रात को सोने से पहले अपने बच्चों से क्या कहते हैं... पैसे खर्च करते हैं या बचाते हैं... कितना व्यायाम करते हैं... और अपने विचारों व काम से जुड़ी तयशुदा आदतों को कैसे नियोजित करते हैं... ये सब शुरुआत में छोटी-मोटी आदतें लग सकती हैं लेकिन समय के साथ इन छोटी आदतों का हमारे स्वास्थ्य, उत्पादकता, आर्थिक स्थिरता और आनंद पर गहरा प्रभाव पड़ता है। 2006 में ड्यूक विश्वविद्यालय के एक शोधकर्ता द्वारा प्रकाशित शोध में बताया गया कि लोग दिनभर में जितने कार्य करते हैं, उनमें से 40 प्रतिशत कार्य उनके निर्णयों द्वारा नहीं बल्कि उनकी रोज़मर्रा की आदतों के कारण होते

हैं।

अरस्तू से लेकर ओपेरा विन्फ्रे जैसे अनेकों लोगों की तरह ही विलियम जेम्स ने भी अपने जीवन का लंबा समय यह समझने में लगा दिया कि आदतों का अस्तित्व क्यों होता है। हालाँकि पिछले दो दशकों से ही वैज्ञानिकों और विक्रेताओं को यह समझ में आना शुरू हुआ है कि आदतें कैसे काम करती हैं और सबसे महत्वपूर्ण बात कि आदतों को कैसे बदला जा सकता है।

इस किताब को तीन भागों में बाँटा गया है। पहले भाग में आप जानेंगे कि लोगों के व्यक्तिगत जीवन में आदतें कैसे उभरती हैं। इसमें आदतों के निर्माण की न्यूरोलॉजी (तंत्रिका विज्ञान) के बारे में बताया गया है और साथ ही यह भी समझाया गया है कि पुरानी आदतें बदलकर, नई आदतें विकसित करने की प्रणाली क्या है। उदाहरण के लिए कैसे विज्ञापन क्षेत्र में सक्रिय एक व्यक्ति ने, टूथब्रश जैसी मामूली चीज़ को बेचने के लिए आदतों का इस्तेमाल करके दाँतों की सफाई को राष्ट्रीय जुनून में तब्दील कर दिया। कैसे प्रॉक्टर एंड गैंबल कंपनी ने ग्राहकों की आदतों का फायदा उठाकर, केवल फेब्रीज़ नामक एक स्प्रे से ही करोड़ों डॉलर कमा लिए। इसी तरह एल्कोहल एनॉनमस व्यसन की मूल आदत पर प्रहार करके कैसे शराब के लती लोगों का जीवन सुधारता है और कैसे फुटबॉल कोच टोनी डन्गी ने मैदान में उपयोगी सूक्ष्म इशारों को खिलाड़ियों की स्वचालित प्रतिक्रियाओं से जोड़कर नेशनल फुटबॉल लीग की सबसे कमज़ोर टीम का भाग्य पलट दिया।

दूसरे भाग में, सफल कंपनियों और संगठनों की आदतों के बारे में बताया गया है। इसमें विस्तार से बताया गया है कि कैसे ट्रेजरी सेक्रेटरी बनने से पहले पॉल ओ'नेल ने संगठन की मूल आदत पर ध्यान केंद्रित कर घाटे में जा रही एल्युमिनिअम कंपनी का न केवल पुनर्निर्माण किया बल्कि उसे डॉव जोन्स इंडस्ट्रियल एवरेज की सूची में सबसे ऊँचे स्थान पर भी पहुँचा दिया। इसी भाग में आप यह भी पढ़ेंगे कि कैसे स्टॉरबक्स ने हाईस्कूल में पढ़ाई छोड़ चुके एक व्यक्ति को इच्छा शक्ति मज़बूत करने की आदतें सिखाकर एक बेहतरीन मैनेजर बना दिया। इसी भाग में यह भी बताया गया है कि कैसे एक अस्पताल की संगठनात्मक आदतें खराब होने के कारण एक प्रतिभावान सर्जन भी मरीजों के ऑपरेशन में बड़ी गलतियाँ कर सकता है।

तीसरे भाग में समाज की आदतों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें बताया गया है कि अमेरिका के अल्बामा राज्य के मॉन्टगोमेरी के समाज की अंतर्निहित आदतों में बदलाव लाकर कैसे मार्टिन लूथर किंग जूनियर और नागरिक आंदोलन को सफलता हासिल हुई और इसी पद्धति का उपयोग करके एक युवा पादरी रिक वॉरेन ने कैसे सैडलबैक घाटी में देश का सबसे बड़ा चर्च बना दिया। अंत में, कुछ पेचीदा नैतिक प्रश्नों पर भी चर्चा हुई, जैसे कि अगर ब्रिटेन का कोई हत्यारा ठोस तर्क देकर यह विश्वास दिला दे कि उसकी आदतों के कारण ही उससे हत्या हुई है, तो क्या उसे रिहा कर देना चाहिए?

हर अध्याय इसी विषय के इर्द-गिर्द घूमता है कि अगर हम यह जान लें कि आदतें कैसे काम करती हैं, तो आदतों को बदला जा सकता है।

यह पुस्तक सौ से भी अधिक शैक्षिक अध्ययनों, तीन सौ से भी अधिक वैज्ञानिकों और अधिकारियों के इंटरव्यू तथा दर्जनों कंपनियों पर किए गए शोधों पर आधारित है। (स्रोतों की सूची देखने के लिए www.thepowerofhabit.com नामक वेबसाइट पर लॉग-इन करें।) यह पुस्तक आदतों की तकनीकी परिभाषा पर ध्यान केंद्रित करती है : आदतें वे चुनाव हैं, जो हम सब किसी एक समय पर सोच-समझकर करते हैं और फिर लगभग हर रोज़ बिना सोचे-समझे उन चुनावों को दोहराते रहते हैं। हमने किसी एक बिंदु पर चेतन मन से यह निर्णय लिया था कि हम कितना खाएँगे, ऑफिस में किन बातों पर ध्यान देंगे, कितनी शराब पीएँगे या कितनी बार जॉगिंग के लिए जाएँगे। अब हमें यह सब करने के लिए सोच-विचार नहीं करना पड़ता। अब यह सब हमारे स्वचालित व्यवहार का हिस्सा बन गया है। यह हमारी न्यूरोलॉजी (तंत्रिका प्रणाली) का स्वाभाविक परिणाम है। इस प्रणाली के काम करने के तरीके को समझकर हम अपनी आदतों को अपनी ज़रूरत के हिसाब से पुनर्निर्मित कर सकते हैं।

***

मैं करीब आठ साल पहले इराक के बगदाद में एक समाचार पत्र के लिए बतौर रिपोर्टर काम करता था। आदतों के विज्ञान के प्रति मेरी दिलचस्पी यहीं बढ़ी। इराक में अमेरिकी सेना की गतिविधियों को करीब से देखकर मुझे एहसास हुआ कि आदतों के निर्माण का यह इतिहास का सबसे बड़ा प्रयोग है। प्रशिक्षण के दौरान सैनिकों के अंदर ऐसी कई आदतें विकसित की जाती हैं, जिन्हें बड़ी बारीकी के साथ सोच-समझकर डिजाइन किया गया होता है, जैसे युद्ध के बीच कैसे सोचना है, आपस में कैसे बात करनी है और दुश्मन पर कैसे गोलीबारी करनी है। युद्ध के मैदान में हर आदेश पर सैनिकों की प्रतिक्रिया इन्हीं स्वभावों का परिणाम होती है, जिन्हें स्वचालित आदत बनने तक निरंतर दोहराया जाता है। सेना का पूरा संगठन छावनी बनाने, कूटनीतिक प्राथमिकताएँ तय करने और हमले की स्थिति में अपनी प्रतिक्रिया तय करने जैसी क्रियाओं पर ही निर्भर होता है। इराक-युद्ध के शुरुआती दिनों में विद्रोह लगातार फैलता जा रहा था और मृतकों की संख्या भी तेज़ी से बढ़ रही थी। उस समय सेना के अफसर ऐसी आदतों की पहचान करने की कोशिश में लगे थे, जो सैनिकों और इराकियों को इस तरह प्रभावित कर सकें, जिनसे शांति निर्माण हो सके।

मुझे इराक आए दो ही महीने हुए थे, जब मैंने बगदाद से नब्बे मील दूर दक्षिण में बसे एक छोटे से शहर कुफा की एक खबर सुनी। वहाँ एक सेना अधिकारी आदतों में सुधार लाने के लिए एक कार्यक्रम चला रहा था। वह अधिकारी एक मेज़र था, जिसने वहाँ हाल ही में हुए दंगों के वीडिओज देखकर एक पैटर्न का पता लगाया था कि आमतौर पर हिंसा की शुरुआत इराकियों की भीड़ द्वारा प्लाजा या ऐसी ही अन्य किसी खुली जगह पर होती है। सबसे पहले कुछ ही घंटों में इराकियों के कुछ दल वहाँ पहुँचते थे, फिर खाद्य-पदार्थ

विक्रेताओं का आगमन होता था और दर्शकों का भी बड़ा समूह इकट्ठा हो जाता था। इसके बाद इस भीड़ की आड़ से कोई पत्थर या बोतल फेंकता और फिर हर कोई बेकाबू हो जाता।

मेज़र ने कुफा के नगरपालिका अध्यक्ष से मिलकर एक अजीब निवेदन किया कि प्लाजा में खाद्य-पदार्थ विक्रेताओं के आने पर पाबंदी लगा दी जाए। नगरपालिका अध्यक्ष ने मेज़र का यह निवेदन स्वीकार कर लिया। कुछ सप्ताह बाद कुफा की सबसे बड़ी मस्जिद, मस्जिद-अल-कुफा के आसपास थोड़ी भीड़ जमा हो गई और दिनभर में यह भीड़ काफी बढ़ गई। फिर इसी भीड़ में शामिल कुछ लोग भड़काऊ नारे लगाने लगे। यह देखकर इराकी पुलिस को स्थिति बिगड़ने की आशंका हुई और उन्होंने अमेरिकी सैन्य छावनी में फोन कर सैनिकों को तैयार रहने के लिए कह दिया। पर शाम होते-होते भीड़ व्याकुल होने लगी क्योंकि लोगों को भूख लगने लगी थी और वे कबाब विक्रेताओं को ढूँढने रहे थे, लेकिन वहाँ एक भी कबाब विक्रेता नहीं था। थोड़ी ही देर में, भीड़ में दर्शक के तौर पर आए लोग एक-एक करके जाने लगे और जल्द ही उनमें से ज़्यादातर वहाँ से चले गए। यह देखकर भड़काऊ नारे लगानेवालों का मनोबल कम हो गया। शाम के आठ बजे तक सब अपने-अपने घर जा चुके थे।

जब मैं कुफा की छावनी में पहुँचा, तो मेरी मुलाकात मेज़र से हुई। उन्होंने मुझे एक बात बताई कि 'आमतौर पर जब भी हम एक बड़ी भीड़ देखते हैं, तो लोगों की व्यक्तिगत आदतों पर विचार नहीं करते। जबकि वे बड़ी महत्वपूर्ण होती हैं।' मेज़र का संपूर्ण कॅरियर आदत के निर्माण का मनोविज्ञान समझने में ही गुज़रा था।

उन्हें प्रशिक्षण शिविर में कई उपयोगी आदतें सिखाई गई थीं, जैसे बंदूक में गोलियाँ कैसे भरनी हैं, युद्ध क्षेत्र में पर्याप्त नींद कैसे लेनी है, युद्ध के कोलाहल में भी अपने काम पर एकाग्र कैसे रहना है, बुरी तरह थके-माँदे होने पर सही निर्णय कैसे लेने हैं वगैरह। इसके साथ ही उन्होंने ऐसी कक्षाओं में भी हिस्सा लिया था, जहाँ उन्हें पैसे बचाने, नियमित व्यायाम करने, अपने बंकर में साथ सोनेवाले साथियों से बातें करने के बारे में सिखाया गया था। जैसे-जैसे उनका चुनाव ऊँचे पदों के लिए होता गया, उन्हें संगठनात्मक आदतों का महत्त्व भी समझ में आने लगा कि कैसे निचले स्तर पर काम कर रहे अधिकारी निर्णय लेने के लिए हर वक्त उच्च अधिकारियों पर निर्भर न रहें और कैसे सही दिनचर्या उन लोगों के साथ काम करना भी आसान बना देती है, जिनकी आप शक्ल भी नहीं देखना चाहते। अब वे एक युद्धग्रस्त देश को फिर से खड़ा करनेवाले अधिकारी के तौर पर देख सकते थे कि भीड़ और समूह कैसे समान नियमों और आदतों के गुलाम होते हैं। वे बताते हैं, 'हर समूह उन हज़ारों लोगों की आदतों का ही एक संग्रह होता है, जो उसका हिस्सा हैं। वे किस बात से प्रभावित हैं, इसी से तय होता है कि वे हिंसा करेंगे या शांति बनाए रखेंगे।' मेज़र ने खाद्य-पदार्थ विक्रेताओं पर पाबंदी लगाने के अलावा और भी दर्ज़नों ऐसे प्रयोग किए थे, जिससे वहाँ के स्थानीय लोगों की आदतों को भी प्रभावित किया जा सके। मेज़र के आगमन के बाद वहाँ दोबारा दंगे नहीं हुए।

मेज़र बताते हैं कि 'सेना में मैंने जो सबसे महत्वपूर्ण बात सीखी है, वह है आदतों को समझना। इससे दुनिया को देखने के मेरे दृष्टिकोण में भी बदलाव आया है। जैसे अगर आप रात में जल्दी सोना चाहते हैं और सुबह उठकर तरोताज़ा महसूस करना चाहते हैं, तो आपको अपनी सोने और जागने के समय की आदतों पर ध्यान देना होगा। गौर करें कि सुबह उठते ही आप स्वचालित रूप से क्या करते हैं? इसी तरह अगर आप दौड़ने की आदत विकसित करना चाहते हैं, तो ऐसे प्रेरकों को खोजें, जो इसे आपका रूटीन बना सकें। मैं अपने बच्चों को भी यही सब बताता रहता हूँ। मैंने और मेरी पत्नी ने हमारी शादीशुदा जिंदगी के लिए भी ऐसी कई आदतें तय कर रखी हैं, जो हमारे रिश्ते को मज़बूत बनाती हैं। अपनी आधिकारिक बैठकों में भी हम आदतों के विषय पर ही चर्चा करते हैं। कुफा का कोई भी व्यक्ति शायद यह अंदाजा नहीं लगा पाता कि केवल कबाब विक्रेताओं को हटा देने से हम भीड़ को इस प्रकार प्रभावित कर पाएँगे कि उसे उग्र होने से रोक दें। जब आप भीड़ को आदतों के समूह के रूप में देखते हैं, तो आपका काम आसान हो जाता है। यह ऐसा है, मानो आपको एक सब्बल (लोहे की मोटी छड़ जो भारी चीज़ें उठाने के काम आती है) और टॉर्च दे दी गई हो और अब बस आपको काम पर लगना हो!'

सेना में भर्ती होने से पहले मेज़र जॉर्जिया राज्य में रहनेवाले एक आम व्यक्ति थे। वे या तो हमेशा सूरजमुखी के बीज चबाते रहते थे या तंबाकू थूकते रहते थे। उन्होंने मुझे बताया कि सेना में आने से पहले उनके लिए कॅरियर का सबसे अच्छा विकल्प था कि या तो वे टेलीफोन लाइने ठीक करने लगें या फिर शायद ड्रग्स बेचना शुरू कर दें। उनके हाईस्कूल के कई सहपाठियों ने कॅरियर के लिए यही विकल्प चुना था। पर वे सेना में भर्ती हो गए और आज वे दुनिया के सबसे प्रगतिशील युद्ध संगठन में आठ सौ सैनिकों के दल के प्रमुख हैं।

'यकीन मानिए, अगर मुझ जैसा गँवार यह सब सीख सकता है, तो कोई भी सीख सकता है,' वे जोर देकर कहते हैं। 'मैं अपने सैनिकों से हमेशा कहता हूँ कि यदि तुम अपने अंदर सही आदतें विकसित करो, तो दुनिया में ऐसा कुछ नहीं है, जिसे तुम हासिल नहीं कर सकते।'

पिछले एक दशक में आदतों की न्यूरोलॉजी (तंत्रिका प्रणाली) और साइकोलॉजी (मनोविज्ञान) के बारे में हमारी समझ और हमारे जीवन में, समाज में, संगठनों में पैटर्न कैसे काम करते हैं, इसकी समझ इतनी अधिक बढ़ गई है, जिसकी हम पचास साल पहले कल्पना भी नहीं कर सकते थे। अब हम जानते हैं कि आदतें क्यों उभरती हैं, कैसे बदलती हैं और उनके पीछे का विज्ञान क्या होता है। हम जानते हैं कि आदतों को बदलकर कैसे उन्हें अपनी ज़रूरत के अनुसार पुनर्निर्मित किया जा सकता है। हम यह भी जानतें हैं कि कौन सी आदतों से लोग खाना कम कर सकते हैं, नियमित व्यायाम कर सकते हैं और निपुणता से काम करके एक स्वस्थ जीवन जी सकते हैं। हालाँकि आदतों को बदलना न तो आसान होता है और न ही इन्हें तुरंत बदला जा सकता।

लेकिन आदतों को बदलना संभव हैं और अब हम जानते हैं कैसे!

भाग

एक

लोगों की व्यक्तिगत आदतें

1

आदतों का फंदा

आदतें कैसे विकसित होती हैं

1

सन 1993 की शरद ॠतु में अमेरिका के सैनडिआगो शहर की एक प्रयोगशाला में एक व्यक्ति किसी से भेंट करने पहुँचा। यह वही व्यक्ति है, जो आदतों के बारे में हमारी समझ को बदलनेवाला था। वह नीले रंग की कमीज़ पहना हुआ, छह फुट लंबा बुजुर्ग व्यक्ति था। उसके सफेद बाल इतने घने थे कि किसी महाविद्यालय के पचासवें पुनर्मिलन समारोह में सबके मन में ईर्ष्या पैदा कर दें। गठिया की समस्या के कारण वह ज़रा लँगड़ाता था। अपनी पत्नी का हाथ पकड़कर वह उस प्रयोगशाला के हॉल में धीमी गति से चल रहा था, मानो उसे पता न हो कि आगे क्या होनेवाला है।

लगभग एक वर्ष पहले की बात है। यूज़ीन पॉली उर्फ ई.पी. (डॉक्टरी संसार में उसे इसी नाम से जाना गया) लॉस एंजिल्स शहर के समुद्रतट पर बसे प्लाया देल रे के अपने घर पर था। रात का भोजन बनाते समय उसकी पत्नी ने उसे बताया कि उनका बेटा माइकल उनसे मिलने आ रहा है।

'कौन माइकल?' यूज़ीन ने प्रश्न किया।

'तुम्हारा बेटा! जिसे हमने पाल-पोसकर बड़ा किया है!' उसकी पत्नी बेवरली ने हैरान होकर कहा।

पर इसके बावजूद यूज़ीन ने भावशून्य दृष्टि से एक बार फिर वही सवाल किया। 'माइकल कौन है?'

इसके अगले ही दिन यूज़ीन के पेट में ऐंठन पड़ी और वह दर्द से छटपटाने लगा। उसे उलटियाँ भी होने लगीं। अगले चौबीस घंटों में ही वह इतना कमज़ोर हो गया कि बेवरली घबराकर उसे अस्पताल ले गई। उस समय यूज़ीन को 105 डीग्री बुखार था और अस्पताल में उसका बिस्तर पसीने से लथपथ हो गया था। वह बेहोश हो गया। जब उसे होश आया, तो वह इतना आक्रमक हो चुका था कि जब भी कोई नर्स उसके हाथ में सलाईन लगाने आती, तो वह उसे धक्का देकर चिल्लाने लग जाता। आखिरकार डॉक्टरों ने उसे बेहोशी की दवा देकर शांत किया। इसके बाद डॉक्टरों ने उसकी कमर से, रीड़ के जोड़ में एक लंबी सुई डालकर उसके मस्तिष्कमेरु द्रव (Cerebrospinal Fluid) की कुछ

बूँदें हासिल कीं ताकि उसकी जाँच की जा सके।

मस्तिष्कमेरु द्रव (Cerebrospinal Fluid) निकालते समय ही डॉक्टरों को एहसास हो गया कि कुछ तो गड़बड़ है। दरअसल मस्तिष्क और रीढ़ की नसों के आसपास फैला यह द्रव संक्रमण एवं क्षति से बचाने का काम करता है। एक स्वस्थ इंसान में यह द्रव बिलकुल साफ होता है और सुई में रेशम सा बहता हुआ आता है। लेकिन यूज़ीन के मेरुदंड से प्राप्त नमूना मटमैला था और सुई में धीरे-धीरे ऐसे टपक रहा था, मानों बालू के सूक्ष्म कणों से भरा हो। जाँच के परिणाम आने पर यूज़ीन के डॉक्टरों को उसकी बीमारी का कारण पता चला। यूज़ीन को मस्तिष्क ज्वर था। उसे यह बीमारी अपेक्षाकृत कम खतरनाक माने जानेवाले एक वायरस की चपेट में आने से हुई थी, जो मुँह के छाले, बुखार के छाले और त्वचा में संक्रमण जैसी समस्याएँ पैदा करता है। लेकिन कुछ दुर्लभ परिस्थितियों में ये वायरस इंसान के मस्तिष्क में प्रवेश कर जाता है। जिससे उस इंसान के विचारों और सपनों से संबंधित कोमल हिस्से को नष्ट कर देता है, जिसे कई लोग आत्मा का निवास स्थान भी मानते हैं। इससे गहरी क्षति पहुँचती है।

यूज़ीन के डॉक्टरों ने बेवरली को बताया कि 'यूज़ीन के दिमाग को जो क्षति पहुँची है, उसे ठीक करने का कोई उपाय नहीं है। लेकिन इस वायरस को और अधिक फैलने से रोकने के लिए वे यूज़ीन को एंटीवायरस की एक बड़ी खुराक दे सकते हैं।' यह एंटीवायरस देने के बाद यूज़ीन कोमा में चला गया और दस दिनों तक मौत से जूझता रहा। लेकिन धीरे-धीरे दवाओं ने अपना असर दिखाना शुरू कर दिया और आखिरकार उसका मस्तिष्क ज्वर ठीक हो गया। वह कोमा से बाहर भी आ गया। हालाँकि यूज़ीन का जीवन तो बच गया, लेकिन वह बहुत कमजोर हो गया था। उसे कुछ निगलने में भी तकलीफ हो रही थी। कोशिश करने के बाद भी वह एक पूरा वाक्य तक नहीं बोल पा रहा था। कभी-कभी तो वह अचानक ऐसे हाँफने लगता, मानो कुछ क्षणों के लिए साँस लेना ही भूल गया हो।

कुछ ही दिनों में यूज़ीन का स्वास्थ्य बेहतर होने लगा। डॉक्टरों ने एक बार फिर उसकी जाँच की। इस जाँच के परिणाम देखकर डॉक्टर हैरान थे क्योंकि यूज़ीन का तंत्रिका तंत्र (Nervous System) और शरीर का एक बड़ा हिस्सा वायरस के आक्रमण से सुरक्षित थे। वह अपने अंगों का उपयोग सहजता से कर सकता था और आवाज़ व रोशनी आदि के प्रति सही प्रतिक्रिया दे रहा था। हालाँकि उसके मस्तिष्क की जाँच के परिणाम चिंताजनक थे। स्कैनिंग रिपोर्ट में डॉक्टरों को उसके मस्तिष्क के बीचों-बीच एक धब्बा नज़र आया। दरअसल इंसान की रीढ़ और खोपड़ी (Cranium) जिस बिंदु पर मिलते हैं, यूज़ीन के शरीर के उस हिस्से के तंतुओं को वायरस ने नष्ट कर दिया था।

'हो सकता है कि यूज़ीन पहले जैसा न रहे', एक डॉक्टर ने उसकी पत्नी बेवरली को सावधान किया, 'और यह भी संभव है कि तुम अपने पति को खो दो।'

यूज़ीन को अस्पताल के दूसरे हिस्से में ले जाया गया। पहला सप्ताह समाप्त होने तक वह खाने-पीने लगा। अगले सप्ताह वह सामान्य रूप से बातें भी करने लगा और खाने में

नमक व जेल-ओ (जेली से बना मीठा पदार्थ) वगैरह माँगने लगा। इसके साथ ही वह टी.वी. के चैनल बदल-बदलकर नीरस धारावाहिकों के बारे में शिकायतें भी करने लगा। पाँच सप्ताह बाद यूज़ीन को अस्पताल से छुट्टी देकर पुनर्वास केंद्र (Rehabilitation Centre) भेज दिया गया। उस वक्त यूज़ीन आराम से चलने-फिरने लगा था और साथ ही नर्सों को बिन माँगी सलाह भी देने लगा था। जैसे सप्ताह के अंत की छुट्टी बिताने के लिए उन्हें कहाँ जाना चाहिए... आदि।

'मैंने पहली बार इस बीमारी से ग्रस्त किसी मरीज को स्वस्थ होते हुए देखा है, मैं तुम्हें कोई झूठी उम्मीद नहीं बँधाना चाहता, लेकिन यह वाकई अद्भुत है।' यूज़ीन के डॉक्टर ने बेवरली से कहा।

लेकिन बेवरली की चिंता खत्म नहीं हुई। यह बात पुनर्वास केंद्र (Rehabilitation Centre) में ही स्पष्ट हो गई थी कि इस बीमारी से यूज़ीन के अंदर कुछ असामान्य बदलाव आ गए हैं। जैसे, यूज़ीन सप्ताह के दिन भूल जाता था। बार-बार बताने के बावजूद भी वह अपने डॉक्टरों और नर्सों के नाम याद नहीं रख पाता था। एक दिन जब डॉक्टर यूज़ीन के हालचाल पूछने के बाद उसके कमरे से बाहर निकल गया, तो यूज़ीन ने अपनी पत्नी बेवरली से पूछा, 'ये लोग मुझसे ऐसे सवाल क्यों पूछते रहते हैं?'

घर वापस लौटने के बाद भी यूज़ीन में कई बदलाव नज़र आए। उसे अपने मित्र याद नहीं थे। लोगों से बात करते-करते वह अचानक सब भूल जाता था। कई बार सुबह-सुबह नींद खुलते ही वह सीधे रसोई में चला जाता और अपने लिए अंडे और बेकन[1] पकाकर खा लेता। फिर अपने कमरे में लौटकर वापस बिस्तर पर लेट जाता और रेडिओ सुनने लगता। फिर चालीस मिनट बाद ही वह दोबारा यह सब दोहराता - उठकर अपने लिए अंडे और बेकन पकाता, उसे खाकर वापस बिस्तर पर लेट जाता और रेडिओ सुनने लगता। कुछ ही देर बाद एक बार फिर वह यही सब दोहराता।

उसके इस अजीब व्यवहार से घबराकर बेवरली ने तुरंत विशेषज्ञों से संपर्क किया। इन विशेषज्ञों में सैनडिआगो की कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के एक शोधकर्ता भी शामिल थे। वे उन दिनों याददाश्त खोने के कारणों पर शोध कर रहे थे। एक दिन यूज़ीन और बेवरली विश्वविद्यालय परिसर पहुँच गए। वे एक-दूसरे का हाथ थामे मुख्य हॉल को पार करते हुए आगे बढ़े। उन्हें एक परीक्षण-कक्ष में बैठने के लिए कहा गया। यूज़ीन वहाँ बैठी एक युवती से बातें करने लगा, जो कंप्यूटर पर काम कर रही थी।

यूज़ीन ने कंप्यूटर की ओर इशारा करते हुए कहा कि 'मेरी जवानी के दिनों में इस मशीन का आकार इस कमरे से भी बड़ा होता था और इसे रखने के लिए छह-छह फुट के कई रैकों की ज़रूरत पड़ती थी। मैंने इलेक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र में कई साल काम किया है और अब इस मशीन को इतने छोटे आकार में देखना सचमुच आश्चर्यजनक है।'

वह युवती यूज़ीन की बात पर ध्यान दिए बगैर कंप्यूटर पर काम करती रही। अचानक

यूज़ीन के चेहरे पर मुस्कान आ गई।

'ये सारे प्रिंटेड सर्किट्स, डायोड्स और ट्रायोड्स कितने अद्भुत हैं। जब मैं इलेक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र में सक्रिय था, उस समय इन्हें रखने के लिए भी छह-छह फुट के कई रैकों की ज़रूरत पड़ती थी।'

तभी एक वैज्ञानिक ने कमरे में प्रवेश किया। उसने अपना परिचय दिया और यूज़ीन से उसकी उम्र पूछी।

'मेरी उम्र? उनसठ या साठ होगी शायद!' यूज़ीन ने उत्तर दिया। जबकि असल में उसकी उम्र इकहत्तर साल थी।

वह वैज्ञानिक कंप्यूटर पर कुछ टाईप करने लगा। यूज़ीन ने मुस्कराते हुए एक बार फिर कहा, 'यह सचमुच अद्भुत है! जानते हो, जब मैं इलेक्ट्रॉनिक्स में था तब इस मशीन को छह-छह फुट के कई रैकों पर रखा जाता था।'

ये वैज्ञानिक थे बावन वर्षीय लैरी स्क्वायर। वे पेशे से एक प्रोफेसर थे, जो पिछले तीन दशकों से याद्दाश्त से संबंधित तंतुओं की रचना (neuroanatomy) का अध्ययन कर रहे थे। उनका अध्ययन मुख्य रूप से इस बात पर केंद्रित था कि इंसान के मस्तिष्क में घटनाओं का भंडार कैसे होता है। वे इसके विशेषज्ञ थे। यूज़ीन की इस बीमारी के कारण जल्द ही लैरी स्क्वायर और सैकड़ों अन्य शोधकर्ताओं के सामने एक बिलकुल नए संसार के द्वार खुलनेवाले थे। अभी तक आदतों के बारे में हमारी जो भी जानकारी या समझ थी, वह इन्हीं शोधकर्ताओं के अनेकों अध्ययनों से बनी थी। स्क्वायर के प्रयोगों से सामने आया कि जो इंसान अपनी उम्र और ऐसी ही अनेक सामान्य बातें तक याद नहीं रख पाता, उसके अंदर भी आश्चर्यजनक रूप से जटिल आदतें विकसित होती रहती हैं। फिर आपको एहसास होता है कि हर इंसान रोज़मर्रा का जीवन बिताने के लिए समान तंत्रिका-प्रक्रियाओं पर ही निर्भर होता है। स्क्वायर और अन्य शोधकर्ताओं के अध्ययनों से अवचेतन मन की कार्यप्रणाली को समझने में काफी सहायता मिली। इस कार्यप्रणाली का प्रभाव हमारे रोज़मर्रा के ऐसे अनगिनत चुनावों पर पड़ता है, जो हमें तार्किक तो लगते हैं पर वास्तव में हमारी उन तीव्र इच्छाओं से प्रभावित होते हैं, जिनसे हम करीब-करीब अनजान होते हैं।

स्क्वायर ने यूज़ीन से मुलाकात करने से पहले कई हफ्तों तक, उसके दिमाग के स्कैन्स का अध्ययन किया था। इन स्कैन्स से स्पष्ट हुआ कि वायरस का सारा प्रभाव यूज़ीन के दिमाग के मध्य भाग में पाँच सेंटीमीटर के एक सीमित क्षेत्र में हुआ है। इस वायरस ने उसके दिमाग के मध्यवर्ती हिस्से (Medial Temporal Lobe) को पूरी तरह नष्ट कर दिया था। वैज्ञानिकों का मानना था कि तंतुओं का यह छोटा सा संघ सभी प्रकार के संज्ञानात्मक कार्य (Cognitive Tasks) जैसे अतीत याद रखना, भावनाओं पर नियंत्रण रखना आदि करता है। पर स्क्वायर यूज़ीन के दिमाग पर हुए इस विनाशकारी प्रभाव से

चकित नहीं थे। वे जानते थे कि इस प्रकार का वायरस तंतुओं को अत्यंत क्रूर और सुनिश्चित तरीके से नष्ट करता है। स्क्वायर को बस एक ही बात से हैरानी थी कि एक अन्य व्यक्ति के स्कैन्स यूज़ीन के स्कैन्स से हू-बहू मिलते थे।

हेनरी मोलॉयझन 'एच.एम.' का उदाहरण

तीस वर्ष पहले जब स्क्वायर एमआयटी से पी.एच.डी. कर रहे थे, तब उन्होंने एक समूह के साथ मिलकर डॉक्टरी इतिहास के सबसे मशहूर मरीज़ 'एच.एम.' का अध्ययन किया था। एच.एम. का असली नाम हेनरी मोलॉयझन था। जब एच.एम. सात साल का था, तो साइकिल से गिरने के कारण उसके सिर पर गहरी चोट आई थी। इसके कुछ ही समय बाद उसे दौरे पड़ने लगे, जिससे वह बेहोश हो जाता था। सोलह साल की उम्र में उसे इतना गंभीर दौरा आया कि इसका असर उसके पूरे दिमाग पर हुआ। इसके बाद वह दिन में दस से भी ज़्यादा बार बेहोश होने लगा।

सत्ताईस वर्ष का होने तक एच.एम. पूरी तरह हताश हो चुका था। दौरों को कम करने की दवा का उस पर ज़्यादा असर नहीं हो रहा था। वह होशियार तो था, लेकिन अपनी स्थिति के कारण किसी भी नौकरी पर टिक नहीं पाता था। वह अपने माता-पिता के साथ उन्हीं के घर में रहता था। एच.एम. एक सामान्य जीवन जीना चाहता था इसलिए उसने एक ऐसे डॉक्टर की मदद ली, जिसके अंदर नए प्रयोग करने की गहरी जिज्ञासा थी और वह इलाज में गलती करने से डरता नहीं था। तब तक विभिन्न अध्ययनों से यह पता लग चुका था कि दिमाग के एक हिस्से हिप्पोकॅम्पस (Hippocampus) का संबंध दौरे पड़ने से होता है। जब डॉक्टर ने एच.एम. के दिमाग का ऑपरेशन कर उसके दिमाग के सामने के हिस्से को उठाकर एक छोटी नली द्वारा हिप्पोकॅम्पस और उसके आसपास फैले तंतुओं को बाहर खींचने का प्रस्ताव दिया, तो एच.एम. तुरंत सहमत हो गया।

1953 में एच.एम. का ऑपरेशन हुआ। ऑपरेशन के बाद वह जैसे-जैसे स्वस्थ होता गया, उसके दौरे भी कम होते गए। लेकिन इसके साथ ही, यह बात भी सामने आई कि एच.एम. का दिमाग मौलिक रूप से परिवर्तित हो चुका था। एच.एम. अपना नाम जानता था और उसे यह भी याद था कि उसकी माँ आयरलैंड से थी। उसे 1929 में शेयर मार्केट का ध्वस्त होना और द्वितीय विश्व युद्ध में फ्रान्स के नॉरमंडी पर हुआ आक्रमण भी याद था। लेकिन वह इसके बाद के लगभग एक दशक की सारी यादें, अनुभव, संघर्ष, सबकुछ भूल चुका था। जब एच.एम. की याद्दाश्त की जाँच करने के लिए एक डॉक्टर ने उसे अंकों की एक सूची और ताश खेलकर दिखाया, तो उसे समझ में आ गया कि अब एच.एम. किसी भी नई जानकारी को बीस सेकेंड से ज़्यादा याद नहीं रख सकता।

एच.एम. के ऑपरेशन से लेकर सन 2008 में उसकी मृत्यु तक, उसके लिए हर मनुष्य, हर गीत, हर कमरा, हर चीज़ पूरी तरह एक नया अनुभव था। उसका दिमाग समय के किसी एक बिंदु पर अटक गया था। वह हर दिन इस बात पर आश्चर्य करता था कि काले रंग के छोटे से आयताकार डिब्बे, जिसे रिमोट कहते हैं, उसकी मदद से टी.वी. के चैनल

बदले जा सकते हैं। दिन में दर्ज़नों बार वह डॉक्टरों और नर्सों को अपना परिचय देता था।

स्क्वायर बताते हैं कि 'एच.एम. के दिमाग का अध्ययन करना मुझे बहुत अच्छा लगा क्योंकि दिमाग के अध्ययन में, याद्दाश्त एक ठोस और रोमांचक मार्ग है। मैं अमेरिका के ओहिओ में पला-बढ़ा हूँ। मुझे याद है, जब मैं पहली कक्षा में था और हमारी टीचर हम सबको मोम की रंग-बिरंगी पेंसिल (Crayons) बाँट रही थी। मुझे जितने भी रंगों की पेंसिल मिलीं, मैंने उन्हें कागज़ पर एक साथ एक जगह घिसकर यह जानने की कोशिश की कि इससे काला रंग बनेगा या नहीं। मुझे यह घटना तो अच्छी तरह याद है, लेकिन अपनी उस अध्यापिका का चेहरा क्यों याद नहीं है? मेरे दिमाग ने उस एक याद को अन्य घटनाओं से अधिक महत्त्व क्यों दिया?'

स्क्वायर यह देखकर अचंभित थे कि यूज़ीन के स्कैन्स एच.एम. से कितने मिलते-जुलते हैं। दोनों के ही दिमाग के मध्यम भाग में अखरोट के आकार का धब्बा था। एच.एम. की ही तरह यूज़ीन की भी याद्दाश्त जा चुकी थी।

एच.एम. और यूज़ीन में अंतर

इसके बाद जब स्क्वायर ने यूज़ीन के कुछ और परीक्षण किए तो पता चला कि एच.एम. और यूज़ीन में गहरा अंतर है। जैसे कि एच.एम. से मिलते ही पता चल जाता था कि वह अस्वस्थ है। जबकि यूज़ीन सामान्य बातचीत करने से लेकर कई अन्य कार्यों तक, सब कुछ इतने आराम से कर लेता था कि आमतौर पर उसे देखकर उसकी असली स्थिति का पता नहीं लगता था।

ऑपरेशन ने एच.एम. को इतना कमज़ोर बना दिया था कि इसके बाद उसे आजीवन अस्पताल में रहना पड़ा। दूसरी ओर, यूज़ीन अपनी पत्नी के साथ अपने घर में रहता था। एच.एम. किसी एक विषय पर लंबे समय तक बातचीत नहीं कर सकता था। जबकि यूज़ीन हर बातचीत को चतुराई से उपग्रहों या फिर मौसम जैसे विषयों की ओर ले जाता था क्योंकि इनके बारे में वह स्वयं लंबे समय तक बात कर सकता था। चूँकि वह एक अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी कंपनी में टेक्नीशियन था इसलिए उसके लिए इन विषयों पर बात करना आसान था।

यूज़ीन का परीक्षण

परीक्षण की शुरुआत में स्क्वायर ने यूज़ीन से उसकी किशोरावस्था के बारे में पूछा। यूज़ीन ने मध्य कैलिफोर्निया के एक शहर के बारे में बताया, जहाँ वह पला-बढ़ा। साथ ही उसने मर्चेन्ट मरीन्स के अपने अनुभवों के बारे में बताते हुए, ऑस्ट्रेलिया की एक यात्रा के बारे में भी बताया। उसे अपने जीवन की 1960 से पहले की लगभग सारी घटनाएँ याद थीं। इससे आगे के दशकों के बारे में पूछने पर यूज़ीन ने विनम्रता से विषय बदलते हुए कहा कि 'कुछ कारणों से मुझे हाल ही की घटनाओं को याद करने में कठिनाई हो रही है।'

यूज़ीन की बुद्धिमत्ता का परीक्षण करने पर स्क्वायर ने पाया कि पिछले तीन दशकों के बारे में कुछ भी याद न होने के बावजूद यूज़ीन की बुद्धि प्रखर है। यहाँ तक कि यूज़ीन में जवानी के समय की सारी आदतें अब भी बरकरार थीं। इसीलिए जब कभी स्क्वायर यूज़ीन को पानी का गिलास देते या कोई विशेष जवाब विस्तार से देने के लिए यूज़ीन की प्रशंसा करते, तो यूज़ीन उन्हें धन्यवाद देता और बदले में उनकी भी प्रशंसा करता। जब भी कोई उसके कमरे में प्रवेश करता, तो यूज़ीन उठकर उसे अपना परिचय देता और उसके हालचाल ज़रूर पूछता।

लेकिन जब यूज़ीन को अंकों की किसी श्रृंखला को या प्रयोगशाला के बाहरी गलियारे आदि को याद कर उसका वर्णन करने को कहा गया, तो डॉक्टरों को कुछ नई बातें पता चलीं। जैसे कि यूज़ीन किसी भी नई जानकारी को अधिकतम एक मिनट से ज़्यादा याद नहीं रख सकता था। यूज़ीन को जब उसके पोते-पोतियों की तस्वीरें दिखाई गईं, तो उसने उन्हें पहचानने से इनकार कर दिया। जब स्क्वायर ने यूज़ीन से उसकी बीमारी के बारे में पूछा, तो पता चला कि उसे बीमार पड़ने या अस्पताल में भर्ती होने के बारे में कुछ भी याद नहीं था। असल में यूज़ीन अपनी याद्दाश्त खोने के बारे में कुछ नहीं जानता था। उसके अनुसार न तो उसे कोई चोट लगी थी, न ही उसने अपनी याद्दाश्त खोई थी। अत: यूज़ीन के लिए यह कल्पना करना भी मुश्किल था कि वह अस्वस्थ है।

यूज़ीन से मिलने के कुछ महीनों बाद स्क्वायर ने उसकी याद्दाश्त को परखने के लिए कुछ नए प्रयोग किए। इस दौरान यूज़ीन और बेवरली लॉस एंजिल्स के समुद्रतट पर बसे प्लाया देल रे को छोड़कर अपनी बेटी के घर के करीब सैनडिआगो में रहने चले गए। यहाँ स्क्वायर कई बार जाँच के लिए उनके घर आया करते थे। एक दिन उन्होंने यूज़ीन से कहा कि वह अपने घर का नक्शा बनाए। यूज़ीन ने कोशिश की पर सफल नहीं हुआ। 'तुम सुबह जागने के बाद घर के अन्य कमरों में कैसे जाते हो?' स्क्वायर ने यूज़ीन से पूछा।

'सच कहूँ तो मुझे नहीं मालूम!' यूज़ीन ने जवाब दिया।

स्क्वायर अपने लैपटॉप पर यूज़ीन की टिप्पणियों के बारे में नोट्स बनाने लगे। इस दौरान यूज़ीन का ध्यान कहीं और चला गया। वह कमरे में यहाँ-वहाँ देखने लगा। फिर वह उठकर गलियारे की ओर गया और शौचालय चला गया। कुछ मिनटों बाद शौचालय से फ्लश की आवाज़ आई और फिर नल से पानी बहने की! अपनी पतलून पर हाथ पोंछता यूज़ीन एक बार फिर सामने के कमरे में स्क्वायर के बगल में आकर बैठ गया और निश्चिंत होकर अगले प्रश्न का इंतजार करने लगा।

उस समय इस बात पर किसी का ध्यान नहीं गया कि जो इंसान अपने घर का नक्शा तक नहीं बना पा रहा है, उसने इतनी आसानी से घर का शौचालय कैसे ढूँढ़ लिया? आगे चलकर यह प्रश्न और इसके जैसे कई अन्य प्रश्न हमें नए आविष्कारों के एक ऐसे रास्ते पर ले गए, जिसने आदतों की शक्ति के बारे में हमारी समझ को पूरी तरह बदलकर रख दिया। इससे एक ऐसी वैज्ञानिक क्रांति शुरू हुई, जिसके चलते आज हज़ारों

शोधकर्ता पहली बार इस बारे में शोध कर रहे हैं कि इंसान के जीवन पर आदतों का क्या प्रभाव पड़ता है।

कुर्सी पर बैठे यूज़ीन की नज़र स्क्वायर के लैपटॉप पर पड़ी।

'यह सचमुच अद्भुत है! जब मैं इलेक्ट्रॉनिक्स् के क्षेत्र में काम करता था, तब इस मशीन को रखने के लिए छह-छह फुट के कई रैकों की ज़रूरत पड़ती थी!'

***

नए घर में आने के बाद कुछ सप्ताह तक बेवरली रोज़ाना यूज़ीन को बाहर टहलाने के लिए ले जाने की कोशिश करती थी। डॉक्टरों ने बेवरली को यूज़ीन से व्यायाम करवाने की सलाह दी थी। इसके अलावा एक बात यह भी थी कि जब यूज़ीन दिनभर घर पर ही रहता, तो पूरे दिन बेवरली से बार-बार एक ही तरह के सवाल पूछता रहता, जिससे बेवरली परेशान हो जाती थी। इसलिए बेवरली रोज़ सुबह-शाम यूज़ीन को टहलाने के लिए चौराहे तक ले जाती थी। वे दोनों हर रोज़ एक साथ उसी रास्ते से चौराहे तक पहुँचते थे।

डॉक्टर ने बेवरली को यूज़ीन पर नज़र रखने के लिए कहा था। उन्होंने बेवरली को आगाह किया था कि अगर किसी दिन यूज़ीन घर से निकलकर रास्ता भूल गया, तो न तो वह खुद रास्ता ढूँढ़ पाएगा और न किसी और से मदद ले पाएगा। अचानक एक दिन सुबह-सुबह कुछ ऐसा ही हुआ। दरअसल उस दिन यूज़ीन को टहलाने लेकर जाने के लिए बेवरली तैयार ही हो रही थी कि यूज़ीन अचानक घर के सामनेवाले दरवाज़े से बाहर चला गया। चूँकि उसे घर के एक कमरे से दूसरे कमरे में घूमने की आदत थी इसलिए कुछ देर तक बेवरली समझ ही नहीं पाई कि यूज़ीन घर पर नहीं है। जैसे ही उसे इस बात का एहसास हुआ, वह दौड़ी-दौड़ी घर से बाहर निकली और घबराकर यूज़ीन को यहाँ-वहाँ ढूँढ़ने लगी। उसे यूज़ीन कहीं नज़र नहीं आया। बेवरली उसे पड़ोसियों के घर ढूँढ़ने लगी। चूँकि मोहल्ले के सारे घर एक जैसे दिखते थे इसलिए बेवरली को शक हुआ कि कहीं यूज़ीन गलती से किसी पड़ोसी के घर में तो नहीं घुस गया। वह पड़ोसियों के घर जा-जाकर बेसब्री से उनके दरवाज़े की घंटी बजाने लगी। लेकिन यूज़ीन किसी पड़ोसी के घर नहीं मिला। बेवरली इतनी घबरा गई कि उसे रोना आ गया। वह दोबारा सड़क की ओर दौड़ी और रोती हुई चिल्ला-चिल्लाकर यूज़ीन को पुकारने लगी। बेवरली के मन में तमाम बुरे खयाल आने लगे, 'कहीं यूज़ीन ट्रैफिक में फँसकर किसी गाड़ी के नीचे न आ जाए... किसी के पूछने पर वह घर का पता कैसे बताएगा...' यह सब सोचकर बेवरली और घबरा गई। यूज़ीन को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते पंद्रह मिनट से ज़्यादा समय हो चुका था। जब यूज़ीन की कोई खबर नहीं मिली तो आखिरकार बेवरली पुलिस को फोन लगाने के लिए घर की ओर दौड़ी।

वह हड़बड़ी में दरवाजा खोलकर घर के अंदर आई और देखा कि यूज़ीन सामनेवाले

कमरे में आराम से बैठा टी.वी. पर 'हिस्ट्री चैनल' देख रहा है। बेवरली को रोते देखकर वह हैरान रह गया। जब बेवरली ने यूज़ीन से पूछा कि 'तुम कहाँ थे?' तो उसने बताया कि 'मैं घर से बाहर कब निकला और कहाँ गया, मुझे कुछ भी याद नहीं।' उस समय यूज़ीन यह भी समझ नहीं पा रहा था कि बेवरली नाराज़ क्यों है। फिर बेवरली ने मेज़ पर पड़ा देवदार के शंकुओं का ढेर देखा। उसे याद आया कि जब वह यूज़ीन को बाहर ढूँढ़ रही थी, तो ऐसा ही ढेर उसने एक पड़ोसी के आँगन में भी देखा था। उसने करीब आकर यूज़ीन के हाथों को देखा। उसके हाथों पर उन शंकुओं का चिपचिपा रस लगा हुआ था। बेवरली को समझ में आ गया कि यूज़ीन उसे छोड़कर अकेले ही टहलने चला गया होगा और शायद चौराहे तक टहलने के बाद वापस आते समय ये शंकु उठा लाया होगा।

सबसे बड़ी बात यह थी कि यूज़ीन सुरक्षित वापस लौट आया था।

इसके बाद यूज़ीन रोज़ सुबह अकेले ही टहलने जाने लगा। बेवरली उसे रोकने की कोशिश करती, लेकिन ये कोशिश बेकार साबित हुई।

बेवरली बताती है कि 'मैं यूज़ीन को घर के अंदर रहने के लिए कहूँ, तब भी वह कुछ मिनटों बाद यह बात भूल जाता था। कई बार तो मैंने इस डर से उसका पीछा भी किया कि कहीं वह खो न जाए। लेकिन वह हर बार सुरक्षित लौट आता था।' कभी वह देवदार के शंकु तो कभी पत्थर उठा लाता था। एक बार तो वह रास्ते पर पड़ा किसी का बटुआ उठा लाया और इसी तरह एक बार वह कुत्ते का पिल्ला उठा लाया था। पर यूज़ीन को कभी याद नहीं रहता था कि ये सब चीज़े कहाँ से आईं।'

जब स्क्वायर और और उसके सहायकों को यूज़ीन के इस सैर-सपाटे के बारे में पता चला तो वे सब हैरान रह गए। अब उन्हें संशय होने लगा कि यूज़ीन के दिमाग में उसकी चेतन स्मृति के अलावा कुछ और भी है, जो सक्रिय है। उन्होंने एक नए प्रयोग का नमूना तैयार किया। फिर स्क्वायर का एक सहायक यूज़ीन के घर आया और उसने यूज़ीन को अपने मोहल्ले का नक्शा बनाने के लिए कहा। यूज़ीन ऐसा नहीं कर पाया। फिर उसने यूज़ीन को उसके मोहल्ले का एक नक्शा दिखाया और उससे अपना घर अंकित करने को कहा। यूज़ीन कुछ देर तक तो आड़ी-तिरछी लकीरें खींचता रहा, फिर वह भूल गया कि उसे क्या करने के लिए कहा गया था।

फिर जब सहायक ने उससे पूछा कि 'घर में रसोई किस तरफ है?'

'मैं नहीं जानता,' यूज़ीन ने कमरे में चारों ओर देखते हुए कहा।

'जब तुम्हें भूख लगती है, तो तुम क्या करते हो यूज़ीन?' सहायक ने एक और सवाल पूछा।

इस सवाल के जवाब में यूज़ीन खड़ा हुआ, चलकर रसोईघर तक गया और ऊपर की अलमारी में रखा मूँगफलियों का डिब्बा ले आया।

एक अन्य सहायक यूज़ीन की सैर के दौरान उसके साथ गया। दक्षिण कैलिफोर्निया के कभी न बदलनेवाले बसंत के खुशनुमा मौसम में वे दोनों बोगनवेलिया (सुगंधित फूलोंवाली झाड़ी) की सुगंध से महकती हवाओं के बीच करीब पंद्रह मिनट तक टहलते रहे। यूज़ीन ने ज़्यादा बातचीत नहीं की, लेकिन वह पूरे आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़कर स्क्वायर के सहायक को रास्ता दिखा रहा था। उसे किसी से भी रास्ता पूछने की ज़रूरत नहीं पड़ी। लौटते समय जब वे यूज़ीन के घर के करीब ही थे, उस सहायक ने यूज़ीन से उसके घर का पता पूछा। 'मुझे ठीक से याद नहीं' यूज़ीन ने जवाब दिया। इसके बाद वह फुटपाथ पर चलता हुआ सीधा अपने घर गया और बैठकर टी.वी. देखने लगा।

अब स्क्वायर को समझ में आ गया था कि यूज़ीन का दिमाग नई जानकारी ग्रहण कर रहा है। मगर सवाल यह था कि यह जानकारी उसके दिमाग में आखिर कहाँ दर्ज हो रही है? यह कैसे संभव है कि जो इंसान यह तक नहीं बता पाता कि उसके घर में रसोई कहाँ है, वह उसी रसोई में जाकर मूँगफली का डिब्बा आराम से ढूँढ़ लाता है। इसी तरह अपने घर का पता न जानते हुए भी वह वापस घर कैसे पहुँच जाता है। इन प्रश्नों ने स्क्वायर को अचंभे में डाल रखा था। वे यह सोचकर हैरान थे कि आखिर यूज़ीन के क्षतिग्रस्त दिमाग में ये नए पैटर्न कैसे बन रहे हैं।

2

मैसाचुसेटस् इन्स्टीटयूट ऑफ टेक्नोलॉजी के 'मस्तिष्क एवं बोध विज्ञान विभाग' (Brain and Cognitive Sciences department) के इमारत की प्रयोगशालाओं में कुछ सर्जिकल थिएटर भी थे। आम लोगों को ये थिएटर खिलौनोंवाले कमरों जैसे नज़र आ सकते थे। यहाँ एक चौथाई इंच से भी छोटे आकार की छुरियाँ, ड्रिल और आरियाँ मौजूद थीं, जो एक मशीनी हाथ से जुड़ी हुई थीं। यहाँ तक की सर्जरी की मेज़ भी इतनी छोटी थी, मानो बौने डॉक्टरों के लिए बनाई गई हो। इन कमरों का तापमान हमेशा 15 डिग्री सेल्सियस ही रखा जाता था। कमरों के ठंडे वातावरण के कारण सर्जरी करते समय शोधकर्ताओं की अंगुलियाँ स्थिर रहती थीं। इन प्रयोगशालाओं के अंदर तंत्रिका विज्ञानी (Neurologist) बेहोश किए गए चूहों के दिमाग में नन्हें सेंसर लगाते थे। जिससे वे चूहों के दिमाग में होनेवाली छोटी से छोटी हरकतें भी जान लेते हैं। होश में आने पर भी चूहों को देखकर ऐसा नहीं लगता था कि उन्हें पता है कि उनके दिमाग में तारों का जाल लगा दिया गया है।

ये प्रयोगशालाएँ आदतें विकसित होने की प्रक्रिया के पीछे छिपे विज्ञान को समझने का मुख्य केंद्र बन चुकी हैं। इन प्रयोगों से ही पता चल पाया कि यूज़ीन, आप और मैं, हम सब; रोज़मर्रा के जीवन में आवश्यक आदतों का विकास कैसे करते हैं। सुबह दाँत साफ करते समय या पार्किंग से अपनी गाड़ी निकालते समय, हमारे दिमाग में कौन सी जटिल गतिविधियाँ चलती रहती हैं, यह प्रयोगशाला के इन चूहों द्वारा उजागर हुआ। वहीं स्क्वायर के लिए ये प्रयोग यूज़ीन की गुत्थी सुलझाने के काम आए। इन प्रयोगों द्वारा वे जान पाए कि यूज़ीन नई जानकारी को आखिर कब से ग्रहण कर रहा है।

1990 में एम.आय.टी. के शोधकर्ताओं ने आदतों पर शोध शुरू किया। यूज़ीन भी इसी दौरान बीमार पड़ा था। इन शोधकर्ताओं के कौतूहल का केंद्र था, दिमाग का वह छोटा-सा हिस्सा जिसे बेसल गैंग्लिया (Basal Ganglia) कहते हैं। दिमाग की तुलना यदि प्याज़ से की जाए - जिसकी रचना एक के ऊपर एक बनी तंतुओं की परतों से होती है - तो क्रमिक विकास मूलक (evolutionary) दृष्टिकोण से देखने पर कहा जा सकता है कि सिर की खाल के करीब की बाहरी परतें सबसे नई हैं। जब आप किसी नए आविष्कार के बारे में सोचते हैं या अपने किसी मित्र के चुटकुले पर हँसते हैं, तो दिमाग के ये बाहरी आवरण ही सक्रिय होते हैं।

दिमाग के अंदरूनी हिस्से में दिमागी तने (brain stem) के पास - जहाँ वह रीढ़ से मिलता है, सबसे पुरानी संरचनाएँ होती हैं। हमारे सहज स्वभाव से जुड़ी चीज़ें, जैसे साँस लेना, निगलना अथवा उस स्थिति में हमारा चौंकना जब कोई अचानक झाड़ियों के पीछे से निकलकर हमें पलभर के लिए डरा देता है, इन सबका नियंत्रण यही सबसे पुरानी संरचनाएँ करती हैं। दिमाग के बीचों-बीच गोल्फ की गेंद के आकार का तंतुओं का एक गोला होता है, जो पानी में रहनेवाले, जमीन पर रेंगनेवाले और स्तनपाई जंतुओं में पाया जाता है। इसी को बेसल गैंग्लिया (Basal Ganglia) कहते हैं। वर्षों तक वैज्ञानिक तंतुओं के इस अंडाकार समूह के बारे में ज़्यादा कुछ नहीं जान पाए थे। वैज्ञानिकों को संदेह था कि पार्किन्सन रोग के लिए बेसल गैंग्लिया जिम्मेदार होता है, पर इस बात की पुष्टि कोई नहीं कर पाया था।

सन 1990 में एम.आय.टी. के शोधकर्ताओं के मन में ये सवाल उठने लगा कि क्या बेसल गैंग्लिया इंसान की आदतों के लिए अनिवार्य है? उन्होंने गौर किया कि उनके प्रयोगों के जिन जंतुओं का गैंग्लिया क्षतिग्रस्त है, उन्हें भूलभुलैया पार करने अथवा खाद्य-पदार्थ का डिब्बा खोलने जैसी सहज स्वभाव से जुड़ी चीज़ों में कठिनाई हो रही है। उन्होंने अपनी आशंका मिटाने के लिए तय किया कि इसका परीक्षण किया जाना चाहिए। इसके लिए उन्होंने प्रयोगशाला के चूहों के लिए एक नया प्रयोग तैयार किया। इस प्रयोग में नई माइक्रो-टेक्नोलॉजी का उपयोग किया गया। इस नई माइक्रो-टेक्नोलॉजी की मदद से वैज्ञानिक चूहों की हर सूक्ष्म हरकत के दौरान उनके दिमाग में होनेवाली गतिविधियों का जायज़ा ले सकते थे। सर्जरी द्वारा हर चूहे के दिमाग में कंट्रोल लीवर और दर्ज़नों छोटे-छोटे तार लगा दिए गए। इसके बाद इन चूहों को अंग्रेजी के अक्षर ‘टी’ (T) के आकारवाली एक भूलभुलैयाँ में छोड़ दिया गया, जिसके दूसरे छोर पर एक चॉकलेट रख दी गई।

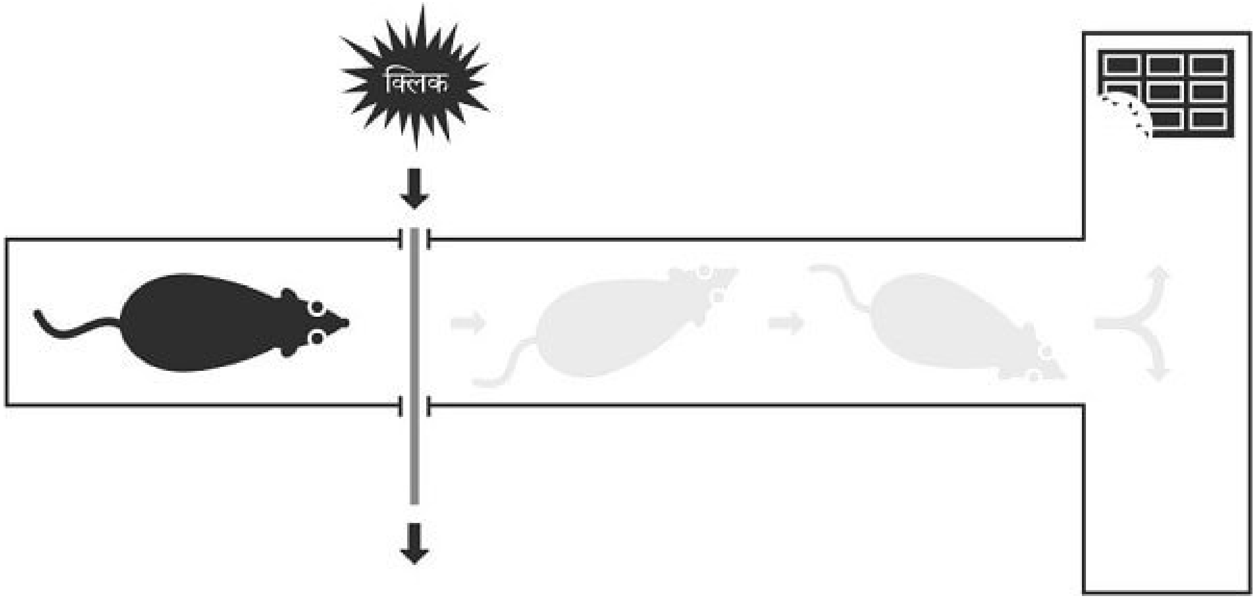

भूलभुलैयाँ में चूहों को एक दरवाज़े के पीछे रखा जाता था। यह दरवाज़ा 'क्लिक' की आवाज़ होने के बाद खुलता था। शुरू में दरवाज़ा खुलने पर चूहे भूलभुलैयाँ के बीच के गलियारे में कोनों को सूँघते और दीवारों को खरोंचते हुए धीरे-धीरे आगे बढ़ते थे। 'टी' (T) आकृतिवाली इस भूलभुलैयाँ के ऊपरी छोर तक पहुँचने पर चूहे अक्सर चॉकलेट की विपरीत दिशा यानी दाहिनी ओर जाकर फिर बाईं ओर जाया करते थे। ऐसा करते समय चूहे अक्सर बिना किसी कारण के ही अचानक कुछ क्षणों के लिए रुक जाते थे। लेकिन आखिर में लगभग सभी चूहे अपने इनाम यानी उस चॉकलेट तक पहुँच जाते थे। वैज्ञानिकों को चूहों के इस तरह घूमने में समझने योग्य कोई विशेष पैटर्न नज़र नहीं आया। सामान्य तौर से देखकर ऐसा लगता था कि मानो चूहा इत्मीनान से घूमने निकला हो।

लेकिन चूहों के दिमाग में लगे सेंसर कुछ अलग ही कहानी बता रहे थे। भूलभुलैयाँ से गुज़रते समय हर चूहे के दिमाग और विशेषकर उसके बेसल गैंग्लिया की गतिविधियों में बहुत तेज़ी आ जाती थी। हर बार जब चूहा कुछ सूँघता या दीवार खरोंचता था, तो उसके दिमाग में गतिविधियों का तूफान आया होता था। उस भूलभुलैया में बिना किसी विशेष उद्देश्य के घूमता चूहा दरअसल बहुत सारी नई जानकारी ग्रहण कर रहा था।

यह प्रयोग वैज्ञानिकों ने बार-बार दोहराया और हर पहलू की जाँच की। जिससे पता चला कि हर बार भूलभुलैयाँ से गुज़रते समय चूहों की दिमागी गतिविधियों में बदलाव भी आता है। धीरे-धीरे परिवर्तन की एक श्रृंखला सामने आई। चूहों ने कोनों में सूँघना और गलत राह पर मुड़ना बंद कर दिया। अब दिन-प्रतिदिन चूहे भूलभुलैयाँ को तेज़ी से पार करने लगे। साथ ही, उनके दिमाग में भी कुछ ऐसा हुआ, जिसकी उम्मीद नहीं थी। चूहे जैसे-जैसे भूलभुलैयाँ पार करना सीखते गए, उनकी दिमागी गतिविधियाँ कम होती गईं। भूलभुलैयाँ पार करना जितना सहज होता गया, चूहों के दिमाग की विचार प्रक्रिया भी

उतनी ही कम होती थी। शुरू-शुरू में चूहे भूलभुलैयाँ की छानबीन कर रहे थे और उस समय नई जानकारी ग्रहण करने के लिए उनके दिमाग को ज्यादा काम करना पड़ रहा था। लेकिन कई दिनों तक उसी मार्ग से बार-बार गुज़रने के बाद अब चूहों के लिए कोनों को सूँघना और दीवारों को खरोंचना ज़रूरी नहीं रह गया था। इसलिए सूँघने और खरोंचने की प्रक्रिया से जुड़ी उनकी सारी दिमागी गतिविधियाँ बंद हो गईं। चूहों को अब यह निर्णय लेने की भी ज़रूरत नहीं रह गई थी कि उन्हें 'टी' (T) आकृतिवाली इस भूलभूलैया को पार करके चॉकलेट तक पहुँचने के लिए किस दिशा में जाना है। उन्हें तो बस चॉकलेट तक पहुँचने का सबसे तेज़ मार्ग याद करने की ज़रूरत थी। इसलिए उनके दिमाग के निर्णय लेनेवाले केंद्रों की गतिविधियाँ भी रुक गईं। इसके एक सप्ताह के अंदर ही उनके दिमाग में याद्दाश्त से जुड़े हिस्सों की गतिविधियाँ भी बंद हो गईं। चूहे भूलभुलैया को इतनी तेज़ी से पार करना सीख चुके थे कि अब उन्हें इसके बारे में सोच-विचार करने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती थी।

चूहों के दिमाग में लगे सेंसर से पता लगा कि भूलभुलैयाँ तेज़ी से पार करना बेसल गैंग्लिया पर निर्भर था। जैसे-जैसे चूहे तेज़ी से दौड़ने लगे और उनकी दिमागी गतिविधियाँ कम होने लगीं, वैसे-वैसे यह प्रक्रिया इस छोटी सी न्यूरोलॉजिकल संरचना के नियंत्रण में आ गई। आदतें विकसित होने में बेसल गैंग्लिया की केंद्रीय भूमिका थी। संक्षिप्त में कहें तो जब हमारा बाकी दिमाग आराम कर रहा होता है, तब भी बेसल गैंग्लिया आदतों को संग्रहित कर रहा होता है।

बेसल गैंग्लिया की क्षमताओं को देखने के लिए आगे दिया गया ग्राफ देखें। पहले ग्राफ में चूहे की उस समय की दिमागी गतिविधियाँ नज़र आ रही हैं, जब वे पहली बार भूलभुलैयाँ के अंदर गए थे। शुरुआत में उसका दिमाग निरंतर मेहनत कर रहा था -

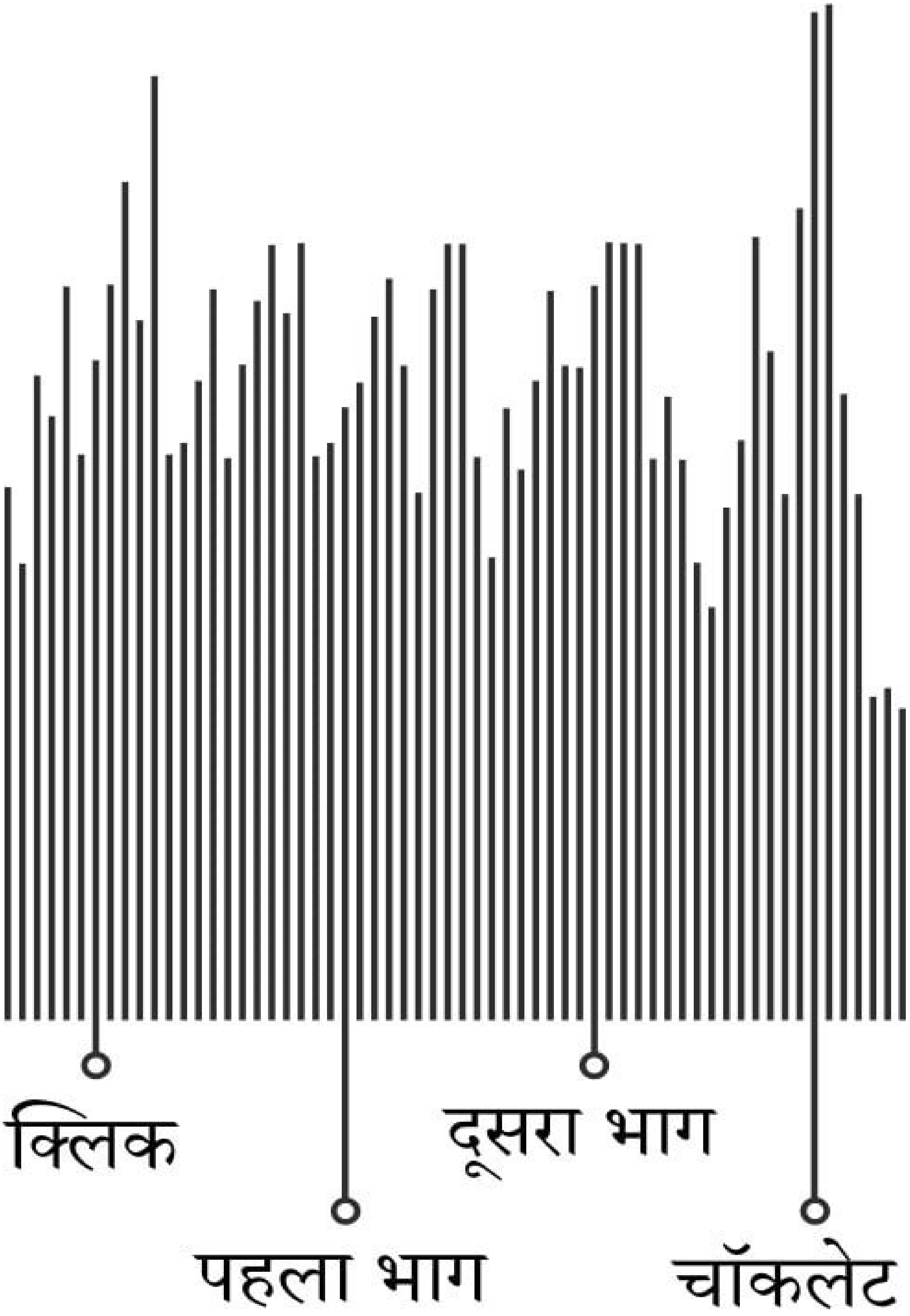
क्लिक
दूसरा भाग
पहला भाग
चॉकलेट

एक सप्ताह तक अभ्यास करने के बाद चूहे भूलभुलैयाँ के रास्ते से परिचित हो गए और इसीलिए अब उनकी दिमागी गतिविधियों में कमी आ गई थी।

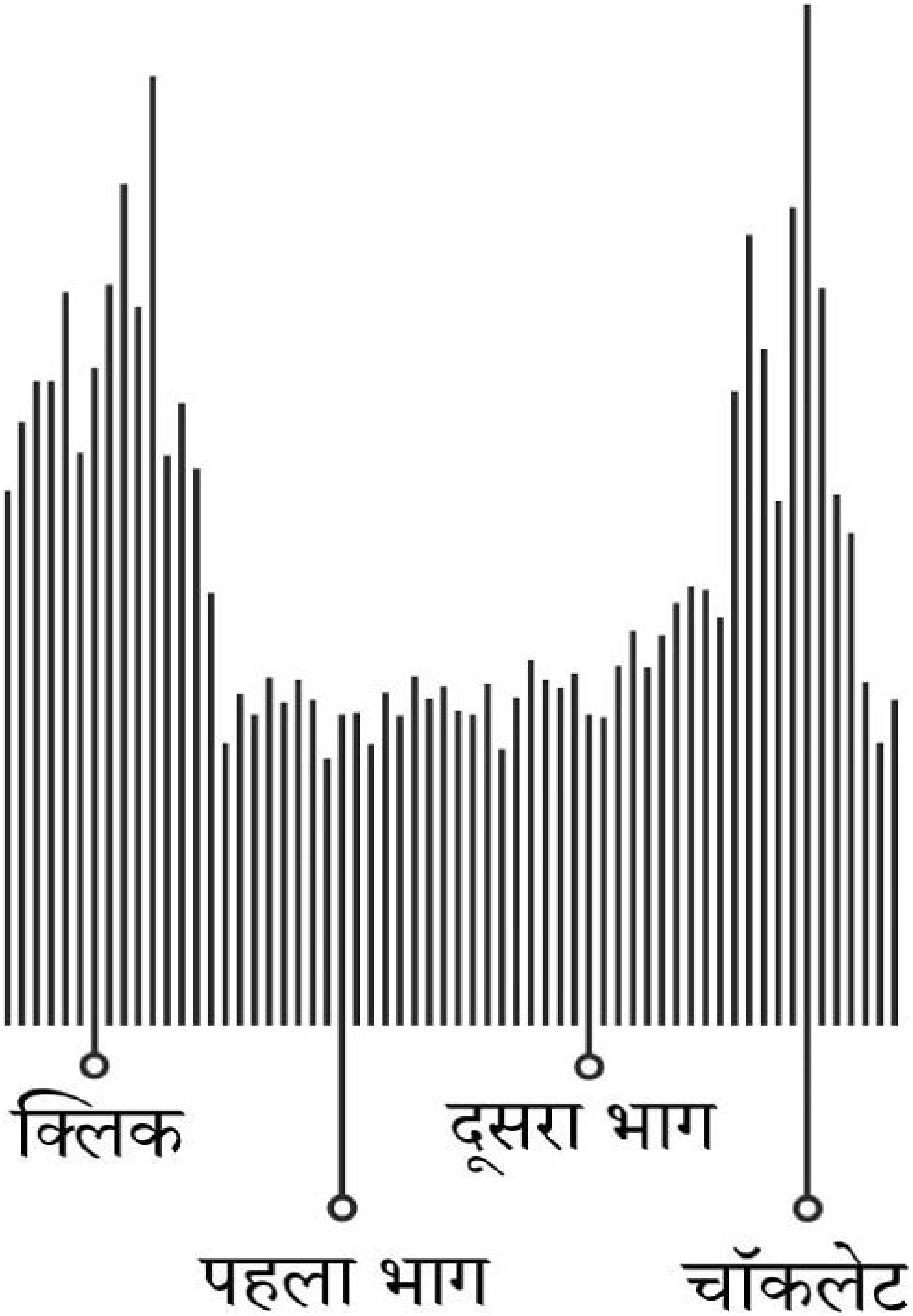
क्लिक
पहला भाग
दूसरा भाग
चॉकलेट

इस प्रक्रिया में दिमाग नियमित क्रियाओं को सहज व्यवहार या आदतों में परिवर्तित कर देता है और इसे 'चंकिंग' कहते हैं। यह प्रक्रिया हमारे अंदर विकसित होनेवाली आदतों का मूल है। अपने रोज़मर्रा के जीवन में मनुष्य ऐसे दर्जनों सहज व्यवहारों यानी आदतों पर निर्भर होता है। इनमें से कुछ आदतें आसान होती हैं। जैसे आप हर रोज़ सुबह अपने दाँत साफ करने के लिए किसी रोबोट की तरह स्वचलित ढंग से सबसे पहले टूथब्रश पर टूथपेस्ट लगाते हैं और फिर टूथब्रश को मुँह में डालते हैं। इसी तरह कुछ और आदतें हैं, जो अपेक्षाकृत जटिल हैं, जैसे रोज़ सुबह स्कूल, कॉलेज या ऑफिस के लिए तैयार होना, कपड़े पहनना या बच्चों के लिए खाना बनाना वगैरह।

अन्य कुछ नियमित क्रियाएँ इतनी जटिल होती हैं कि इंसान के शरीर में सदियों पहले विकसित हुआ तंतुओं का एक छोटा-सा गोला उन नियमित क्रियाओं को आदतों में परिवर्तित कर देता है। यह सचमुच हैरानी की बात है। उदाहरण के तौर पर हर रोज़ अपनी कार को घर की पार्किंग से बाहर निकालना। जब आपने नया-नया गाड़ी चलाना सीखा था, तब आपको हर जगह, चाहे घर की पार्किंग हो या बाहर के रास्ते, गाड़ी चलाते समय बहुत ध्यान देना पड़ता था। यह स्वाभाविक भी था क्योंकि तब आपको अनेकों क्रियाएँ करनी पड़ती थीं, जैसे पॉर्किंग में जाना... गाड़ी खोलना... गाड़ी की सीट को अपनी ज़रूरत के मुताबिक ठीक करना... शीशों को ठीक करना और उनमें देखकर यह सुनिश्चित करना कि रास्ते में कोई रुकावट तो नहीं है... ब्रेक पर अपना पैर रखना... गाड़ी को रिवर्स गीअर में डालना... ब्रेक पर से पैर हटाना... मन ही मन पार्किंग से रास्ते की दूरी नापना... पहियों को सीधा रखते हुए यह जायज़ा लेना कि रास्ते से कोई दूसरी गाड़ी तो नहीं आ रही... मन ही मन यह हिसाब लगाना कि शीशों में नज़र आ रहे आपके घर के बाहर पड़े कचरे के डिब्बे असल में गाड़ी से कितनी दूरी पर हैं... इसी दौरान अपनी साथ वाली सीट पर बैठे बच्चे को रेडियो से खेलने के लिए मना करना... इसके बाद धीरे-धीरे एक्सीलेटर और ब्रेक को संतुलित करना... और फिर गाड़ी आगे बढ़ाना... आदि।

लेकिन कुछ ही दिनों में आपको इन सब नियमित क्रियाओं की आदत पड़ जाती है और आप बिना कोई विचार किए, बड़े आराम से हर रोज़ अपनी गाड़ी पॉर्किंग से बाहर निकाल लेते हैं।

हर सुबह करोड़ों लोग यह कठिन कार्य करते हैं और इसके लिए उन्हें ज़रा भी विचार करने की ज़रूरत नहीं पड़ती। इसका श्रेय बेसल गैंग्लिया को ही जाता है। जैसे ही आप अपनी गाड़ी की चाभियाँ हाथ में लेते हैं, आपका दिमाग तुरंत इस आदत को पहचान लेता है। जब आप पहली बार गाड़ी को पॉर्किंग से बाहर निकाल रहे थे, उस समय की सभी क्रियाओं को बेसल गैंग्लिया ने संग्रहित कर लिया था। इस तरह हमारी आदतें अपना काम शुरू कर देती हैं और हमारे दिमाग का बाकी हिस्सा अन्य विचारों के लिए तैयार रहता है। यही कारण है कि गाड़ी को पार्किंग से बाहर निकालते समय आपको अक्सर अन्य चीज़ें याद आ जाती हैं, जैसे कि आपका बेटा अपना खाने का डिब्बा घर में ही भूल आया है।

वैज्ञानिकों के अनुसार किसी भी कार्य को करने के लिए हमारा दिमाग हर समय सबसे कम मेहनतवाला तरीका ढूँढ़ रहा होता है। इसी से आदतों का निर्माण होता है। दिमाग हर प्रक्रिया को आदत बना सकता है क्योंकि इससे दिमाग के बाकी हिस्सों को आराम मिलता है। मेहनत कम करने की यह प्रवृत्ति बहुत फायदेमंद होती है। एक कुशल दिमाग कम जगह घेरता है, जिससे सिर का आकार छोटा रहता है। इससे बच्चे के जन्म में आसानी होती है और नवजात शिशु व माँ की मृत्युदर के आँकड़े घटते हैं। एक कुशल दिमाग होने के कारण ही हमें इस तरह की चीज़ों के बारे में निरंतर सोचना नहीं पड़ता कि हमें क्या खाना है, कैसे चलना-फिरना है या कहाँ उठना-बैठना है। इससे हमारी मानसिक शक्ति अन्य महत्वपूर्ण कार्यों में उपयोग होती है। इसीलिए मनुष्य भाले से लेकर सिंचाई यंत्रों तक और आगे चलकर हवाई जहाज से लेकर वीडियो गेम तक का आविष्कार कर सका।

लेकिन दिमाग की इसी शक्ति के कारण विपरीत परिणाम भी सामने आ सकते हैं। यदि दिमाग पूरी तरह कार्यरत न हो, तो हम कुछ महत्वपूर्ण जानकारियाँ ग्रहण नहीं कर पाएँगे यानी कुछ चीज़ों पर गौर नहीं कर पाएँगे। जैसे अगर हमारा दिमाग पूरी तरह कार्यरत न हो तो हम झाड़ियों के पीछे छिपे हमलावर पर या सड़क के दूसरी ओर से तेज़ी से आ रही गाड़ी पर गौर नहीं कर पाएँगे। जिसका परिणाम घातक हो सकता है। ऐसे हादसों से बचने के लिए हमारे बेसल गैंग्लिया ने एक कारगर तंत्र विकसित किया है ताकि यह समझा जा सके कि आदतों को कब अपना काम शुरू करना है। यह तंत्र तब सक्रिय होता है, जब कोई आदत अपना कार्य शुरू या बंद करती है।

इस तंत्र की कार्य-प्रक्रिया को समझने के लिए चूहों के दूसरे ग्राफ को दोबारा देखें। आप देखेंगे कि भूलभुलैयाँ की शुरुआत में 'क्लिक' की आवाज़ आते ही दरवाज़ा खुलने पर और अंत में चॉकलेट मिलने पर चूहों की दिमागी गतिविधियों में एक क्षणिक परिवर्तन आता है।

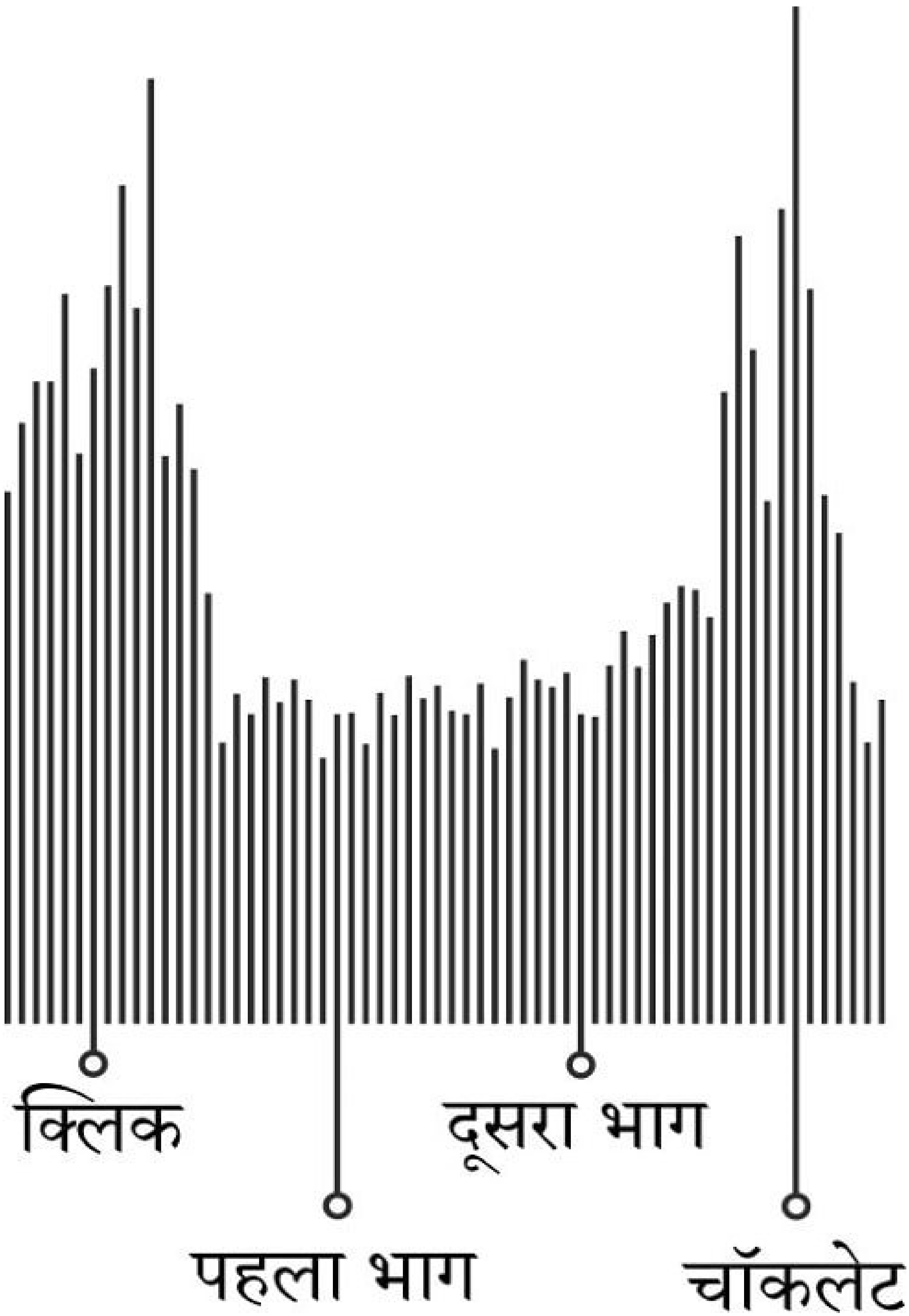
क्लिक
पहला भाग
दूसरा भाग
चॉकलेट

इन क्षणिक परिवर्तनों के दौरान दिमाग यह तय करता है कि कब, कौन सी आदत का उपयोग करना है। उदाहरण के लिए दरवाज़े के पीछे खड़ा चूहा ये नहीं जानता कि दरवाज़े के दूसरी तरफ एक जानी-पहचानी भूलभुलैया है या फिर कोई नई अलमारी है, जिसमें किसी बिल्ली के होने की आशंका है। इस संदिग्धता को दूर करने के लिए प्रक्रिया की शुरुआत में चूहे का दिमाग अधिक मेहनत करके सारी जानकारी ग्रहण करता है। इस दौरान दिमाग ऐसे इशारों का इंतजार करता है, जिससे यह निश्चित हो सके कि अब कौन सी आदत उपयोग में लानी है। दरवाज़े के पीछे खड़े चूहे को जैसे ही 'क्लिक' की आवाज़ सुनाई देती है, उसका दिमाग फौरन भूलभुलैया की आदत को कार्यरत कर देता है। इस प्रक्रिया के अंत में इनाम मिलने पर दिमाग अपनी आराम की अवस्था से निकलकर एक बार फिर से यह पक्का करता है कि सब कुछ उम्मीद के मुताबिक हुआ या नहीं।

हमारे दिमाग के अंदर होनेवाली इस प्रक्रिया के तीन चरण होते हैं। पहला चरण है 'इशारा'। इस चरण में दिमाग की स्वचलित अवस्था सक्रिय हो जाती है और उसे यह सूचना मिलती है कि कौन-सी आदत का उपयोग करना है। अगला चरण है 'सहज व्यवहार' का, जो शारीरिक, मानसिक या भावात्मक में से कुछ भी हो सकता है। अंतिम चरण है, 'इनाम' जिसमें आपका दिमाग यह निर्णय लेता है कि इस रास्ते को भविष्य के लिए याद रखना है या नहीं।

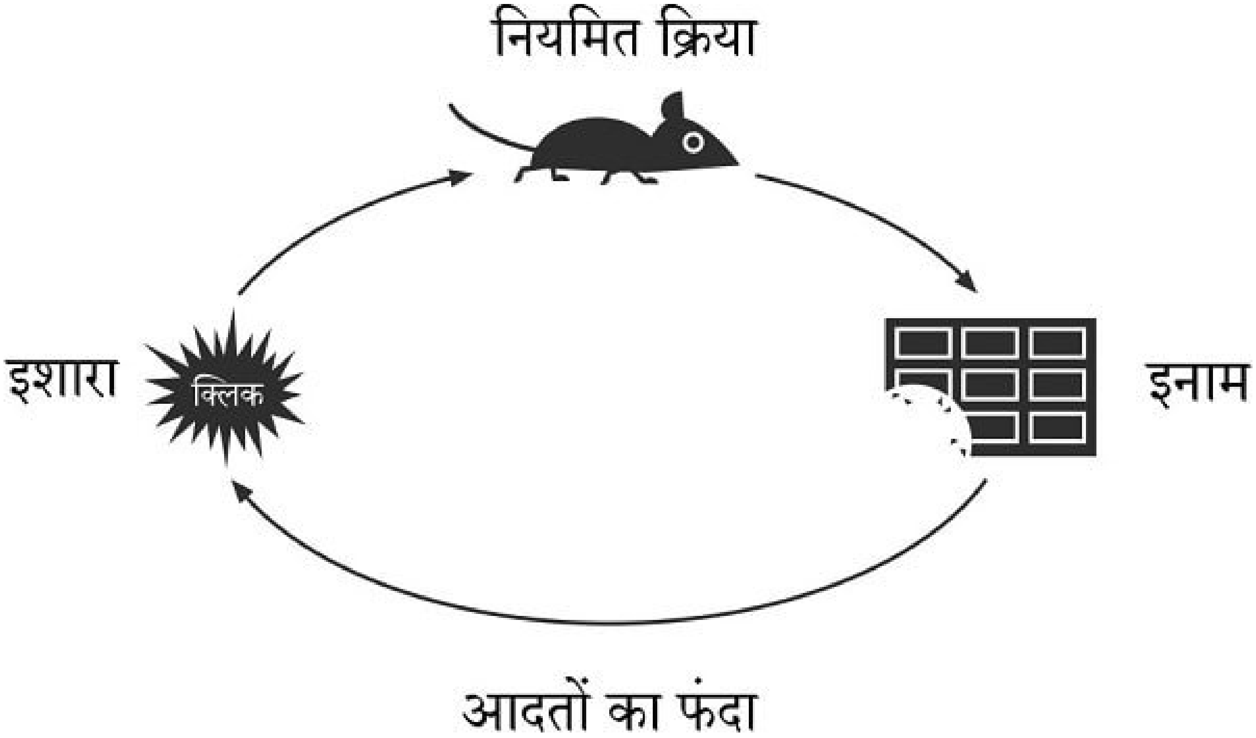

समय के साथ, इशारा - सहज व्यवहार - इनाम का यह रास्ता अधिक से अधिक स्वचलित बनता जाता है। इशारा और इनाम एक साथ मिलकर पूर्वानुमान और इच्छा जगाते हैं। फिर आखिरकार एम.आय.टी. की ठंडी प्रयोगशाला में या आपके घर के पॉर्किंग में एक आदत का निर्माण होता है।

***

आदतें नियति नहीं हैं। अगले दो अध्यायों में इस बात को स्पष्ट किया गया है कि आदतों को नज़रअंदाज भी किया जा सकता है, बदला भी जा सकता है और एक आदत के स्थान पर दूसरी आदत का निर्माण भी किया जा सकता है। लेकिन आदत के रास्ते का आविष्कार इतना महत्वपूर्ण होने का कारण यह है कि इससे एक मूल सत्य सामने आता है। जब कोई आदत निर्मित होती है और दिमाग उसका उपयोग करता है, तो निर्णय लेने के कार्य में दिमाग पूरी तरह शामिल नहीं होता। उस समय दिमाग ज़्यादा मेहनत नहीं करता और अन्य कार्यों पर ध्यान देने लगता है। इसलिए जब तक आप किसी आदत को छोड़ने की कोशिश नहीं करते और उससे संबंधित दिनचर्या में बदलाव नहीं लाते, तब तक पुरानी आदतें स्वचलित ढंग से अपना काम जारी रखती हैं।

लेकिन आदतें कैसे काम करती हैं, यह समझने से और आदत के फंदे की संरचना के बारे में जान लेने से उन्हें नियंत्रित करना आसान हो जाता है। अगर आप आदतों को टुकड़ों में बाँटकर देखें तो इनका पुनर्निर्माण भी किया जा सकता है।

बेसल गैंग्लिया पर अनेकों प्रयोग कर चुकी एम.आय.टी. की वैज्ञानिक एन्न ग्रेबिअल ने बताया, ‘पहले हमने चूहों को इस बात के लिए प्रशिक्षित किया कि उनके अंदर भूलभुलैयाँ को तेज़ी से पार करने की आदत विकसित हो जाए। इसके बाद हमने चॉकलेट यानी उनके इनाम स्थान को बदलकर इस आदत को खत्म भी किया। फिर कुछ दिनों बाद चॉकलेट को दोबारा पुराने स्थान पर रखा गया, जिससे खत्म हो चुकी पुरानी आदत दोबारा उभर आई। दरअसल आदतें कभी भी पूरी तरह नहीं मिटतीं। यह अच्छा ही है कि आदतें हमारे दिमाग में गहराई तक बैठ जाती हैं। इसका हमें बहुत फायदा होता है। वरना सोचिए अगर हर बार छुट्टी से लौटकर आपको गाड़ी चलाना सीखना पड़ता, तो क्या होता? बस आदतों की एक ही समस्या है कि आपका दिमाग अच्छी और बुरी आदतों में फर्क नहीं कर सकता। इसलिए आपकी बुरी आदतें हमेशा आपके दिमाग के सही इशारे और इनाम के इंतजार में रहती हैं।’

इससे स्पष्ट होता है कि हम नियमित व्यायाम करने या खानपान की पुरानी आदतें छोड़कर नई आदतें अपने अंदर आसानी से विकसित क्यों नहीं कर पाते। जब हम मैदान में दौड़ने के बजाय घर पर आराम से बैठे रहते हैं अथवा मिठाई का डिब्बा नज़र आते ही उसमें से एक टुकड़ा उठाकर खा लेते हैं, तो हमारा दिमाग उस समय इन क्रियाओं का संग्रह कर रहा होता है। लेकिन इसी चीज़ का सही उपयोग करके हम अपनी आदतों का नियंत्रण अपने हाथों में भी ले सकते हैं। ज़रा लीसा एलन की कहानी को याद कीजिए,

जो इस पुस्तक की शुरुआत में आपको बताई गई थी। कायरो की यात्रा के बाद लीसा एलन ने आदत के रास्ते को समझकर अपने जीवन का पुनर्निर्माण किया। लीसा एलन की तरह हम भी ऐसा कर सकते हैं, बस ज़रूरत है नए पैटर्न्स को सीखने की, जो पुरानी आदतों पर हावी हो सकें। प्रयोगों से सामने आया है कि आप यदि एक बार नए पैटर्न्स या आदतें सीख लें, तो रोज़ सुबह दौड़ने और व्यायाम करने या मिठाई के डिब्बे को नज़रअंदाज करने की आदत भी विकसित की जा सकती है।

अगर आदतों का फंदा न रहे, तो रोज़मर्रा के जीवन की बारीकियों से जूझने के दबाव के चलते हमारा दिमाग काम करना बंद कर दे। जिन लोगों का बेसल गैंग्लिया किसी हादसे या बीमारी से क्षतिग्रस्त हो जाता है, वे मानसिक तौर पर पंगु हो जाते हैं। उन्हें दरवाजा खोलने और जूते के फीते बाँधने जैसी सामान्य क्रियाओं से लेकर क्या खाना या पीना है, जैसे रोज़मर्रा के निर्णय लेने में भी दिक्कत होने लगती है। वे छोटी-मोटी या मामूली चीज़ों को नज़रअंदाज करने की योग्यता भी खो देते हैं। एक अध्ययन के अनुसार, क्षतिग्रस्त बेसल गैंग्लिया वाले लोग दूसरों के चेहरे के हावभाव पढ़ने में असफल रहते हैं, इसमें डर और घृणा के भाव भी शामिल हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि वे यह निश्चित नहीं कर पाते कि उन्हें सामनेवाले के चेहरे के कौन-से भाग पर अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिए। बेसल गैंग्लिया के बिना हम अपनी उन असंख्य आदतों को भूल जाएँगे, जो हर रोज़ हमारे काम आती हैं। क्या आज सुबह जूते पहनते समय आपको इस बात पर विचार करना पड़ा था कि पहले दायाँ जूता पहनना है या बायाँ? क्या आपको इस बात का निर्णय लेने में दिक्कत महसूस हो रही थी कि आपको नहाने से पहले दाँत साफ करने चाहिए या बाद में?

बेशक आपका जवाब 'नहीं' ही होगा। क्योंकि रोज़मर्रा के ऐसे निर्णय लेना हमारा सहज स्वभाव होता है। जब तक आपका बेसल गैंग्लिया स्वस्थ है और उसे मिलनेवाले इशारों में निरंतरता है, तब तक तो ठीक है, तब तक आदतों पर निर्भर ये सारी चीज़ें ठीक से होती रहेंगी। (हालाँकि जब आप कहीं छुट्टी मनाने जाते हैं, तो अनजाने में ही, आपके नहाने, मुँह धोने और तैयार होने वगैरह में बदलाव आ सकता है।)

लेकिन आदतों पर दिमाग की यह निर्भरता घातक भी सिद्ध हो सकती है। आदतें हमारे लिए जितना बड़ा वरदान होती हैं, उतना ही बड़ा श्राप भी।

उदाहरण के लिए यूज़ीन, जिसकी याद्दाश्त खोने के बाद भी आदतों के कारण उसका जीवन काफी हद तक सहज बना रहा, लेकिन फिर इन्हीं आदतों ने यूज़ीन से उसका सब कुछ छीन भी लिया।

3

याद्दाश्त विशेषज्ञ लैरी स्क्वायर ने, यूज़ीन के साथ जितना ज़्यादा समय बिताया, उनका यह विश्वास उतना ही बढ़ गया कि उनका मरीज़ किसी न किसी तरह नई आदतें

सीख रहा है। यूज़ीन के दिमाग का स्कैन करने पर पता चला कि उसका बेसल गैंग्लिया विषाणुओं के हमले के बावजूद सुरक्षित बच गया है। वैज्ञानिक विचार करने लगे कि क्या यह संभव है कि क्षतिग्रस्त होने के बावजूद भी यूज़ीन का दिमाग 'इशारा-क्रिया-इनाम' के रास्ते का ही उपयोग करे? क्या यह प्राचीन तंत्रिका प्रक्रिया स्पष्ट कर सकती है कि यूज़ीन बाज़ार में घूमकर सुरक्षित घर कैसे लौट आता है या रसोईघर में रखा मूँगफली का डिब्बा बिना किसी मदद के कैसे खोज लाता है?

यूज़ीन के दिमाग में नई आदतों का निर्माण हो रहा है या नहीं, यह जानने के लिए स्क्वायर ने एक प्रयोग किया। उन्होंने अलग-अलग आकार के प्लास्टिक के टुकड़ों और भड़कीले रंग के खिलौनों को एक आयताकार कार्डबोर्ड पर चिपका दिया। उन्होंने इन कार्डबोर्ड्स को 'ए' और 'बी' नामक आठ जोड़ियों में बाँट दिया। हर जोड़ी में कार्डबोर्ड के किसी एक टुकड़े के नीचे एक स्टीकर लगा दिया, जिस पर 'सही' लिखा हुआ था।

यूज़ीन के सामने एक टेबल पर ये जोड़ियाँ रखी गईं। उसे हर जोड़ी से एक का चुनाव करने के लिए कहा गया। साथ ही यह देखने के लिए भी कहा गया कि उसके द्वारा चुने हुए टुकड़े के नीचे 'सही' लिखा हुआ स्टीकर लगा है या नहीं। यह याद्दाश्त को परखने का एक सामान्य तरीका है। चूँकि इस प्रयोग में कार्डबोर्ड के सिर्फ सोलह टुकड़े हैं, जो जोड़ियों में बँटे हैं इसलिए सिर्फ एक-दो बार प्रयोग करके भी अधिकतर लोग यह याद रख सकते हैं कि इसमें से किसके नीचे 'सही' का स्टीकर लगा हुआ है। यहाँ तक कि एक बंदर भी आठ-दस दिनों के अभ्यास के बाद सही कार्डबोर्ड याद कर सकता है।

यूज़ीन सप्ताह में दो बार यह प्रयोग करता था, लेकिन कई बार प्रयोग करने के बाद भी वह 'सही' कार्डबोर्ड को याद नहीं रख पा रहा था।

प्रयोग शुरू होने के कुछ सप्ताह बाद एक दिन एक शोधकर्ता ने यूज़ीन से पूछा, 'क्या तुम जानते हो कि आज तुम्हें यहाँ क्यों लाया गया है?'

'नहीं, मैं नहीं जानता,' यूज़ीन ने जवाब दिया।

'मैं तुम्हें कुछ चीज़ें दिखानेवाला हूँ। पता है क्यों?'

'मुझे इन चीज़ों का वर्णन करना है या फिर इनकी उपयोगिता बतानी है?'

यूज़ीन के इस सवाल से स्पष्ट था कि उसे याद ही नहीं था कि इसके पहले भी वह कई बार ऐसे सत्रों में शामिल हो चुका है।

लेकिन जैसे-जैसे समय गुज़रता गया, यूज़ीन के प्रदर्शन में सुधार आता गया। 28 दिनों के प्रशिक्षण के बाद यूज़ीन 85 प्रतिशत मौकों पर 'सही' चुनाव करने लगा था। 36 दिनों के बाद वह 95 प्रतिशत मौकों पर 'सही' चीज़ें चुनने लगा। एक बार इस प्रयोग में हिस्सा लेने के बाद यूज़ीन ने शोधकर्ता से हैरान होकर पूछा, 'मैं यह सब कब

से कर रहा हूँ?’

‘मुझे बताओ कि तुम्हारे दिमाग में क्या चल रहा है,’ शोधकर्ता ने यूज़ीन से पूछा। ‘क्या चीज़ों को उठाते समय तुम्हें ऐसा लगता है कि यह सब तुम पहले भी कर चुके हो?’

‘नहीं,’ यूज़ीन ने उत्तर दिया। फिर अपने सिर की ओर इशारा करते हुए कहा कि ‘लगता है जैसे यह सब मेरे दिमाग में पहले से बसा हुआ है। शायद इसीलिए मेरा हाथ अपने आप ही इन चीज़ों की ओर बढ़ने लगता है।’

स्क्वायर को अपना जवाब मिल गया था। यूज़ीन को इशारा मिल रहा था यानी चीज़ों का एक जोड़ा जो हमेशा समान रहता था। यह एक नियमित क्रिया थी। उसे कार्डबोर्ड क्यों पलटना है, यह न जानते हुए भी यूज़ीन उसे पलटकर नीचे लगे स्टीकर को देखता था। इस क्रिया में यूज़ीन के लिए हर बार एक इनाम था - ‘सही’ का स्टीकर मिलने पर उसे मिलनेवाली संतुष्टि। आखिरकार आदतों का एक फंदा फिर से सामने था।

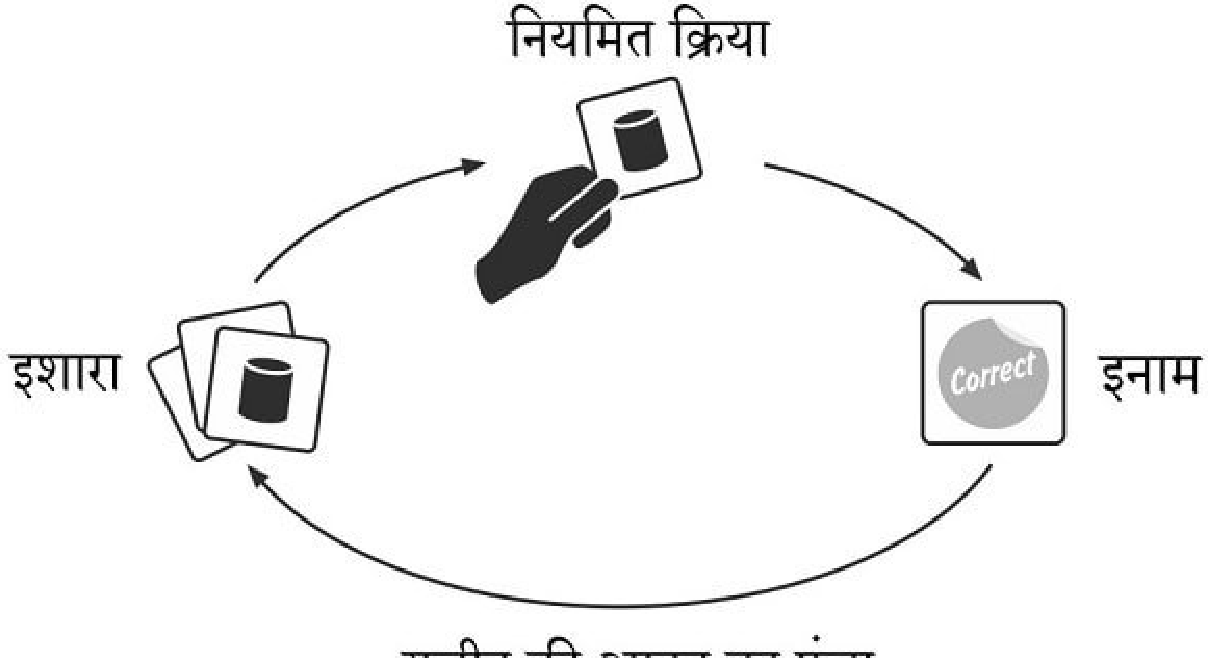

यूज़ीन की आदत का फंदा

इसके बाद स्क्वायर ने एक और प्रयोग किया ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि यह पैटर्न कुछ और नहीं बल्कि एक आदत ही है, उसने सभी सोलह वस्तुएँ यूज़ीन के सामने रखीं। फिर यूज़ीन को ‘सही’ वस्तुओं को छाँटने के लिए कहा गया।

यूज़ीन समझ नहीं पा रहा था कि कहाँ से शुरू करे। ‘हे भगवान! कैसे याद करूँ?’ वह परेशान हो गया। उसने एक चीज़ की ओर हाथ बढ़ाया और उसे पलटने लगा।

प्रयोगकर्ता ने उसे रोककर समझाया कि उसे केवल 'सही' वस्तुओं को छाँटकर अलग करना है। वह उन्हें पलट क्यों रहा है?

'शायद मुझे इसकी आदत हो गई है,' यूज़ीन ने जवाब दिया।

यूज़ीन इस प्रयोग को पूरा नहीं कर पाया। जैसे ही उन चीज़ों को यूज़ीन के आदत के फंदे से बाहर रखा गया, वह हड़बड़ा गया।

स्क्वायर यही देखना चाहते थे। यूजीन के अंदर नई आदतें निर्मित करने की योग्यता थी, भले ही उसमें ऐसी क्रिया या चीज़ें शामिल हों, जिन्हें वह कुछ क्षणों से ज़्यादा याद नहीं रख सकता। इससे साफ हो गया कि यूज़ीन हर रोज़ सुबह अकेले टहलने कैसे चला जाता है। दरअसल रोज़ सुबह बाहर जाने पर उसे जो इशारे मिलते थे, वे हमेशा समान होते थे, जैसे रास्ते के किनारे पर लगे पेड़ या डाक के डिब्बों का स्थान वगैरह। इसीलिए अपना घर याद न होने के बावजूद भी उसकी ये आदतें उसे सुरक्षित घर पहुँचा देती थीं। इससे यह भी स्पष्ट हो गया कि भूख न होने के बावजूद भी यूज़ीन दिन में तीन-चार बार नाश्ता क्यों करता था। जब भी उसे स्पष्ट इशारे मिलते, जैसे रेडिओ की आवाज या खिड़की से आती धूप तो वह अपने बेसल गैंग्लिया के अनुसार आदतों को दोहराने लगता।

यूज़ीन की आदतों के इस फंदे के बारे में पता लगने के बाद अब ऐसी दर्जनों आदतें सामने आने लगीं, जो पहले अनदेखी रह जाती थीं। उदाहरण के लिए यूज़ीन की बेटी अक्सर अपने माता-पिता से मिलने उनके घर आया करती थी। वह आते ही सबसे पहले सामने के कमरे में बैठे यूज़ीन से कुछ देर बातचीत करती। इसके बाद कुछ देर तक रसोई में अपनी माँ से बातें करती और फिर दोनों को 'अलविदा' कहकर निकल जाती। बेटी के जाने तक यूज़ीन भूल जाता था कि उन दोनों के बीच कोई बातचीत हुई है और इसीलिए वह इस बात से बेहद गुस्सा हो जाता था कि उसकी बेटी उसे मिले बिना ही चली गई। फिर कुछ ही देर बाद उसे यह भी याद नहीं रह जाता था कि उसे किस बात से इतना गुस्सा आया है। लेकिन अब उसके अंदर यह भावनात्मक आदत निर्मित हो चुकी थी। इसलिए उसका गुस्सा बना रहता, जो उसकी समझ से बाहर था।

बेवरली के अनुसार, 'वह गुस्से में कभी-कभी मेज़ पर हाथ पटकने लगता और कोसना शुरू कर देता। उसके इस बरताव की वजह पूछने पर उसका जवाब होता कि मुझे नहीं पता कि कारण क्या है, पर मैं बहुत गुस्से में हूँ।' यूज़ीन गुस्से में आकर कुर्सी को लात मारता या अगर कोई उसके कमरे में आए तो वह उस पर चिल्लाने लगता। और फिर कुछ ही मिनटों बाद सब कुछ भूलकर मुस्कुराने लगता और इधर-उधर की बातें करने लगता। 'यूज़ीन को एक बार गुस्सा आने के बाद जब तक वह हिंसात्मक रूप से अपना गुस्सा निकाल नहीं लेता, तब तक शांत नहीं हो पाता था।'

स्क्वायर के नए प्रयोग से एक और बात सामने आई कि आदतें आश्चर्यजनक रूप से

बहुत ही नाजुक होती हैं। यूज़ीन के मामले में अगर आदतों के फंदे के इशारों में छोटा सा भी बदलाव आ जाता तो वह बुरी तरह हड़बड़ा जाता था। जैसे जब भी यूज़ीन टहलने निकलता, अगर उस समय रास्ते पर कहीं कोई मरम्मत का काम चल रहा हो या पिछली रात आई आँधी के कारण पेड़ों की टहनियाँ फुटपाथ पर गिरी पड़ी हों, तो उसकी आदतों के फंदे के इशारों में परिवर्तन आ जाता था। ऐसी स्थिति में, घर के बिलकुल करीब होने के बावजूद भी यूज़ीन गुमराह हो जाता और यह नौबत आ जाती कि बिना किसी पड़ोसी की मदद के वह घर नहीं पहुँच पाता। इसी तरह अगर यूज़ीन की बेटी वापस लौटने से ठीक पहले उसके साथ दस सेकंड भी बातचीत कर ले, तो यूज़ीन की गुस्सा करने की आदत नहीं उभरती थी।

स्क्वायर ने यूज़ीन पर जो प्रयोग किए, उनके चलते वैज्ञानिक तबके में दिमाग की कार्यप्रणाली को लेकर क्रांतिकारी परिवर्तन आए। स्क्वायर ने अपने प्रयोगों से यह साबित कर दिया था कि याद्दाश्त के बिना भी अचेतन मन नई जानकारी सीख और समझ सकता है। यूज़ीन के मामले से स्पष्ट था कि हमारे व्यवहार पर हमारी याद्दाश्त के अलावा हमारी आदतों का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। हम यह भूल जाते हैं कि हमारी आदतें किस घटना या अनुभव से निर्मित हुई हैं। लेकिन आदतों का फंदा एक बार निर्मित होने के बाद हमेशा याद रहता है। यहाँ तक कि कई बार हमारा व्यवहार दरअसल आदतों का ही परिणाम होता है और हमें पता भी नहीं चलता।

***

यूज़ीन की आदतों पर स्क्वायर का पहला शोधपत्र छपने के बाद से 'आदत निर्माण का विज्ञान' एक ऐसे विषय के रूप में उभरा है, जिसका हर प्रतिष्ठित संस्थान में अध्ययन किया जाता है। ड्यूक, हार्वर्ड, यू.सी.एल.ए., येल, यू.एस.सी., प्रिंसटन, द यूनिवर्सिटी ऑफ पेन्सिलवेनिया, यूनायटेड किंगडम, जर्मनी और नीदरलैंड के महाविद्यालयों के शोधकर्ताओं के अलावा प्रॉक्टर एंड गैम्बल, माइक्रोसॉट, गूगल और ऐसी ही सौ से भी अधिक कंपनियों के वैज्ञानिक न्यूरोलॉजी, आदतों के मनोविज्ञान, आदतों के गुण व दोष और आदतें क्यों बनती हैं और उन्हें कैसे बदला जा सकता है, जैसे विषयों का अध्ययन कर रहे हैं।

शोधकर्ता अब यह जान चुके हैं कि आदतों के फंदे के इशारे किसी भी तरह के हो सकते हैं। ये प्रकट इशारे भी हो सकते हैं, जैसे कोई चॉकलेट, मिठाई या टी.वी. पर चलता विज्ञापन। इसके अलावा भी कई अन्य प्रकार के इशारे होते हैं, जैसे - कोई खास स्थान, दिन का कोई विशेष समय, कोई भावना, विचारों की श्रृंखला या कुछ विशेष लोगों का साथ वगैरह। निरंतर चलनेवाली क्रियाएँ बहुत जटिल या बहुत सहज भी हो सकती हैं। (जैसे भावनात्मक इशारों से जुड़ी आदतें मिलीसेकेंड में नापी जाती हैं) इसी तरह इनाम भी अलग-अलग प्रकार के हो सकते हैं। इसमें शारीरिक अनुभूति जगानेवाले खाद्यपदार्थ या ड्रग्स् से लेकर तारीफ के साथ आनेवाली गर्व की भावना तक सब कुछ शामिल है।

अन्य शोधकर्ताओं ने इस विषय पर जो भी प्रयोग किए, उनका निष्कर्ष स्क्वायर द्वारा यूज़ीन पर किए गए शोध के निष्कर्ष जैसा ही था कि आदतें शक्तिशाली पर नाज़ुक होती हैं। आदतें हमारे चेतन मन से बाहर विकसित हो सकती हैं और साथ ही उन्हें सोचे-समझे ढंग से प्रयास करके भी विकसित किया जा सकता है। आदतें कई बार हमारी आज्ञा के बिना ही विकसित हो जाती हैं, पर उन्हें छोटे-छोटे अंशों में विभाजित कर हम उन्हें अपनी ओर से एक नया रूप दे सकते हैं। हमारे जीवन पर आदतों का गहरा प्रभाव पड़ता है। आदतें शक्तिशाली होती हैं और कई बार हमारी व्यावहारिक बुद्धि पर हावी भी हो जाती हैं।

उदाहरण के लिए नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ एल्कोहल अब्यूज़ एंड एल्कोहलिज्म से जुड़े शोधकर्ताओं ने चूहों पर इसी बात का अध्ययन किया। उन्होंने चूहों को इशारा मिलते ही एक लीवर दबाने के लिए प्रशिक्षित किया। लीवर दबाने की यह क्रिया चूहों की आदत बन जाए इसलिए लीवर दबाने के बाद हर बार उन्हें इनाम के तौर पर खाद्यपदार्थ दिए गए। फिर वैज्ञानिकों ने उस खाद्यपदार्थ में एक ज़हर मिला दिया ताकि उसे खाकर चूहे हिंसक रूप से बीमार पड़ जाएँ और साथ ही ऐसा इंतजाम भी कर दिया कि खाद्यपदार्थ की ओर जानेवाले मार्ग पर कदम रखते ही चूहों को बिजली के झटके लगें। जल्द ही चूहों को उस ज़हरीले खाद्यपदार्थ और बिजली के झटके देनेवाले रास्ते की पहचान हो गई। फिर जब उन्हें सामान्य परिस्थितियों में वही खाद्यपदार्थ कटोरी में दिया गया या जब भी उन्हें पिंजरे का वह रास्ता दिखाया गया, जो बिजली के झटके देता है, तो वे उससे दूर ही रहते। इसके बावजूद जैसे ही चूहों को लीवर दबाने का 'इशारा' मिलता, तो वे खुद को रोक नहीं पाते थे। वे ज़हरीले खाद्यपदार्थ खाकर बीमार होने या बिजली के झटके खाने के डर के बावजूद लीवर दबाकर खाद्यपदार्थ की ओर जाने की कोशिश करते। यह आदत चूहों में इतनी गहराई तक बस गई थी कि खतरा जानते हुए भी वे खुद को रोक नहीं पाते थे।

इंसानों के बीच भी ऐसे अनेकों उदाहरण हर रोज़ मिलते हैं। उदाहरण के लिए फास्ट-फूड खाने की आदत का विचार करें। जैसे अगर आप दिनभर की मेहनत के बाद थके-हारे ऑफिस से घर लौट रहे हैं और घर पर आपके बच्चे भी भूखे हैं, तो ऐसे में कभी-कभी मैकडोनल्ड या बर्गर किंग पर रुककर कुछ खरीद लेने में कोई बुराई नहीं है। आखिर महीने में एक बार प्रोसेस्ड माँस, तली हुई नमकीन चीज़ें और मीठे शीतलपेय का सेवन करने से भला क्या बिगड़ जाएगा? ऐसा तो नहीं है कि आप हर रोज़ यही सब खाते हैं।

लेकिन आदतें हमारी आज्ञा के बिना ही विकसित हो जाती हैं। इस विषय पर हुए कई शोधों से पता चला है कि हर रोज़ फास्ट-फूड खाने की आदत के पीछे किसी भी परिवार का यह उद्देश्य नहीं होता कि उन्हें इसकी आदत लग जाए। दरअसल होता यह है कि महीने में एक बार फास्ट-फूड खाना, इशारों और इनाम के कारण, अक्सर सप्ताह में दो बार फास्ट-फूड खाने की आदत में तब्दील हो जाता है। फिर जल्द ही आपके बच्चे और अधिक मात्रा में बर्गर और तली हुई नमकीन चीज़ें खाने लग जाते हैं। यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्थ टेक्सास और येल यूनिवर्सिटी के शोधकर्ता जानना चाहते थे कि कई परिवारों में

ज़्यादा से ज़्यादा फास्ट-फूड खाने की आदत क्यों बढ़ रही है। अपने शोध से उन्हें आदतों के नए फंदे का पता चला। दरअसल ये परिवार समझ ही नहीं पाए कि उन्हें ऐसे इशारे और इनाम मिल रहे थे, जिससे आदतों के इस नए फंदे का निर्माण हो रहा था।

उदाहरण के लिए मैकडोनल्ड्स कंपनी का हर रेस्त्रां एक जैसा दिखता है। कंपनी का प्रयास रहता है कि हर आउटलेट की बनावट, वहाँ के कर्मचारियों का ग्राहकों से बात करने का तरीका आदि एक समान हो। ताकि हर चीज़ से ऐसे इशारे दिए जा सकें, जो ग्राहक के अंदर नियमित रूप से कंपनी के उत्पादों का सेवन करने की आदत विकसित करें। मैकडोनल्ड्स की ही तरह कई अन्य फूड चेन कंपनियों ने भी अपने खाद्यपदार्थों को विशेष रूप से इस तरह बनाया है, जिनका सेवन करते ही ग्राहक को फौरन इनाम मिलने का एहसास हो। जैसे कि 'फ्रेंच-फ्राइज' को विशेष रूप से इस तरह बनाया जाता है कि उसे मुँह में रखते ही आपको फौरन चिकनाई युक्त नमकीन स्वाद मिले। यह ऐसा स्वाद है, जो आपके मुँह में जाते ही आपके दिमाग के आनंद केंद्रों को संकेत भेजता है, जिससे दिमाग इस इनाम को याद कर लेता है और फिर बार-बार यही इनाम पाने की आदत का फंदा तैयार कर लेता है।

हालाँकि ये आदतें कच्ची ही होती हैं। जैसे अगर किसी इलाके का कोई फास्ट-फूड रेस्त्रां बंद हो जाए, तो उस इलाके में रहनेवाला वह परिवार जो उस रेस्त्रां में नियमित रूप से जाता था, वह उस इलाके से दूर जाकर कोई और रेस्त्रां ढूँढ़ने के बजाय दोबारा घर के खाने को प्राथमिकता देने लगता है। यहाँ तक कि एक छोटे से छोटा बदलाव भी ऐसी आदतों के फंदे को तोड़ सकता है। पर ये फंदे निर्मित होते समय हमें पता ही नहीं चलता कि हमारे दिमाग के किसी कोने में ऐसा कुछ हो रहा है, इसीलिए हम यह नहीं जान पाते कि हमें इन आदतों को कैसे नियंत्रित करना चाहिए। पर इशारों और इनाम पर ध्यान देकर हम अपनी आदतों में बदलाव ला सकते हैं।

4

यूज़ीन की बीमारी के सात साल बाद, सन 2000 तक, उसके जीवन में एक प्रकार का संतुलन आ गया था। वह हर सुबह टहलने जाता था, अपनी मर्ज़ी का खाना खाता था और कई बार तो वह दिन में पाँच-छह बार खाना खाता था! यूज़ीन को इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता था कि टी.वी. पर उसके पसंदीदा 'हिस्ट्री चैनल' पर नया कार्यक्रम आ रहा है या किसी पुराने कार्यकम का दोबारा प्रसारण किया जा रहा है। उसकी पत्नी जानती थी कि जब तक 'हिस्ट्री चैनल' चल रहा है, तब तक यूज़ीन अपनी मखमल की कुर्सी पर आराम से बैठा टी.वी. देखता रहेगा।

लेकिन जैसे-जैसे यूज़ीन की उम्र बढ़ती गई, उसकी आदतों का उसके जीवन पर बुरा असर पड़ने लगा। टी.वी. पर चल रहे कार्यक्रम में उसका मन लगा रहता था इसलिए वह दिनभर टी.वी. के सामने निष्क्रिय बैठा रहता था। यूज़ीन की इस आदत के कारण डॉक्टरों को चिंता थी कि कहीं उसे दिल की बीमारी न हो जाए। डॉक्टरों ने बेवरली को

बताया कि उसे यूज़ीन को हल्का और स्वास्थ्यवर्धक खाना खिलाना होगा। बेवरली ने डॉक्टरों की सलाह मानने की कोशिश भी की, लेकिन यूज़ीन कब क्या खाएगा, यह तय करना और उसके खाने पर नियंत्रण करना मुश्किल था। बेवरली की चेतावनियों और डाँट-फटकार को यूज़ीन पलभर में भूल जाता। मांस और अंडे पकाकर खाना यूज़ीन की आदत बन चुकी थी। इसलिए भले ही फ्रिज फल और सब्जियों से भरा हो पर यूज़ीन हमेशा मांस और अंडे ही खाता था। उम्र बढ़ने के साथ-साथ यूज़ीन की हड्डियाँ भी कमजोर पड़ने लगीं। डॉक्टरों ने उसे सँभलकर चलने की सलाह दी, लेकिन समस्या यह थी कि यूज़ीन खुद को अपनी असली उम्र से बीस साल छोटा समझता था इसलिए उसके मन में सँभलकर चलने का ख्याल तक नहीं आता था।

स्क्वायर के अनुसार, 'याद्दाश्त ऐसा विषय है, जो मुझे हमेशा आकर्षित करता रहा है। जब मेरी मुलाकात ई.पी. से हुई तो मैंने जाना कि भले ही हमारी याद्दाश्त कमज़ोर पड़ जाए या हमें कुछ याद न रहे, पर जीवन फिर भी बहुत सुंदर होता है। हमारे दिमाग में एक अनोखी क्षमता है कि भले ही हमारी याद्दाश्त चली जाए, पर फिर भी हमारा दिमाग खुशी ढूँढ़ ही लेता है।'

'पर अंत में दिमाग की यही क्षमता यूज़ीन पर भारी पड़ गई।'

बेवरली को आदतों की जितनी समझ थी, उस हिसाब से उसने यूज़ीन की मदद करने की बहुत कोशिश की। बेवरली समझने लगी थी कि कुछ नए इशारों की मदद से वह यूज़ीन की हानिकारक आदतों को बदल सकती है। जैसे अगर वह फ्रिज में मांस न रखे तो यूज़ीन बार-बार मांस नहीं खाता था। अगर बेवरली यूज़ीन की कुर्सी के बगल में सलाद रख दे, तो वह मांस भूलकर सलाद खा लेता था। धीरे-धीरे यूज़ीन को मांस और अंडे की जगह सलाद खाने की आदत पड़ गई और इस तरह उसकी खान-पान की आदतों में सुधार आ गया।

हालाँकि इसके बावजूद यूज़ीन की तबीयत बिगड़ती चली गई। एक दिन यूज़ीन अचानक चिल्लाया। बेवरली दौड़ी-दौड़ी आई। यूज़ीन अपना सीना थामे दर्द से कराह रहा था। बेवरली ने फौरन एम्बुलेंस बुलाई। अस्पताल में बताया गया कि यूज़ीन को दिल को दौरा पड़ा था। दर्द कम होने पर यूज़ीन ने अस्पताल के बिस्तर से उठने की कोशिश की, पर नाकाम रहा। पूरी रात अस्पताल के बिस्तर के दूसरे कोने पर सोने की कोशिश में वह अपने शरीर पर लगाई गई मशीनों के तार और सलाईन के ट्यूब आदि को खींचकर निकालने की कोशिश करता रहा। इसके कारण बार-बार अलार्म बजा और नर्स को दौड़कर उसके कमरे में आना पड़ा। नर्स यूज़ीन के शरीर पर लगाए गए सेंसर को फिर से ठीक करती, उसे ज़्यादा हिलने-डुलने से मना करती और वापस चली जाती। फिर भी जब बार-बार यूज़ीन वही सब दोहराता रहा, तो उनकी देखभाल करनेवाली नर्स ने यूज़ीन को चेतावनी दी कि 'अगर आपने यह सब बंद नहीं किया, तो आपको रस्सी से बाँध दिया जाएगा।' पर यूज़ीन पर इस चेतावनी का कोई असर नहीं पड़ा क्योंकि वह कुछ ही क्षणों में सब कुछ भूल जाता था।

फिर यूज़ीन की बेटी कैरल राएज़ ने एक रास्ता निकाला। उसने नर्स को यूज़ीन की तारीफ करने को कहा। उसने नर्स से कहा कि जब भी वे यूज़ीन के कमरे में जाएँ, तो इस बात के लिए उसकी तारीफ करें कि वह शांत बैठने की पूरी कोशिश कर रहा है। कैरल ने नर्स से कहा कि इस बात को यूज़ीन के सामने बार-बार दोहराएँ। कैरल के अनुसार 'हम चाहते थे कि यूज़ीन के लिए यह उसके अभिमान का विषय बन जाए। हम बार-बार दोहराते थे कि पापा इन सभी तारों और सेंसर को ठीक से लगाकर आप विज्ञान का भला कर रहे हैं।' आखिरकार नर्स ने कैरल की बात मानकर यूज़ीन की तारीफ करना और उनके साथ स्नेहपूर्ण ढंग से पेश आना शुरू किया। यूज़ीन को यह सब बहुत अच्छा लगा। वह इतना खुश रहने लगा कि अब वह नर्स की कही हर बात मानने लगा। इसके एक सप्ताह बाद ही यूज़ीन को अस्पताल से वापस घर जाने की इज़ाजत मिल गई।

फिर सन 2008 की शरद ॠतु में अपने घर में यूँ ही चलते समय यूज़ीन अंगीठी से ठोकर खाकर गिर गया। इस हादसे में उसका कूल्हा टूट गया। अस्पताल में यूज़ीन के भर्ती होने पर स्क्वायर और उनके सहकर्मियों को चिंता हुई कि अब शायद यूज़ीन यह याद नहीं रख पाएगा कि वह कहाँ है, जिसके चलते उसे पैनिक अटैक आने का खतरा है। इस समस्या को सुलझाने के लिए उन्होंने यूज़ीन के बिस्तर के बगल में पर्चियाँ रखना शुरू कर दिया, जिन पर यह लिखा होता था कि वह कहाँ है और उसे वहाँ क्यों रखा गया है। इसके साथ ही अस्पताल में यूज़ीन के कमरे की दीवारों पर उसके बच्चों की तस्वीरें भी लगा दी गईं। यूज़ीन की पत्नी और बच्चे रोज़ाना उसे मिलने अस्पताल आते थे।

हालाँकि यूज़ीन को कभी इस बारे में कोई चिंता नहीं हुई। उसने एक बार भी नहीं पूछा की वह अस्पताल में क्यों है। स्क्वायर के अनुसार 'यूज़ीन ने अब शायद अपने जीवन की अनिश्चितता से समझौता कर लिया था। यूज़ीन को याद्दाश्त खोए पंद्रह साल हो चुके थे। अब शायद उसका दिमाग यह जान चुका था कि उसके जीवन की कुछ ऐसी बातें हैं, जिन्हें वह कभी नहीं समझ पाएगा और इस मानसिक समझौते ने उसे एक अलग ही शांति का एहसास कराया।'

यूज़ीन की पत्नी बेवरली रोज अस्पताल आती थी। बेवरली के अनुसार, 'मैं उससे देर तक बातें करती रहती और उसे याद दिलाती कि मैं उससे कितना प्यार करती हूँ। मैं उसे हमारे बच्चों के बारे में भी बताती और साथ ही यह याद दिलाती कि हमने अपना जीवन कितने बढ़िया ढंग से गुज़ारा है। मैं उसे पुरानी तस्वीरें दिखाती और याद दिलाती कि सब उसे कितना प्यार करते हैं। हमारी शादी को 57 साल हो चुके थे, जिसमें से पहले 42 सालों तक हमारा वैवाहिक जीवन किसी भी अन्य जोड़े के वैवाहिक जीवन जितना ही सहज और सामान्य था। कभी-कभी मुझे पुराने दिनों की इतनी याद आती कि मैं उस हादसे से पहलेवाले यूज़ीन की कामना करने लगती थी। तब यह सब अचानक बहुत मुश्किल लगने लगता था। लेकिन मैं जानती थी कि कम से कम यूज़ीन खुश तो है और मेरे लिए यही काफी था।'

कुछ सप्ताह बाद यूज़ीन की बेटी उससे मिलने आई। उसके आगमन पर यूज़ीन पूछने

लगा, 'प्लान क्या है?' पिता की यह बात सुनकर वह यूज़ीन को व्हीलचेयर पर बिठाकर अस्पताल के बगीचे में ले गई, जहाँ यूज़ीन ने अचानक कहा, 'कितना सुहाना दिन है आज! मौसम भी कितना बढ़िया है ना!' उसकी बेटी ने उसे अपने बच्चों के बारे में बताया और फिर वे दोनों वहाँ के पालतू कुत्तों के साथ खेलते रहे। कैरल को लग रहा था कि शायद यूज़ीन को जल्द ही घर लौटने की इज़ाजत मिल जाएगी। सूर्यास्त होनेवाला था इसलिए कैरल यूज़ीन को अस्पताल के अंदर ले जाने लगी।

यूज़ीन ने उसकी ओर देखा।

'मैं बहुत भाग्यशाली हूँ कि मुझे तुम जैसी बेटी मिली', यूज़ीन ने कहा। कैरल हैरान रह गई। उसे याद नहीं आया कि यूज़ीन ने आखिरी बार उससे ऐसी कोई बात कब कही थी।

उसने यूज़ीन को जवाब दिया, 'मैं भाग्यशाली हूँ कि आप मेरे पिता हैं।'

'कितना सुहाना दिन है न आज! है ना?' यूज़ीन ने फिर वही बात शुरू कर दी।

उस रात एक बजे बेवरली को अस्पताल से फोन आया। डॉक्टर ने बताया कि यूज़ीन को दिल का दौरा पड़ा था। डॉक्टरों ने उसे बचाने की पूरी कोशिश की, पर वे असफल रहे। यूज़ीन की मृत्यु हो चुकी थी पर मृत्यु के बाद भी शोधकर्ता यूज़ीन के योगदान को सराहते थे। कई प्रयोगशालाओं और मेडिकल स्कूलों में उसके दिमाग की स्कैन रिपोर्ट्स का अध्ययन किया गया।

बेवरली के अनुसार, 'यूज़ीन ने विज्ञान की प्रगति के लिए जो कुछ भी किया है, उसके बारे में जानकर उसे बहुत गर्व महसूस होता। हमारे विवाह के कुछ ही समय बाद एक दिन उसने मुझसे कहा था कि वह अपने जीवन में कोई महत्वपूर्ण काम करना चाहता है, कुछ ऐसा जिससे संसार के हर इंसान को लाभ हो और आखिरकार उसने ऐसा कर दिखाया। बस फर्क सिर्फ इतना है कि उसे यह सब याद नहीं रहा।'

***

1 संरक्षित मांस से बना एक आहार जो अक्सर नाश्ते में खाया जाता है।

2

मस्तिष्क की इच्छा

नई आदतें कैसे विकसित करें

1

1900 के पूर्वार्ध में अमेरिका के एक प्रतिष्ठित कार्यकारी अधिकारी क्लाउड सी. हॉपकिंस से उनके एक पुराने मित्र ने संपर्क किया। उस मित्र के पास एक नए व्यवसाय की योजना थी। दरअसल उसे एक ऐसे उत्पाद (प्रोडक्ट) के बारे में पता चला था, जो अद्भुत था और उसे पूरा यकीन था कि इसका व्यवसाय बहुत ही फायदेमंद साबित होगा। यह उत्पाद कुछ और नहीं बल्कि पेपरमिंट के स्वादवाला गाढ़ा टूथपेस्ट था, जिसका नाम था 'पेप्सोडेंट।' इस योजना में कुछ संदिग्ध चरित्रवाले निवेशक भी शामिल थे। इनमें से एक निवेशक के घर पर जमीन के सौदों के संबंध में कई बार छापे पड़ चुके थे और एक अन्य निवेशक के अपराधी गिरोहों के साथ संबंध थे। इसके बावजूद इस मित्र ने हॉपकिंस को आश्वासन दिया कि यदि वे इस उत्पाद का विज्ञापन करने की मुहिम में उसका साथ देंगे तो यह बहुत ही फायदेमंद साबित होगा।

उन दिनों हॉपकिंस विज्ञापन के व्यवसाय में शिखर पर थे। यह व्यवसाय कुछ दशकों पहले ही अस्तित्व में आया था और अब तेजी से उभर रहा था। वे हॉपकिंस ही थे, जिन्होंने श्लिट्ज बीयर (Schlitz beer) का विज्ञापन करके पूरे अमेरिका को इसका कायल बना दिया था। श्लिट्ज बीयर के विज्ञापन में हॉपकिंस ने लोगों को बताया कि यह कंपनी अपनी बोतलों को साफ करने के लिए 'लाइव स्टीम' तकनीक का इस्तेमाल करती है। जबकि वास्तविकता में यह कोई अनोखी तकनीक नहीं थी क्योंकि उस जमाने में बीयर बनानेवाली हर कंपनी अपनी बोतलें इसी तकनीक से साफ करती थीं। पर हॉपकिंस ने अपने विज्ञापन में इस तथ्य को दरकिनार कर दिया।

इसी तरह उन्होंने अमेरिका की लाखों महिलाओं को 'पॉमऑलिव' साबुन खरीदने के प्रति यह कहकर आकर्षित किया कि स्वयं क्लिओपेटा (प्राचीन मिस्र की मशहूर रानी, जिसे विश्व की सबसे सुंदर स्त्री माना जाता था) भी इसी साबुन से नहाती थीं। उनके इस दावे का बहुत से इतिहासकारों ने विरोध भी किया, पर इसके बावजूद महिला ग्राहकों के बीच 'पॉमऑलिव' साबुन की लोकप्रियता कम नहीं हुई।

इसी तरह उन्होंने गेहूँ के मुरमुरे को यह कहकर मशहूर बना दिया कि इन्हें बनाने के लिए गेहूँ के दानों को उनके असली आकार से 'आठ गुना बड़ा होने तक बंदूक से दाग़ा

जाता है।’

इसी प्रकार की एक दर्जन से भी ज़्यादा चीज़ें, जैसे क्वॉकर कंपनी के ओट्स, गुडइअर कंपनी के टायर्स, बिसेल कंपनी के कारपेट स्वीपर, वॉन कैम्प कंपनी के पोर्क और बीन्स वगैरह हॉपकिंस के कारण ही ग्राहकों के बीच मशहूर हुए। पहले इन चीज़ों के बारे में कोई जानता तक नहीं था, पर हॉपकिंस ने इन्हें घर-घर में पहुँचा दिया। इस प्रक्रिया में हॉपकिंस को इतना मुनाफ़ा हुआ कि उन्होंने अपनी आत्मकथा - ‘माय लाइफ इन एडवर्टाइजिंग’ में कई जगह विस्तार से लिखा है कि अत्यधिक पैसा खर्च करने में कैसी-कैसी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है।

क्लाउड हॉपकिंस ग्राहकों के अंदर नई आदतें विकसित करने के लिए मशहूर थे। इसके लिए उन्होंने कुछ नियमों का आविष्कार भी किया था। इन नियमों ने अनेक व्यवसायों को पूरी तरह बदलकर रख दिया और कालांतर में ये सारे नियम विक्रेताओं, शिक्षा क्षेत्र से जुड़े सुधारकों, सार्वजनिक स्वास्थ्यकर्मियों, नेताओं और कंपनियों के सीईओ के लिए सामान्य ज्ञान बन गए। आज भी हम साफ-सफाई के लिए जो उत्पाद चुनते हैं या बीमारियों से निपटने के लिए सरकारें जो कदम उठाती हैं, उनमें हॉपकिंस के नियमों का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। कोई भी नया रूटीन (दिनचर्या या नियमित क्रियाएँ) बनाने की प्रक्रिया में ये नियम सबसे मुख्य होते हैं।

पर जब हॉपकिंस के मित्र ने उनके सामने पेप्सोडेंट का प्रस्ताव रखा, तब इस विज्ञापन गुरु ने इस प्रस्ताव में अधिक दिलचस्पी नहीं दिखाई। हालाँकि अमेरिकी लोगों के कमजोर होते दाँत अब कोई राज़ की बात नहीं रह गए थे। अमेरिका आर्थिक रूप से जितना समृद्ध होता गया, यहाँ के निवासियों के बीच अत्यधिक मीठे और प्रॉसेस्ड खाद्य पदार्थ उतने ही मशहूर होते गए। नतीजन प्रथम विश्व युद्ध के समय जब अमेरिकी सरकार ने नए सैनिकों की भर्ती शुरू की, तब पता चला कि इन नए सैनिकों में से अधिकतर के दाँत बहुत कमजोर हैं। तब अमेरिका के अधिकारियों ने लोगों के दाँतों के गिरते स्वास्थ्य को राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा बताया था।

इसके बावजूद विज्ञापन गुरु हॉपकिंस के अनुसार टूथपेस्ट बेचना आर्थिक दृष्टि से आत्महत्या के बराबर था। उस समय सेल्समैनों की एक पूरी फौज थी, जो घर-घर जाकर संदिग्ध गुणवत्तावाले टूथपाउडर और दाँत साफ करने की पारंपरिक दवाएँ वगैरह बेचने की कोशिश में घाटे में जा रही थी।

दिक्कत यह थी कि दाँतों का खराब स्वास्थ्य राष्ट्रीय समस्या भले ही बन गया हो, पर इसके बावजूद कोई भी व्यक्ति टूथपेस्ट खरीदना नहीं चाहता था क्योंकि उस समय दाँत साफ करना लोगों की दैनिक-क्रिया में शामिल नहीं था।

इसीलिए हॉपकिंस ने अपने मित्र के प्रस्ताव पर विचार तो किया, पर उनका जवाब नकारात्मक ही रहा। उन्होंने कहा कि उनके लिए साबुन और खाद्यपदार्थ का विज्ञापन

करना ही बेहतर होगा। अपनी आत्मकथा में वे बताते हैं कि 'मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि आम लोगों को टूथपेस्ट जैसी चीज़ के तकनीकी फायदे कैसे समझाए जाएँ।' उनके नकारात्मक जवाब के बावजूद उनके मित्र ने अपनी जिद नहीं छोड़ी। वह बार-बार आकर हॉपकिंस को इस मसले पर पुनर्विचार करने के लिए कहता रहा और उनके अहं को सहलाता रहा। आखिरकार विज्ञापन गुरु को अपने मित्र का प्रस्ताव स्वीकार करना ही पड़ा।

हॉपकिंस लिखते हैं, 'अंत में मैं टूथपेस्ट की विज्ञापन मुहिम चलाने के लिए मान तो गया, लेकिन मेरी शर्त यह थी कि वह मुझे कंपनी के शेयर्स में छह महीने के ब्लॉक (अधिक मात्रा में शेयरों को बेचने या खरीदने) का विकल्प देगा।' उनके मित्र ने उनकी यह शर्त फौरन मान ली।

हॉपकिंस का यह निर्णय उनके लिए आर्थिक दृष्टि से बहुत समझदारी भरा साबित हुआ। इस साझेदारी से हॉपकिंस ने सिर्फ पाँच सालों में पेप्सोडेंट को दुनिया का सबसे मशहूर टूथपेस्ट बना दिया। इसके साथ ही उन्होंने अमेरिकी लोगों में नियमित रूप से दाँत साफ करने की आदत भी विकसित कर दी। जल्द ही यह आदत आश्चर्यजनक रूप से पूरे अमेरिका में फैल गई। इसके बाद तो शर्ली टेंपल से लेकर क्लार्क गेबल जैसे सभी फिल्म कलाकार अपनी 'पेप्सोडेंट मुस्कान' की शेखी बघारने लगे। सन 1930 तक पेप्सोडेंट चीन, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील, जर्मनी से लेकर हर उस देश में पहुँच गया, जहाँ हॉपकिंस विज्ञापन मुहिम चला सकते थे। पेप्सोडेंट की पहली विज्ञापन मुहिम के एक दशक बाद हुए सर्वेक्षणों से पता चला कि नियमित रूप से दाँत साफ करना लगभग आधी से भी ज़्यादा अमेरिकी जनसंख्या की आदत बन चुका है। हॉपकिंस ने दाँत साफ करने को लोगों की दिनचर्या का हिस्सा बना दिया था।

आगे चलकर हॉपकिंस ने अपनी इस सफलता का राज़ बताया कि उन्हें कुछ ऐसे इशारे और इनाम मिले, जो लोगों के अंदर एक विशेष आदत विकसित करने की तीव्र इच्छा जगा सकते थे। यह इतनी शक्तिशाली प्रणाली है कि आज भी वीडिओ गेम डिजाइनर, खाद्यपदार्थ बनानेवाली कंपनियाँ, अस्पताल और दुनियाभर के लाखों सेल्समैन इसका उपयोग करते हैं। एक ओर जहाँ यूज़ीन पॉली ने हमें आदतों के फंदे की जानकारी दी, वहीं दूसरी ओर क्लाउड हॉपकिंस ने हमें दिखाया कि आदतों को कैसे विकसित किया जा सकता है।

तो, हॉपकिंस ने आखिर ऐसा क्या किया?

दरअसल उन्होंने लोगों के अंदर इच्छा जगाई। इशारे और इनाम इसी इच्छा से सक्रिय होते हैं। इच्छा से ही आदतों के फंदे का निर्माण होता है।

***

अपने पूरे करियर में क्लाउड हॉपकिंस की सबसे जानी मानी तरकीब थी - ऐसे इशारों

का पता लगाना, जिनसे लोग उनके द्वारा बेची जानेवाली चीज़ों का हर रोज़ उपयोग करने लगें। उदाहरण के लिए उन्होंने क्वॉकर कंपनी के ओट्स के विज्ञापन में बताया कि इसे नाश्ते के रूप में खाने से आप दिनभर ऊर्जावान महसूस करेंगे, पर ऐसा सिर्फ तभी संभव होगा, जब आप हर रोज़ एक कटोरी क्वॉकर ओट्स खाएँगे। इसी प्रकार उन्होंने पेटदर्द, जोड़ों के दर्द, खराब त्वचा और औरतों की समस्याओं के लिए यह कहकर बड़ी मात्रा में टॉनिक बेचे कि बीमारी के शुरुआती लक्षण नज़र आते ही आपको ये टॉनिक पीना होगा। इसके बाद जल्द ही लोगों ने रोज़ सुबह के नाश्ते में ओट्स खाना शुरू कर दिया। यही लोग ज़रा सी थकान महसूस होते ही हॉपकिंस द्वारा बेचा गया टॉनिक भी पीने लगे, जबकि दिन में एक-दो बार थकान महसूस होना सामान्य बात है।

पेप्सोडेंट टूथपेस्ट बेचने के लिए हॉपकिंस को ऐसे इशारे की ज़रूरत थी, जिससे ग्राहकों को हर रोज़ इसका उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। इसके लिए हॉपकिंस ने दाँतों के स्वास्थ्य से जुड़ी कई किताबों का अध्ययन भी किया। इस बारे में उन्होंने लिखा है कि 'ये किताबें ज़रा भी दिलचस्प नहीं थीं। फिर एक किताब में मुझे म्यूसिन प्लेक (दाँतों के कोनों में जमनेवाले मैल की पर्त जो सूक्ष्मजीवों की देन होती है) की जानकारी मिली। आगे चलकर इसे मैंने 'आवरण' का नाम दिया। इससे मुझे एक लोकप्रिय होने लायक विचार आया। मैंने इस टूथपेस्ट को सौंदर्य बढ़ानेवाली चीज़ के रूप में प्रचारित करने का फैसला किया यानी एक ऐसा टूथपेस्ट जिससे दाँतों के मैले आवरण से निपटा जा सकता है।

इस आवरण की बात करते समय हॉपकिंस ने इस तथ्य को पूरी तरह दरकिनार कर दिया कि दाँतों पर यह आवरण आना तो सामान्य बात है। ऐसा हमेशा होता आया है और इससे कभी किसी को कोई दिक्कत नहीं हुई। आप कुछ भी खाएँ या चाहे जितनी बार अपने दाँत साफ करें, यह आवरण दाँतों पर आ ही जाता है। इससे पहले लोगों ने कभी भी इस पर ध्यान नहीं दिया क्योंकि इस बारे में ध्यान देने लायक कोई कारण भी नहीं थे। इस आवरण को तो एक सेब खाकर, दाँतों पर उँगलियाँ फिराकर या फिर कुल्ला करके आसानी से साफ किया जा सकता है। इस आवरण को हटाने के लिए टूथपेस्ट कोई विशेष काम नहीं करता है। यहाँ तक कि उस समय दाँतों के कई प्रमुख शोधकर्ताओं ने भी कहा था कि टूथपेस्ट और विशेषकर पेप्सोडेंट बेकार है।

पर ये सारे कारण मिलकर भी हॉपकिंस को रोक नहीं सके और उन्होंने आवरण की अपनी जानकारी को अपने फायदे के लिए खूब इस्तेमाल किया। उन्हें समझ में आ गया था कि आवरण के बारे में बात करके ग्राहकों को ऐसा इशारा दिया जा सकता है, जिससे उनके अंदर आदत विकसित हो सके। जल्द ही कई शहरों में चारों ओर पेप्सोडेंट का विज्ञापन नज़र आने लगा।

इस विज्ञापन में लिखा था - 'अपनी जीभ को दाँतों पर घुमाएँ। क्या आपको एक आवरण महसूस हुआ? यही वो आवरण है, जिसके कारण आपके दाँत धुँधले नज़र आते हैं और इसी से आपके दाँतों को नुकसान भी पहुँचता है।'

पेप्सोडेंट के एक अन्य विज्ञापन में मुस्कराती हुई सुंदर महिलाओं के चित्र लगे हुए थे और लिखा था, 'ज़रा गौर कीजिए कि आपके चारों ओर ऐसे कितने लोग हैं, जिनके दाँत सुंदर हैं। आज लाखों लोग अपने दाँतों को साफ करने के लिए यह नया तरीका इस्तेमाल कर रहे हैं। भला कौन सी महिला चाहेगी कि उसके दाँतों पर मैल का आवरण चढ़ा हो। पेप्सोडेंट इस आवरण को हटाता है!'

इन विज्ञापनों की खूबी यह थी कि ये सब एक इशारे पर निर्भर थे - दाँतों पर चढ़ा मैला आवरण। यह एक वैश्विक चीज़ थी और इसे अनदेखी करना असंभव था। किसी को उसके दाँतों पर जीभ घुमाने के लिए कहते ही लोग तुरंत ऐसा करते थे और उन्हें अक्सर अपने दाँतों पर एक आवरण महसूस हो जाता था। हॉपकिंस ने एक बेहद सहज इशारा ढूँढ़ निकाला था। यह ऐसा इशारा था, जो सदियों से मौजूद था और इतना सहज था कि एक साधारण से विज्ञापन को देखकर भी लोग इसे स्वत: ही मान लेते थे।

हॉपकिंस ने इसके लिए जिस इनाम की कल्पना की थी, वह तो और भी आकर्षक था। भला संसार में ऐसा कौन है, जो अपनी सुंदरता बढ़ाना नहीं चाहता? कौन नहीं चाहता कि उसकी मुस्कान और सुंदर हो जाए? खासकर तब, जब इसके लिए आपको सिर्फ पेप्सोडेंट से अपने दाँत साफ करने हों।

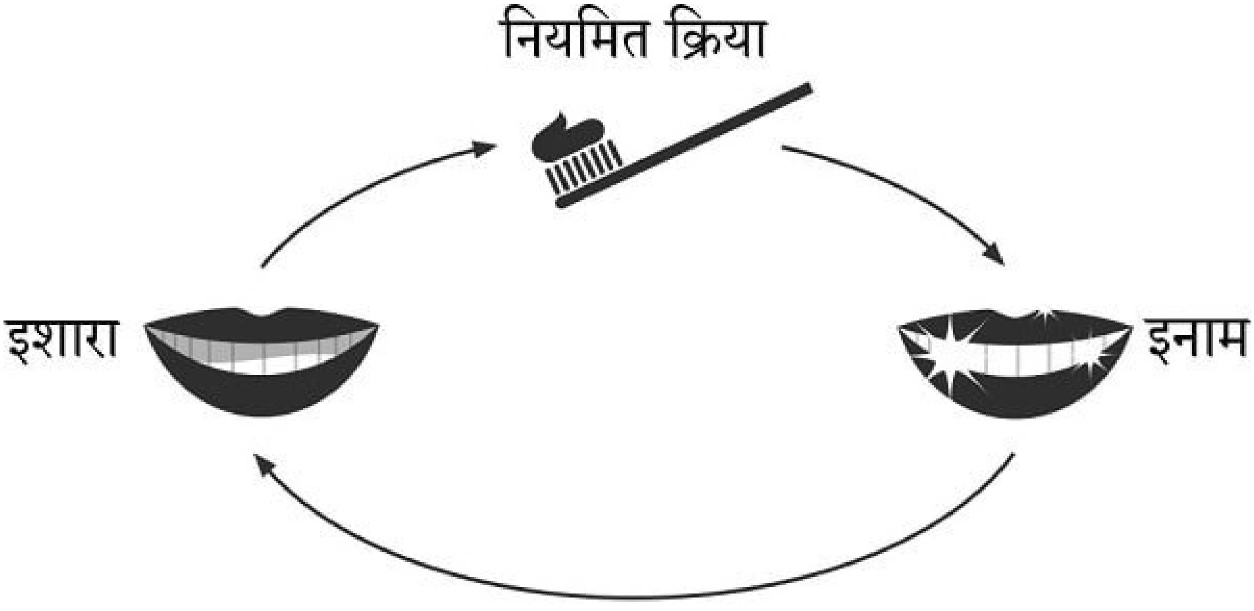

हॉपकिंस द्वारा दी गई पेप्सोडेंट की आदत के फंदे की संकल्पना

यह विज्ञापन मुहिम शुरू होने के बाद पहला सप्ताह बीत गया, पर कुछ खास नहीं हुआ। फिर दूसरे सप्ताह में भी ग्राहकों की कोई खास प्रतिक्रिया सामने नहीं आई। पर

जैसे ही तीसरा सप्ताह आया, पेप्सोडेंट की माँग आसमान छूने लगी। माँग इतनी ज़्यादा थी कि कंपनी के लिए समय पर आपूर्ति करना संभव नहीं हो रहा था। अगले तीन सालों में पेप्सोडेंट अंतरर्राष्ट्रीय रूप से मशहूर हो गया और हॉपकिंस अंग्रेजी के अलावा स्पेनिश, जर्मन तथा चीनी भाषा में भी इसके विज्ञापन बनाने लगे। एक दशक के भीतर ही पेप्सोडेंट दुनिया में सबसे ज़्यादा बिकनेवाले उत्पादों की सूची में शामिल हो गया। अमेरिका में तो यह अगले तीन दशकों तक सबसे ज्यादा बिकनेवाले उत्पाद के रूप में सामने आया।

पेप्सोडेंट के बाज़ार में आने से पहले अमेरिका में केवल 07 प्रतिशत लोग टूथपेस्ट का इस्तेमाल करते थे और वह भी दवा के रूप में। हॉपकिंस द्वारा देशभर में चलाई गई विज्ञापन मुहिम के बाद यह संख्या बढ़कर 65 प्रतिशत हो गई। दूसरे महायुद्ध में नए सैनिकों को भर्ती करते समय सेना के अधिकारियों के लिए दाँतों के स्वास्थ्य का मुद्दा चिंता का विषय नहीं रहा। क्योंकि अब अधिकतर सैनिक रोज़ाना अपने दाँत साफ करते थे।

पेप्सोडेंट के बाज़ार में आने के कुछ साल बाद हॉपकिंस ने लिखा, 'मैंने पेप्सोडेंट से लाखों डॉलर कमाए और मेरी इस सफलता का रहस्य यह था कि मैंने इंसानी मनोविज्ञान के बारे में सही चीज़ सीख ली थी।' यह मनोविज्ञान दो सहज नियमों पर आधारित था।

पहला, एक सहज और स्पष्ट इशारा ढूँढ़ो।

दूसरा, इनाम की स्पष्ट व्याख्या करो।

हॉपकिंस को विश्वास था कि अगर ये दो चीज़ें सही ढंग से की जाएँ, तो जादुई परिणाम मिल सकते हैं। पेप्सोडेंट का उदाहरण लें, तो हॉपकिंस ने इसके विज्ञापनों में दाँतों पर जमे आवरण के तौर पर एक सहज और स्पष्ट इशारा दिया था। वहीं इनाम भी बिलकुल स्पष्ट था, सुंदर दाँत। इस तरह यह लाखों लोगों की दिनचर्या का हिस्सा बन गया। आज भी हॉपकिंस के ये नियम मार्केटिंग की किताबों और लाखों विज्ञापन मुहिमों की बुनियाद हैं।

इन्हीं नियमों का इस्तेमाल करके लोगों के अंदर अन्य हज़ारों आदतें विकसित की गई हैं और आमतौर पर अधिकतर मामलों में लोगों को अंदाजा भी नहीं था कि हॉपकिंस के नियम उन्हें कितनी गहराई तक प्रभावित कर रहे हैं। जो लोग नियमित व्यायाम करने की आदत सफलतापूर्वक विकसित कर चुके थे, उनका अध्ययन करने पर पाया गया कि लोग व्यायाम को दिनचर्या बनाने में तब सफल होते हैं, जब वे एक स्पष्ट इशारे और इनाम का चुनाव कर लेते हैं। यह इशारा कुछ भी हो सकता है, जैसे ऑफिस से घर आने के बाद फौरन दौड़ने निकल जाना। इसी तरह इनाम भी कुछ भी हो सकता है, जैसे एक बीयर पीना या सारी फिक्र छोड़कर कुछ देर टी.वी. देखते हुए मनोरंजन करना। संतुलित आहार पर हुए शोधों से पता चला है कि पूर्वनिर्धारित इशारे जैसे खाने का मेन्यू

पहले से तय करना और उद्देश्य पूरा होने पर सहज इनाम मिलना, आहार की नई आदतें विकसित करने के लिए आवश्यक है।

हॉपकिंस लिखते हैं, 'अब वह समय आ गया है, जब विज्ञापन निर्माण कुछ विशेष लोगों के हाथों में होने से विज्ञान के स्तर पर पहुँच रहा है। एक दौर था जब विज्ञापन बनाना किसी जुए से कम नहीं था, पर अब यह एक सुरक्षित व्यापार बन चुका है।'

यह सचमुच गौरव की बात है, लेकिन आखिरकार यह बात सामने आई कि हॉपकिंस द्वारा बनाए गए दो नियम काफी नहीं हैं। एक तीसरा नियम भी है, जिसके बिना लोगों के अंदर आदत विकसित करना संभव नहीं है। यह इतना सूक्ष्म नियम है कि हॉपकिंस भी इस पर निर्भर थे, बस उन्हें इसका पता नहीं था। यह नियम इस बात की व्याख्या करता है कि हमारे लिए मिठाई के डिब्बे को अनदेखा करना मुश्किल क्यों होता है और हर रोज़ सुबह-सुबह दौड़ने जाना एक नियमित आदत कैसे बन सकता है।

2

प्रॉक्टर एंड गैम्बल कंपनी के वैज्ञानिक और मार्केटिंग अधिकारी एक बिना खिड़कियोंवाले छोटे से कमरे में रखी एक पुरानी मेज़ के इर्दगिर्द बैठे थे। वे सब एक ऐसी औरत के इंटरव्यू की प्रतिलिपि पढ़ रहे थे, जिसके पास नौ बिल्लियाँ थीं। फिर उनमें से एक ने वह बात कह दी, जो सबके दिमाग में घूम रही थी।

'अगर हमें नौकरी से बरखास्त कर दिया गया, तो हमारे साथ कैसा व्यवहार होगा?' महिला ने पूछा। 'क्या गार्ड को बुलाकर हमें बाहर निकाल दिया जाएगा या पहले हमें चेतावनी दी जाएगी?'

डेक स्टिमसन, जो एक समय पर कंपनी का उभरता सितारा था, उसने इस सहकर्मी को देखा।

'पता नहीं क्या होगा,' स्टिमसन ने कहा। उसके बाल बिखरे हुए थे और आँखों में थकान स्पष्ट नज़र आ रही थी। 'मैंने कभी नहीं सोचा था कि हालात इतने खराब हो जाएँगे। मुझे तो बताया गया था कि इस प्रोजेक्ट को चलाना पदोन्नति के बराबर है।' उसने अपनी सहकर्मी को जवाब दिया।

यह सन 1996 की बात है। क्लाउड हॉपकिंस के दावों के बावजूद उस पुरानी मेज़ के इर्दगिर्द बैठे इस समूह को अब समझ में आने लगा था कि किसी चीज़ को बेचने की प्रक्रिया कितनी अवैज्ञानिक हो सकती है। वे सब जिस कंपनी के लिए काम करते थे, वह उपभोक्ता सामान की विश्व की सबसे बड़ी कंपनियों में से एक थी। प्रिंगल्स चिप्स, ऑयल ऑफ ओले, बाउन्टी पेपर टॉवल्स, कवरगर्ल कॉस्मेटिक्स, डॉन, डॉनी और ड्यूरासेल जैसे दर्जनों ब्रांड इसी कंपनी के थे। पी ऐंड जी (प्रॉक्टर ऐंड गैम्बल) की विज्ञापन मुहिम जटिल सांख्यिकीय पद्धतियों पर आधारित होती थी। इसके लिए पी ऐंड

जी इतना अधिक डाटा इकट्ठा करती थी, जितना विश्व में शायद ही कोई अन्य कंपनी करती हो। चीज़ों को बाज़ार में कैसे बेचा जाए, इसका उपाय ढूँढ़ने में इस कंपनी को महारत हासिल थी। अगर सिर्फ कपड़ों की धुलाई के बाज़ार की बात करें, तो अमेरिका में कपड़े धोनेवाली हर दूसरी लॉन्ड्री में पी ऐंड जी कंपनी के ही उत्पादों का इस्तेमाल किए जाता था। पी ऐंड जी का मुनाफा हर साल 35 बिलियन डॉलर से भी ज़्यादा था।

अब पी ऐंड जी बाज़ार में एक नया उत्पाद लानेवाला था, जिससे सभी को बड़े मुनाफे की उम्मीद थी। स्टिमसन और उसकी टीम को इसी उत्पाद के लिए विज्ञापन मुहिम तैयार करने की जिम्मेदारी दी गई थी, पर वे नाकामी की कगार पर थे। दरअसल कंपनी ने लाखों डॉलर खर्च करके एक ऐसा स्प्रे बनाया था, जो लगभग हर प्रकार के कपड़ों की बदबू मिटा सकता था। पर इसे ग्राहकों को कैसे बेचा जाए, यह बात बिना खिड़कियोंवाले उस छोटे-से कमरे में बैठे इन शोधकर्ताओं को समझ में नहीं आ रही थी।

इस स्प्रे का निर्माण लगभग तीन साल पहले तब हुआ, जब पी ऐंड जी का एक केमिस्ट (रसायनशास्त्री) प्रयोगशाला में हाइड्रॉक्सीप्रोपिल बीटा साइक्लेडैक्सट्रिन या एच.पी.बी.सी.डी. नामक पदार्थ पर काम कर रहा था। चूँकि यह केमिस्ट (रसायनशास्त्री) धूम्रपान भी करता था इसलिए उसके कपड़ों से हमेशा सिगरेट की बदबू आती रहती थी। एक दिन वह प्रयोगशाला में एच.पी.बी.सी.डी. का उपयोग करके घर लौटा। उसकी पत्नी ने दरवाज़ा खोला।

‘क्या तुमने धूम्रपान करना छोड़ दिया?’ उसकी पत्नी ने पूछा।

‘नहीं।’ उसने जवाब दिया। उसकी पत्नी सालों से उसकी धूम्रपान की आदत छुड़ाना चाहती थी। पत्नी का सवाल सुनकर केमिस्ट (रसायनशास्त्री) को संदेह हुआ कि कहीं वह उसके साथ रिवर्स साइकोलॉजी (विपरीत-मनोविज्ञान) की चाल तो नहीं चल रही है।

‘मैं तो बस इसलिए पूछ रही थी क्योंकि आज तुम्हारे कपड़ों से सिगरेट की बदबू नहीं आ रही है,’ उसकी पत्नी ने कहा।

यह सुनने के बाद अगले ही दिन से उस केमिस्ट (रसायनशास्त्री) ने प्रयोगशाला में एच.पी.बी.सी.डी. और विभिन्न गंधों के नमूने लेकर प्रयोग करने शुरू कर दिए। जल्द ही उसके पास भीगे कुत्ते की, सिगरेट की, पसीने से भरे मोज़ों की, चाइनीज खाने की, सीलनदार कमीज़ की और मैले तौलिए के नमूनों की सौ से भी अधिक शीशियाँ थीं। जब उसने एच.पी.बी.सी.डी. को पानी में मिलाकर बदबूदार कपड़ों के इन नमूनों पर छिड़का, तो उनकी बदबू इस रसायन के अणुओं की ओर आकर्षित होने लगीं। जब इस रासायनिक प्रक्रिया से बना कोहरा छँटा, तो कपड़ों की बदबू जा चुकी थी।

उस केमिस्ट (रसायनशास्त्री) ने जब पी ऐंड जी के अधिकारियों को अपने इस शोध के बारे में बताया, तो वे बहुत खुश हुए। दरअसल पिछले कुछ सालों में बाज़ार और ग्राहकों पर कई सर्वेक्षण किए गए थे। इन सर्वेक्षणों के परिणामों से यह स्पष्ट हो चुका

था कि अब ग्राहक कोई ऐसा उत्पाद चाहते हैं, जिससे कपड़े की बदबू छिपने के बजाय पूरी तरह समाप्त हो जाए। शोधकर्ताओं के एक समूह ने ग्राहकों का इंटरव्यू लेने पर पाया कि रात में शराबखाने या किसी पार्टियों में जानेवाले अधिकतर लोग अगले दिन सुबह अपने उन कपड़ों को धूप में रख देते थे, जिन्हें पहनकर वे वहाँ गए थे। एक महिला बताती है कि 'मेरे कपड़ों से अक्सर सिगरेट की बदबू आने लगती है पर मैं हर बार किसी पार्टी से लौटने के बाद अपने कपड़ों की ड्राय क्लिनिंग का खर्च नहीं उठाना चाहती।'

पी ऐंड जी ने मौके का फायदा उठाया और एक गोपनीय परियोजना शुरू की, जिसका उद्देश्य था एच.पी.बी.सी.डी. को एक व्यावहारिक उत्पाद के रूप में विकसित करना, जिसे बाजार में बेचा जा सके। कंपनी ने लाखों रूपये खर्च करके एक रंगहीन और गंधहीन पदार्थ बनाया, जो लगभग हर तरह की बदबू को पूरी तरह नष्ट कर सकता था। इस स्प्रे को बनाने के लिए जिन वैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग किया गया, वे इतने उच्च स्तर की थीं कि बाद में अमेरिका की स्पेस एजेंसी 'नासा' ने अंतरिक्ष से लौटे अपने यानों की सफाई में इसी का उपयोग किया। सबसे अच्छी बात यह थी कि इस स्प्रे की लागत बहुत कम थी और इसे किसी भी चीज़ पर डालने पर यह कोई दाग-धब्बे नहीं छोड़ता था। यह स्प्रे बदबूदार फर्नीचर से लेकर पुराने कपड़ों और कार के अंदर तक की बदबू को समाप्त करने में सक्षम था। कंपनी के लिए यह परियोजना एक बड़ा दाँव खेलने जैसी थी, पर बाज़ार के लिहाज से व्यावहारिक उत्पाद बनाने में सफलता हासिल करने के बाद अब पी ऐंड जी इससे अरबों डॉलर कमाने के लिए पूरी तरह तैयार थी। अब अगर उन्हें ज़रूरत थी, तो केवल एक अच्छी व प्रभावशाली विज्ञापन मुहिम की।

पी ऐंड जी ने अपने इस स्प्रे का नाम रखा 'फेब्रीज़'। जो समूह इसकी विज्ञापन मुहिम चलानेवाला था, उसका नेतृत्व करने की जिम्मेदारी स्टीमसन को दी गई, जो उस समय मात्र 31 साल के थे। स्टीमसन विलक्षण प्रतिभा संपन्न व्यक्ति थे और उन्हें गणित व मनोविज्ञान का अच्छा ज्ञान था। स्टीमसन कद में ऊँचे और दिखने में सुंदर थे। उनकी आवाज़ में विनम्रता और बातों में दृढ़ता थी। वे अच्छे खाने के भी बड़े शौकीन थे। एक बार उन्होंने अपने एक सहकर्मी से कहा था कि 'मैक्डॉनल्ड्स' में खाने से बेहतर होगा कि मेरे बच्चे चरस पीएँ। पी ऐंड जी में नौकरी करने से पहले वे करीब पाँच सालों तक वॉल स्ट्रीट में सक्रिय थे और सही शेयर चुनने के लिए एक गणित आधारित मॉडल विकसित कर रहे थे। इसके बाद वे अमेरिका के सिनसिनाटी शहर आ गए। पी ऐंड जी का मुख्यालय भी सिनसिनाटी में ही स्थित था। यहाँ उन्होंने कई महत्वपूर्ण व्यवसायों में अपनी सेवाएँ दीं, जैसे 'बाउन्स फैब्रिक सॉटनर' और 'डॉनी ड्ायर शीट्स' वगैरह। पर फेब्रीज़ इन सबसे बिलकुल अलग था। यह एक ऐसी श्रेणी का उत्पाद था, जिसका पहले कोई अस्तित्व ही नहीं था। स्टीमसन को बस यह पता लगाना था कि फेब्रीज़ को एक आदत में कैसे तब्दील किया जाए। बस इसके बाद वह चुटकियों में बिकने लगता। सतही तौर पर देखा जाए, तो यह काम बहुत मुश्किल भी नहीं था।

स्टीमसन और उनके सहकर्मियों ने जाँच के लिए कुछ नमूने बाज़ार में उतारने का निर्णय लिया। इसके लिए उन्होंने अमेरिका के फिनिक्स, सॉल्ट लेक सिटी और बोईज

नामक शहरों का चुनाव किया। उन्होंने इन तीनों शहरों में जाकर लोगों को फेब्रीज़ के मुफ्त नमूने बाँटे और साथ ही, इन मुफ्त नमूनों की उपयोगिता परखने के लिए उन लोगों के घर आने की अनुमति भी ले ली। अगले दो महीनों में स्टीमसन और उसके साथी सौ से भी अधिक लोगों के घर गए। उन्हें अपने उत्पाद का असली प्रभाव पहली बार तब देखने को मिला, जब वे एक महिला के घर पहुँचे। यह 27 वर्षीय महिला एक पार्क रेंजर (विशाल पार्क की निगरानी करनेवाला) का काम करती थी और अकेले रहती थी। पार्क रेंजर के तौर पर उसका काम था, रेगिस्तान के बाहर निकल आए जानवरों को पकड़ना। इन जानवरों में भेड़िए, रकून और कभी-कभी तो पहाड़ी तेंदुए तक शामिल होते थे। पर वहाँ सबसे ज़्यादा मात्रा में स्कंक नामक जानवर पाया जाता था, जो पकड़े जाने पर अक्सर पार्क रेंजरों पर पेशाब कर देता था।

जब स्टीमसन और उनके सहकर्मी इस पार्क रेंजर महिला के घर गए, तो उसने उन्हें अपनी कहानी बताई।

‘मैं अविवाहित हूँ, पर मैं चाहती हूँ कि मेरा भी कोई जीवनसाथी हो, जिसके साथ मैं घर बसा सकूँ। मैं चाहती हूँ कि मेरा भी एक भरा-पूरा परिवार हो। इसके लिए मैं अक्सर डेट्स पर जाती रहती हूँ और मेरा मानना है कि मैं आकर्षक और समझदार दोनों हूँ। मुझे लगता है कि मुझमें इतनी खूबियाँ तो हैं कि मैं लोगों को पसंद आ सकूँ।’

इसके बावजूद जीवनसाथी के मामले में उसे आज तक निराशा ही हाथ लगी थी। उस महिला के अनुसार ऐसा इसीलिए था क्योंकि उसके जीवन की हर चीज़ से स्कंक नामक जानवर की बू आती थी। उसका घर, उसकी गाड़ी, उसके कपड़े, जूते, घर के परदे, बिस्तर और यहाँ तक कि उसके हाथों से भी स्कंक की बू आती थी। इससे निपटने के लिए वह कई तरीके अपनाकर देख चुकी थी। उसने कई अलग-अलग तरह के साबुन और शैम्पुओं का इस्तेमाल किया, सुगंधित मोमबत्तियाँ खरीदीं, घर का कालीन साफ करने के लिए महँगी मशीनें खरीदीं, पर इतना कुछ करने के बाद भी उसे स्कंक की बदबू से छुटकारा नहीं मिला।

उसने बताया कि ‘जब भी मैं किसी के साथ डेट पर जाती हूँ और उस समय अगर मेरी किसी भी चीज़ से स्कंक की जरा सी भी बू आ जाए, तो फिर मेरा पूरा ध्यान उसी में लगा रहता है। मैं सोचने लगती हूँ कि जो इंसान मेरे साथ बैठा है, क्या उसे भी ये बू आ रही होगी? अगर मैं उसे अपने घर ले जाऊँ और वह इस बू से परेशान होकर वापस चला गया तो? पिछले साल मैं एक लड़के के साथ चार बार डेट पर गई। वह लड़का मुझे काफी पसंद था इसलिए मैंने काफी लंबे समय तक उसे अपने घर नहीं बुलाया। फिर आखिरकार एक दिन वह मेरे घर आया। मुझे लगा कि उसे मेरे घर आकर खुशी हुई होगी। लेकिन अगले ही दिन उसने कहा कि वह मुझसे रिश्ता नहीं रखना चाहता। हालाँकि उसने यह सब बड़ी विनम्रता से कहा, लेकिन आज भी जब मैं उसके बारे में सोचती हूँ, तो मन में यही सवाल उठता है कि क्या उसने वह निर्णय स्कंक की बदबू आने के कारण लिया था?’

‘मुझे खुशी है कि आपको फेब्रीज़ इस्तेमाल करने का मौका मिला। क्या आपको फेब्रीज़ पसंद आया?’ स्टीमसन ने उस महिला से पूछा।

स्टीमसन का सवाल सुनते ही वह महिला भावुक होकर रो पड़ी।

‘मैं आपको धन्यवाद देना चाहती हूँ। इस स्प्रे ने सचमुच मेरी जिंदगी बदल दी।’ वह भावुक होकर बताने लगी।

वह महिला दो महीनों पहले फेब्रीज़ का नमूना घर लेकर आई थी। उसने घर के परदों, कालीन, बिस्तर, सोफे के साथ-साथ अपने कपड़ों, यूनिफार्म और गाड़ी के भीतरी हिस्सों पर भी फेब्रीज़ छिड़का। पहली बोतल खत्म होने पर वह बाज़ार से दूसरी बोतल ले आई और बाकी बची चीज़ों पर भी फेब्रीज़ छिड़क दिया।

उसने स्टीमसन को बताया कि इसके बाद उसने अपने सारे दोस्तों को घर पर बुलाया। ‘किसी को भी स्कंक की बदबू नहीं आई। आखिरकार मुझे उस तकलीफदेह बदबू से छुटकारा मिल गया!’

यह सब बताते हुए वह भावुक होकर इतना रोई कि स्टीमसन का एक सहकर्मी उसका कंधा सहलाने लगा। उसने स्टीमसन और उनके सहकर्मियों को धन्यवाद देते हुए कहा, ‘आपका बहुत-बहुत धन्यवाद! मैं बता नहीं सकती कि मैं अब कितना मुक्त महसूस कर रही हूँ। यह स्प्रे वाकई बहुत महत्वपूर्ण चीज़ है।’

स्टीमसन ने एक गहरी साँस ली। उन्हें वहाँ किसी भी तरह की बदबू नहीं आई। अब वे समझ चुके थे कि फेब्रीज़ से उन सबको बहुत मुनाफा होनेवाला है।

***

स्टीमसन और उसके सहकर्मी पी ऐंड जी के मुख्यालय लौटे और फेब्रीज़ की विज्ञापन मुहिम की तैयारी में जुट गए। उन लोगों ने तय किया कि उस पार्क रेंजर महिला को फेब्रीज़ के उपयोग से जो राहत मिली है, उसी राहत को अपनी विज्ञापन मुहिम की नींव बनाया जाए। वे चाहते थे कि फेब्रीज़ के ग्राहक वैसी ही राहत महसूस करें। उन्होंने तय किया कि वे फेब्रीज़ को लोगों के सामने इस तरह लेकर आएँगे कि लोग इसे शर्मनाक बदबू से छुटकारा पाने के उपाय के तौर पर देखें। वे सब क्लाउड हॉपकिंस द्वारा बताए गए नियमों से परिचित थे। उस समय तक ये नियम व्यापार की शिक्षा देनेवाले संस्थानों की पाठ्य पुस्तकों का हिस्सा बन चुके थे। स्टीमसन और उनकी टीम फेब्रीज़ के विज्ञापनों को इतना सरल रखना चाहती थीं कि उन्हें हर कोई समझ सके और इसके लिए ज़रूरी था, एक स्पष्ट इशारा और इनाम ढूँढ़ा जाए, फिर उसी के अनुसार विज्ञापन बनाए जाएँ।

उन्होंने टी.वी. के लिए दो विज्ञापन बनाए। पहले विज्ञापन में एक महिला रेस्त्रां के धूम्रपान कक्ष के बारे में बात करते हुए दिखाई गई। जब भी वह उस रेस्त्रां से खाना

खाकर लौटती, तो उसके कपड़ों से सिगरेट की बदबू आने लगती। फिर उसकी सहेली उसे बताती है कि 'फेब्रीज़ के उपयोग से वह इस बदबू से छुटकारा पा सकती है।' इस विज्ञापन का इशारा था, सिगरेट की बदबू और इनाम था, ग्राहकों के कपड़ों से इस बदबू का हटना। दूसरे विज्ञापन में एक महिला अपने कुत्ते से परेशान थी। उसके कुत्ते का नाम सोफी था। वह हर वक्त सोफे पर बैठा रहता था। विज्ञापन में वह महिला कहती है कि 'मेरे सोफी की गंध हमेशा सोफी जैसी ही रहेगी, लेकिन फेब्रीज़ के कारण अब मेरे घर के सोफे की गंध सोफी जैसी नहीं होगी।' इसमें इशारा था, पालतू जानवरों की गंध, जो अमेरिका में पालतू जानवर रखनेवाले लगभग 70 लाख घरों की समस्या थी। जबकि इनाम था, ऐसा घर जो पालतू जानवरों की गंध से मुक्त हो।

स्टीमसन और उनके सहकर्मियों ने जिन शहरों में फेब्रीज़ के मुफ्त नमूने बाँटकर जाँच-पड़ताल की थी, उन्हीं शहरों में, सन 1996 में, ये दोनों विज्ञापन प्रदर्शित किए गए। उन्होंने नमूने बाँटे, लेटर बॉक्स में विज्ञापन के पर्चे डाले और विक्रेताओं को कैश रजिस्टर के ठीक बगल में फेब्रीज़ की बोतलों का पहाड़ खड़ा करने के लिए अलग से पैसे भी दिए। इसके बाद वे आराम से यह सोचने लगे कि फेब्रीज़ से होनेवाले मुनाफ़े को वे कैसे खर्च करेंगे।

पहला सप्ताह बीत गया। फिर दूसरा सप्ताह बीता और फिर तीसरा। देखते-देखते दो महीने बीत गए पर स्टीमसन और उसके सहकर्मियों का इंतजार खत्म नहीं हुआ। शुरुआती दौर में फेब्रीज़ की जितनी बिक्री हुई थी, दो महीने बीतने के बाद वह बिक्री और कम हो गई थी। कंपनी के अधिकारी परेशान हो गए। उन्होंने इसका कारण जानने के लिए अपने शोधकर्ताओं को बाज़ार भेजा। दुकानों में फेब्रीज़ की बोतलें जस की तस रखी थीं। किसी ने उन्हें छुआ तक नहीं था। फिर वे उन महिलाओं से मिलने गए, जिन्हें मुफ्त नमूने दिए गए थे।

पी ऐंड जी के शोधकर्ता अनेक महिलाओं से उनके घर जाकर मिले। उनमें से एक ने कहा, 'अरे हाँ! वह स्प्रे मुझे याद है। रुकिए मैं देखती हूँ।' फिर वह महिला अपने रसोईघर में गई और रसोई के सिंक के नीचे की अलमारी से सामान हटाने लगी। फिर वह खड़ी हुई और कहने लगी कि 'मैंने कुछ दिनों तक उस स्प्रे का उपयोग किया, पर फिर मैं उसके बारे में एकदम भूल ही गई। शायद वह ऊपर की अलमारी में रखा होगा।' उसने साफ-सफाई के सामानवाली अलमारी खोली, जहाँ कुछ झाड़ू रखे हुए थे। उसने उन झाड़ुओं को हटाकर देखा। 'ये रहा! मिल गया! यहाँ इन झाड़ुओं के पीछे रखा हुआ था। ये अब भी लगभग पूरा भरा हुआ है। क्या आपको यह वापस चाहिए?'

फेब्रीज़ नाकाम हो चुका था।

स्टीमसन के लिए यह एक बड़ी मुसीबत थी। दूसरे विभागों के प्रतिस्पर्धी अधिकारियों को स्टीमसन की हार में अपने लिए एक मौका नज़र आने लगा। स्टीमसन ने यह भी सुना कि उनके प्रतिस्पर्धी फेब्रीज़ को पूरी तरह खत्म करना चाहते हैं ताकि

स्टीमसन को निकी क्लॉक कंपनी के बालों की देखरेख संबंधी उत्पादों पर फिर से काम करने के लिए मज़बूर होना पड़े। उत्पादों की दुनिया में निकी क्लॉक कंपनी के बालों की देखरेख संबंधी उत्पादों पर काम करना कुछ ऐसा ही था, जैसे किसी अधिकारी को काम करने के लिए सायबेरिया के सूने बर्फीले मैदानों में भेजना।

पी ऐंड जी के प्रभागीय अध्यक्ष ने एक आपातकालीन बैठक बुलाई। उन्होंने सभी को बताया कि कंपनी के बोर्ड मेंबर्स सवाल उठाना शुरू कर दें, इससे पहले उन्हें फेब्रीज़ से हुए नुकसान की भरपाई करनी होगी। यह सुनते ही स्टीमसन के बॉस खड़े हुए और निवेदन करते हुए बोले, 'फेब्रीज़ की किस्मत अभी भी पलटी जा सकती है। बस एक बार हमें पी.एच.डी. शोधकर्ताओं की सलाह लेने दीजिए। आखिर पता तो चले कि समस्या क्या है?' दरअसल हाल ही में पी ऐंड जी ने स्टैनफोर्ड और कारनेगी मेलॉन वगैरह से उन वैज्ञानिकों को कंपनी में भर्ती किया था, जो ग्राहक-मनोविज्ञान के विशेषज्ञ माने जाते थे। प्रभागीय अध्यक्ष ने उनके निवेदन को स्वीकार किया और फेब्रीज़ को थोड़ा और समय देने के लिए मान गए।

इस प्रकार स्टीमसन के समूह में नए शोधकर्ताओं का एक समूह शामिल हो गया। अब वे सब अपेक्षाकृत अधिक ग्राहकों से बातचीत करने लगे ताकि यह समझा जा सके कि फेब्रीज में मामले में कहाँ गड़बड़ हो रही थी। ग्राहकों से बातचीत करने के सिलसिले में वे फिनिक्स के बाहरी इलाके में रहनेवाली एक महिला के घर गए। यहाँ उन्हें पहली बार फेब्रीज़ की असफलता का कारण समझ में आया। उसके घर में प्रवेश करने से पहले ही स्टीमसन और उनके सहकर्मियों को उस महिला की नौ पालतू बिल्लियों की बदबू आने लगी। पर उसके घर के भीतर सब कुछ बहुत ही साफ-सुथरा और व्यवस्थित नज़र आ रहा था। वह महिला रोज़ाना साफ-सफाई करती थी और तेज़ हवाओं के कारण बाहर की धूल उड़कर अंदर न आए, इसके लिए वह घर की खिड़कियाँ भी नहीं खोलती थी। स्टीमसन और उनकी टीम के वैज्ञानिक घर के अंदर पहुँचे। जहाँ सारी बिल्लियाँ सामनेवाले कमरे में ही रहती थीं। इस एक कमरे में बिल्लियों की बदबू इतनी तेज़ थी कि स्टीमसन के एक सहकर्मी का तो दम घुटने लगा।

उनकी टीम के एक वैज्ञानिक ने उस महिला से पूछा कि 'आप बिल्लियों की बदबू से निपटने के लिए क्या करती हैं?'

'यह बदबू ऐसी समस्या नहीं है, जो अक्सर होती हो।' उस महिला ने जवाब दिया।

'आपको कब लगता है कि यह बदबू समस्या बनती जा रही है?'

'महीने में एकाध बार।'

शोधकर्ता एक-दूसरे की ओर देखने लगे।

फिर एक अन्य वैज्ञानिक ने पूछा, 'क्या इस वक्त आपको बिल्लियों की बदबू आ रही

है?’

‘नहीं।’ उस महिला ने जवाब दिया।

इसके बाद शोधकर्ता ऐसे कई घरों में गए, जहाँ पालतू जानवरों की बदबू बहुत तेज़ थी। इन सभी घरों में शोधकर्ताओं का अनुभव एक जैसा रहा। आमतौर पर जो बदबू रोज़ाना आती है, वहाँ रहनेवालों को उसकी आदत पड़ जाती है और फिर उस पर उनका ध्यान नहीं जाता। नौ बिल्लियों के साथ रहने के कारण वह महिला बिल्लियों की बदबू के प्रति असंवेदनशील हो गई थी। इसी तरह धूम्रपान से भी इंसान के सूँघने की क्षमता प्रभावित होती है और यही कारण है कि नियमित धूम्रपान करनेवाले को उसकी बदबू आना बंद हो जाती है। गंध किसी भी प्रकार की हो, उसकी एक विचित्र विशेषता होती है कि भले ही वह कितनी भी तीव्र हो, पर निरंतर आने के कारण उसकी तीव्रता कम महसूस होने लगती है। तो अब जाकर स्टीमसन को समझ में आ गया कि लोग फेब्रीज़ का उपयोग क्यों नहीं कर रहे हैं। दरअसल लोग वह इशारा देख ही नहीं पा रहे थे, जिससे उनके अंदर फेब्रीज़ खरीदने और उपयोग करने की आदत विकसित हो। आमतौर पर लोग अपने आस-पास की बदबू के बारे में जान ही नहीं पाते थे इसलिए यह इशारा उनके अंदर आदत विकसित करने में असफल रहा। इसके परिणामस्वरूप फेब्रीज़ लोगों की अलमारी के सबसे पिछले कोने में पड़ा रहता था और लोग उसे भूल जाते थे। कुल मिलाकर जिन लोगों के घरों में फेब्रीज़ की आवश्यकता सबसे ज़्यादा थी, वे इससे पूरी तरह अनजान थे।

स्टीमसन और उनके सहकर्मी कंपनी के मुख्यालय लौटे। वे नौ बिल्लियोंवाली महिला से हुई बातचीत की एक लिखित प्रतिलिपी लेकर उस बिना खिड़कियोंवाले कमरे में जमा हुए। उनमें से एक मनोविज्ञानी ने पूछा कि अगर उन्हें नौकरी से निकाला गया, तो उनके साथ कैसा व्यवहार होगा? यह सुनकर स्टीमसन अपना सिर पकड़कर बैठ गए और सोचने लगे कि यदि वे नौ बिल्लियोंवाली उस महिला को फेब्रीज़ बेचने में कामयाब नहीं हुए, तो भला किसी और को इसे खरीदने के लिए कैसे राज़ी करेंगे? अगर ऐसा कोई इशारा ही न हो, जिससे फेब्रीज़ के इस्तेमाल की आदत विकसित की जा सके तो? जिसे इसकी सबसे ज़्यादा ज़रूरत है, अगर उसे ही इसके इस्तेमाल से इनाम मिलने का एहसास न हो, तो भला ग्राहकों में नई आदत कैसे विकसित होगी?

3

कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के न्यूरोसाइंस (तंत्रिका विज्ञान) विभाग के प्रोफेसर वोल्फ्रम शुल्ज़ की प्रयोगशाला अक्सर इतनी गंदी और अस्तव्यस्त रहती थी कि उनके सहकर्मी उनकी मेज़ को ब्लैक होल कहते थे, जिसमें कोई भी दस्तावेज हमेशा के लिए गुम हो सकता है। वे इसे ऐसी जगह मानते थे, जहाँ तरह-तरह के सूक्ष्मजीव सालों तक बिना किसी बाधा के बढ़ सकते हैं। कभी-कभार अगर गलती से शुल्ज़ को सफाई करने का मन हो भी जाए, तो वे साबुन या स्प्रे वगैरह का उपयोग नहीं करते थे। वे तो बस पेपर टॉवल

को पानी से भिगोकर मेज़ पर रगड़ देते थे। उनका ध्यान इस बात पर कभी जाता ही नहीं था कि उनके कपड़ों से सिगरेट की या उनकी पालतू बिल्ली की बदबू आ रही है। हो सकता है कि ऐसा इसलिए भी हो क्योंकि उन्हें इस बात की परवाह ही नहीं थी।

इसके बावजूद पिछले बीस सालों में शुल्ज़ ने क्रांतिकारी प्रयोग किए थे। इशारे, इनाम और आदतें कैसे काम करती हैं, यह जानने की प्रक्रिया में शुल्ज़ के प्रयोग विशेष महत्त्व रखते हैं। शुल्ज़ ने ही हमें बताया कि कुछ विशेष इशारे और इनाम अधिक प्रभावी क्यों होते हैं? पेप्सोडेंट की वैश्विक सफलता के पीछे क्या कारण था, यह भी शुल्ज़ ने ही स्पष्ट किया। इसके साथ ही उनके प्रयोगों से यह भी समझ में आता है कि कैसे कुछ लोग बड़ी आसानी से अपने व्यायाम और खाने-पीने की आदतों में बदलाव ले आते हैं। वे शुल्ज़ ही थे, जिन्होंने फेब्रीज़ को बेचने का तरीका बताया।

सन 1980 में शुल्ज़ बंदरों के दिमाग का अध्ययन कर रहे वैज्ञानिकों के एक समूह के सदस्य थे। इन बंदरों को लीवर खींचने और हुक खोलने जैसी कुछ विशेष क्रियाएँ सिखाई गईं और इन क्रियाओं के दौरान उनके दिमाग की जाँच की गई। इन वैज्ञानिकों का लक्ष्य यह जानना था कि जब हम नई क्रियाएँ करते हैं, तो इसके लिए दिमाग का कौन सा हिस्सा जिम्मेदार होता है।

शुल्ज़ का जन्म जर्मनी में हुआ था। अंग्रेजी में बात करते समय उनकी आवाज़ मशहूर हॉलिवुड अभिनेता अरनॉल्ड श्वार्ज़नेगर जैसी लगती थी। शुल्ज़ के अनुसार, ‘एक दिन मेरा ध्यान एक अनोखी चीज़ की ओर गया। हम जिन बंदरों पर प्रयोग कर रहे थे, उनमें से कुछ को सेब का रस पसंद था और कुछ को अंगूर का। इससे मेरे अंदर विचार उठा कि आखिर इन बंदरों के इस चुनाव के दौरान उनके दिमाग में क्या चलता होगा और अलग-अलग इनाम उनके दिमाग पर अलग-अलग प्रभाव क्यों डालते हैं?’

अनेकों प्रयोग करने के बाद आखिरकार शुल्ज़ ने यह पता लगा लिया कि इनाम न्यूरोकेमिकल स्तर पर कैसे काम करते हैं। सन 1990 में तकनीकी विकास के साथ ही शुल्ज़ के पास वे यंत्र भी आ गए, जिनका उपयोग एम.आय.टी. के शोधकर्ता करते थे। लेकिन प्रयोग के लिए शुल्ज़ की दिलचस्पी चूहों के बजाय बंदरों में थी। उनके एक बंदर का नाम जूलियो था और वह मकाक प्रजाति का था। उसकी आँखें बादामी और वजन आठ पाउंड था। उसके दिमाग में एक बहुत ही पतला इलेक्ट्रोड� (बिजली का तार) डाल दिया गया, जिसकी मदद से शुल्ज़ उसकी न्यूरोनल (तंत्रिका संबंधी) गतिविधियों का निरीक्षण कर सकते थे।

एक दिन शुल्ज़ जूलियो को एक ऐसे कमरे में ले गए, जहाँ रोशनी कम थी। वहाँ उन्होंने जूलियो को कुर्सी पर बिठा दिया। जूलियो के सामने एक कंप्यूटर था, जिसकी स्क्रीन पर जूलियो को पीली, लाल या नीले रंग की टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ दिखाई गईं। यहाँ जूलियो को प्रशिक्षण दिया गया कि ये रंगीन रेखाएँ देखते ही वह अपने सामने मौजूद लीवर को खींच दे। कमरे की छत से एक नली लटकाई गई थी, जिसका दूसरा सिरा इस

बंदर के होठों के पास था। लीवर खींचते ही इस नली से जामुन का रस बहकर आता था।

जूलियो को जामुन का रस बहुत पसंद था।

प्रयोग के शुरुआती दौर में जूलियो कंप्यूटर पर ज़्यादा ध्यान नहीं दे रहा था। उसने अपना सारा समय कुर्सी से उठने की छटपटाहट में ही खर्च कर दिया। लेकिन जामुन के रस की पहली खुराक मिलते ही जूलियो ने अपना ध्यान कंप्यूटर स्क्रीन पर केंद्रित कर लिया। इस क्रिया को दर्जनों बार दोहराने के बाद जूलियो समझ गया कि कंप्यूटर पर दिखाई जानेवाली रेखाएँ दरअसल इशारा है और यह इशारा मिलते ही लीवर खींचने की क्रिया करने पर इनाम के रूप में जामुन का रस मिलता है। यह समझ में आते ही जूलियो एकाग्र चित्त होकर कंप्यूटर की स्क्रीन को देखने लगा। इसके बाद उसका ध्यान एक पल के लिए भी दूसरी ओर नहीं भटका। स्क्रीन पर पीली रेखा दिखते ही वह लीवर की ओर झपटता था, फिर जैसे ही नीली रेखा स्क्रीन पर आती थी, वह लीवर खींच देता और नली से जामुन का रस आने पर उसे बड़े चाव से चाटता रहता।

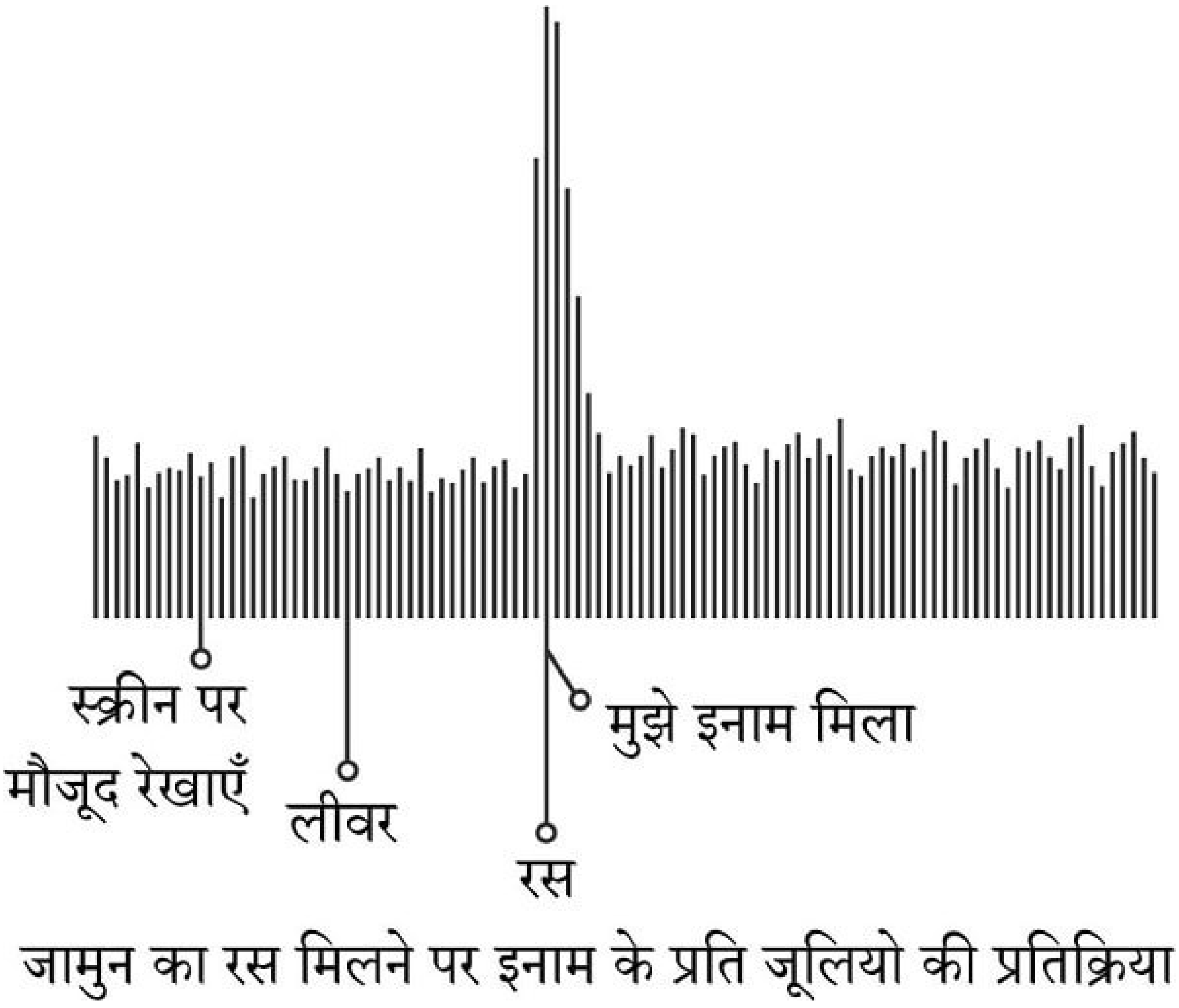

जामुन का रस मिलने पर इनाम के प्रति जूलियो की प्रतिक्रिया

शुल्ज़ जूलियो के दिमाग में हो रही इन गतिविधियों पर नज़र रखे हुए थे। उन्होंने देखा कि इनमें एक पैटर्न बन रहा है। इनाम मिलते ही जूलियो के दिमाग की गतिविधियों से पता चलता था कि उसे खुशी महसूस हो रही है। इस न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका संबंधी) गतिविधि की प्रतिलिपि यह दर्शा रही थी कि उस समय क्या होता है, जब इस बंदर का दिमाग कहता है कि 'मुझे इनाम मिला है!'

शुल्ज़ ने जूलियो के साथ यह प्रयोग कई बार दोहराया और हर बार उसकी न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका संबंधी) गतिविधियाँ दर्ज कीं। जूलियो को रस मिलते ही कंप्यूटर स्क्रीन पर स्पष्ट दिखाई देता था कि उसके दिमाग में 'मुझे इनाम मिला है!' का पैटर्न उभरा है। न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका संबंधी) दृष्टिकोण से देखें तो धीरे-धीरे जूलियो का व्यवहार आदत में तब्दील हो गया था।

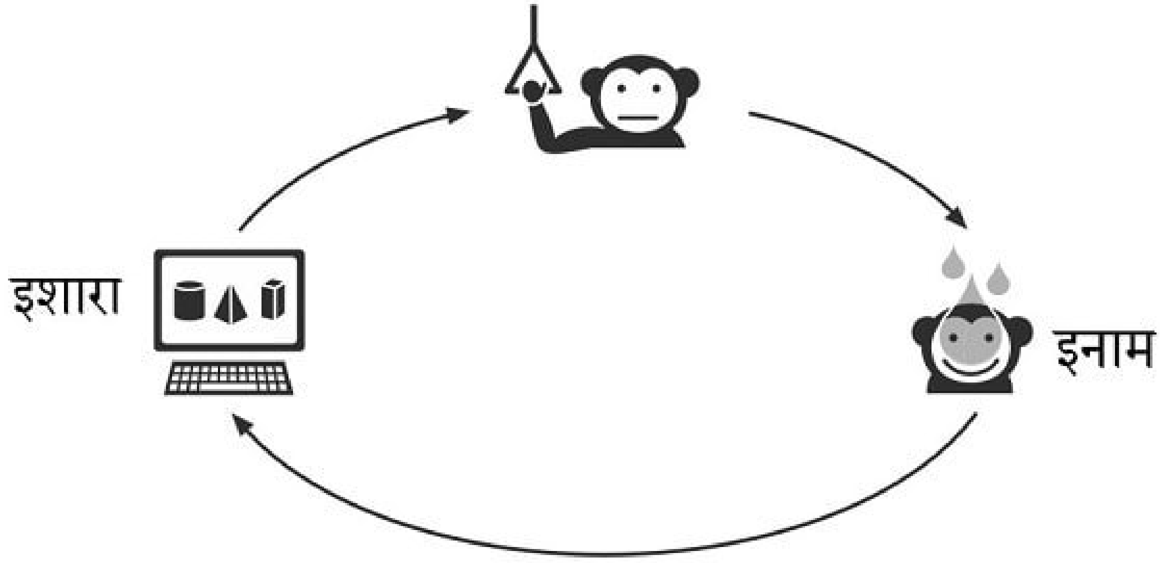

जूलियो की आदत का फंदा

शुल्ज़ के लिए सबसे दिलचस्प बात यह थी कि जैसे-जैसे यह प्रयोग आगे बढ़ रहा था, वैसे-वैसे इसमें बदलाव आ रहे थे। प्रयोग को बार-बार दोहराने के चलते जूलियो इन क्रियाओं में माहिर होता जा रहा था, जिसके चलते इस व्यवहार से बनी उसकी आदतें दृढ़ होती जा रही थीं। अब जूलियो का दिमाग जामुन के रस की उम्मीद करने लगा था। शुल्ज़ ने पाया कि नली में रस आने से पहले, स्क्रीन पर रेखाओं को देखते ही जूलियो के दिमाग में 'मुझे इनाम मिला है!' का पैटर्न उभरने लगता है।

अब जूलियो जामुन का रस मिलने से पहले ही इनाम प्राप्ति की प्रतिक्रिया देने

लगा।

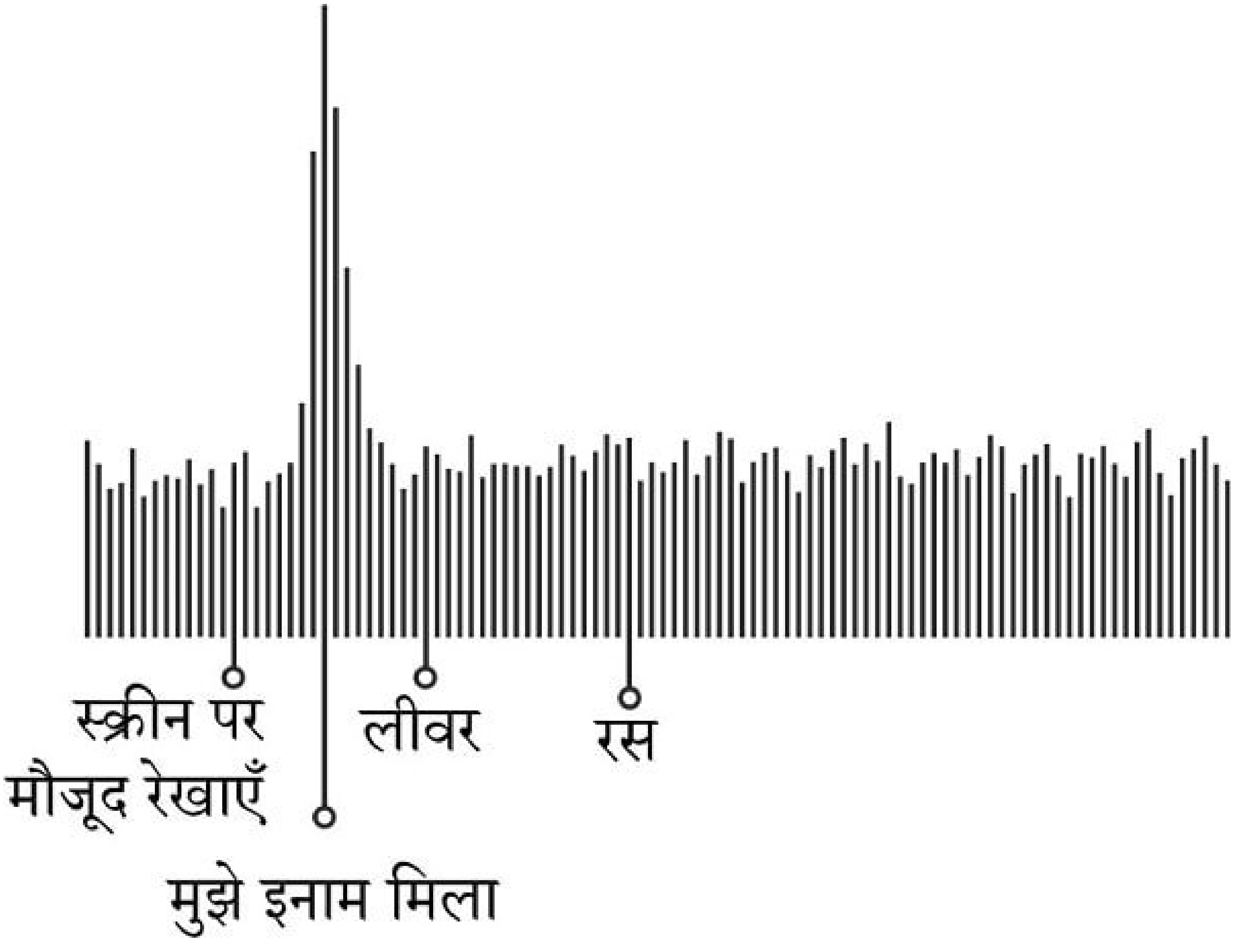

दूसरे शब्दों में कहा जाए तो स्क्रीन पर दिखाई जानेवाली रेखाएँ न सिर्फ लीवर खींचने के लिए बल्कि जूलियो के दिमाग में आनंद का एहसास जगाने का इशारा भी बन गईं। स्क्रीन पर पीली-लाल रेखाएँ दिखाई देते ही जूलियो इनाम की अपेक्षा करने लगा था।

इसके बाद शुल्ज़ ने अपने प्रयोग में कुछ बदलाव किए। पहले लीवर खींचते ही जूलियो को रस मिल जाता था। लेकिन अब हर बार ऐसा नहीं होता था। कभी-कभी रस ज़रा देर से आता और कभी उस रस में इतना पानी मिला होता कि उसकी मिठास कम होती। कई बार तो जूलियो पूरा प्रयोग ठीक से करता था, इसके बावजूद उसे रस नहीं दिया जाता था।

जब रस बिलकुल नहीं आता या देर से आता या फिर पानी मिला होने के कारण कम मीठा होता, तो जूलियो नाराज़ हो जाता। वह मुँह फुलाकर अलग-अलग तरह की आवाज़ें निकालता और अपनी नाराज़गी जाहिर करता। इसके बाद शुल्ज़ ने पाया कि जूलियो के दिमाग में नए पैटर्न का निर्माण हो गया है और यह पैटर्न है इच्छा का। जब

जूलियो रस की उम्मीद करता और उसे रस नहीं मिलता तो उसके दिमाग में इच्छा और निराशा से जुड़ा एक नया पैटर्न बनने लगता। इशारा नज़र आते ही जूलियो के दिमाग में रस मिलने की अपेक्षा के कारण आनंद का संचार होने लगता। पर फिर जब रस नहीं मिलता तो यही आनंद इच्छा में तब्दील हो जाता। जब यह इच्छा शांत नहीं होती, तो जूलियो के दिमाग में गुस्से और निराशा के भाव उभरने लगते।

अन्य प्रयोगशालाओं में भी शोधकर्ताओं को ऐसे ही परिणाम मिले। बंदरों को इस प्रकार प्रशिक्षित किया गया कि जैसे ही उन्हें स्क्रीन पर रेखाएँ दिखाई देतीं, वे फौरन रस मिलने की उम्मीद करने लगे। फिर बंदरों का ध्यान बँटाने की कोशिश की गई। जैसे प्रयोगशाला का दरवाजा खुला छोड़ दिया जाता था ताकि बंदर बाहर निकलकर अन्य बंदरों के साथ घुलमिल सकें। प्रयोगशाला के किसी एक कोने में खाद्यपदार्थ रखे जाते थे ताकि अगर वे प्रयोग छोड़कर इधर-उधर जाना चाहें, तो जा सकें।

जिन बंदरों में यह आदत दृढ़ता से विकसित नहीं हुई, वे इन चीज़ों की ओर तुरंत आकर्षित हो जाते थे। ऐसे बंदर अपनी कुर्सी से उठकर, कमरे के बाहर चले जाते और प्रयोगशाला की ओर एक बार मुड़कर भी नहीं देखते। उनमें रस प्राप्ति की इच्छा पैदा नहीं हुई थी। लेकिन जिन बंदरों में यह आदत दृढ़ता से विकसित हो गई, उन्हें कोई भी लालच दिया जाए, वे उसकी ओर आकर्षित नहीं होते थे। ये बंदर घंटों तक एकाग्रता के साथ स्क्रीन की ओर देखते रहते और लीवर खींचते रहते। उन पर इनाम प्राप्ति की उम्मीद और इच्छा वैसे ही हावी थी, जैसे किसी जुआरी पर पैसे हारने के बाद फिर से दाँव लगाकर पैसे वापस जीतने की इच्छा हावी हो जाती है।

इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि आदतें इतनी प्रभावी क्यों होती हैं - आदतें न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका) स्तर पर इच्छा पैदा करती हैं। कई बार यह इच्छा इतनी धीमी गति से पैदा होती है कि लोग लंबे समय तक इसके अस्तित्व से अनजान बने रहते हैं। परिणामस्वरूप इसके प्रभाव भी लोगों की समझ में नहीं आते। लेकिन जब हम कुछ इशारों के साथ इनामों को भी जोड़ देते हैं, तो हमारे अवचेतन मन में इच्छा पैदा हो जाती है और आदत के नए फंदे का निर्माण होने लगता है। कॉरनेल के एक शोधकर्ता ने जब इस बात पर गौर किया कि अलग-अलग शॉपिंग मॉल में 'सिनबॉन बेकरी' का स्टॉल किस स्थान पर खोला गया है, तब उसे समझ में आया कि खाद्यपदार्थों की गंध से कितनी प्रभावी इच्छा पैदा हो सकती है। अधिकतर खाद्यपदार्थ-विक्रेता शॉपिंग मॉल में अपना स्टॉल फूड-कोर्ट के अंदर ही लगाते हैं। पर सिनबॉन बेकरी जानबूझकर अपना स्टॉल अन्य खाद्य-विक्रेताओं के स्टॉल से दूर लगाती है। इसके पीछे एक विशेष कारण है। दरअसल सिनबॉन के अधिकारी यह चाहते हैं कि दालचीनी के रोल्स की सुगंध बिना किसी अन्य गंध की मिलावट के या बिना किसी रुकावट के मॉल में खरीदारी कर रहे ग्राहकों तक पहुँचे। ताकि ग्राहकों के अवचेतन मन में इच्छा पैदा हो। इस तरह जब वह ग्राहक अन्य चीज़ों की खरीदारी करते-करते आखिर में सिनबॉन के स्टॉल पर पहुँचता है, तो उसकी इच्छा इतनी तीव्र होती है कि उसका हाथ स्वत: ही उसके बटुए की ओर जाता है और वह फौरन दालचीनी के रोल्स खरीद लेता है। यहाँ आदत का फंदा इसलिए तैयार

हो जाता है क्योंकि एक इच्छा पैदा हो चुकी होती है।

शुल्ज़ कहते हैं, ‘हमारे दिमाग में ऐसा कुछ नहीं होता, जो स्वादिष्ट डोनट्स का डिब्बा नज़र आने पर हमें खाने के लिए उकसाए। लेकिन जब हमारे दिमाग को यह पता चल जाता है कि इस डिब्बे में कोई मीठी चीज़ या कार्बोहाइड्रेडवाली कोई अन्य चीज़ रखी है, तो हमारे अंदर उसका मीठा स्वाद लेने की इच्छा पैदा हो जाती है। हमारा दिमाग हमें डिब्बे की ओर बढ़ाता है और अगर इसके बाद भी हम मीठा न खाएँ, तो हमारे अंदर निराशा का भाव पैदा होता जाता है।’

इसे बेहतर ढंग से समझने के लिए हम जूलियो का उदाहरण ले सकते हैं और यह देख सकते हैं कि उसके अंदर आदत कैसे विकसित हुई। सबसे पहले उसने कंप्यूटर की स्क्रीन पर कुछ रेखाएँ देखीं :

कुछ समय बाद जूलियो को समझ में आया कि रेखाएँ दिखने का अर्थ है कि उसे लीवर खींचना है।

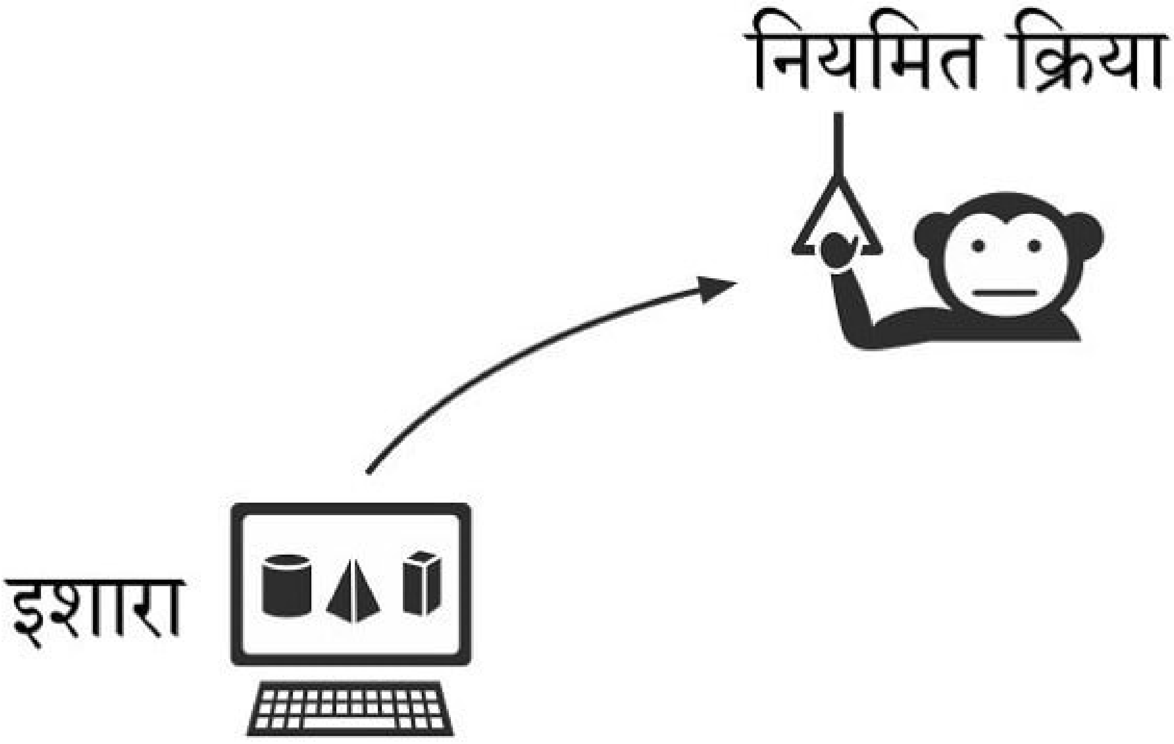

यह क्रिया करने पर जूलियो को इनाम के रूप में जामुन के रस की कुछ बूँदें मिलीं।

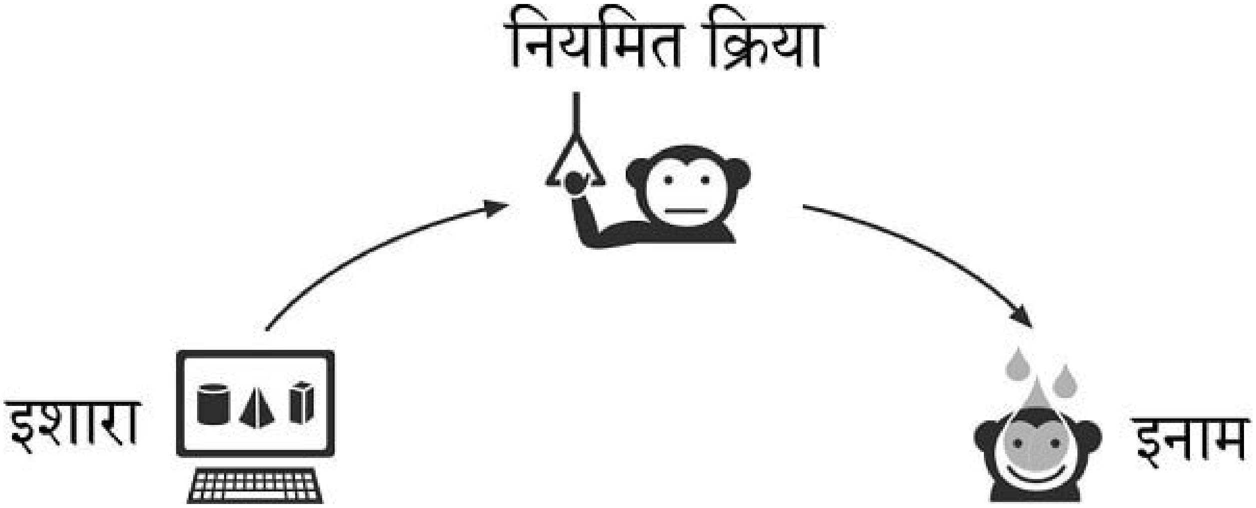

यह साधारण प्रशिक्षण था। इशारा नज़र आने पर जब जूलियो के मन में जामुन का रस मिलने की इच्छा पैदा होती है, तो आदत विकसित होने लगती है। एक बार इच्छा पैदा होने पर जूलियो स्वतः ही क्रिया करने लगता है। यह आदत सहज और स्वचलित

होती है :

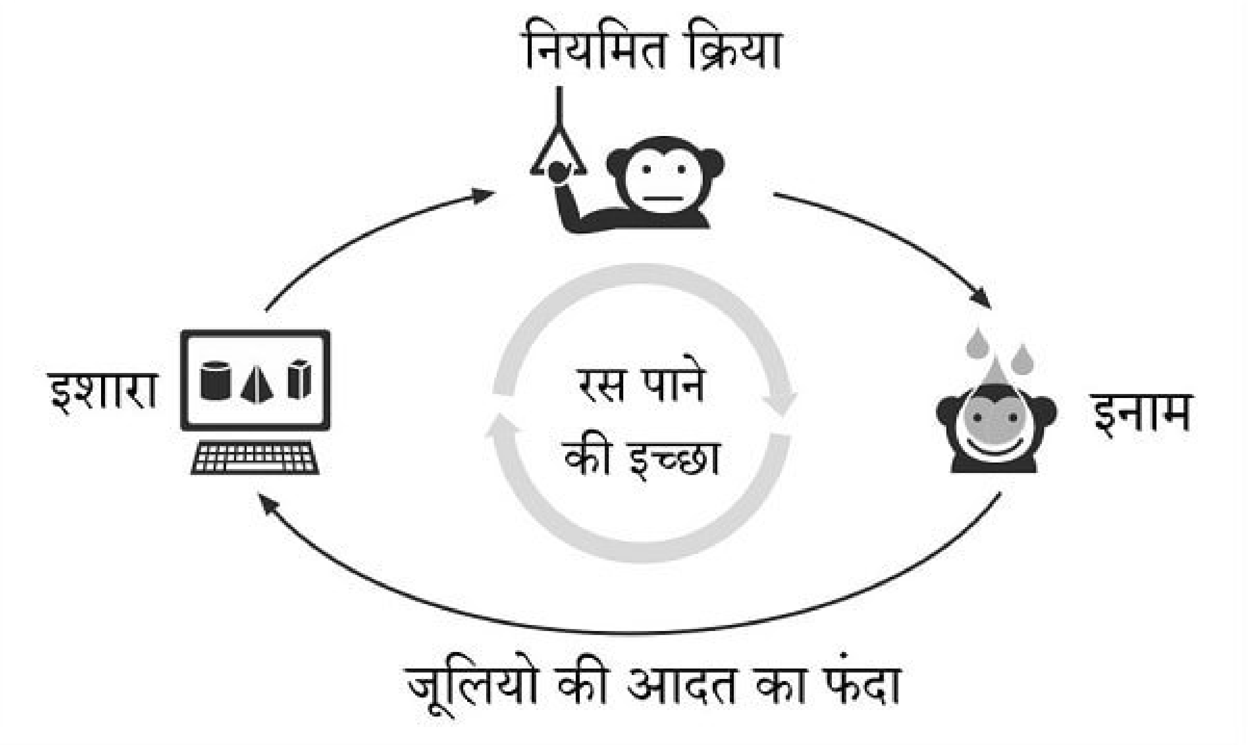

नई आदतें इस प्रकार विकसित होती हैं - इशारा, क्रिया और इनाम को एक साथ जोड़ा जाता है और फिर ऐसी इच्छा पैदा होती है, जिससे आदत का फंदा सक्रिय हो जाए। उदाहरण के लिए धूम्रपान की आदत। धूम्रपान करनेवाले इंसान को जैसे ही इशारा मिलता है यानी जैसे ही उसे सिगरेट की डिब्बी नज़र आती है, उसका दिमाग निकोटिन की उम्मीद करने लगता है।

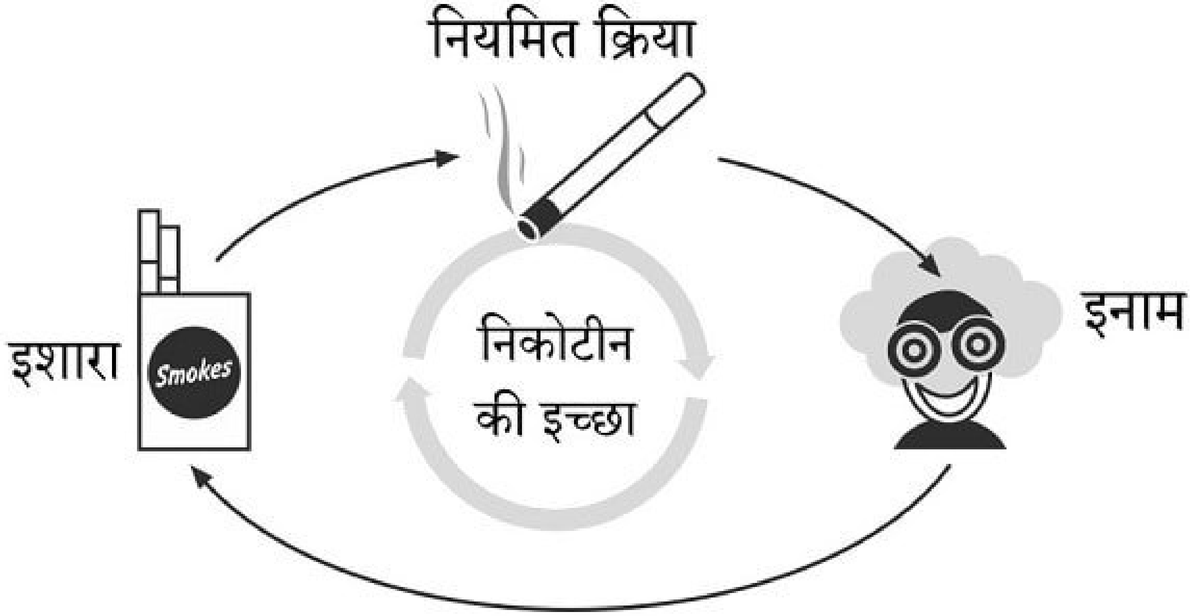

सिगरेट पर सिर्फ एक नज़र पड़ते ही दिमाग में निकोटिन की इच्छा पैदा हो जाती है। अगर इसके बाद निकोटिन न मिले, तो यह इच्छा इतनी बढ़ जाती है कि इंसान का हाथ स्वत: ही सिगरेट की ओर चला जाता है।

इसी तरह ई-मेल का उदाहरण ले लीजिए। जब आपका मोबाईल नया मैसेज मिलने से वायब्रेट होता है तो आपका दिमाग क्षणभर में ही मन-बहलाव की अपेक्षा करने लगता है, जो नया ई-मेल देखने से मिलता है। अगर यह अपेक्षा पूरी न हो, तो यह इतनी बढ़ जाती है कि फिर लोग ऑफिस में मीटिंग के दौरान भी मेज़ के नीचे छिपाकर मोबाईल पर आए मैसेज देखने लगते हैं, भले ही उन्हें अच्छी तरह पता हो कि इन सारे मैसेज में ऐसा कुछ भी खास नहीं है, जिसे फौरन देखना ज़रूरी हो। (जबकि अगर आप अपने मोबाईल को साइलेंट मोड में डाल दें और उसका वाइब्रेशन बंद कर दें, तो यह इशारा हटते ही आप मोबाइल के बारे में सोचे बिना घंटों तक काम कर सकते हैं।)

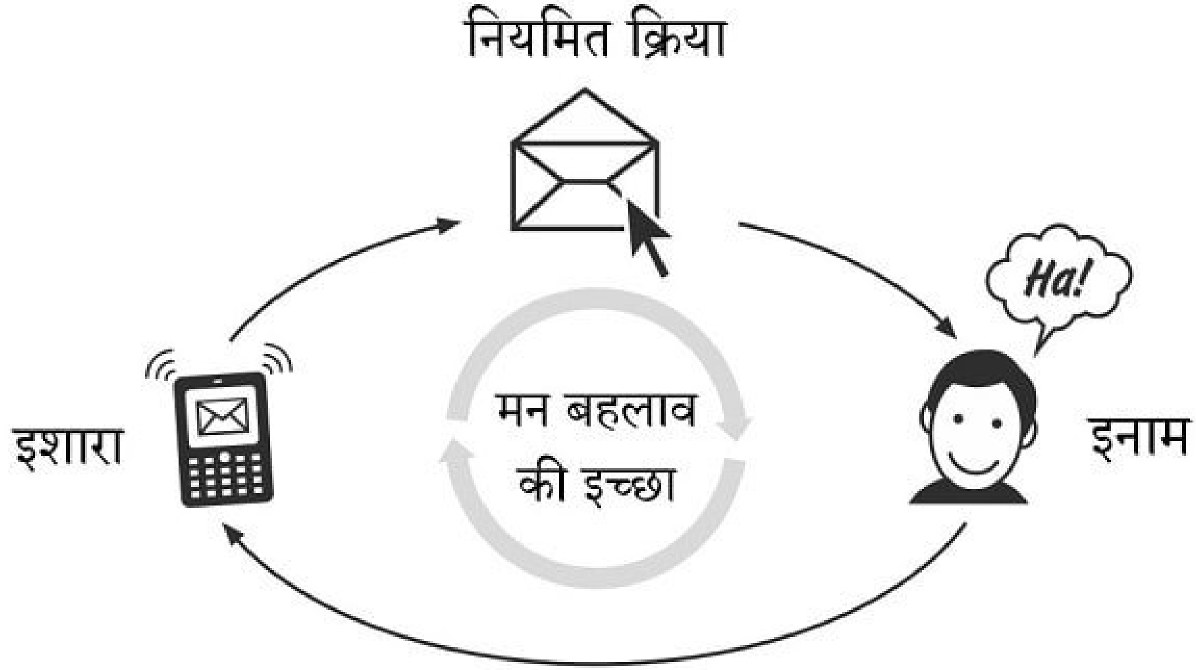

वैज्ञानिकों ने शराब और धूम्रपान की लत के शिकार व अत्यधिक खानेवालों के दिमाग की जाँच में पाया कि जब उनके अंदर कोई इच्छा बहुत गहराई तक बैठ जाती है, तो उनके दिमाग का स्वरूप और उसके न्यूरोकेमिकल्स (तंत्रिका रसायन) में बदलाव आने लगता है। मिशिगन यूनिवर्सिटी के दो शोधकर्ता लिखते हैं कि हमारी कुछ शक्तिशाली आदतें व्यसनों जैसी प्रतिक्रिया पैदा करती हैं, जिससे हमारी इच्छाएँ जुनून की हद तक जानेवाली इच्छा में तब्दील हो जाती हैं। ऐसी इच्छा के कारण हमारा दिमाग ऑटो पायलट मोड में चला जाता है यानी स्वत: ही क्रियाएँ करने लगता है, भले ही इज्जत, नौकरी, घर और यहाँ तक कि परिवार गँवाने की नौबत आ जाए।

फिर भी ये इच्छाएँ हम पर पूरी तरह हावी नहीं हो सकतीं। अगले अध्याय में आप ऐसी प्रक्रियाओं के बारे में जानेंगे, जिनकी मदद से हम इन प्रलोभनों को अनदेखा कर सकते हैं। पर आदत को नियंत्रित करने के लिए सबसे पहले यह समझना ज़रूरी है कि हमारी किस इच्छा से कौन सा व्यवहार सक्रिय होता है। जिस तरह शॉपिंग मॉल में खरीदारी करते-करते लोग अनजाने में ही सिनबॉन बेकरी के स्टॉल में घुस जाते हैं, मानो उन्हें कोई अदृश्य शक्ति खींच रही हो, उसी तरह आप भी अपनी इच्छाओं के बारे में सजग ना होने पर अनायास ही ऐसी चीज़ें करते हैं, जो या तो आपके लिए हानिकारक हैं या गैरज़रूरी।

***

आदतों के निर्माण में इच्छा का महत्त्व समझने के लिए व्यायाम की आदत विकसित

होने की प्रक्रिया पर गौर करना ज़रूरी है। सन 2002 में न्यू मेक्सिको स्टेट यूनिवर्सिटी के शोधकर्ता जानना चाहते थे कि कुछ लोग आदतन व्यायाम कैसे करते हैं? इन शोधकर्ताओं ने ऐसे 266 लोगों का अध्ययन किया, जिनमें से अधिकतर लोग सप्ताह में कम से कम 3 बार व्यायाम ज़रूर करते थे। इस अध्ययन से पता चला कि इनमें से कई लोगों ने बस मौज के लिए दौड़ना या वजन उठाना शुरू किया था। कुछ ऐसे भी लोग थे, जिनके पास ऑफिस और घर के काम निपटाने के बाद हर रोज खाली समय बच जाता था इसलिए उस समय ये लोग व्यायाम करने लगे। इसके आलावा कुछ लोग ऐसे थे, जो अपने जीवन के तनाव से निपटने के लिए व्यायाम करने लगे और जब तनाव नहीं रहा, तब भी उन्होंने व्यायाम की क्रिया जारी रखी, जो धीरे-धीरे एक आदत में तब्दील हो गई। व्यायाम की क्रिया जारी रखने के पीछे का कारण यह था कि इन लोगों में एक विशेष इनाम मिलने की इच्छा पैदा होने लगी थी।

इनमें से 92 प्रतिशत लोगों ने व्यायाम की आदत विकसित होने का कारण बताते हुए कहा कि उन्हें व्यायाम करने से 'अच्छा महसूस होता है।' दरअसल व्यायाम करने से शरीर में एंडोर्फिन और अन्य न्यूरोकेमिकल्स (तंत्रिका संबंधी रसायन) का संचार होता है और इन लोगों के अंदर इन न्यूरोकेमिकल्स के संचार की इच्छा पैदा होने लगी थी। एक अन्य समूह के 67 लोगों ने बताया कि व्यायाम करने से उन्हें कोई उपलब्धि हासिल करने जैसा अनुभव होता है। हर रोज कितना व्यायाम और उससे शरीर पर क्या फर्क नज़र आया, इसका हिसाब रखने के कारण इन लोगों को नियमित रूप से उपलब्धि हासिल करने का अनुभव होता था। व्यायाम की क्रिया को आदत में तब्दील करने के लिए इतना इनाम काफी था।

अगर आप हर रोज सुबह-सुबह दौड़ने की आदत विकसित करना चाहते हैं तो अपने लिए एक आसान इशारा और स्पष्ट इनाम निश्चित कर लें। जैसे इशारे के लिए आप नाश्ते के पहले ही अपने जूते पहन लीजिए या फिर दौड़ने के लिए आप जो कपड़े पहननेवाले हैं, उन्हें पहले ही बिस्तर पर निकालकर रख लीजिए। वहीं, इनाम के तौर पर आप दोपहर में अपनी पसंदीदा चीज़ खा सकते हैं या यह हिसाब रखकर संपूर्णता का एहसास कर सकते हैं कि आप कितने मील दौड़े। इसके अलावा दौड़ने से आपके शरीर में होनेवाला एंडोर्फीन का संचार भी एक स्पष्ट इनाम ही है। लेकिन अनगिनत अध्ययनों से यह साबित हो चुका है कि आदत विकसित करने के लिए केवल इशारा और इनाम ही काफी नहीं है। कोई भी नियमित क्रिया आदत में तभी तब्दील होती है, जब आपके दिमाग में इनाम हासिल करने की इच्छा जागती है। दौड़ने से शरीर में संचारित होनेवाला एंडोर्फिन या संपूर्णता का अनुभव जब आपके दिमाग में इच्छा जगाता है, तब आप स्वत: ही दौड़ने के लिए जूते पहनने लगते हैं। इशारे से न केवल नियमित क्रिया बल्कि इनाम हासिल करने की इच्छा भी सक्रिय हो जाती है।

जब न्यूरोलॉजिस्ट (तंत्रिका विज्ञानी) वोलफ़्रम शुल्ज़ ने मुझे यह बताया कि इच्छा कैसे पैदा होती है, तो मैंने उनसे पूछा, 'क्या मैं आपको अपनी एक समस्या बता सकता हूँ?' उन्होंने हामी भरते हुए कहा, 'हाँ, पूछो।' तब मैंने उन्हें बताया, 'मेरा दो साल का बेटा है। जब मैं उसे खाने में चिकन नगेटस् या ऐसी ही कोई अन्य चीज़ खिलाता हूँ, तो अनजाने में मैं खुद भी वही सब खाने लगता हूँ। यह मेरी आदत बन चुकी है, जिसके चलते मेरा वज़न भी बढ़ने लगा है!'

शुल्ज़ ने इस पर अपनी प्रतिक्रिया देते हुए कहा, 'हम सभी ऐसा करते हैं।' शुल्ज़ के तीन बच्चे हैं। हालाँकि वे सभी अब बड़े हो चुके हैं, लेकिन जब वे छोटे थे, तो शुल्ज़ भी इसी तरह अनजाने में बच्चों के भोजन में से कुछ निवाले खुद खा लेते थे। वे बताते हैं, 'एक तरह से देखा जाए तो प्रयोग के दौरान इस्तेमाल किए गए बंदरों में और हममें कुछ समानताएँ हैं। जब भी हम चिकन या कोई तला हुआ खाद्यपदार्थ देखते हैं, तो हमारे दिमाग में उसे खाने की इच्छा जाग जाती है। भले ही हमें भूख न हो, फिर भी हम वह खाना चाहते हैं क्योंकि हमारे दिमाग में उसकी इच्छा पैदा हो चुकी होती है। सच कहूँ तो मुझे तले हुए खाद्यपदार्थ पसंद नहीं हैं, लेकिन फिर भी उन्हें देखते ही मैं खुद को रोक नहीं पाता और कुछेक निवाले खा लेता हूँ। ऐसी चीज़ें खाने से मेरे दिमाग की इच्छा तृप्त होती है और मेरे अंदर आनंद का संचार होने लगता है। यह सब थोड़ा अजीब है, लेकिन आदतें ऐसे ही काम करती हैं।'

शुल्ज़ आगे बताते हैं कि 'इस मामले में मुझे तो कृतज्ञ होना चाहिए क्योंकि इसी प्रक्रिया के कारण मैंने बहुत सी अच्छी आदतें भी विकसित की हैं। मैं कड़ी मेहनत

करता हूँ क्योंकि अपने शोधकार्य से मुझे गर्व महसूस होता है। मैं रोज़ाना व्यायाम करता हूँ क्योंकि इससे मुझे अच्छा महसूस होता है। मेरी इच्छा केवल इतनी ही है कि मैं अपने लिए और बेहतर आदतों का चुनाव कर सकूँ।'

4

बिल्लियोंवाली उस औरत से हुई निराशाजनक बातचीत के बाद डेक स्टीमसन और उनकी टीम फेब्रीज़ को प्रसिद्ध बनाने के लिए पारंपरिक तरीके को छोड़कर कुछ नया ढूँढ़ने में जुट गई। वोलफ्रम शुल्ज़ ने बंदरों पर जो प्रयोग किया था, वे उसी प्रकार के अन्य प्रयोगों की जानकारी इकट्ठा करने लगे। उन्होंने हार्वर्ड स्कूल ऑफ बिज़नेस को फेब्रीज़ के विज्ञापन मुहिम की मनोवैज्ञानिक जाँच करने के लिए कहा। फेब्रीज़ को ग्राहकों के दैनिक जीवन का हिस्सा कैसे बनाया जाए, इसका एक संकेत ढूँढ़ने के लिए उन्होंने असंख्य ग्राहकों से बातचीत की।

एक दिन वे अमेरिका के स्कॉट्सडेल शहर के बाहरी उपनगर में रहनेवाली एक महिला से बातचीत करने पहुँचे। करीब चालीस वर्षीय इस महिला के चार बच्चे थे। स्टीमसन और उनकी टीम ने देखा कि इस महिला का घर सफाई से चमचमा तो नहीं रहा था, पर फिर भी साफ-सुथरा था। शोधकर्ताओं को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उस महिला को फेब्रीज़ बहुत पसंद आया था।

महिला ने बताया, 'मैं रोज़ाना फेब्रीज़ का उपयोग करती हूँ।'

'सच?' स्टीमसन ने आश्चर्य से पूछा। उसके घर को देखकर ऐसा बिलकुल नहीं लग रहा था कि यहाँ बदबू की कोई समस्या होगी। क्योंकि न तो उस महिला के पास कोई पालतू जानवर था और न ही उसके घर में कोई धूम्रपान करता था। स्टीमसन ने उस महिला से पूछा, 'आप फेब्रीज़ का उपयोग कब से कर रही हैं? आपके घर में ऐसी कौन सी बदबू आती थी, जिससे आप पीछा नहीं छुड़ा पा रही थीं?'

'मैं फेब्रीज़ का उपयोग किसी बदबू को हटाने के लिए नहीं करती। दरअसल मेरे बेटे अभी किशोर अवस्था में हैं। ऐसे में यदि मैं उनका कमरा साफ न करूँ, तो वहाँ से जेल जैसी बदबू आने लगती है। लेकिन फेब्रीज़ का उपयोग मैं इन बदबुओं को हटाने के लिए नहीं करती। मैं तो घर की सफाई के लिए इसे इस्तेमाल करती हूँ। बेटों के कमरे की सफाई के बाद मैं एक बार चारों ओर फेब्रीज़ स्प्रे छिड़क देती हूँ। सफाई के बाद फेब्रीज की खुशबू अच्छी लगती है।' उस महिला ने स्टीमसन और उनके साथियों को बताया।

उन्होंने उस महिला से पूछा कि क्या वह अगली बार घर की सफाई करते समय उन्हें घर का निरीक्षण करने की इजाज़त देंगी। महिला फौरन मान गई। इसके बाद उसने सोने के कमरे में जाकर बिस्तर ठीक किया, तकियों को फुलाया, चादरें ठीक कीं और फिर उन पर फेब्रीज़ छिड़क दिया। फिर उसने घर के सामनेवाले कमरे में झाड़ू लगाया, बच्चों के जूते उठाकर एक ओर रख दिए, मेज़ ठीक की और फिर एक साफ-सुथरी कालीन बिछाकर उस

पर भी फेब्रीज़ छिड़क दिया। घर की सफाई निपटाने के बाद उस महिला ने स्टीमसन से कहा, 'फेब्रीज़ छिड़कने पर मुझे अच्छा महसूस होता है। इसकी खुशबू से ऐसा लगता है, जैसे साफ-सफाई की मेहनत के बाद कोई छोटा सा जश्न मना लिया हो।' यह औरत जिस प्रकार फेब्रीज़ का उपयोग कर रही थी, स्टीमसन ने अंदाजा लगाया कि उसे हर दो सप्ताह में फेब्रीज़ की नई बोतल खरीदनी पड़ेगी।

पिछले कई सालों में पी एंड जी ने लोगों द्वारा अपने घर की सफाई के दौरान बनाए गए हज़ारों वीडियो-टेप इकट्ठा किए थे। जब स्टीमसन और उनकी टीम के शोधकर्ता सिनसिनाटी वापस लौटे, तो उनमें से कुछ ने वह शाम ये पुराने टेप देखने में गुज़ारी। अगली सुबह उनमें से एक सदस्य ने टीम को कॉन्फ्रेंस रूम में मिलने के लिए बुलाया और उन्हें एक टेप चलाकर दिखाई। इस टेप में एक 26 वर्षीय महिला अपने तीन बच्चों के साथ बिस्तर ठीक कर रही थी। उसने पहले चादर ठीक की और फिर तकिए फुलाए। कमरे से बाहर जाते समय उसके चेहरे पर एक हल्की मुस्कान थी।

उस शोधकर्ता ने उत्साह के साथ सभी से पूछा, 'क्या आपने देखा?'

इसके बाद उसने एक और टेप चलाई, जिसमें एक महिला ने बिस्तर पर एक रंगीन चादर बिछाई, तकिए फुलाए और फिर अपने इस अच्छे काम को देखकर मुस्कराई। शोधकर्ता ने फिर से कहा, 'ये देखिए! दोबारा वही प्रतिक्रिया!' अगली टेप में एक औरत ने व्यायाम के कपड़े पहन रखे थे। उसने अपना रसोईघर साफ किया और फिर सुकून देनेवाले एक व्यायाम में जुट गई।

वह शोधकर्ता अपनी टीम के सदस्यों की ओर देखने लगा।

'देखा आप लोगों ने?' उसने फिर से पूछा।

उसने आगे कहा, 'ये सभी महिलाएँ सफाई करने के बाद कुछ न कुछ ऐसा कर रही हैं, जिससे उन्हें खुशी या आराम मिले। हम यह तरकीब अपना सकते हैं। अगर हम ग्राहकों से यह कहें कि फेब्रीज़ का उपयोग सफाई की शुरुआत में नहीं बल्कि अंत में करें तो? अगर हम फेब्रीज़ को एक ऐसी चीज़ के रूप में प्रस्तुत करें, जिसका इस्तेमाल करना मज़ेदार है और इसे सफाई के बाद प्रयोग किया जाता है, तो कैसा रहेगा?'

स्टीमसन के समूह ने एक बार फिर से परीक्षण किया। फेब्रीज़ के पिछले विज्ञापन बदबू हटाने पर केंद्रित थे, लेकिन अब कंपनी ने नए पर्चे छापे, जिनमें खुली खिड़कियों से आ रही ताज़ा हवा के चित्र थे। कंपनी ने फेब्रीज़ के निर्माण के दौरान इसमें खुशबूदार तत्व की मात्रा बढ़ा दी ताकि फेब्रीज़ न केवल बदबू मिटानेवाला बल्कि एक बढ़िया खुशबू फैलानेवाला उत्पाद बन जाए। टी.वी. के लिए ऐसे विज्ञापन बनाए गए, जिनमें औरतें अभी-अभी ठीक किए बिस्तर और धुले कपड़ों पर फेब्रीज़ छिड़क रही हैं। फेब्रीज़ की पुरानी टैगलाइन थी, 'कपड़ों से बदबू हटाने के लिए,' जबकि नई टैगलाइन थी, 'जीवन में खुशबू फैलाने के लिए।'

फेब्रीज़ में ये सभी नए बदलाव रोज़मर्रा के जीवन में एक विशेष इशारे को संचालित करने के लिए किए गए थे। यह इशारा था, कमरों की सफाई करना, बिस्तर ठीक करना और झाड़ू वगैरह लगाना। फेब्रीज़ को इन सभी इशारों के इनाम के रूप में स्थापित किया गया। सफाई की क्रिया के अंत में फेब्रीज़ छिड़कने से आनेवाली खुशबू ईनाम थी। सबसे महत्वपूर्ण बात थी कि हर नया विज्ञापन इस बात को ध्यान में रखकर बनाया गया कि ग्राहकों के अंदर यह इच्छा पैदा हो कि सफाई के बाद कोई चीज़ जितनी सुंदर लगती है, फेब्रीज के इस्तेमाल से वह उतनी ही खुशबूदार भी लग सकती है। मज़े की बात यह थी कि जिस चीज़ का निर्माण असल में बदबू को मिटाने के लिए किया गया था, अब उसे उसके मूल उद्देश्य से बिलकुल विपरीत बना दिया गया था। फेब्रीज़ गंदे कपड़ों से बदबू हटाने के बजाय अब साफ-सफाई के बाद अच्छी खुशबू फैलाने के लिए उपयोग किया जा रहा था।

नए विज्ञापनों के प्रदर्शन और ग्राहकों को नए ढंग से डिजाइन की गई बोतलें देने के बाद शोधकर्ता एक बार फिर उनके घर गए। इस बार उन्होंने पाया कि कुछ महिलाओं में फेब्रीज़ की खुशबू की इच्छा पैदा हो गई है। एक महिला ने बताया कि 'फेब्रीज़ की बोतल खत्म होने पर मैंने परफ्यूम को पानी में मिलाकर अपने धुले कपड़ों पर छिड़का। सफाई के बाद अच्छी खुशबू न आए तो चीज़ें साफ नहीं लगतीं।'

स्टीमसन बताते हैं कि 'उस पार्क रेंजर महिला के अनुभवों से प्रभावित होकर हम गलत दिशा में मेहनत कर रहे थे। उससे बात करके हमें लगा था कि हम फेब्रीज़ के जरिए लोगों को उनकी समस्या का हल दे रहे है, लेकिन कोई भी इंसान आसानी से यह मानना नहीं चाहता कि उनके घर में बदबू की समस्या है।'

'इसे देखने का हमारा दृष्टिकोण ही गलत था। किसी को भी बदबू से मुक्ति की इच्छा नहीं होती, पर तीस मिनट तक साफ-सफाई की मेहनत के बाद हर कोई एक अच्छी खुशबू ज़रूर चाहता है।'

सन 1998 की गर्मियों में फेब्रीज़ को एक बार फिर लाँच किया गया। अगले दो महीनों के अंदर ही फेब्रीज़ की बिक्री दोगुनी हो गई और अगले एक सालों के अंदर ग्राहकों ने फेब्रीज़ पर 230 मिलियन डॉलर खर्च कर दिए। तब से फेब्रीज़ ने ऐसे दर्जनों नए उत्पाद बाज़ार में उतारे जैसे, एअर फ्रेशनर, मोमबत्तियाँ, डिटर्जेंट पाउडर और रसोई के लिए स्प्रे आदि। इन सभी उत्पादों को मिलाकर पी ऐंड जी की बिक्री प्रति वर्ष 1 अरब डॉलर हो गई। आखिरकार पी ऐंड जी ने अपने ग्राहकों को यह बताना शुरू कर दिया कि फेब्रीज़ न केवल अच्छी खुशबू फैलाता है बल्कि बदबू को हटाता भी है।

स्टीमसन को पदोन्नत्ति मिली और उनकी टीम को बोनस। उनका फार्मूला कारगर साबित हुआ। उन्हें आसान और सटीक इशारा मिला, इसके साथ ही उन्होंने एक स्पष्ट इनाम भी रखा।

फेब्रीज़ की लोकप्रियता तब बढ़ी, जब ग्राहकों में यह इच्छा पैदा की गई कि सब कुछ जितना साफ दिखता है, उतना ही खुशबूदार भी हो सकता है। पेप्सोडेंट का विज्ञापन बनानेवाले महारथी क्लाउड हॉपकिंस कभी यह नहीं समझ पाए कि ग्राहकों में नई आदत विकसित करने के फार्मुले का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है, इच्छा पैदा करना।

अपने जीवन के आखिरी दौर में एक बार क्लाउड हॉपकिंस व्याख्यान देने के लिए दौरे पर निकले। 'विज्ञापन के विज्ञान पर आधारित नियम' विषय पर उनके व्याख्यान सुनने के लिए हज़ारों लोग आते थे। क्लाउड हॉपकिंस अलग-अलग मंचों पर खड़े होकर अपनी तुलना थॉमस एडिसन और जॉर्ज वॉशिंग्टन से करते थे और भविष्य के बारे में बड़े-बड़े पूर्वानुमान लगाते थे। इन पूर्वानुमानों में हवा में उड़नेवाली गाड़ियों का जिक्र अक्सर होता था। पर अपने इन व्याख्यानों में हॉपकिंस ने कहीं भी इच्छा या आदत के फंदे के निर्माण में इच्छा या न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका संबंधी) जड़ों की कोई बात नहीं की। एम.आय.टी. के वैज्ञानिकों और वोल्फ्रम शुल्ज़ ने अपने प्रयोग हॉपकिंस के 70 साल बाद किए थे।

तो फिर इस महत्वपूर्ण जानकारी के बिना हॉपकिंस ने दाँत साफ करने की इतनी बुनियादी आदत कैसे विकसित की?

दरअसल बात ऐसी थी कि एम.आय.टी. और शुल्ज़ की प्रयोगशाला में जो शोध किए गए थे, उनकी जानकारी न होने के बावजूद भी हॉपकिंस ने उन्हीं तत्वों का उपयोग किया था।

हॉपकिंस ने अपने संस्मरणों में पेप्सोडेंट के अपने अनुभव को जितना आसान ढंग से चित्रित किया था, वास्तविकता उससे थोड़ी अलग थी। हॉपकिंस डींगे मारते हुए बताते थे कि कैसे उन्होंने दाँतों के आवरण के रूप में सही इशारा खोजा था और कैसे वे ऐसे पहले व्यक्ति थे, जिसने ग्राहकों को खूबसूरत दाँतों का स्पष्ट इनाम दिया। जबकि यह सच नहीं था। वे इसके प्रवर्तक नहीं थे। उदाहरण के लिए पत्रिकाओं और समाचार-पत्रों में प्रकाशित होनेवाले अन्य टूथपेस्ट के विज्ञापनों पर गौर करें। ये विज्ञापन उस समय के हैं, जब हॉपकिंस ने पेप्सोडेंट पर काम शुरू भी नहीं किया था।

डॉ. शेफिल्ड की दाँतों की क्रीम 'डेंटीफ्रीस' का विज्ञापन देखिए, जिसमें लिखा था कि 'इसमें बहुत सी विशेष चीज़ों का इस्तेमाल किया गया है ताकि आपके दाँतों पर मैल जमा होना रुक जाए और मैल की पर्त साफ हो जाए!' यह विज्ञापन पेप्सोडेंट से बहुत पहले आया था।

जब हॉपकिंस दाँतों की देखभाल से जुड़ी पुस्तकों का अध्ययन कर रहे थे, उसी समय बाज़ार में सैनिटॉल टूथपेस्ट का एक विज्ञापन आया, जिसमें लिखा था, 'आपके दाँतों की सफेदी एक आवरण से छिपी हुई है। सैनिटॉल टूथपेस्ट मिनटों में यह आवरण हटाकर आपके दाँतों की सफेदी लौटाता है।'

एक अन्य विज्ञापन में लिखा था, 'आपकी मुस्कान को सुंदर बनाने का राज़ आपके खूबसूरत दाँतों में छिपा होता है। सुंदर लड़कियों के आकर्षक होने का राज़ भी उनके खूबसूरत, चिकने दाँत होते हैं। इसलिए एस.एस. व्हाइट टूथपेस्ट का उपयोग करें।'

पेप्सोडेंट के बाज़ार में आने के वर्षों पहले ही दर्जनों लोगों ने टूथपेस्ट के विज्ञापन में

इस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया था। इन सभी विज्ञापनों ने ग्राहकों से उनके दाँतों का मैला आवरण हटाकर इनाम के रूप में दाँतों को खूबसूरत और सफेद बनाने का दावा किया था। लेकिन उनमें से एक भी विज्ञापन को प्रसिद्धी नहीं मिली।

फिर जब हॉपकिंस ने अपनी विज्ञापन मुहिम शुरू की, तो पेप्सोडेंट की बिक्री बहुत तेजी से बढ़ी। आखिर इसके विज्ञापनों में ऐसा क्या खास था?

हॉपकिंस की सफलता के पीछे भी वही कारण था, जिनके चलते जूलियो नामक वह बंदर लीवर खींचता था और गृहणियाँ बिस्तर और कपड़ों में फेब्रीज़ छिड़कती थीं। वह कारण है इच्छा। पेप्सोडेंट लोगों के अंदर इच्छा जगाने में सफल रहा।

हॉपकिंस ने अपनी आत्मकथा में पेप्सोडेंट के निर्माण में इस्तेमाल होनेवाली किसी भी चीज़ के बारे में एक शब्द तक नहीं लिखा है। लेकिन पेप्सोडेंट के पेटेंट के लिए दिए गए आवेदन पत्र में इस टूथपेस्ट के निर्माण की विधि दी गई है। कंपनी के रिकॉर्ड से भी कुछ दिलचस्प बातें सामने आई हैं। दरअसल पेप्सोडेंट को बनाने में सिट्रिक ऐसिड, पुदीने के तेल और कुछ अन्य रसायनों का इस्तेमाल किया गया था। ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि पेप्सोडेंट के आविष्कारक चाहते थे कि इस टूथपेस्ट के उपयोग के बाद लोग तरोताज़ा महसूस करें। पर इसका एक और परिणाम हुआ, जिसका अंदाजा किसी को भी नहीं था। यह सारे पदार्थ ऐसे उत्तेजक हैं, जिनसे जुबान और दाँतों पर ठंडक और सिहरन का एहसास होता है।

बाज़ार पर पेप्सोडेंट का प्रभुत्व था। अत: इसकी सफलता का राज़ जानने के लिए अन्य प्रतिस्पर्धी कंपनियों ने शोध करने शुरू कर दिए। इन शोधों में अनेक ग्राहकों की प्रतिक्रियाओं से पता चला कि यदि वे दाँत साफ करना भूल भी जाएँ तो मुँह में ठंडक और सिहरन का एहसास न होने से उन्हें तुरंत अपनी गलती याद आ जाती है और फिर वे उसी एहसास को दोबारा पाने की अपेक्षा करने लगते हैं। लोगों में उस ठंडे एहसास की इच्छा पैदा होने लगी थी। जब तक दाँतों पर ठंडक और सिहरन महसूस न हो, तब तक लोगों को अपने दाँत साफ नहीं लगते थे।

इस लिहाज से क्लाउड हॉपकिंस दरअसल टूथपेस्ट नहीं बल्कि यह ठंडा एहसास बेच रहे थे। ग्राहकों में जब उस ठंडक और सिहरन की इच्छा पैदा होने लगी, तो उन्होंने इस एहसास को दाँतों की सफाई के साथ जोड़ दिया। इस प्रकार दाँतों की सफाई लोगों के लिए रोज़ की आदत बन गई।

अन्य कंपनियों को जब हॉपकिंस की इस तरकीब का पता चला, तो उन्होंने भी इसे अपना लिया। अगले एक दशक के अंदर ही हर टूथपेस्ट में ऐसे तेल और रसायन मिलाए जाने लगे, जिससे दाँतों में सिहरन का एहसास हो। जल्द ही अन्य सभी टूथपेस्टों की तुलना में पेप्सोडेंट की खपत कम हो गई। आज भी बाज़ार में मिलने वाले लगभग हर टूथपेस्ट में ऐसे रसायन मिलाए जाते हैं, जिनका केवल एक ही काम है, दाँत साफ करने के

बाद मुँह में सिहरन पैदा करना।

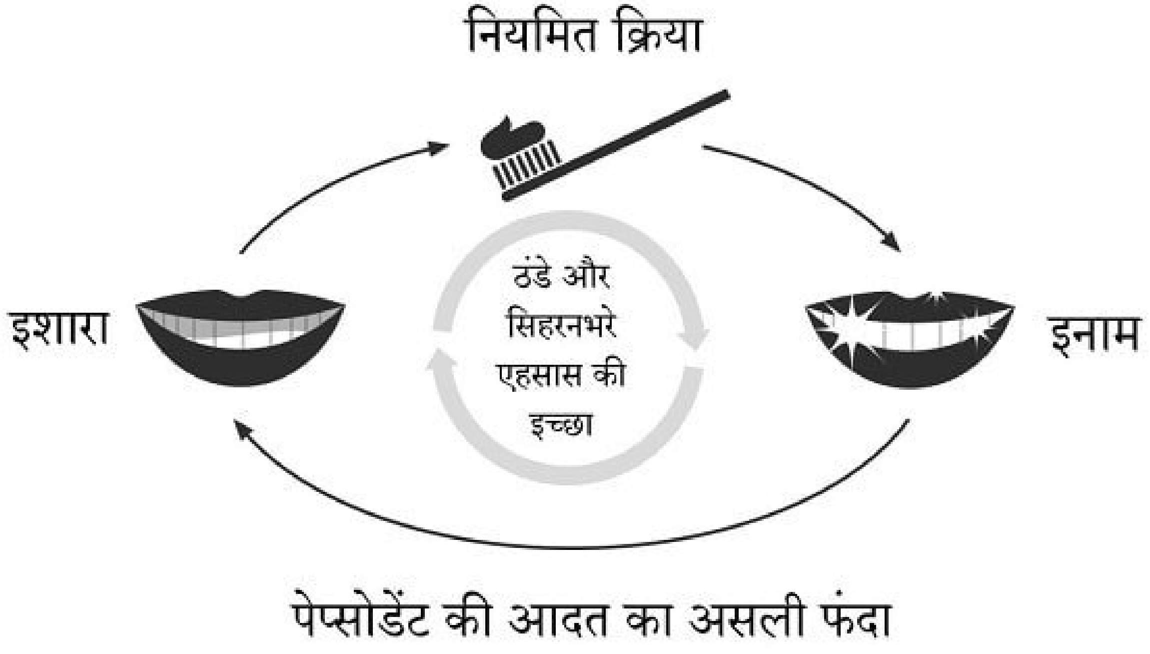

ओरल-बी और क्रेसेट किड्स टूथपेस्ट की ब्राँड मैनेजर रह चुकी टेसी सिनक्लेअर बताती हैं कि 'ग्राहक कोई ऐसा संकेत चाहते हैं, जिससे उन्हें यह एहसास हो कि वे जिस उत्पाद का उपयोग कर रहे हैं, वह सचमुच कारगर साबित हो रहा है। हम जामुन से लेकर ग्रीन टी तक, किसी भी स्वाद का टूथपेस्ट बना सकते हैं। अगर उस टूथपेस्ट में सिहरन पैदा करनेवाले पदार्थ मिलाए गए हैं, तो लोगों को यह एहसास होता रहेगा कि उनके दाँत साफ हो रहे हैं। दाँतों पर टूथपेस्ट के कारगर साबित होने का और ठंडी सिहरन के एहसास का आपस में कोई संबंध नहीं है। यह तो बस ग्राहकों को इस बात का दिलासा देने के लिए है कि टूथपेस्ट दाँतों पर वाकई कारगर है।'

इस साधारण से फार्मुले का इस्तेमाल करके हम सब मनचाही आदतें विकसित कर सकते हैं। जैसे अगर आप व्यायाम करना चाहते है, तो सुबह उठते ही जिम्नेजियम जाने के लिए कोई सरल इशारा चुन लीजिए। साथ ही व्यायाम करने के बाद अपने लिए स्मूदी (फलों से बननेवाला गाढ़ा पेय) का इनाम भी तय कर लें। इसके अलावा आप स्मूदी के बारे में या व्यायाम के बाद शरीर में होनेवाले एंडोर्फिन के संचार के बारे में बार-बार सोच भी सकते हैं। इस तरह आप अपने अंदर इनाम की अपेक्षा पैदा कर लें। समय के साथ आपकी इच्छा के चलते हर रोज़ जिम्नेजियम जाना आसान हो जाएगा।

क्या आप खान-पान से संबंधित नई आदतें विकसित करना चाहते हैं? 'नेशनल वेट

कंट्रोल रजिस्ट्री' से जुड़े शोधकर्ताओं ने एक बड़ा प्रोजेक्ट शुरू किया था, जिसमें छह हज़ार से भी अधिक ऐसे लोग शामिल थे, जिन्होंने 30 पाउंड से अधिक तक का वज़न घटाया था। शोधकर्ताओं ने वजन घटने में सफल रहे इन लोगों की खान-पान की आदतों का अध्ययन किया। जिससे पता चला कि इनमें से 78 प्रतिशत लोग रोज़ सुबह नाश्ता ज़रूर करते थे। नाश्ता ऐसा खाना होता है, जिसका इशारा दिन के एक निश्चित समय में मिलता है। उनमें से अधिकतर लोग खान-पान की आदतें सुधारने से वजन कम करने के कारण मिलनेवाले किसी इनाम की कल्पना भी करते थे। जैसे एक महिला छरहरी होने के बाद खुद को उस बिकिनी में देखती थी, जो वह बहुत समय से पहनना चाह रही थी। इसी तरह कुछ लोग उस गर्व की अनुभूति की कल्पना करते थे, जो वज़न नापने की मशीन पर खड़े होने के बाद मिलेगा। उन लोगों ने सावधानी से ऐसे इनाम चुने थे, जो वे सचमुच पाना चाहते थे। फिर वे उस इनाम को प्राप्त करने की इच्छा पर अपना ध्यान केंद्रित करते थे। इस तरह वह इच्छा उनके अंदर जुनून की हद तक पहुँच जाती थी। शोधकर्ताओं ने यह भी पाया कि जब-जब इन लोगों के अंदर संतुलित आहार छोड़कर मनचाहे गरिष्ट खान-पान का सेवन करने की इच्छा जागी, तो इन्होंने संतुलित आहार से मिलनेवाले इनाम की इच्छा पर ध्यान केंद्रित कर लिया। इस इच्छा के कारण ही आदत का फंदा सक्रिय बना रहा।

इच्छा के विज्ञान को जानना कंपनियों के लिए क्रांतिकारी कदम साबित हुआ। हमारे जीवन में दर्जनों ऐसी क्रियाएँ होती हैं, जो हम हर रोज़ करते हैं, लेकिन आमतौर पर वे क्रियाएँ आदतों में तब्दील नहीं हो पातीं। जैसे हमें खाने में नमक की मात्रा पर नियंत्रण रखना चाहिए, पानी ज़्यादा पीना चाहिए, चर्बी-युक्त गरिष्ट आहार के बजाय अधिक से अधिक हरी सब्जियाँ खानी चाहिए। इसके अलावा हमें नियमित रूप से विटामिन्स लेने चाहिए और अपनी त्वचा को सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों से बचाने के लिए सनस्क्रीन ज़रूर लगाना चाहिए। इन सभी तथ्य को इससे अधिक स्पष्ट ढंग से प्रस्तुत नहीं किया जा सकता, पर फिर भी आमतौर पर ये हमारी आदत नहीं बन पातीं। रोज़ाना सुबह चेहरे पर सनस्क्रीन लगाने से त्वचा के कैंसर की संभावना कम हो जाती है। इसके बावजूद अमेरिका में 10 फीसदी से भी कम लोग ऐसे हैं, जो रोज़ाना चेहरे पर सनस्क्रीन लगाते हैं, जबकि दाँतों को हर कोई रोज़ साफ करता है। इन दोनों चीज़ों में इतना फर्क क्यों है?

इसका कारण है कि सनस्क्रीन को रोज़ की आदत बनाने के लिए कोई इच्छा नहीं है। कुछ कंपनियाँ ज़रूर हैं, जो इस स्थिति को बदलना चाहती हैं। इसके लिए ये कंपनियाँ कुछ ऐसा ढूँढ़ रही हैं, जिससे सनस्क्रीन लगाने से चेहरे पर सिहरन का एहसास हो या फिर ऐसा कुछ न कुछ हो, जिससे लोगों को यह महसूस हो सके कि उन्होंने सनस्क्रीन लगाया है। इन कंपनियों को उम्मीद है कि यह एहसास भी वैसे ही इशारे का निर्माण करेगा, जैसा टूथपेस्ट में होता है। यह वही एहसास है, जो न मिलने पर लोगों को अपने दाँत साफ नहीं लगते और जिससे उन्हें तुरंत याद आ जाता है कि उन्होंने आज दाँत साफ किए हैं या नहीं। इन कंपनियों ने सौ से भी अधिक उत्पादों में इसी तरकीब का उपयोग किया है।

ब्राँड मैनेजर सिनक्लेअर बताती है कि 'ऐसे उत्पादों में झाग का बनना एक बड़ा इनाम है। जैसे शैम्पू में झाग की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन इसके बावजूद हम शैम्पू में ऐसे रसायन मिलाते हैं, जिनसे झाग बने क्योंकि लोग जब बाल धोते है, तब उन्हें झाग निकलने की उम्मीद होती है। कपड़े साफ करने के डिटर्जेंट की भी यही कहानी है। आजकल तो हर कंपनी टूथपेस्ट में सोडियम लोरेथ सल्फेट भी मिलाने लगी है, जिससे ज्यादा से ज्यादा झाग पैदा हो सके। जबकि झाग और सफाई का आपस में कोई संबंध नहीं है, पर टूथपेस्ट का इस्तेमाल करते समय मुँह में झाग बनने से लोगों को अच्छा महसूस होता है। ग्राहक जब झाग की उम्मीद करने लगता है, तो उस उत्पाद को इस्तेमाल करने की उसकी आदत विकसित होने लगती है।'

आदत इच्छा से बनती है। इसलिए इच्छा पैदा करने की तकनीक समझ आने के बाद नई आदतों को विकसित करना आसान हो जाता है। यह बात सौ साल पहले जितनी सच थी, आज भी उतनी ही सच है। संसार में करोड़ों लोग केवल सिहरन महसूस करने के लिए ही हर रोज़ अपने दाँत साफ करते हैं। हर सुबह करोड़ों लोग अपने जॉगिंग वाले जूते पहनकर जॉगिंग के लिए निकलते हैं क्योंकि उनमें जॉगिंग से होनेवाले एंडोर्फिन के संचार की इच्छा पैदा हो चुकी होती है।

फिर जब वे घर लौटकर अपना रसोईघर या बेडरूम साफ करते हैं, तो थोड़ा सा फेब्रीज़ भी छिड़क लेते हैं।

3

आदत परिवर्तन का सुनहरा नियम

परिवर्तन क्यों होता है?

1

मैदान के अंतिम छोर पर लगी घड़ी समय दिखा रही थी। खेल खत्म होने में अब केवल 8 मिनट और 19 सेकेंड का समय बचा था। मैदान पर टैम्पा बे बुकॉनीर्स टीम खेल रही थी, जो न केवल नेशनल फुटबॉल लीग बल्कि व्यावसायिक फुटबॉल के पूरे इतिहास की सबसे बुरी टीम थी। पर इस टीम के मुख्य कोच, जिन्हें हाल ही में नियुक्त किया गया था, को खेल खत्म होने के कुछ ही मिनट पहले आशा की एक किरण नज़र आने लगी।

17 नवंबर 1996 को रविवार का दिन था और शाम होनेवाली थी। बुकॉनीर्स टीम अमेरिका के सैनडिएगो शहर में चार्जर्स टीम के साथ खेल रही थी। चार्जर्स टीम पिछले वर्ष सुपर बॉल में अपना प्रदर्शन दिखा चुकी थी। इस मैच में बुकॉनीर्स 17-16 से पीछे चल रही थी। इस टीम ने अब तक सिर्फ हार ही देखी थी। बुकॉनीर्स को पूरे सत्र में एक भी जीत हासिल नहीं हुई थी। वे पिछले एक दशक से लगातार हारते आ रहे थे। बुकॉनीर्स ने पश्चिमी तट पर पिछले सोलह वर्षों में एक भी मैच नहीं जीता था। आखिरी बार जब बुकॉनीर्स ने जीत हासिल की थी, तब इस टीम के मौजूदा खिलाड़ी स्कूल में रहे होंगे। इस साल उनका रिकॉर्ड 2-8 का था। ऐसे ही एक खेल में एक और टीम थी, जो इतनी बुरी थी कि आनेवाले समय में 'होपलेस' (आशाहीन) शब्द में 'लेस' (हीन) लगाने का श्रेय इसी टीम को दिया जा सकता है। इस टीम का नाम था, डेट्रॉइट लॉयन्स। लेकिन इस साल डेट्रॉइट लॉयन्स ने भी बुकॉनीर्स को पहले 21-6 और फिर तीन सप्ताह बाद 27-0 से हराया था। एक समाचार पत्र में बुकॉनीर्स की खिल्ली उड़ाते हुए इसे 'अमेरिकास ऑरेंज डोरमैट' (ऐसी टीम जिसे मैदान में कोई भी रौंदकर चला जाता है) कहा गया था। इस टीम के मुख्य कोच टोनी डंगी को इसी वर्ष जनवरी में यह नौकरी मिली थी, लेकिन अब ई.एस.पी.एन. का अनुमान था कि यह वर्ष समाप्त होने से पहले ही शायद टोनी डंगी को नौकरी से हाथ धोना पड़ सकता है।

लेकिन 17 नवंबर 1996 को हुए उस मैच में, मैदान के एक ओर खड़े कोच डंगी ने कुछ ऐसा देखा, जिससे उन्हें अपनी योजना कामयाब होती नज़र आने लगी। मैदान पर उनकी टीम खेल के अंतिम क्षणों के लिए अपनी व्यूह-रचना बनाकर, अपनी तैयारी कर रही थी। जबकि डंगी को लग रहा था, मानो अचानक आसमान से सारे बादल छँट गए हों और सूर्य निकल आया हो। आमतौर पर डंगी मुस्कुराते नहीं थे। वे मैच के दौरान अपनी भावनाओं

को जाहिर नहीं होने देते थे। पर मैदान में कुछ ऐसा हो रहा था, जिसके चलते उन्हें अपनी वर्षों की मेहनत रंग लाती नज़र आ रही थी। मैच देखने आए करीब पचास हज़ार दर्शक स्टैन्ड पर बैठे डंगी का मज़ाक उड़ा रहे थे, लेकिन डंगी को मैदान में जो नज़र आ रहा था, उसे कोई और नहीं देख पा रहा था।

***

टोनी डंगी पिछले सत्रह वर्षों से इस नौकरी के इंतजार में थे। इस दौरान उन्होंने सहायक कोच के तौर पर यूनिवर्सिटी ऑफ मिनेसोटा, पीट्सबर्ग स्टीलर्स्, कैंसास सिटी चीस और अंत में दोबारा मिनेसोटा में वाइकिंग्स के साथ काम किया था। उन्हें पिछले एक दशक में चार बार एन.एफ.एल. टीमों के मुख्य कोच के पद के लिए इंटरव्यू देने को आमंत्रित किया जा चुका था।

लेकिन चारों बार इंटरव्यू में टोनी डंगी को असफलता ही हाथ लगी।

इंटरव्यू में असफलता मिलने का एक कारण था, फुटबॉल कोचिंग को लेकर टोनी डंगी के विचार। इंटरव्यू के दौरान डंगी पूरे धैर्य के साथ अपने विचार सामने रखते हुए बताते थे कि 'खेल में जीत हासिल करने का सबसे अच्छा तरीका है, खिलाड़ियों की आदतें बदलना।' वे नहीं चाहते थे कि खिलाड़ियों को अलग-अलग किस्म के ढेरों निर्णय खेल के दौरान लेने पड़ें। क्योंकि वे मानते थे कि मैदान पर खिलाड़ियों की क्रियाएँ-प्रतिक्रियाएँ सहज और आदतन होनी चाहिए। उनका कहना था कि अगर वे खिलाड़ियों में सही आदतें विकसित कर पाए, तो उनकी टीम की जीत निश्चित है।

डंगी के अनुसार, 'चैम्पियन्स दूसरों से कुछ अलग या अनोखा नहीं करते। वे सामान्य चीज़ें ही इतनी तेज गति से करते हैं कि उन्हें ये करने से पहले सोचना नहीं पड़ता। उनकी गति ऐसी होती है कि विपक्षी टीम को प्रतिक्रिया देने का समय ही नहीं मिल पाता। चैम्पियन्स इस तेज गति को अपनी आदत बना लेते हैं और फिर जो कुछ भी करते हैं, इसी आदत के अनुसार करते हैं।'

इंटरव्यू के दौरान अन्य टीमों के मालिक डंगी से पूछते, 'आप खिलाड़ियों में ये नई आदतें कैसे विकसित करेंगे?'

इस पर डंगी का जवाब होता, 'अरे नहीं! मैं खिलाड़ियों में नई आदतें विकसित नहीं करनेवाला। फिलहाल इन खिलाड़ियों की जो भी आदतें हैं, उन्हें विकसित करने में उन्होंने पूरा जीवन लगाया है, ताकि उन आदतों की मदद से ही उनका एन.एफ.एल. में चुनाव हो सकता है। इसलिए कोई भी खिलाड़ी केवल एक नए कोच के कहने भर से अपनी जीवनभर की आदतें नहीं छोड़ सकता।'

यही कारण था कि डंगी खिलाड़ियों में नई आदतों को विकसित करने के बजाय केवल उनकी पुरानी आदतों को परिवर्तित करना चाहते थे। आदतें तीन चरणोंवाला फंदा होती

हैं- इशारा, क्रिया और इनाम। डंगी का अनुभव कहता था कि यदि इशारा और इनाम समान रखकर केवल क्रियाओं को परिवर्तित किया जाए तो आदतों में बदलाव लाया जा सकता है। इसलिए उन्होंने तय किया कि वे आदतों के फंदे के दूसरे चरण यानी क्रिया पर अपना ध्यान केंद्रित करेंगे। डंगी खिलाड़ियों के दिमाग में पहले से बनी क्रियाओं का उपयोग करके उनकी पुरानी आदतों को परिवर्तित करना चाहते थे।

डंगी की प्रशिक्षण नीति से आदत-परिवर्तन का एक सुनहरा नियम सामने आया। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट हो चुका था कि परिवर्तन लाने का सबसे शक्तिशाली तरीका यही है। डंगी जानते थे कि इंसान अपनी बुरी आदतों को जड़ से कभी नहीं मिटा सकता।

डंगी समझ चुके थे कि इंसान के पुराने इशारों और इनाम को जस का तस रखते हुए केवल एक नई क्रिया का इस्तेमाल करके आदत परिवर्तन करना संभव है।

आदत परिवर्तन का सुनहरा नियम भी यही है कि पुरानी आदत को परिवर्तित करने के लिए उसका इशारा और इनाम जस का तस रखते हुए इस फंदे में एक नई क्रिया जोड़ दी जाए। इस नियम का पालन करके किसी भी आदत को परिवर्तित किया जा सकता है।

इस सुनहरे नियम ने शराब, मोटापा, ओ.सी.डी. (ऑब्सेसिव कम्पल्सिव डिसऑर्डर) और ऐसी सौ से भी अधिक घातक समस्याओं के इलाज में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस नियम को समझकर लोग खुद भी अपनी आदतों में बदलाव ला सकते हैं। जैसे अधिक चटपटे खाने की आदत तब तक परिवर्तित नहीं हो सकती, जब तक पुराने इशारे और इनाम प्राप्ति की तीव्र इच्छा को पूरा करने के लिए सही क्रिया न चुनी जाए। इसी तरह जब तक निकोटीन की इच्छा को शांत करने के लिए कोई अन्य क्रिया नहीं मिल जाती, तब तक धूम्रपान की आदत छोड़ना बहुत मुश्किल होता है।

डंगी ने अलग-अलग टीम के मालिकों को चार बार आदतों पर आधारित अपना यह दर्शन समझाया। चारों बार इन मालिकों ने विनम्रता से डंगी की बात सुनी और उन्हें इस बात के लिए धन्यवाद दिया कि वे अपना कीमती समय निकालकर इंटरव्यू के लिए आए। पर चारों मौकों पर टीम के मालिकों ने नौकरी के लिए डंगी की जगह किसी और को चुना।

1996 में बुकॉनीर्स के परेशान मालिक ने डंगी को इंटरव्यू के लिए बुलाया। डंगी टैम्पा बे गए और वहाँ उन्होंने एक बार फिर टीम को जिताने का अपना दर्शन सामने रखा। इंटरव्यू के दूसरे ही दिन उन्हें नौकरी पर रख लिया गया।

आदत-परिवर्तन का सुनहरा नियम

बुरी आदतों को जड़ से नहीं मिटाया जा सकता, उन्हें सिर्फ परिवर्तित किया जा सकता है।

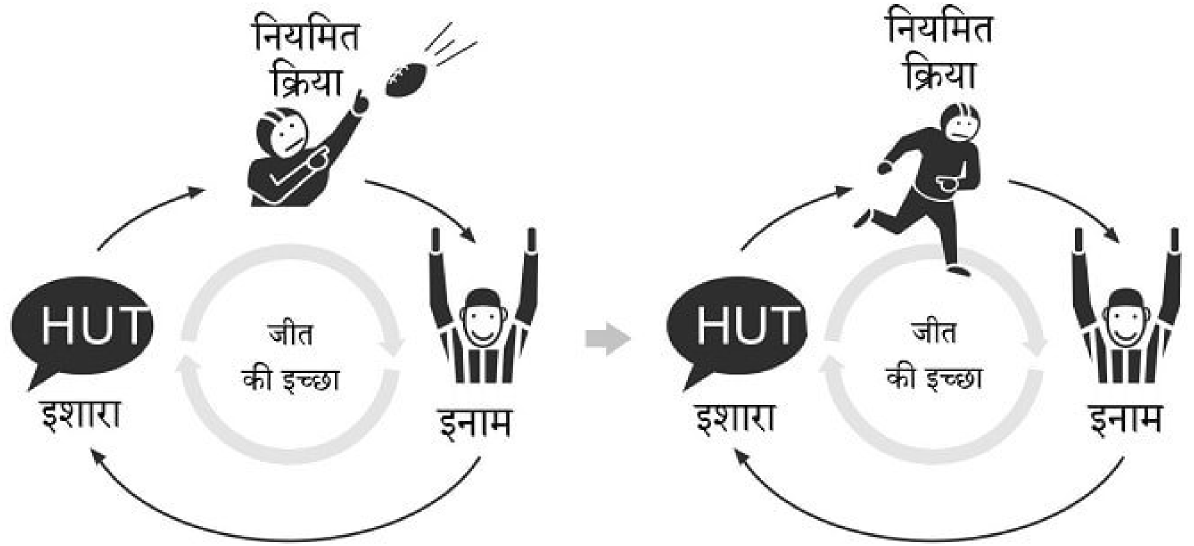

यह तरीका इस प्रकार काम करता है :

* पुराने इशारे का इस्तेमाल करना जारी रखें।

* इनाम को भी जस का तस रखें।

* सिर्फ क्रिया को बदल दें।

डंगी की इस योजना ने कुछ ही समय में बुकॉनीर्स को फुटबॉल लीग की सबसे सफल टीम बना दिया। आगे चलकर वे एन.एफ.एल. के ऐसे इकलौते कोच बने, जो लगातार दस वर्षों तक 'प्ले-ऑस' में पहुँचे। इसके अलावा वे सुपर बॉल जीतनेवाले पहले अफ्रीकन-अमेरिकन कोच भी बने और व्यवसायिक खेलों के दुनिया की सबसे आदरणीय हस्ती बनकर उभरे। उनकी प्रशिक्षण नीतियाँ न केवल फुटबॉल लीग में बल्कि हर खेल में अपनाई जाने लगीं। उनके इस तरीके ने खिलाड़ियों के अलावा अन्य लोगों को भी अपनी आदतें बदलने का रास्ता दिखाया।

लेकिन यह सब तो बहुत बाद में हुआ। फिलहाल सैनडिएगो के उस मैदान के किनारे खड़े डंगी के मन में केवल एक ही विचार था, जीत का।

***

मैदान के एक किनारे खड़े डंगी ने ऊपर लगी घड़ी पर नज़र डाली। खेल का समय पूरा होने में अब केवल 8 मिनट और 19 सेकेंड बाकी थे। हमेशा की तरह बुकॉनीर्स खेल में पीछे थे और उनके लिए गोल करने के अवसर खत्म होते जा रहे थे। हालत यह थी कि अगर उनके डिफेंस के खिलाड़ियों ने अब भी कुछ नहीं किया, तो इस मैच में भी उनकी हार

निश्चित थी। गेंद सैनडिएगो की बीस यार्ड की रेखा में थी। चार्जर्स टीम के क्वार्टरबैक स्टैन हम्फ्रीज अगली स्ट्राइक के लिए तैयार थे और इस बात को लेकर आश्वस्त थे कि यह मैच उनकी टीम की जीत के साथ ही खत्म होगा। जैसे ही घड़ी का काँटा फिर से घूमना शुरू हुआ, हम्फ्रीज गेंद की ओर लपके।

लेकिन डंगी का ध्यान हम्फ्रीज पर नहीं था। बुकॉनीर्स के खिलाड़ी मैदान पर अपना व्यूह रच रहे थे। उन सभी ने महीनों तक इस योजना को अमल में लाने का अभ्यास किया था। डंगी जानते थे कि उनके खिलाड़ी इस योजना को सफल बनाने के लिए पूरी तरह तैयार थे। उनका सारा ध्यान अपने खिलाड़ियों पर था। पारंपारिक तौर पर फुटबॉल का खेल छलावों, योजनाओं और विपक्ष को धोखे में रखने का खेल है। जिस कोच के पास खेल का सर्वाधिक ज्ञान होता है और जिसकी योजनाएँ सबसे जटिल होती हैं, वही अपनी टीम को जीत दिला पाता है। पर डंगी ने इससे बिलकुल विपरीत तरीका अपनाया था। उन्हें जटिल योजनाओं और छलावों में ज़रा भी दिलचस्पी नहीं थी। जब डंगी की डिफेंस लाइन के खिलाड़ी अपनी योजना पूरी करने के लिए मैदान पर अपना स्थान लेने लगे, तो स्टेडियम में मौजूद हर कोई इस बात से वाकिफ था कि उनकी अगली चाल क्या होगी।

डंगी ने बिलकुल अलग ही तरीका अपनाया क्योंकि उनका विचार था कि खेल में छलावे की आवश्यकता नहीं है। वे तो बस इतना चाहते थे कि उनके खिलाड़ी बाकी खिलाड़ियों से ज्यादा तेज हों। फुटबॉल के खेल में एक-एक मिलीसेकेंड भी महत्वपूर्ण होता है। यही कारण था कि डंगी ने अपने खिलाड़ियों को ढेरों युक्तियाँ सिखाने के बजाय बस कुछ ठोस और कारगर युक्तियों पर ध्यान केंद्रित करना सिखाया था और दिन-रात सिर्फ उन्हीं का अभ्यास करवाया था। यह अभ्यास इस तरह करवाया गया था कि इस दौरान खिलाड़ी मैदान में जो भी क्रिया करें, वह उनकी आदत बन जाए। यह ऐसी नीति थी, जो अगर कारगर साबित हुई तो डंगी के खिलाड़ी मैदान में इतनी तेजी दिखाते कि विपक्षी टीम को सोचने का मौका भी नहीं मिलता।

सब कुछ डंगी की योजना पर टिका हुआ था। अगर उनके खिलाड़ी क्रिया करने से पहले ज्यादा सोचते या हिचकिचाते या फिर अगर वे क्रियाएँ उनकी आदत न बनी होतीं, तो पूरी योजना पर मिनटों में पानी फिर सकता था। और अब तक डंगी के खिलाड़ी हमेशा गड़बड़ियाँ ही करते आए थे।

लेकिन इस बार अपनी बीस यार्ड की रेखा के अंदर खड़े बुकॉनीर्स के खिलाड़ियों में कुछ तो ऐसा ज़रूर था, जो बिलकुल अलग था। जैसे बुकॉनीर्स के डिफेंसिव छोर पर रेगन अपशॉ स्क्रिमेज लाइन में थ्री पॉइंट की मुद्रा के साथ खड़े थे। लेकिन अपने स्थान पर खड़े अपशॉ का ध्यान टीम के बाकी खिलाड़ियों पर नहीं था। इसके विपरीत वे केवल उन इशारों पर अपना ध्यान केंद्रित करने में लगे थे, जो उन्हें डंगी ने सिखाए थे। सबसे पहले उन्होंने विपक्षी लाइनमैन के पैर की ओर देखा। उसने अपने पंजे पीछे की ओर मोड़ रखे थे, जिसका मतलब था कि बुकॉनीर्स के क्वार्टरबैक के वहाँ से गुज़रने से पहले ही यह लाइनमैन कुछ कदम पीछे जाकर उसे ब्लॉक करने के लिए तैयार था। इसके बाद अपशॉ

ने लाइनमैन के कंधों पर गौर किया, साथ ही यह भी परख लिया कि उसके बगल में खड़े खिलाड़ी और इसमें कितना अंतर है। लाइनमैन के कंधे अंदर की ओर झुके हुए थे और उसके बगल में खड़े खिलाड़ी और उसके बीच का अंतर अपेक्षा से कुछ कम था।

इन इशारों पर क्या प्रतिक्रिया देनी चाहिए, इस बात का अपशॉ ने इतनी बार अभ्यास किया था कि अब उसे यह सोचने की ज़रूरत नहीं थी कि इस स्थिति में उसे क्या करना है। उसे तो बस अपनी आदतों का अनुसरण करना था, जिनका अभ्यास बार-बार करने से क्रिया आदत में तब्दील होती है।

सैन डिओगो का क्वार्टरबैक स्क्रिमेज लाइन की ओर आया। उसने पहले दाईं ओर देखा और फिर बाईं और फिर एक, दो, तीन... चिल्लाते हुए गेंद अपने कब्जे में ले ली। इसके बाद वह पाँच कदम पीछे गया और सीधा खड़ा हो गया। उसने अपना सिर उठाकर यह जायजा लिया कि गेंद किस रिसीवर की ओर मारी जाए। खेल शुरू हुए तीन सेकंड बीत चुके थे। स्टेडियम में मौजूद हर इंसान की आँखें और सारे टेलीविज़न कैमरा चार्जर्स क्वार्टरबैक पर केंद्रित थे।

इसके चलते अधिकतर लोग बुकॉनीर्स की क्रियाएँ देखने में असफल रहे। जैसे ही गेंद हम्फ्रीज के पास आई, अपशॉ फौरन सक्रिय हो गए। खेल शुरू होने के पहले ही क्षण में उन्होंने दाईं ओर बढ़कर स्क्रिमेज लाइन पार कर ली। यह इतनी जल्दी हुआ कि चार्जर्स का ऑफेंसिव लाइनमैन उनका रास्ता नहीं रोक सका। अगले ही क्षण अपशॉ तीव्र गति से उस ओर दौड़े। उसके अगले क्षण में वे क्वार्टरबैक के काफी करीब जा पहुँचे। अपशॉ की गति इतनी तीव्र थी कि यह गौर कर पाना मुश्किल हो गया कि उनके पैर इतनी चपलता से किस ओर मुड़ रहे हैं। इसके कारण चार्जर्स के ऑफेंसिव लाइनमैन के लिए यह अनुमान लगाना नामुमकिन हो गया कि अपशॉ किस ओर जाएँगे।

खेल शुरू होने के चौथे सेकेंड में सैन डिओगे के क्वार्टरबैक हम्फ्रीज से एक गलती हो गई। उन्होंने तिरछी नज़र से अपशॉ को देखा और समझ गए कि अब वे बुकॉनीर्स के आक्रमण से अपना बचाव नहीं कर पाएँगे। अपनी इस हड़बड़ी के कारण वे अगली चाल चलने से पहले ज़रा हिचकिचा गए।

हम्फ्रीज ने अपनी टीम के नए खिलाड़ी टाइट इंड ब्रायन रोश को देखा। वह करीब बीस यार्ड दूर था। सैन डिओगे का एक और रिसीवर हम्फ्रीज के काफी करीब खड़ा था और अपना हाथ हिलाते हुए इशारा कर रहा था कि हम्फ्रीज गेंद को उसकी ओर मारे। गेंद को सबसे करीब के खिलाड़ी की ओर मारना ही सुरक्षित चुनाव होता पर हम्फ्रीज पर मानसिक दबाव इतना ज्यादा था कि उन्होंने पलभर के लिए अपने सामने का जायजा लिया और हाथ ऊपर उठाते हुए गेंद को रोश की ओर मार दिया।

डंगी को इसी की उम्मीद थी। वे भी यही चाहते थे कि विपक्षी खिलाड़ी दबाव में आकर जल्दबाजी में निर्णय लेना शुरू कर दे। गेंद के हवा में आते ही बुकॉनीर्स का सेटी जॉन

लिंच आगे बढ़ने लगा। उसका काम आसान हो चुका था। खेल शुरू होते ही वह दौड़कर एक निश्चित स्थान पर पहुँचा था और सही इशारे का इंतजार कर रहा था। यह बहुत ही दबाववाली स्थिति थी, लेकिन डंगी ने लिंच को इस प्रकार प्रशिक्षित किया था कि अब यह सब उसकी आदत बन गई थी। इसी का परिणाम था कि क्वार्टरबैक हम्फ्रीज के हाथ से गेंद छूटने से पहले ही लिंच रोश से दस यार्ड की दूरी पर खड़ा इंतजार कर रहा था।

लिंच इतना प्रशिक्षित था कि गेंद के हवा में आते ही उसे कुछ इशारे मिलने लगते थे। जैसे क्वार्टरबैक के चेहरे और हाथों की दिशा, सभी रिसीवरों के बीच का स्थान आदि। इन इशारों के कारण ही हम्फ्रीज के गेंद फेंकने से पहले ही लिंच आगे बढ़कर अपना स्थान ले चुका था। सैन डिएगो का रिसीवर रोश गेंद पकड़ने के लिए आगे बढ़ा, लेकिन पहले से तैयार खड़े लिंच ने उसके बगल से निकलकर गेंद बीच में ही रोक ली। रोश प्रतिक्रिया देता, इससे पहले ही लिंच मैदान की दूसरी ओर चार्जर्स के इंड जोर की ओर दौड़ने लगता। बुकॉनीर्स के अन्य खिलाड़ी उसके रास्ते में आनेवाली हर रुकावट को रोकने के लिए पहले से ही अपने स्थान पर तैयार खड़े थे। लिंच ने पहले 10, फिर 15, इसके बाद 20 और लगभग 25 यार्ड दौड़कर सीमा रेखा पार कर ली। इस पूरे खेल में अब तक केवल दस सेकेंड ही खर्च हुए थे।

दो मिनट बाद बुकॉनीर्स को टचडाउन का स्कोर मिला। पूरे खेल में पहली बार वे विपक्ष से आगे चल रहे थे। इसके पाँच मिनट बाद उन्हें एक फील्ड गोल मिला। इस दौरान डंगी के बचाव पक्ष के खिलाड़ी चार्जर्स द्वारा स्कोर बराबर करके खेल में वापस लौटने की हर कोशिश को नाकाम करते रहे। खेल समाप्त हुआ और बुकॉनीर्स 25-17 से जीत गए। जो फुटबॉल के इस सत्र का सबसे बड़ा उलटफेर था।

खेल के अंत में डंगी और लिंच एक साथ मैदान से बाहर आए।

वहाँ से गुजरते समय लिंच ने डंगी से कहा, ‘आज मैदान पर सब कुछ ज़रा बदला हुआ सा लग रहा था।’

‘क्योंकि अब हम खुद पर विश्वास करने लगे हैं,’ डंगी ने जवाब दिया।

2

एक कोच आदत परिवर्तन पर ध्यान केंद्रित करके टीम का पुनर्निर्माण कैसे करता है, इस बात को समझने के लिए हमें खेल की दुनिया के दायरे से बाहर जाकर देखना होगा। सन 1934 में न्यूयॉर्क शहर की एक इमारत के गंदे और अंधेरे तलघर में आदत-परिवर्तन की नई योजना बनी थी। यह ऐसी योजना थी, जिससे बड़े पैमाने पर लोग प्रभावित हुए। इसे आदत परिवर्तन की दुनिया की सबसे सफल योजना कहा जा सकता है।

इस तलघर में बैठे थे उनचालीस वर्षीय बिल विल्सन, जिन्हें शराब पीने की लत थी। वे वर्षों पहले मेसाच्युएट्स न्यू बेडफोर्ड में थे। यहाँ सेना अधिकारियों का प्रशिक्षण शिविर

चल रहा था। विल्सन को पहले विश्व-युद्ध के लिए फ्रांस भेजा जाना था। जिसके लिए उन्हें मशीन-गन चलाने का प्रशिक्षण दिया गया था। उन्होंने पहली बार शराब का सेवन इसी शिविर के दौरान किया था। शिविर के आसपास के इलाकों में रहनेवाले अनेक रईस परिवार वहाँ प्रशिक्षण ले रहे भावी सैनिकों को अक्सर भोजन के लिए आमंत्रित करते थे। एक रविवार की रात विल्सन भी ऐसे ही एक कार्यक्रम में गए। वहाँ पहुँचते ही उनके हाथ में रेयरबिट (एक विशेष ढंग से बनाया गया चीज़ और टोस्ट) और बीयर का एक गिलास थमा दिया गया। उस समय वे सिर्फ बाईस वर्ष के थे और इससे पहले उन्होंने कभी शराब को छुआ तक नहीं था। उन्होंने सोचा कि उन्हें यहाँ जो कुछ भी परोसा जा रहा है, उसे ठुकराना अशिष्टता होगी। इसलिए उन्होंने चुपचाप बीयर पी ली। इसके कुछ सप्ताह बाद विल्सन को एक बार फिर एक शानदार कार्यक्रम का न्यौता आया, जहाँ पुरुषों ने टक्सीडो धारण कर रखे थे और औरतें उनसे फ्लर्ट कर रही थीं। उसी समय एक बटलर आया और उसने विल्सन के हाथों में 'ब्रॉन्क्स कॉकटेल' का गिलास थमा दिया, जो कि व्हाइट वाइन, जिन और संतरे के रस का मिश्रण था। विल्सन ने बताया कि 'उस कॉकटेल का केवल एक घूँट पीकर ही उन्हें ऐसा लगा, मानो उन्होंने अमृत पा लिया हो।'

1930 के दशक के मध्य में विल्सन यूरोप से वापस लौटे। तब तक उनका वैवाहिक जीवन समाप्ति की कगार पर था और उन्होंने शेयरमार्केट से जो पैसे कमाए थे, वे भी उड़नछू हो चुके थे। इस दौरान विल्सन हर रोज तीन बोतल शराब पीने लगे थे। फिर नवंबर के महीने में एक दिन दोपहर के समय उदास बैठे विल्सन को एक पुराने मित्र का फोन आया। एक समय था जब यह मित्र और विल्सन साथ बैठकर शराब पीते थे। विल्सन ने उसे अपने घर बुलाया और एक जग में शराब और अनन्नास का रस मिलाकर कॉकटेल बनाया। मित्र के आने पर विल्सन ने उसे एक गिलास में यह कॉकटेल परोसा।

लेकिन विल्सन के मित्र ने गिलास वापस कर दिया। उसने बताया कि उसने शराब छोड़ दी है और पिछले दो महीनों से शराब को छुआ तक नहीं है।

यह सुनकर विल्सन आश्चर्यचकित रह गए। वे अपने जीवन के उन संघर्षों के बारे में बताने लगे, जो शराब की लत के कारण पैदा हुए। एक बार विल्सन ने नशे में धुत्त होकर कंट्री क्लब में बवाल किया था, जिसके कारण उन्हें नौकरी से बरखास्त कर दिया गया था। विल्सन ने अपने मित्र को बताया कि उन्होंने शराब छोड़ने की बहुत कोशिश की और नशा मुक्ति केंद्र जाकर अनेकों दवाइयाँ भी लीं, पर शराब छोड़ने में सफल नहीं हो सके। एक बार अपनी पत्नी से शराब छोड़ने का वादा करने के बाद विल्सन शराब से परहेज करनेवाले एक संघ में भी शामिल हुए थे, पर यह उपाय भी उनके काम नहीं आया। 'तो फिर तुमने आखिर शराब छोड़ी कैसे?' विल्सन ने अपने मित्र से पूछा।

'धर्म की मदद से,' मित्र ने जवाब दिया। इसके बाद वह विल्सन को इच्छा, पाप, नर्क और शैतान के बारे में बताने लगा। उसने कहा कि 'सबसे पहले तुम्हें यह स्वीकार करना होगा कि तुम पाप कर रहे हो। फिर तुम्हें खुद को ईश्वर के हवाले करना होगा।'

यह सब सुनकर विल्सन को लगा कि उसके मित्र का दिमाग फिर गया है। विल्सन लिखते हैं, 'यह मित्र पिछली गर्मियों में शराब और ड्रग्स के नशे में धुत्त रहा करता था। जबकि अब उसकी बातें सुनकर मुझे लगा कि वह धर्म को लेकर सनकी हो गया है।' मित्र के जाने पर विल्सन ने कॉकटेल का वह जग खत्म किया और सो गए।

इसके एक महीने बाद दिसंबर 1934 में विल्सन को चार्ल्स बी. टाउन्स हॉस्पिटल फॉर ड्रग्स् एंड एल्कोहल एडिक्शंस में भर्ती होना पड़ा। यह मैनहट्टन के बाहर स्थित एक प्रसिद्ध नशा मुक्ति केंद्र था। उस समय नशा मुक्ति केंद्रों में शराब की लत छुड़वाने के लिए बेल्लाडॉओना नामक एक दवा का उपयोग किया जाता था। इस दवा से कई बार मरीजों को हेल्युसिनेशन (मतिभ्रम की वह स्थिति जब मरीज के लिए वास्तविकता और कल्पना में फर्क करना मुश्किल हो जाता है) भी होने लगता था। नशा मुक्ति केंद्र के डॉक्टर हर एक घंटे में विल्सन को यह दवाई दे रहे थे। यहाँ विल्सन एक छोटे से कमरे के बिस्तर पर पड़े रहते थे और बार-बार होश में आते-जाते रहते थे।

फिर विल्सन के साथ भी वही हुआ, जो ऐसी स्थिति में लगभग सभी के साथ होता है। विल्सन व्यथा से छटपटाने लगे। वे कई दिनों तक मतिभ्रम की पीड़ादायक स्थिति से गुज़रते रहे। इसके बाद उन्हें ऐसा महसूस होने लगा, मानों उनके शरीर पर बहुत सारे कीड़े रेंग रहे हों। उनकी तबीयत इस हद तक बिगड़ चुकी थी कि वे अपने बिस्तर से हिल भी नहीं पा रहे थे। उस समय वे इतनी पीड़ा भोग रहे थे कि उनसे रहा नहीं गया और आखिरकार वे मदद के लिए चिल्लाने लगे, 'अगर इस संसार में वाकई कोई भगवान है, तो मेरे सामने आए! मैं इस पीड़ा से मुक्ति पाने के लिए कुछ भी करने को तैयार हूँ! कुछ भी!' अपना यह भयानक अनुभव बाँटते हुए बाद विल्सन ने लिखा कि 'अचानक उस कमरे में सफेद रोशनी फैल गई और मेरा सारा दर्द समाप्त हो गया। मुझे लगा मानो मैं किसी पर्वत के शिखर पर खड़ा हूँ और वहाँ तेज हवा चल रही है। वह हवा मेरे अंदर समाहित हो गई है और अब अचानक मुझे एहसास हुआ कि अब मैं स्वतंत्र हूँ। मेरा मन खुशी से भर गया। फिर धीरे-धीरे यह खुशी कम भी हो गई। आखिरकार मैं था तो उसी कमरे में, जहाँ मैं बिस्तर पर पड़ा यह सब सोच रहा था। पर अब मैं एकदम अलग ही दुनिया में था। यह हमेशा सचेत रहनेवाली नई दुनिया थी।'

इसके बाद बिल विल्सन ने दोबारा कभी शराब नहीं पी। 36 वर्ष बाद सन 1971 में विल्सन की एम्फजीम (वातस्फीति) नामक बीमारी के कारण मौत हो गई। तब तक उन्होंने अपना सारा जीवन एल्कोहलिक्स एनॉनमस नामक एक अंतर्राष्ट्रीय पारस्परिक सहायता फेलोशिप संगठन स्थापित करने और उसका प्रचार-प्रसार करने में लगा दिया। इस फेलोशिप का उद्देश्य था अपने सदस्यों को दोबारा शराब की ओर जाने से रोकना और अन्य शराबियों को यह लत छोड़ने के लिए प्रोत्साहित करना। विल्सन ने एल्कोहलिक्स एनॉनमस का इतना प्रचार किया कि यह आदत-परिवर्तन के मामले में दुनिया का सबसे बड़ा और मशहूर संगठन बन गया।

एल्कोहलिक्स एनॉनमस द्वारा प्रति वर्ष करीब 2.1 अरब लोगों को मदद दी जाती है।

इस संगठन ने लगभग 10 अरब लोगों को शराब की लत से मुक्त कराया है। हालाँकि एल्कोहलिक्स एनॉनमस की मदद के बावजूद हर किसी को यह लत छोड़ने में सफलता नहीं मिलती। चूँकि इस संगठन के सभी सदस्य गुमनाम होते हैं इसलिए इसकी सफलता का आँकलन करना मुश्किल है। लेकिन करोड़ों लोग अपना जीवन बचाने के लिए एल्कोहलिक्स एनॉनमस को ही धन्यवाद देते हैं।

एल्कोहलिक्स एनॉनमस के मूल सिद्धांत हैं, इसके बारह कदम, जो बहुत प्रसिद्ध भी हैं। अत्यधिक खाना, जुआ खेलना, ॠण, लैंगिक संबंध, ड्रग्स, जमाखोरी, स्वयं को शारीरिक चोट पहुँचाना, धूम्रपान, वीडिओ गेम की लत, भावनात्मक निर्भरता और ऐसे ही दर्जनों आत्मघाती व्यवहारों के इलाज में एल्कोहलिक्स एनॉनमस के मूल सिद्धांतों का उपयोग होता है। यह संगठन ऐसी कई तकनीकें और परिवर्तन-सूत्र बताता है, जो वाकई बेहद सशक्त और प्रभावी हैं।

हालाँकि एल्कोहलिक्स एनॉनमस की यह सफलता काफी हद तक अनपेक्षित थी। इसका कारण यह है कि विज्ञान और इलाज की सर्वमान्य पद्धतियों से इस संगठन का कोई नाता नहीं है।

यह बात सही है कि शराब पीने की लत केवल एक बुरी आदत भर नहीं है। यह एक ऐसी समस्या है, जिसकी जड़ें मनोवैज्ञानिक और आनुवंशिक स्तर तक जाती हैं। शोधकर्ता भी यह मानते हैं कि शराब की लत लगने के अनेक कारण साइकाइट्रिक (मनोवैज्ञानिक) या बायोकेमिकल (जैवरासायनिक) होते हैं। पर एल्कोहलिक्स एनॉनमस में लत लगने के इन कारणों पर चोट नहीं की जाती। बल्कि यहाँ तो वैज्ञानिक पहलुओं और मनोविज्ञानियों द्वारा बताए उपायों को पूरी तरह अनदेखा कर दिया जाता है।[1]

एल्कोहलिक्स एनॉनमस ऐसी पद्धति उपलब्ध कराता है, जिससे शराब पीने से जुड़ी आदतों पर चोट की जा सके। अगर एक वाक्य में कहें तो यह संगठन आदतों के फंदे को परिवर्तित करने की एक विशालकाय योजना है। शराब की लत से जुड़ी आदतें बहुत गहराई तक बसी होती हैं लेकिन इस संगठन के कारण यह पता चला है कि गहरी से गहरी आदत को भी परिवर्तित किया जा सकता है।

***

एल्कोहलिक्स एनॉनमस की स्थापना करने से पहले न तो बिल विल्सन ने अकादमिक किस्म की जानकारियाँ देनेवाली पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ी थीं और न ही डॉक्टरों से सलाह-मशवरा किया था। उन्होंने तो अपनी शराब की लत पर संयम पाने के कुछ वर्षों बाद एक रात यूँ ही बिस्तर में बैठे-बैठे ज़ल्दबाजी में एल्कोहलिक्स एनॉनमस के प्रसिद्ध ‘12 कदमों’ को कागज़ पर लिखा था, जो बाद में एल्कोहलिक्स एनॉनमस के सिद्धांत बन गए। इस संगठन के अनेक पहलू अवैज्ञानिक ही नहीं, विचित्र भी हैं, जैसे विल्सन ने 12 का आँकड़ा इसलिए चुना क्योंकि ईसाई धर्म में देवदूतों की संख्या 12 होती है।

एल्कोहलिक्स एनॉनमस यह आग्रह करता है कि शराब के लती लोग 90 दिनों की समय-अवधि में संगठन की 90 मिटिंग में शामिल हों पर यह समय-अवधि किसी विशेष कारणवश नहीं चुनी गई है। इसी तरह यह संगठन आध्यात्मिकता पर बड़ा जोर देता है। जिसके बारे में तीसरे कदम में बताया गया है कि शराब की लत से ग्रस्त लोगों को 'अपनी इच्छा और अपना जीवन पूरी तरह ईश्वर को समर्पित करने का निर्णय ले लेना चाहिए। इससे वे अपनी लत से मुक्त हो सकेंगे। इस योजना के बारह में से सात कदमों में ईश्वर और आध्यात्मिकता की बात की गई है। यह अपने आपमें बड़ी ही विचित्र बात है क्योंकि इसके संस्थापक स्वयं नास्तिक थे और धर्म का खुलेआम विरोध करते थे। एल्कोहलिक्स एनॉनमस की मीटिंग्स् का कोई भी निश्चित समय अथवा पाठ्यक्रम नहीं होता। आमतौर पर, मीटिंग में आनेवाला कोई एक सदस्य अपनी कठिनाइयों के बारे में बात करके मीटिंग की शुरुआत करता है, जिसके बाद अन्य लोग अपनी बातें बताने लगते हैं। ऐसी किसी भी मीटिंग में न तो कोई मनोविज्ञानी होता है और न ही कोई विशेषज्ञ, जो इन लोगों के बीच हो रही बातों को किसी विशिष्ट दिशा की ओर ले जाए। इन मीटिंग्स् को किसी विशिष्ट ढंग से आयोजित करने के कोई विशेष नियम भी नहीं तय किए गए हैं। पिछले पाँच दशकों में व्यवहार-विज्ञान, औषधि-विज्ञान और इंसानी दिमाग को समझने की दिशा में जो भी खोजें हुई हैं, उनसे मनोविज्ञान और लत संबंधी शोधकार्य के कई पहलुओं में क्रांतिकारी सुधार हुए हैं। पर एल्कोहलिक्स एनॉनमस अब भी अतीत में अटका हुआ है।

एल्कोहलिक्स एनॉनमस कभी भी कठोर रवैया नहीं अपनाता, जिसके कारण विद्वान और शोधकर्ता कई बार इसकी आलोचना कर चुके हैं। कई लोगों ने तो यह तक कहा है कि इस संगठन में आध्यात्मिकता पर जितना बल दिया जाता है, उसके कारण यह शराब की लत छुड़ानेवाला संगठन कम और कोई धार्मिक संप्रदाय अधिक लगता है। हालाँकि पिछले पंद्रह वर्षों में एल्कोहलिक्स एनॉनमस में भी क्रांति सी आ गई है। इसीलिए अब कई शोधकर्ताओं का मानना है कि इस संगठन की पद्धतियाँ बहुमूल्य प्रशिक्षण प्रदान करती हैं। हॉर्वर्ड विश्वविद्यालय, येल विश्वविद्यालय, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो, यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू मेक्सिको और अन्य दर्जन भर से भी अधिक शोध-केंद्रों के शिक्षकों और विशेषज्ञों को अब एल्कोहलिक्स एनॉनमस की पद्धतियों में वही विज्ञान नज़र आने लगा है, जिसका उपयोग टोनी डंगी फुटबॉल के मैदान पर करते थे। उनके निरीक्षण का जो भी परिणाम निकला, वह आदत-परिवर्तन के सुनहरे नियम की ही पुष्टि करता है। दरअसल इस संगठन की व्यापक सफलता का राज़ यह है कि शराब की लत छुड़ाने की इसकी पद्धतियों में लती लोगों के लिए जो इशारे और इनाम होते हैं, वे तो समान ही रहते हैं, पर उनकी क्रियाओं में बदलाव लाया जाता है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि एल्कोहलिक्स एनॉनमस में शराब के लती इंसान पर इस बात का पता लगाने के लिए जोर डाला जाता है कि वह शराब पीने की क्रिया किन इशारों के कारण करता है और इससे उसे कौन-सा इनाम मिलता है। एक बार इन इशारों और इनामों का पता लगने के बाद एल्कोहलिक्स एनॉनमस एक नई क्रिया ढूँढने में लती इंसान की मदद करता है। जब क्लाउड हॉपकिंस को पेप्सोडेंट बेचना था, तो इसके लिए

उन्होंने एक ऐसा रास्ता खोजा, जिससे ग्राहक के अंदर एक नई इच्छा का निर्माण हो और फिर उससे एक नई आदत विकसित हो। पर किसी भी पुरानी आदत को बदलने के लिए पुरानी इच्छा पर ध्यान देना आवश्यक है। पुरानी आदत को बदलने के लिए इच्छा को तृप्त करनेवाले पुराने इशारों और इनामों को जस का तस रखते हुए उसमें एक नई क्रिया का समावेश करना पड़ता है।

जैसे विल्सन द्वारा लिखे गए चौथे और पाँचवें कदम पर गौर करें। चौथा कदम कहता है, 'स्वयं की खोज करो, भयमुक्त बनो।' जबकि पाँचवाँ कदम कहता है, 'अपनी गलतियों को ईश्वर के सामने, स्वयं के सामने और दूसरों के सामने स्वीकार करो।'

पिछले एक दशक से एल्कोहलिक्स एनॉनमस की पद्धतियों का अध्ययन कर रहे यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू मेक्सिको के शोधकर्ता जे. स्कॉट टोनीगन कहते हैं, 'इस संगठन के 12 कदमों का अनुसरण करने के लिए लती इंसान को उन सभी इशारों की सूची बनानी पड़ती है, जिससे उसके अंदर शराब पीने की इच्छा जागृत हो जाती है। जब लती इंसान को स्वयं का शोध करने के लिए कहा जाता है तो वह उन सभी बातों पर विचारों करने लगता है, जो उसके अंदर शराब पीने की इच्छा पैदा करती हैं। फिर जब वही इंसान सबके सामने अपनी सारी गलतियाँ स्वीकार करता है, तो वह हर उस क्षण पर विचार करने लगता है, जब वह खुद पर संयम नहीं रख पाया था। यह तरीका जिस अंदाज में इंसान को आईना दिखाता है, वह वाकई बेहतरीन है।'

इसके बाद एल्कोहलिक्स एनॉनमस इन शराब के लती लोगों से इस बात का पता लगाने को कहता है कि उन्हें शराब पीने से कौन सा फायदा होता है यानी कौन सा इनाम मिलता है। शराब के लती लोगों से पूछा जाता है कि आपकी ऐसी कौन-सी इच्छाएँ हैं, जिनसे आदत का यह फंदा सक्रिय होता है? अधिकतर लोग 'शराब का नशा चढ़ने' को इस सूची में नहीं रखते। उनका कहना तो ये होता है कि शराब पीने से उन्हें परिस्थितियों से पलायन करने, तनाव और अकेलेपन से मुक्त होने, व्याकुलता से क्षणिक छुटकारा पाने और दबी भावनाओं को बाहर निकालने का अवसर मिलता है। वास्तव में उनके अंदर शराब पीने की जो इच्छा पैदा होती है, वह शराब से होनेवाले नशे के लिए नहीं होती। वे तो बस अपनी चिंताओं से मुक्ति का मार्ग ढूँढ़ रहे होते हैं। शराब के सेवन से शरीर पर होनेवाले असर यानी नशे को अधिकतर लोग इनाम की तरह नहीं देखते।

जर्मनी के न्यूरोलॉजिस्ट (तंत्रिकाविज्ञानी) उल्फ म्यूलर शराब के लती लोगों की दिमागी गतिविधियों का अध्ययन कर चुके हैं। उनका कहना है कि 'शराब में एक सुखवादी तत्व है। लेकिन लोग अक्सर किसी चीज़ को भुलाने के लिए अथवा कुछ इच्छाओं को तृप्त करने के लिए शराब पीते हैं। ऐसी मानसिक इच्छाएँ और शारीरिक सुख से तृप्त होनेवाली इच्छाएँ, दिमाग के अलग-अलग हिस्सों में पैदा होती हैं।'

एल्कोहलिक्स एनॉनमस में ऐसी परिस्थितियों का निर्माण किया जाता है, जिससे शराबखाने में मिलनेवाले इनाम लोगों को इस संगठन की मीटिंग में मिल सकें। जैसे इस

संगठन से जुड़नेवाले हर इंसान का एक ‘स्पॉन्सर’ होता है, जिसकी मदद से लोगों की अकेलेपन से मुक्ति की और मित्र पाने की इच्छा पूरी होती है। आजकल लोग जीवन से पलायन करने के लिए, चिंता से मुक्ति के लिए और अंदर से खाली होने यानी मानसिक बोझ से मुक्ति पाने के लिए अपने सप्ताह का आखिरी दिन शराबखाने में बिताते हैं। लेकिन इस संगठन की मीटिंग में ऐसी व्यवस्था की जाती है कि इंसान को शराबखाने में जाने की आवश्यकता ही न पड़े। यहाँ शराब के लती लोगों को चिंता से मुक्ति के लिए अपने-अपने स्पॉन्सर से बात करने और मीटिंग में आने के लिए प्रेरित किया जाता है।

टोनीगन बताते हैं कि ‘एल्कोहलिक्स एनॉनमस लोगों में हर रात शराब पीने की क्रिया के स्थान पर नई क्रियाओं का निर्माण करता है। इसकी मीटिंग में लोगों को बेझिझक अपनी चिंताओं और परेशानियों के बारे में बात करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसलिए इशारा और इनाम समान रहते हैं, केवल क्रियाओं में और लोगों के व्यवहार में परिवर्तन आता है।’

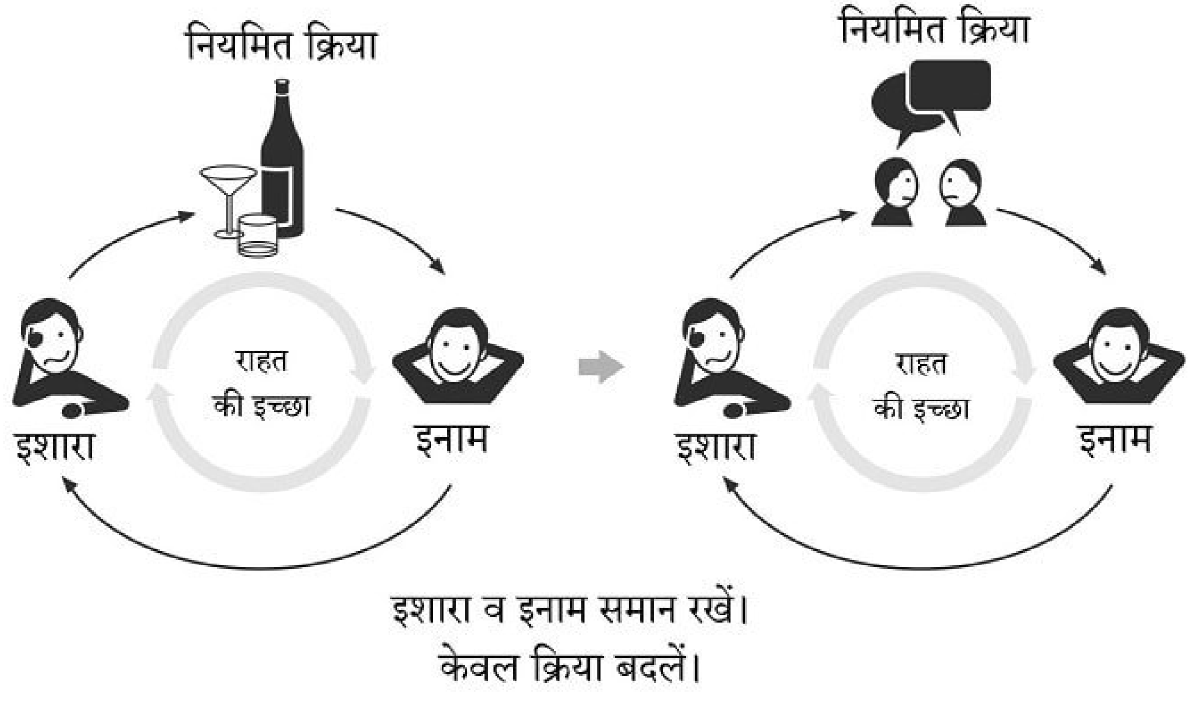

शराब पीनेवालों के इशारे और इनाम समान रखकर क्रिया कैसे परिवर्तित की जा सकती है, इसका एक प्रभावशाली प्रयोग 2007 में हुआ। जर्मनी के न्यूरोलॉजिस्ट (तंत्रिकाविज्ञानी) म्यूलर और यूनिवर्सिटी ऑफ मैगडेबर्ग के उनके कुछ सहकर्मियों ने लंबे समय से शराब छोड़ने का प्रयास करनेवाले पाँच लोगों के दिमाग में, एक ऑपरेशन के ज़रिए सूक्ष्म इलेक्ट्रिकल यंत्र लगा दिए। शराब के लती ये पाँचों लोग नशा मुक्ति केंद्रों में कम से कम छह-छह महीने का समय बिता चुके थे, लेकिन हर बार उन्हें

असफलता ही हाथ लगी थी। इनमें से एक तो शराब की लत से छुटकारा पाने के लिए साठ से भी अधिक बार अपना इलाज नशा मुक्ति केंद्र में करवा चुका था।

इन पाँचों लोगों के दिमाग में, सूक्ष्म इलेक्ट्रिकल उपकरण उनके बेसिल गैंग्लिया में लगाए गए थे। बेसिल गैंग्लिया दिमाग का वही हिस्सा है, जिसका अध्ययन कर एम.आई.टी. के शोधकर्ताओं ने आदत के फंदे का पता लगाया था। यह उपकरण ऐसी विद्युत तरंगें पैदा करता था, जिससे इनाम की अनुभूति में रुकावट आती थी। इसके परिणामस्वरूप आदतन पैदा होनेवाली इच्छा जागृत नहीं हो पाती थी। इस ऑपरेशन के बाद इन लोगों को वे इशारे दिए गए, जिनसे उनके अंदर शराब पीने की इच्छा पैदा होती थी। जैसे, शराब के बोतल की तस्वीर और शराबखाने जाना वगैरह। आमतौर पर इन इशारों के मिलते ही ये लोग अपने आपको रोक नहीं पाते थे, लेकिन उनके दिमाग में लगे उपकरण ने उनकी इच्छा को दबा दिया। परिणामस्वरूप उनमें से किसी ने भी शराब को छुआ तक नहीं।

म्यूलर बताते हैं कि ‘इनमें से एक इंसान ने हमें बताया कि दिमाग में लगे उपकरण में विद्युत तरंग शुरू होते ही हमारी इच्छा समाप्त हो जाती है, लेकिन जैसे ही ये विद्युत तरंगें बंद की जाती हैं, तो शराब पीने की इच्छा फिर से पैदा हो जाती है।’

लेकिन फिर म्यूलर ने पाया कि इन लोगों की शराब पीने की आदत बदलने के लिए केवल इच्छाओं को हटाना काफी नहीं था। ऑपरेशन के कुछ ही समय बाद, तनावपूर्ण मौके आते ही इनमें से चार लोग एक बार फिर अपनी पुरानी आदत को दोहराते हुए शराब पीने लगे। उनके जीवन में चिंता या व्याकुलता का कोई भी मौका आने पर उन्होंने तुरंत शराब की बोतल का सहारा ले लिया क्योंकि ऐसा करना उनकी आदत थी। वे तनाव का सामना शराब पीकर ही करते थे। लेकिन धीरे-धीरे जब उन्होंने तनाव का सामना करने के लिए अन्य प्रभावी क्रियाएँ सीख लीं, तो उनकी शराब पीने की आदत पूरी तरह छूट गई। जैसे उनमें से एक इंसान एल्कोहलिक्स एनॉनमस की मीटिंग में जाने लगा। जबकि अन्य लोग थेरेपी लेने के लिए जाने लगे। जीवन में आई चिंता और व्याकुलताओं का सामना करने के लिए इन परिवर्तित क्रियाओं को अपनाने से इन लोगों के जीवन में उल्लेखनीय परिवर्तन आए। इन पाँचों में से वह इंसान, जो शराब छोड़ने के लिए साठ से भी अधिक बार अपना इलाज करवा चुका था, उसने दोबारा शराब की एक बूँद तक नहीं पी। अन्य दो लोगों ने सिर्फ 12 साल की उम्र से ही शराब पीना शुरू कर दिया था और 18 साल का होते-होते उन्हें शराब की लत लग चुकी थी। वे हर रोज़ शराब पीते थे, लेकिन अब तो उन्हें शराब की बोतल को हाथ लगाए चार साल से ज़्यादा हो चुके हैं।

गौर करें कि यह अध्ययन आदत-परिवर्तन के सुनहरे नियम के कितना करीब है। शराब के लती इन लोगों के दिमाग में ऑपरेशन द्वारा परिवर्तन लाना काफी नहीं था क्योंकि इससे पुराने इशारे और इच्छाएँ परिवर्तित नहीं हो पाई थीं और इनाम के इंतजार में थीं। इन लोगों की शराब की लत पूरी तरह तब छूट पाई, जब इनके पुराने इशारे और इनाम समान रखकर केवल इनकी क्रिया को बदला गया। म्यूलर बताते हैं, ‘कुछ लोगों के

दिमाग में शराब की लत इतनी गहराई तक बसी होती है कि ऑपरेशन के अलावा और कोई उपाय नहीं होता। इसके बावजूद भी इन लोगों को अपने जीवन में नई क्रियाओं की आवश्यकता ज़रूर पड़ती है।'

एल्कोहलिक्स एनॉनमस भी इसी प्रकार कार्य करता है। आदत के पुराने फंदे में नई क्रियाएँ निर्मित की जाती हैं। लेकिन इसके लिए कोई ऑपरेशन नहीं करना पड़ता। वैज्ञानिक एल्कोहलिक्स एनॉनमस की कार्यप्रणाली समझने लगे हैं और अब इसकी पद्धतियों का उपयोग अन्य आदतों के मामले में भी होने लगा है। जैसे, एक-दो साल की उम्र के बच्चों का चिड़चिड़ापन, सेक्स संबंध बनाने की लत, यहाँ तक कि स्वभाव संबंधी छोटी से छोटी चीज़ों में भी अब आदत-परिवर्तन के सुनहरे नियम की मदद से बदलाव लाया जा सकता है। एल्कोहलिक्स एनॉनमस की पद्धतियाँ जैसे-जैसे प्रचलित होने लगीं, उन्हें थेरेपी में रूपांतरित कर लिया गया, जिससे लगभग हर प्रकार के पैटर्न को तोड़ा जा सकता है।

***

वर्ष 2006, गर्मी का मौसम था। मिसिसिपी स्टेट यूनिवर्सिटी में ग्रेजुएशन की छात्रा मैन्डी परामर्श केंद्र गई। वह चौबीस वर्ष की थी और उसे लगातार नाखून चबाने की आदत थी। मैन्डी को याद भी नहीं था कि यह आदत उसे कब लगी। हालाँकि नाखून चबाने की आदत बहुत से लोगों को होती है, लेकिन मैन्डी जैसे निरंतर नाखून चबानेवाले लोगों की दिक्कत अलग ही स्तर की होती है। वह अक्सर अपने नाखूनों को त्वचा से निकल जाने तक चबाती रहती थी और कई बार तो इसके कारण उसकी उँगलियों से खून तक निकलने लगता था। इसके कारण उसकी उँगलियों के सिरों पर बहुत से निशान थे। नाखून न होने के कारण उसकी उँगलियाँ बहुत ही खराब दिखाई देती थीं। इन सब समस्याओं के कारण उसकी उँगलियों में अक्सर दर्द होता रहता था, जिसका मतलब था कि वह अपनी नसों (तंत्रिकाओं) को चोट पहुँचा रही है। मैन्डी के सामाजिक जीवन पर भी उसकी इस आदत का नकारात्मक प्रभाव पड़ा था। उसे कहीं बाहर जाने पर इतनी शर्मिंदगी महसूस होती थी कि वह अपने हाथ हर समय जेब में ही रखा करती थी। किसी लड़के के साथ घूमने जाने पर उसका सारा ध्यान इसी बात पर होता था कि वह अपने हाथों की मुट्ठियाँ बंद रखे ताकि लड़के की नज़र उसकी उँगलियों के सिरों पर न पड़े। हालाँकि ऐसा नहीं था कि उसने अपनी इस आदत से छुटकारा पाने की कोशिश नहीं की थी। इसके लिए उसने अपने नाखून पर बुरे स्वाद वाली नेल-पॉलिश लगाई और कई बार तय किया कि वह इस आदत को छोड़ने की अपनी इच्छाशक्ति बढ़ाएगी। लेकिन जैसे ही वह कोई ऐसा काम करती, जिसमें उसका ध्यान कहीं और होता, जैसे कॉलेज का होमवर्क करना या टी.वी. देखना, तो उसके हाथ अपने आप ही उसके मुँह में चले जाते और वह नाखून चबाने लगती।

यूनिवर्सिटी के परामर्श केंद्र ने मैन्डी को मनोविज्ञान में पी.एच.डी. कर रहे एक छात्र के पास भेजा। यह छात्र इस तरह की आदतों के एक इलाज का अध्ययन कर रहा था,

जिसका नाम था, 'आदतों को पूर्वावस्था में लाने का प्रशिक्षण।' यह मनोविज्ञानी आदत-परिवर्तन के सुनहरे नियम से भलीभाँति परिचित था। वह अच्छी तरह जानता था कि मैन्डी की नाखून चबाने की आदत बदलने के लिए उसके जीवन में एक नई क्रिया लाने की ज़रूरत है। 'जब तुम नाखून चबाने के लिए अपना हाथ मुँह की ओर लाती हो, तो क्या सोच रही होती हो?' उसने मैन्डी से पूछा।

'मेरी उँगलियों में तनाव होता है और नाखून के किनारों पर थोड़ा दर्द महसूस होता है' मैन्डी ने बताया। 'कभी-कभी मैं अपने अँगूठे को उँगलियों के सिरों पर स्पर्श कराकर यह गौर करती हूँ कि कहीं नाखून के किनारे की सूखी चमड़ी का टुकड़ा तो नहीं निकल रहा और ऐसा कुछ भी महसूस होने पर मैं तुरंत अपना हाथ अपने मुँह की ओर ले आती हूँ। इसके बाद मैं हर एक उँगली के नाखून के किनारे की सूखी चमड़ी निकालने लगती हूँ। एक बार ऐसा करते ही हर नाखून के साथ यही किए बिना मुझे चैन नहीं मिलता।'

'सजगता प्रशिक्षण' नामक इस पद्धति में लोगों से उन इशारों की पहचान करने को कहा जाता है, जो उनके आदतन व्यवहार को प्रेरित करते हैं। यह पद्धति, आदतों को पूर्वावस्था में लाने के प्रशिक्षण का पहला कदम है। एल्कोहलिक्स एनॉनमस में भी शराब के लती लोगों से उन इशारों की पहचान करने को कहा जाता है, जो उनके आदतन व्यवहार के प्रेरक होते हैं। मैन्डी की उँगलियों में महसूस होनेवाला तनाव ही उसकी नाखून चबाने की आदत का इशारा था। मैन्डी का इलाज करनेवाले मनोविज्ञानी ब्रॉड डफरीन बताते हैं कि 'अधिकतर लोगों की आदतें इतनी पुरानी होती हैं कि वे अपनी आदत को सक्रिय रखनेवाले कारणों को पहचान ही नहीं पाते। मेरे पास ऐसे मरीज भी आए हैं, जो हकलाने की आदत से छुटकारा चाहते थे पर जब मैं उनसे पूछता कि ऐसे कौन-से शब्द या परिस्थितियाँ हैं, जिनसे वे हकलाने लगते हैं, तो उनके पास कोई जवाब ही नहीं होता था। क्योंकि उनकी आदत इतनी पुरानी हो चुकी होती है कि अब वे उसके कारणों पर गौर ही नहीं करते।'

इसके बाद मैन्डी से इस तरह नाखून चबाने का कारण पूछा गया। पहले तो मैन्डी इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाई। लेकिन मनोविज्ञानी के साथ कई बार बातचीत करके उसे समझ में आया कि जब भी वह ऊब जाती है तो नाखून चबाने लगती है। मनोविज्ञानी ने उसका निरीक्षण करने के लिए उसे ठीक उन्हीं स्थितियों में डाला, जैसी स्थितियाँ उसके रोज़ाना के जीवन में होती हैं, जैसे टी.वी. देखना या पढ़ाई करना। मनोविज्ञानी ने पाया कि जब भी मैन्डी को ऐसी स्थितियों में डाला जाता है, वह आदतन अपने नाखून चबाने लगती है। इसके बाद मैन्डी ने बताया कि जब वह अपने सारे नाखून चबा लेती है, तो उसे एक पूर्णता का अनुभव होता था। यही उसकी आदत का इनाम भी था। यह दरअसल एक शारीरिक संवेदना है और मैन्डी के अंदर इसी संवेदना को महसूस करने की इच्छा निर्मित होती थी।

मैन्डी की थेरेपी का यह सत्र पूरा होने के बाद मनोविज्ञानी ने उससे कहा कि अगली बार मिलने से पहले उसे एक काम करना होगा। उसने मैन्डी से कहा कि वह अपने पास

हमेशा एक इंडेक्स कार्ड रखा करे और जैसे ही उसे अपने उँगलियों में तनाव महसूस हो और नाखून चबाने का मन करे, तो वह इंडेक्स कार्ड पर सही का निशान लगा ले। इससे यह जानने में आसानी होगी कि उसे कब-कब नाखून चबाने का मन किया। एक सप्ताह बाद मैन्डी फिर से मनोविज्ञानी के पास आई। उसके इंडेक्स कार्ड पर कुल 28 निशान थे। अब वह अपनी उँगलियों में होनेवाले तनाव के प्रति बहुत सजग हो गई थी। अब उसे यह अच्छी तरह याद रहता था कि उसे दिनभर में कब और कितनी बार उँगलियों में तनाव महसूस हुआ, जैसे पढ़ाई करते समय या टी.वी. देखते समय या फिर कभी और।

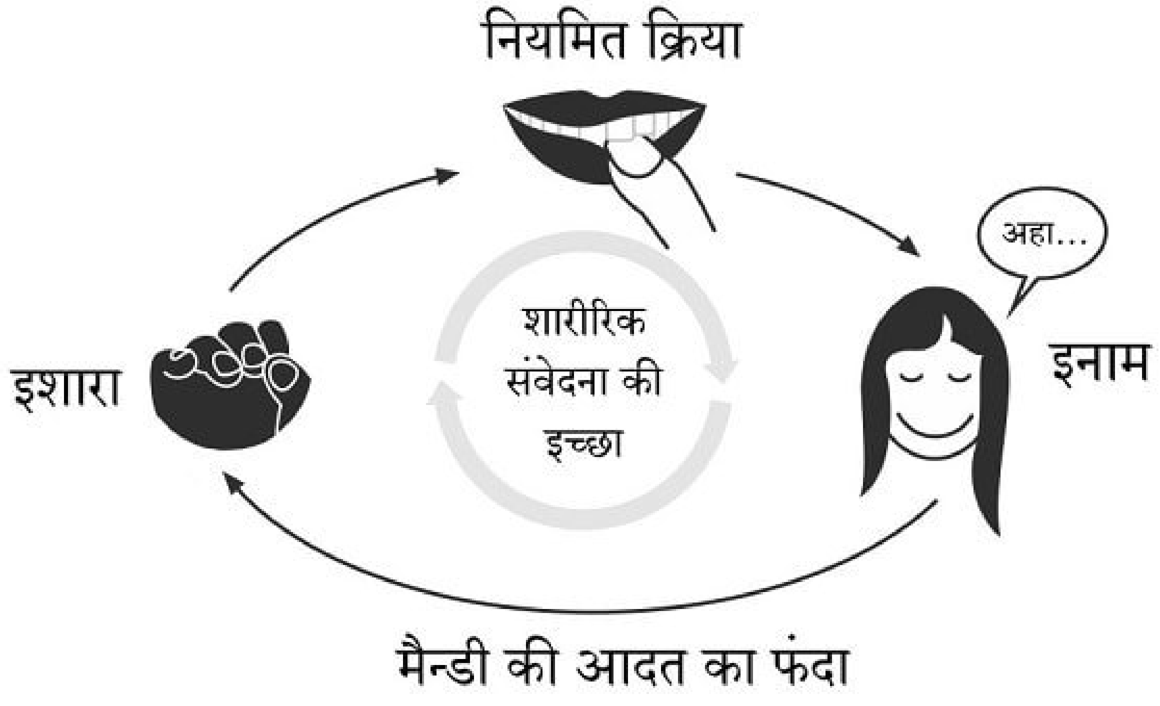

इसके बाद मनोविज्ञानी ने उसे 'प्रतिस्पर्धात्मक प्रतिक्रिया' (कॉम्पीटिंग रिस्पॉन्स) देना सिखाया। मैन्डी को अपनी उँगलियों में तनाव महसूस होने पर कुछ अन्य क्रियाएँ करने के लिए कहा गया। जैसे अपने हाथों को तुरंत जेब में डाल लेना या कोई पेन अथवा पेन्सिल लेकर उसे कसकर पकड़ लेना आदि। संक्षिप्त में कहा जाए तो तनाव महसूस होते ही मैन्डी को तुरंत अपने हाथों को ऐसी क्रियाओं में व्यस्त करना था, जिससे वह नाखून चबाने के लिए अपना हाथ मुँह की ओर न ले जा सके। इसके बाद मैन्डी को कोई ऐसी क्रिया करनी थी, जो उसे फौरन शारीरिक संवेदना उपलब्ध करवा सके। जैसे अपने बाजुओं पर हथेलियाँ रगड़ना अथवा अपने हाथों से बेंच पर थपकी मारते हुए आवाज़ निकालना आदि। इसका उद्देश्य बस यही था कि यह सब करके उसके अंदर शारीरिक प्रतिक्रिया पैदा हो सके।

इस प्रकार इशारा और इनाम समान रहा, बस क्रिया परिवर्तित हो गई।

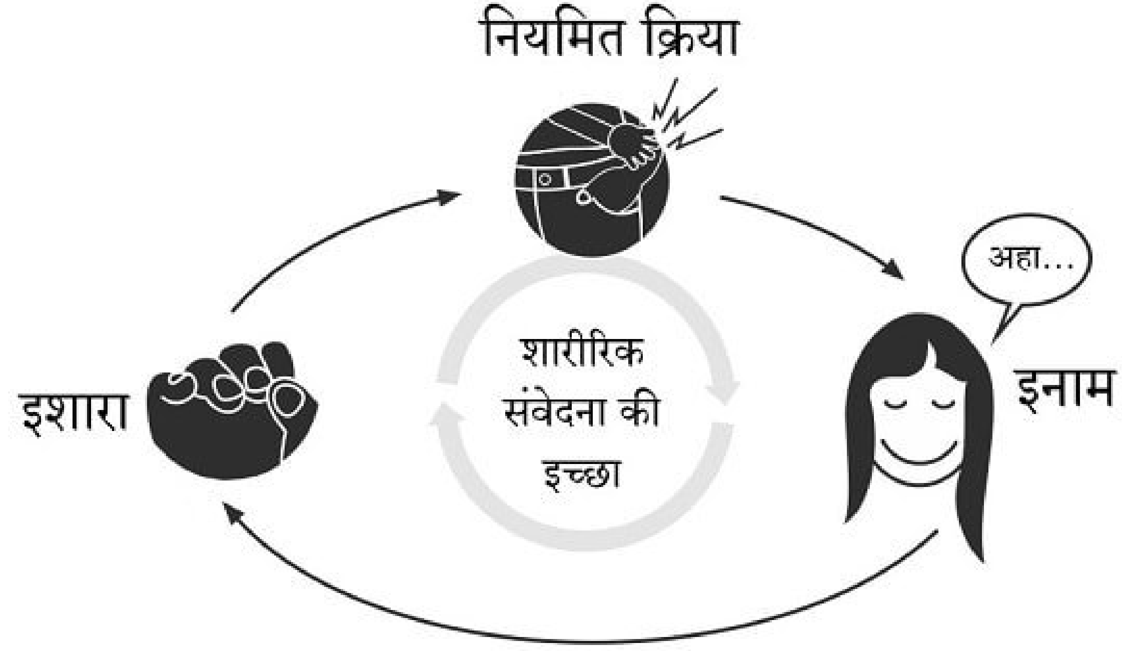

मैन्डी की आदत का नया फंदा

मैन्डी को मनोविज्ञानी ने अपने ऑफिस में ही तीस मिनट तक इस नई क्रिया का अभ्यास करने के लिए कहा। इसके बाद जब मैन्डी घर जाने लगी, तो मनोविज्ञानी ने उसे एक नया काम बताया। अब मैन्डी को उस समय भी अपने इंडेक्स कार्ड पर एक विशेष निशान लगाना था, जब नाखून चबाने के लिए मुँह में हाथ डालने की इच्छा जागने पर वह उसे अपनी नई क्रिया की मदद से टाल सके।

अगले सप्ताह जब मैन्डी मनोविज्ञानी के पास आई, तो पता चला कि उसने पूरे सप्ताह में केवल तीन बार अपने नाखून चबाए थे और सात बार 'प्रतिस्पर्धात्मक प्रतिक्रिया' (कॉम्पीटिंग रिस्पॉन्स) का सफल उपयोग किया था। उसने पार्लर जाकर मैनीक्योर (नाखूनों की सफाई और साज-श्रृंगार) भी कराया था। ऐसा करके दरअसल उसने स्वयं को इनाम दिया था। साथ ही उसने इंडेक्स कार्ड का उपयोग भी जारी रखा। इसके मात्र एक महीने बाद ही मैन्डी की नाखून चबाने की आदत पूरी तरह खत्म हो गई। 'प्रतिस्पर्धात्मक प्रतिक्रिया' (कॉम्पीटिंग रिस्पॉन्स) अब उसके लिए ऐसा व्यवहार बन चुका था, जो स्वत: ही होता था। यानी अब इसके लिए मैन्डी को अपनी ओर से कोशिश नहीं करनी पड़ती थी। इस प्रकार उसकी पुरानी आदत का स्थान नई आदत ने ले लिया था।

आदत को पूर्वावस्था में लाने का प्रशिक्षण कार्यक्रम विकसित करनेवालों में से एक नेथन एज़रिन ने मुझे बताया कि 'यूँ तो यह बहुत ही आसान नज़र आता है, पर एक बार आप यह जान जाएँ कि आपकी आदतें कैसे काम करती हैं और साथ अगर आप अपनी आदतों के इशारों और इनामों को भी जान लें, तो आदत को परिवर्तित करने में ज़्यादा समय नहीं लगता। हो सकता है कि आपको लगे कि यह इतना आसान कैसे हो सकता है, पर सच्चाई यह है कि इंसानी दिमाग को दोबारा प्रोग्राम करना संभव है। बस आपको सफलतापूर्वक ऐसा करने के लिए सुनियोजित तरीका अपनाना होता है।'[2]

आदत को पूर्वावस्था में लाने की इस पद्धति का उपयोग आज कई मौखिक और शारीरिक समस्याओं से निपटने में किया जाता है। इसके साथ ही डिप्रेशन, धूम्रपान, जुआ खेलने की लत, एंग्जाइटी, बिस्तर गीला करना, टाल-मटोल की आदत, ओ.सी.डी. (ऑब्सेसिव-कम्पल्सिव डिसऑर्डर) और ऐसी ही अनेकों समस्याओं के उपचार में भी आदत को पूर्वावस्था में लानेवाली पद्धति का उपयोग होता है। इस पद्धति में आदत का एक अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्धांत सामने आता है कि अक्सर लोग यह नहीं जान पाते कि उनकी आदतें किस इच्छा के कारण सक्रिय होती हैं। मैन्डी यह नहीं जानती थी कि शारीरिक संवेदना की इच्छा के कारण ही वह अपने नाखून चबाती है। लेकिन जब उसने अपनी इस आदत के बारे में मनोविज्ञानी के साथ विचार-विमर्श किया, तो वह समान इनाम देनेवाली नई क्रियाएँ अपनाकर अपनी आदत को परिवर्तित करने में सफल हो गई।

जैसे अगर आपको काम करते समय कुछ न कुछ खाते रहने की आदत है और आप इस आदत से छुटकारा पाना चाहते हैं, तो सबसे पहले आपको यह पता लगाना होगा कि आपको मिलनेवाला वह इनाम क्या है, जो इस आदत को सक्रिय कर रहा है। क्या आप अपनी भूख को शांत करने के लिए ऐसा करते हैं या फिर काम से ऊब जाने पर ऐसा करते हैं? अगर आप अपनी ऊब मिटाने के लिए ऐसा कर रहे हैं, तो बहुत आसानी से एक नई और बेहतर क्रिया ढूँढ़कर इस आदत से छुटकारा पा सकते हैं। जैसे काम से पैदा होनेवाली ऊब मिटाने के लिए आप आसपास कहीं घूमकर आ सकते हैं या फिर कुछ मिनटों तक इंटरनेट पर अपना मनोरंजन कर सकते हैं। इस प्रकार की क्रियाएँ ऊब से तो बचाएँगी ही, साथ ही आपको वजन बढ़ने की दिक्कतों का सामना भी नहीं करना पड़ेगा।

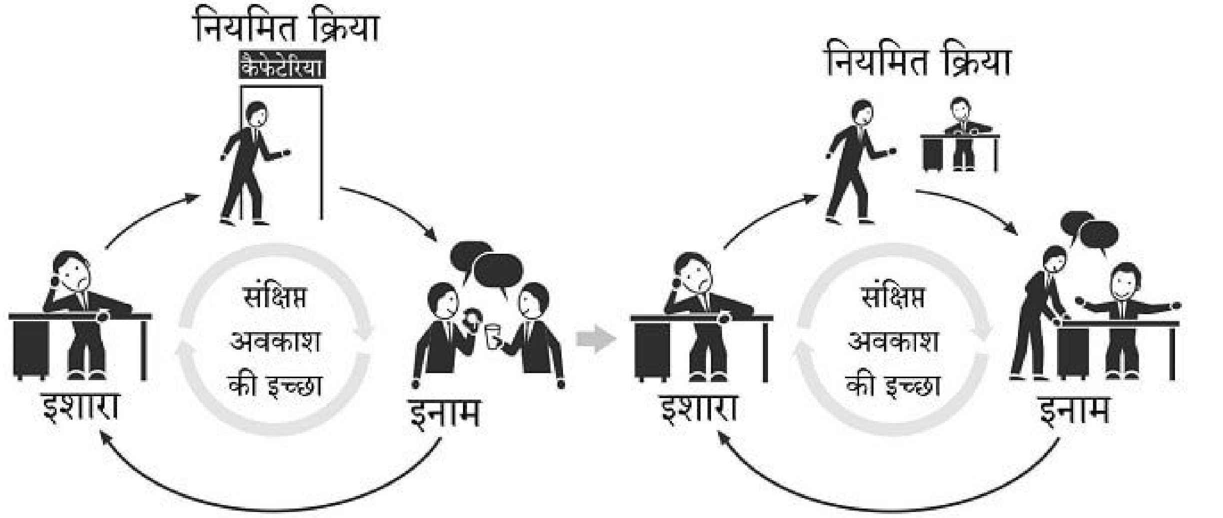

इसी तरह अगर आप धूम्रपान की आदत से छुटकारा पाना चाहते हैं, तो अपने आपसे पूछें कि क्या आपको निकोटीन पसंद है? या फिर आप केवल शारीरिक संवेदना महसूस करने के लिए धूम्रपान करते हैं, या शायद आप लोगों के साथ धूम्रपान करके उन्हें अपना मित्र बनाना चाहते हैं? शारीरिक संवेदना महसूस होने के लिए, जो लोग धूम्रपान करते हैं, उनके लिए यह जानकारी उपयोगी साबित हो सकती है कि इस विषय पर हुए शोधों के अनुसार दोपहर में चाय या कॉफी पीने से धूम्रपान छोड़ने की संभावना बढ़ जाती है। धूम्रपान से ग्रस्त रह चुके अनेकों लोगों के अनुसार इस आदत के इशारे और इनाम को जानने तथा उनके स्थान पर नई क्रिया अपनाने से इससे छुटकारा पाना संभव है। जैसे धूम्रपान करने की तलब लगने पर एक निकोरेट (धूम्रपान की आदत छुड़ानेवाली एक च्वींगम) चबाने, पुश-अप्स् (एक प्रकार का व्यायाम) करने या कुछ देर यूँ ही पैर फैलाकर आराम से बैठने जैसे विकल्पों को अपनाने से यह आदत छोड़ना अपेक्षाकृत आसान हो जाता है।

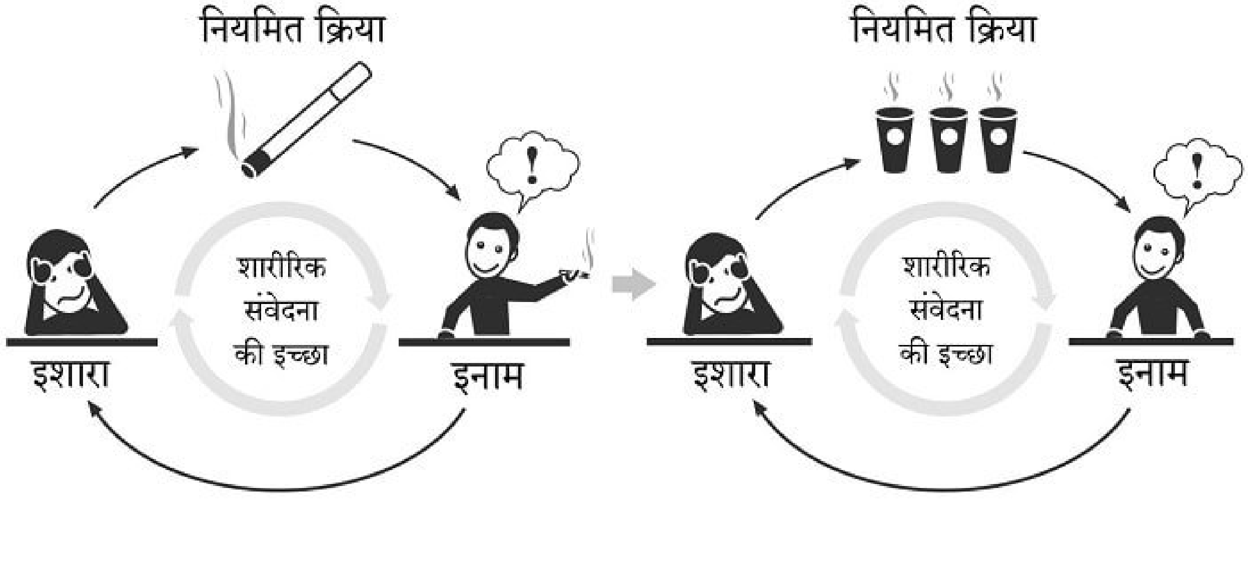

अगर आप अपनी आदत के इशारे और इनाम को पहचान लें, तो उसे बदला सकता है।

यह पद्धति अधिकांश परिस्थितियों में काम आती है, लेकिन कुछ आदतें ऐसी भी होती हैं, जिन्हें बदलने के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण चीज़ की ज़रूरत होती है। वह महत्वपूर्ण चीज़ कुछ और नहीं बल्कि 'विश्वास' है।

3

सन 1996 में टोनी डंगी बुकॉनीर्स के मुख्य कोच बने। उस वर्ष का खेल-सत्र आरंभ होने के कुछ ही महीनों पहले की बात है। वे अपनी टीम के साथ लॉकर रूम में बैठे थे। 'सबको लगता है कि हम जीत नहीं सकते और लोग इसके छह कारण बताते हैं।' इन शब्दों के साथ उन्होंने बोलना आरंभ किया। उनकी टीम के सभी सदस्य अखबारों और रेडिओ पर ये कारण पढ़ और सुन चुके थे, जैसे 'टीम का प्रबंधन ठीक नहीं है... नए कोच की क्षमताओं को पहले कभी परखा नहीं गया है... टीम के खिलाड़ियों में अनुशासन नहीं है... यह टीम जिस शहर की है, वहाँ के लोगों को इस खेल में ज़्यादा रुचि नहीं है... टीम के मुख्य खिलाड़ी चोटिल हैं... खिलाड़ी इतने प्रतिभावान नहीं हैं कि जीत हासिल कर सकें...।' वगैरह।

'तो ये वे संभावित कारण हैं, जो हमें कामयाब होने से रोक रहे हैं', डंगी ने अपने खिलाड़ियों से कहा। 'पर मैं आपको एक बात का विश्वास दिला सकता हूँ, हम बाकी सभी टीमों से ज़्यादा मेहनत करके दिखाएँगे।'

डंगी के अनुसार, उनकी योजना यह थी कि टीम का व्यवहार इस प्रकार परिवर्तित किया जाए कि हर खिलाड़ी आदतन अच्छा प्रदर्शन करने लगे। डंगी का मानना था कि बुकॉनीर्स टीम को न तो खेल की रणनीतियाँ सिखानेवाली मोटी-मोटी किताबें पढ़ने की ज़रूरत है और न ही विपक्षी टीम द्वारा मैदान पर रची जानेवाली सैकड़ों व्यूहरचनाओं को याद रखने की। उन्हें केवल चुनिंदा क्रियाओं को याद रखकर हर बार सर्वश्रेष्ठ ढंग से वे क्रियाएँ करनी हैं।

लेकिन फुटबॉल के खेल में महारत हासिल करना बहुत मुश्किल होता है। टैम्पा बे में डंगी के सहायक कोच हर्म एडवर्ड्स बताते हैं, 'फुटबॉल ऐसा खेल है, जिसके हर मैच में कोई न कोई खिलाड़ी गलती करता ही है।' आमतौर पर इसका कारण शारीरिक नहीं बल्कि मानसिक होता है। जब कोई खिलाड़ी बहुत ज़्यादा विचार करने लगता है या हिचकिचाने लगता है, तो गलतियाँ करने लगता है। इसलिए डंगी चाहते थे कि खेल के दौरान किसी भी खिलाड़ी को कोई निर्णय लेने की आवश्यकता ही न पड़े।

ऐसा करने के लिए खिलाड़ियों को अपनी आदतों का फंदा पहचानकर उनमें नई क्रियाओं का समावेश करना था।

अपनी योजना बनाने से पहले डंगी ने बुकॉनीर्स के खिलाड़ियों का खेल देखकर उनकी

मौजूदा आदतों का अध्ययन किया।

एक दिन सुबह के अभ्यास सत्र के दौरान डंगी चिल्लाए, ‘अब हम अपने अंडर-डिफेन्स पर काम करेंगे। नंबर 55 अपनी स्थिति बताओ।’

‘मेरी नज़र पीछे दौड़नेवालों और गार्ड करनेवाले खिलाड़ियों पर है’, बाहरी लाइनब्रेकर डेरेक ब्रुक्स ने जवाब दिया।

‘ज़रा और बारीकी से बताओ। तुम्हारी नज़रें किस बिंदु पर टिकी हैं?’

‘मैं गार्ड की क्रियाएँ देख रहा हूँ। मेरी नज़र गेंद मिलने के बाद क्वार्टरबैक के पैरों और उसकी कमर पर है। साथ ही मैं यह भी गौर कर रहा हूँ कि लाइन में खाली जगह कहाँ बन रही है ताकि यह पता लगा सकूँ कि क्वार्टरबैक गेंद को मेरी ओर फेंकेगा या कहीं और ले जाएगा’, ब्रुक्स ने जवाब दिया।

फुटबॉल के खेल में ऐसे दृश्यरूपी संकेतों को घशी यानी कुंजियाँ कहा जाता है और किसी भी मैच में ये संकेत बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। डंगी इसी में नयापन लेकर आए। वे इन कुंजियों का इस्तेमाल नई आदतों के इशारों के तौर पर करते थे। वे जानते थे कि बाहरी लाइनब्रेकर डेरेक ब्रुक्स कभी-कभी खेल के आरंभ में हिचकिचा जाता है। उसे कई चीज़ों पर ध्यान देना होता था, जैसे क्या गार्ड व्यूहरचना के बाहर जा रहा है... पीछे दौड़नेवाले के पैरों की स्थिति क्या है... वह आगे बढ़ने की सोच रहा है या पीछे जाने की...? इन सभी विचारों में उलझे रहने के कारण कभी-कभी डेरेक ब्रुक्स को निर्णय लेने में देरी हो जाती थी।

डंगी का उद्देश्य था कि ब्रुक्स को ये सारे निर्णय लेने से मुक्ति मिल जाए। एल्कोहलिक्स एनॉनमस की ही तरह डंगी ने भी ब्रुक्स के आदतन इशारों को कायम रखा। उन्होंने केवल ब्रुक्स की क्रियाओं को बदला, जो समय के साथ उसकी आदतों में शामिल हो गईं।

डंगी ने ब्रुक्स से कहा, ‘मैं चाहता हूँ कि तुम इन्हीं कुंजियों का इस्तेमाल करते रहो। शुरुआत में तुम अपना ध्यान सिर्फ पीछे दौड़नेवाले खिलाड़ी पर केंद्रित करो। बस, बिना कुछ सोचे केवल इतना करो। फिर अपने स्थान पर जाने के बाद क्वार्टरबैक को देखो।’

यह एक छोटा सा बदलाव था। ब्रुक्स की नज़र समान इशारों पर ही थी पर अब वह हड़बड़ी में हर ओर नहीं देखता था। डंगी ने ब्रुक्स को सभी इशारों को देखने का सही क्रम बताया। साथ ही, ब्रुक्स को कुंजियों के अनुसार प्रतिक्रिया का चुनाव करना भी सिखाया गया। इस योजना की विशेषता यह थी कि इसके चलते ब्रुक्स को मैदान पर किसी भी प्रकार का निर्णय लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। अब ब्रुक्स मैदान पर तेज़ गति से घूम सकता था क्योंकि उसका हर निर्णय उसकी स्वाभाविक प्रतिक्रिया बन चुका था। यही प्रतिक्रिया आगे चलकर उसकी आदत बन गई।

डंगी ने हर खिलाड़ी को इसी प्रकार के निर्देष दिए और कुछ चुनिंदा व्यूहरचनाओं में इन निर्देषों का पालन करते हुए लगातार अभ्यास भी कराया। डंगी द्वारा सिखाई गई इन आदतों को पक्का होने में लगभग एक साल का समय लगा। खेल-सत्र के शुरुआती दौर में उनकी टीम आसान से आसान मैच भी हार जाती थी। खेल समाचार लिखनेवाले पत्रकार सवाल करने लगे कि बुकॉनीर्स टीम मनोविज्ञानी नीम-हकीमों के चक्कर में अपना कीमती समय क्यों बरबाद कर रही है?

लेकिन धीरे-धीरे बुकॉनीर्स के खिलाड़ियों में सुधार नज़र आने लगा। आखिरकार डंगी द्वारा सिखाई गई क्रियाएँ मैदान पर सक्रिय होने लगीं और कारगर भी साबित हुईं। अगले खेल-सत्र में भी डंगी ही टीम के कोच बने रहे और उनके नेतृत्व में, बुकॉनीर्स टीम ने अपने पहले पाँच मैच में जीत हासिल की और पंद्रह वर्षों में यह टीम पहली बार प्ले-ऑफ में भी पहुँची। आखिरकार सन 1999 की डीवीज़न चैम्पियनशिप में उनकी टीम विजेता साबित हुई।

डंगी की कोचिंग पद्धति अब पूरे देश का ध्यान आकर्षित करने लगी। मृदुभाषी स्वभाव, धर्मनिष्ठा और काम व पारिवारिक जीवन में बढ़िया संतुलन बनाकर रखनेवाले डंगी जल्द ही खेल-मीडिया के चहेते बन गए। अब तो अखबारों में उनके जीवन के हर पहलू के बारे में कुछ न कुछ प्रकाशित होता रहता था। डंगी अपने दोनों बेटों, एरिक और जेमी को अभ्यास के दौरान स्टेडियम लाया करते थे। वे दोनों डंगी के ऑफिस में बैठकर पढ़ाई करते और लॉकर रूम में खिलाडियों के तौलिए उठाकर रखने का काम भी करते। डंगी की प्रसिद्धी ऐसी थी कि उनके जीवन की छोटी-छोटी चीज़ों पर भी लंबे-लंबे लेख लिखे गए। अब ऐसा लगने लगा था कि आखिरकार सफलता उनके दरवाजे तक आ पहुँची है।

बुकॉनीर्स सन 2000 और 2001 में भी प्ले-ऑफ तक पहुँचे। उनके प्रशंसक इतने बढ़ गए थे कि हर सप्ताह पूरे का पूरा स्टेडियम उनके प्रशंसकों से भरा रहता था। टी.वी. और रेडियो के खेल-प्रसारक अब बुकॉनीर्स टीम को सुपर-बॉल के प्रतिस्पर्धी के रूप में देखने लगे थे। डंगी और बुकॉनीर्स का सपना अब वास्तविकता में तब्दील होने लगा था।

***

एक शक्तिशाली टीम बनने के बाद भी बुकॉनीर्स के सामने एक नई समस्या आ खड़ी हुई। बुकॉनीर्स के खिलाड़ी खेल के दौरान कड़े अनुशासन का पालन करते थे, लेकिन जब भी कोई महत्वपूर्ण या तनावपूर्ण मौका आता, तो उनका प्रशिक्षण उनके काम नहीं आ पाता।

सन 1999 के खेल-सत्र में बुकॉनीर्स लगातार छह मैचों में विजयी हुए। लेकिन सत्र के अंत में वे सेंट लुईस रैम्स की टीम से हार गए और कॉन्फ्रेंस चैम्पियनशिप में अपनी जगह गँवा बैठे। सन 2000 में भी वे फिलाडेल्फिया ईगल्स से 21-3 से हारे थे, जिसके चलते उन्हें सुपर बॉल में प्रवेश नहीं मिल पाया था। इसके अगले वर्ष भी ठीक यही

हुआ। एक बार फिर वे फिलाडेल्फिया ईगल्स से हार गए। इस बार तो यह हार 31-9 से हुई थी। इसके चलते एक बार फिर वे सुपर बॉल में जगह नहीं बना सके।

इस बारे में स्पष्टीकरण देते हुए डंगी बताते हैं, ‘प्रशिक्षण के दौरान सभी खिलाड़ी कड़ी मेहनत करते थे और सब कुछ ठीक से होता था। लेकिन जैसे ही कोई महत्वपूर्ण मैच होता तो टीम के खिलाड़ी वह सब भूल जाते, जो उन्होंने प्रशिक्षण के दौरान सीखा था और इस तरह सारे किये-कराये पर पानी फिर जाता। मैच के बाद अक्सर खिलाड़ी आकर मुझसे कहते, ‘इस बार खेल थोड़ा कठिन था, इसीलिए मैं पुरानी आदतों पर निर्भर हो गया... या मुझे लगा, मुझे अपनी ओर से कुछ अलग करना चाहिए...।’ दरअसल समस्या यह थी कि यूँ तो वे लगभग हर बार मेरी बनाई योजनाओं पर भरोसा रखते थे, लेकिन जब किसी महत्वपूर्ण मैच में सबकुछ दाँव पर लगा होता, तो वे यह भरोसा कायम नहीं रख पाते थे और एक बार फिर से अपनी पुरानी आदतों के अनुसार ही खेलते थे।

बुकॉनीर्स टीम लगातार दो सालों से ऐन मौके पर आकर सुपर बॉल में जगह बनाने से चूक रही थी। सन 2001 का खेल-सत्र समाप्त होने के बाद टीम के जनरल मैनेजर ने डंगी को अपने घर बुलाया। डंगी ने मैनेजर के घर के सामनेवाली सड़क पर, ओक के पेड़ के नीचे अपनी गाड़ी पार्क की और वहाँ से चलकर मैनेजर के घर पहुँचे। इसके तीस सेकंड बाद उन्हें कोच की नौकरी से बरखास्त कर दिया गया।

अगले साल बुकॉनीर्स डंगी की पुरानी योजनाओं पर अमल करके सुपर बॉल जीत गए। डंगी ने उन खिलाड़ियों में जो आदतें विकसित की थीं, यह सब उन्हीं के बूते संभव हुआ था। डंगी के स्थान पर नौकरी पर रखे गए नए कोच ने उस वर्ष जीत हासिल करने के बाद बड़े गर्व से लिंबोरडी ट्रॉफी अपने हाथों में उठाई। यह सब डंगी ने अपने घर बैठकर टी.वी. पर देखा। तब तक डंगी अपने जीवन में इन सब चीज़ों से बहुत दूर जा चुके थे।

4

एक चर्च के अंदर करीब साठ लोग बैठे हुए थे। इनमें फुटबॉल खेलनेवाले खिलाड़ियों की माताएँ, दोपहर के भोजन के लिए निकले वकील, कसे हुए जींस पहने हिप्पी और ऐसे बुजुर्ग शामिल थे, जिनके शरीर पर गुंदे टैटू का रंग हल्का पड़ता जा रहा था। ये सारे लोग अपने सामने खड़े एक इंसान का भाषण सुन रहे थे। नीली आँखोंवाले उस इंसान का पेट काफी बाहर निकला हुआ था और उसने गले में टाई पहन रखी थी। उसे देखकर लगता था, मानों वह कोई नेता हो, जिसे अगले चुनाव में जीतने का पूरा भरोसा हो।

‘मेरा नाम जॉन है और मैं एक शराबी हूँ’, उसने बोलना शुरू किया।

‘हेलो जॉन!’ सभी ने उसका अभिवादन किया।

‘अपनी शराब की लत छोड़ने के लिए मैंने पहली बार सहायता लेने का निर्णय तब लिया, जब एक दुर्घटना में मेरे बेटे के हाथ की हड्डी टूट गई’, मंच पर खड़े जॉन ने अपने सामने

बैठे लोगों से कहा। अपने ऑफिस में काम करनेवाली एक महिला के साथ मेरा प्रेम संबंध था, लेकिन एक दिन उसने मुझसे कहा कि वह ये रिश्ता खत्म करना चाहती है। उसकी यह बात सुनकर मुझसे रहा नहीं गया और मैं ऑफिस से बाहर निकलकर एक शराबखाने में चला गया। वहाँ मैंने वोदका के दो पेग पिए और वापस ऑफिस लौटकर अपना काम करने लगा। दोपहर के भोजन के लिए मैं अपने एक मित्र के साथ 'चिलीज' में गया और वहाँ हम दोनों ने एक-एक बीअर पी। इसके बाद लगभग दो बजे मैं एक अन्य मित्र के साथ ऐसे शराबखाने में गया, जहाँ हैप्पी आवर्स चल रहे थे। मेरी पत्नी दूसरी महिला के साथ मेरे प्रेम संबंधों के बारे में नहीं जानती थी। उस दिन मेरे बेटे को स्कूल से लाने का जिम्मा मेरा था। मैं गाड़ी में बैठा और स्कूल से अपने बेटे को लेकर घर की ओर जाने लगा। घर जानेवाले उस रास्ते से मैं हज़ारों बार गुजर चुका था। मुझे उस रास्ते का एक-एक हिस्सा याद था। पर उस दिन उस रास्ते के अंत में लगे स्टॉप के चिन्हवाला बोर्ड मुझे ठीक समय पर दिखाई नहीं दिया। अचानक बोर्ड नज़र आने पर मैंने ज़ोर से ब्रेक लगाया लेकिन मेरी गाड़ी संतुलन खोकर फुटपाथ पर चली गई और जाकर बोर्ड से टकरा गई। मेरे बेटे सैम ने सीट बेल्ट नहीं लगा रखा था। जिसके चलते अचानक ब्रेक लगने के कारण वह सामने के काँच की ओर तेजी से उछला और चोट खा बैठा। उसके हाथ की हड्डी टूट गई। उसकी नाक पर भी चोट लगी थी, जिससे गाड़ी के डैशबोर्ड पर खून फैल गया था। वह इतनी ज़ोर से उछला था कि सामनेवाले काँच में दरारें आ गई थीं। इस घटना से मैं बहुत घबरा गया। मैंने तय किया कि मुझे शराब छोड़नी होगी और इसके लिए किसी अनुभवी इंसान की सहायता लेनी होगी।'

'इस घटना के बाद मैं नशा मुक्ति केंद्र में भर्ती हुआ। वहाँ से बाहर निकलने के बाद करीब तेरह महीनों तक सब कुछ अच्छी तरह चला। मैं एल्कोहल एनॉनमस की मीटिंग्स् में भी अक्सर जाता था और मुझे भरोसा होने लगा था कि मैंने अपनी लत पर नियंत्रण पा लिया है। फिर आखिरकार मुझे लगने लगा कि मैं इतना भी कमजोर नहीं हूँ कि एल्कोहल एनॉनमस की मीटिंग्स् के बिना अपनी लत को काबू में न रख सकूँ, तो फिर मुझे हर दो-चार दिन में शराबियों के साथ मीटिंग करने की क्या ज़रूरत है? बस फिर क्या था, मैंने इन मीटिंग्स् में जाना बंद कर दिया।'

'इसके बाद लगभग दो वर्षों तक मैंने शराब को छुआ तक नहीं। फिर एक दिन जब मैं ऑफिस में काम कर रहा था, तो मेरी माँ का फोन आया। वे डॉक्टर से मिलने गई थीं और घर वापस आ रही थीं। माँ ने मुझे बताया कि उन्हें कैंसर हो गया है। डॉक्टर का कहना था कि हालाँकि उनका इलाज संभव है, पर उनके शरीर में कैंसर इस हद तक फैल चुका था कि अब यह कहना मुश्किल था कि वे पूरी तरह ठीक हो पाएँगी या नहीं। उनकी बात सुनकर मुझे गहरा झटका लगा और मुझसे रहा नहीं गया। मैं फौरन ऑफिस छोड़कर शराबखाने चला गया। अगले दो वर्षों तक मैं एक बार फिर इस लत का गुलाम रहा। इस दौरान मेरी पत्नी ने मुझसे तलाक लेने का निर्णय ले लिया और वह अलग रहने लगी। तब तक मेरे एक मित्र ने मुझे ड्रग्स लेना भी सिखा दिया था। मैं हर दोपहर अपने ऑफिस में कोकेन की एक लाइन लेता और पाँच मिनट बाद उसका असर महसूस होते ही एक और लाइन ले लेता था।'

‘मेरी पत्नी अलग रहने लगी थी। इसलिए एक बार फिर मेरे बेटे को स्कूल से वापस लाने का जिम्मा मुझ पर था। एक दिन जब मैं उसे लेने जा रहा था, तो मुझे लग रहा था कि मानो मैं इस दुनिया का राजा हूँ। अगले चौक से मैंने अपनी गाड़ी मोड़ी, पर सामने लगे सिग्नल पर मेरी नज़र नहीं पड़ी। अचानक एक ट्रक आकर मेरी गाड़ी से टकराई। मेरी गाड़ी सड़क पर लहराते हुए पलट गई। शायद मेरी किस्मत अच्छी थी कि मुझे एक खरोंच तक नहीं आई इसलिए मैं फौरन गाड़ी से बाहर निकला और उसे सीधा करने का प्रयत्न करने लगा। मैंने सोचा, बेहतर होगा कि पुलिस के आने से पहले मैं गाड़ी सीधी करके वहाँ से निकल जाऊँ। लेकिन मेरी योजना सफल नहीं हो पाई। ज़ल्द ही पुलिस वहाँ आ गई और उन्होंने मुझे नशे में गाड़ी चलाने के जुर्म में गिरफ्तार कर लिया। उन्होंने मुझे दिखाया कि मेरी गाड़ी की पैंसेजर सीटवाला हिस्सा पूरी तरह तबाह हो चुका था। मुझे एहसास हुआ कि अगर मेरा बेटा सैम इस वक्त मेरे साथ होता, तो शायद इस हादसे में उसकी मौत हो गई होती।’

‘इस हादसे के बाद मैं दोबारा एल्कोहल एनॉनमस की मीटिंग्स् के लिए जाने लगा। मेरे स्पॉन्सर ने मुझे बताया कि भले ही मुझे ऐसा लगे कि मैंने अपनी लत पर पूरी तरह काबू पा लिया है, फिर भी मुझे मीटींग्स् में आते रहना चाहिए। क्योंकि खुद को दिव्य शक्ति के प्रति समर्पित किए बगैर मैं अपनी लत पर काबू नहीं पा सकता। मैं नास्तिक हूँ इसलिए मुझे अपने स्पॉन्सर की ये बातें हज़म नहीं हुई। पर अब मैं समझ गया हूँ कि अगर मैंने खुद को नहीं बदला, तो एक न एक दिन मैं अपने बच्चों की मृत्यु का कारण ज़रूर बन जाऊँगा। इसलिए मैंने मीटिंग्स् में जाना फिर से शुरू कर दिया। मैंने खुद में यह विश्वास जगाया कि इस संसार में कुछ दिव्य शक्तियाँ होती हैं। मैंने पाया कि इसके बाद मेरा यह विश्वास काम करने लगा। मैं नहीं जानता कि यह दिव्य शक्ति ईश्वर है या कुछ और, लेकिन इन शक्तियों ने मेरी मदद की है। मैंने पिछले सात वर्षों से शराब नहीं पी है और मुझे सचमुच अपनी इस सफलता पर आश्चर्य होता है। ऐसा नहीं है कि इस दौरान मुझे कभी शराब पीने की इच्छा नहीं हुई। कई बार सुबह उठकर मुझे ऐसा लगता था कि आज मैं शराब पीए बगैर नहीं रह पाऊँगा। पर जब भी ऐसा होता तो मैं खुद को उस दिव्य शक्ति के हवाले कर देता। इसके साथ ही मैं अपने स्पॉन्सर को फोन करके उससे बातचीत भी करता। हमारे बीच आमतौर पर शराब के बारे में कोई बात नहीं होती थी। मैं तो बस उससे अपनी जिंदगी, अपनी शादी और नौकरी जैसे विषयों पर बात करता। कुछ ही देर बात मुझे ठीक लगने लगता और शराब की तलब खत्म हो जाती।’

माना जाता था कि ‘एल्कोहल एनॉनमस’ की सफलता के पीछे का कारण यह है कि वे लत से ग्रस्त लोगों की आदतों को एक बार फिर से प्रोग्राम कर देते हैं। लेकिन लगभग एक दशक पहले जॉन जैसे लोगों की कहानियों से यह मान्यता कमजोर पड़ने लगी और शोधकर्ताओं ने माना कि आदत के फंदे में नई क्रिया का समावेश करने से आदतें बदली ज़रूर जा सकती हैं और कई लोगों को इसका फायदा भी हुआ था, पर बात यहीं खत्म नहीं होती। क्योंकि ऐसे लोगों के जीवन में जब भी कोई तनावपूर्ण स्थिति आती, तो भले ही उनकी आदत बदली जा चुकी हो, पर फिर भी वे अपने पुराने ढर्रे पर लौट आते हैं। जैसे माँ को कैंसर होने की बात सुनते ही जॉन दोबारा शराब की ओर मुड़ गया। इसी तरह

वैवाहिक जीवन में तनाव के कारण भी बहुत से लोग दोबारा अपनी पुरानी आदतों की ओर लौट जाते हैं। यह बात स्पष्ट होते ही शोधकर्ताओं को यह सवाल सताने लगा कि यदि आदत-परिवर्तन सामान्य परिस्थितियों में इतनी अच्छी तरह काम करता है, तो तनाव के समय यह कारगर सिद्ध क्यों नहीं होता? शोधकर्ताओं ने इस प्रश्न का जवाब जानने के लिए शराब की लत से ग्रस्त अनेक लोगों का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि नई क्रियाओं को स्थाई आदतों में बदलने के लिए एक बेहद महत्वपूर्ण चीज़ की ज़रूरत पड़ती है।

कैलिफोर्निया के 'एल्कोहल रिसर्च ग्रुप' में शोधकर्ताओं के एक दल ने इंटरव्यू के दौरान सभी शराबियों में एक समान पैटर्न पाया। सारे शराबी बार-बार एक ही बात दोहराते थे। ऐसे में आदत के फंदे से जुड़े इशारे और इनाम को पहचानना आवश्यक था, लेकिन एक अन्य महत्वपूर्ण चीज़ थी, जिसके बगैर नई क्रियाएँ आदत में तब्दील होकर अपनी जड़ें नहीं जमा सकती थीं।

उन शराबियों के अनुसार यह महत्वपूर्ण तत्व था, ईश्वर।

शोधकर्ताओं को शराबियों का यह जवाब कतई पसंद नहीं आया। क्योंकि विज्ञान के प्रयोगों से ईश्वर और अध्यात्म का परीक्षण करना संभव नहीं है। धर्मनिष्ठ होने के बावजूद चर्च में ऐसे अनेकों लोग मिलेंगे, जो शराब पीते रहते हैं। लेकिन अपने इंटरव्यू में अधिकतर शराबी बार-बार आध्यात्मिकता का जिक्र करते रहे। फिर सन 2005 में कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी, बर्कले, ब्राउन यूनिवर्सिटी और द नेशनल इंस्टीटच्यूट ऑफ हेल्थ ने आपस में संबद्ध होकर एक नया प्रयोग शुरू किया। इनके वैज्ञानिकों का एक दल शोध के लिए शराबियों का इंटरव्यू लेने लगा। इसमें वे शराबियों से सभी प्रकार के धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों पर बातचीत करते थे। इसके बाद शोधकर्ताओं ने इन इंटरव्यू का अध्ययन भी किया ताकि वे यह जान सकें कि शराब का सेवन न करने और धार्मिक मान्यताओं में कोई पारस्पारिक संबंध है या नहीं।

इस अध्ययन में शोधकर्ताओं को एक पैटर्न नज़र आया। उन्होंने पाया कि केवल नई क्रिया द्वारा आदत परिवर्तन करनेवाले शराबियों में से अधिकतर लोग तनावपूर्ण परिस्थिति आते ही दोबारा शराब पीने लगते हैं।

पर ब्रुकलिन निवासी जॉन की तरह जो लोग खुद को दिव्य शक्ति के प्रति समर्पित कर देते थे, जिन्हें विश्वास था कि संसार में दिव्य शक्ति का अस्तित्व होता है, वे अक्सर जीवन के तनावों का सामना करने में सफल हो जाते थे और इसके लिए उन्हें शराब की मदद नहीं लेनी पड़ती थी।

शोधकर्ताओं ने पाया कि वास्तव में यहाँ बात ईश्वर की नहीं बल्कि विश्वास की थी। जब ये लोग विश्वास करने लगते, तो यह उनके जीवन के हर पहलू पर काम करने लगता। इससे उनका विश्वास इतना दृढ़ हो जाता कि वे सचमुच खुद को बदल सकते हैं।

विश्वास वह तत्व है, जिसकी मदद से आदत के फंदे में शामिल की गई नई क्रियाएँ, नई आदत में रूपांतरित होकर मनुष्य का स्वभाव बन जाती हैं।

यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू मेक्सिको के शोधकर्ता टोनीगन का कहना है कि 'आदतों के बारे में हर रोज़ नई-नई बातें सामने आ रही हैं। एक साल पहले शायद मैं आपसे यह नहीं कह पाता, लेकिन अब ऐसा लगता है कि विश्वास एक महत्वपूर्ण कड़ी है। यह ज़रूरी नहीं है कि आपको ईश्वर के अस्तित्व में ही विश्वास हो। ज़रूरी तो बस यह है कि आपको विश्वास हो कि एक दिन सब कुछ ठीक हो जाएगा और जो भी होगा, अच्छा ही होगा।'

'जब किसी शराबी को शराब छोड़ने के लिए नई क्रियाएँ सिखाई जाती हैं, तो उन क्रियाओं से शराब पीने का कारण खत्म नहीं हो जाता। इसके बाद भी शराबी को अपने जीवन में कभी न कभी बुरे समय का सामना करना पड़ता है। ऐसे में किसी भी प्रकार की नई क्रिया उसे यह भरोसा नहीं दिला सकती कि सब ठीक हो जाएगा। असली बदलाव तो तब आता है, जब शराबी को पूरा विश्वास हो कि शराब के बिना भी वह बुरे समय का सामना कर सकता है।'

एल्कोहल एनॉनमस की बारह कदमों की योजना का मुख्य तत्व विश्वास ही है। इस संगठन की मीटिंग्स में बार-बार अपना विश्वास बनाए रखने पर ज़ोर दिया जाता है। एल्कोहल एनॉनमस लोगों को अपनी योजना पर और खुद पर विश्वास करने का प्रशिक्षण देता है। यहाँ लोगों को यह प्रशिक्षण दिया जाता है कि जब तक सब कुछ असल में ठीक न हो जाए, तब तक यह विश्वास रखें कि आज नहीं तो कल, सब ठीक हो जाएगा।

'एल्कोहल रिसर्च ग्रुप के वरिष्ठ वैज्ञानिक ली एन. कैस्कुटस कहते हैं, 'एक समय ऐसा आता है जब एल्कोहल एनॉनमस की मीटिंग्स् में जानेवाला इंसान अपने चारों ओर बैठे लोगों को देखकर सोचता है कि अगर ये सारे लोग शराब छोड़ सकते हैं, तो भला मैं क्यों नहीं छोड़ सकता? लोगों के समूह में बैठकर अपने अनुभव बाँटने की प्रक्रिया में अनोखी शक्ति होती है। अकेला इंसान विपरीत परिस्थितियों में खुद पर विश्वास रखने में नाकाम हो सकता है, पर जब वह एक समूह का हिस्सा होता है, तो विश्वास रखना आसान हो जाता है। एक समूह मिलकर किसी भी अकेले इंसान की गलत धारणाओं और मान्यताओं को समाप्त कर सकता है। समूह से विश्वास पैदा होता है।'

उस दिन एल्कोहल एनॉनमस की मीटिंग समाप्त होने के बाद जब जॉन वहाँ से निकल रहा था, तो मैंने उससे पूछा, 'तुम पहले भी एल्कोहल एनॉनमस के सदस्य रह चुके हो, पर फिर भी तुमने दोबारा शराब पीना शुरू कर दिया था। लेकिन दूसरी बार यहाँ लौटने पर ऐसा क्या हुआ, जो तुम अपनी लत पर काबू पाने में सफल हो गए?' इस सवाल के जवाब में उसने मुझे बताया, 'ट्रक से टकरानेवाली उस दुर्घटना के बाद मैं दोबारा यहाँ मीटिंग्स् में आने लगा। एक दिन मीटिंग समाप्त होने के बाद कुर्सियाँ समेटकर रखने के लिए उन्हें कुछ लोगों की मदद की ज़रूरत पड़ी। मैंने मदद करने के लिए हाथ उठाया। यह कोई

बड़ा काम नहीं था और केवल पाँच मिनट में ही सारी कुर्सियाँ समेटकर एक कोने में रख दी गईं। लेकिन उन पाँच मिनटों में मैं सिर्फ अपने बारे में नहीं सोच रहा था बल्कि कुछ ऐसा कर रहा था, जो दूसरों के लिए महत्वपूर्ण था। इससे मुझे एक किस्म की खुशी मिली। मुझे लगता है कि यह भावना ही मुझे एक नए रास्ते पर ले आई।'

'पहली बार मीटिंग में आते समय मैं इसके लिए पूरी तरह तैयार नहीं था। लेकिन मीटिंग में शामिल होने के बाद जब मैं घर लौटा तो मैं विश्वास करने के लिए तैयार था।'

5

डंगी को बुकॉनीर्स के कोच के पद से बर्खास्त हुए एक सप्ताह हो चुका था। एक दिन उन्हें अपने फोन की आंसरिंग मशीन पर करीब पंद्रह मिनट लंबा एक मैसेज मिला। यह मैसेज इंडियानापेलिस कोल्ट्रस टीम के मालिक का था। उनकी टीम के पास पेयटॉन मैनींग नामक खिलाड़ी था, जो एन.एफ.एल. का सर्वश्रेष्ठ क्वार्टरबैक माना जाता था, इसके बावजूद उस वर्ष कोल्ट्रस टीम का प्रदर्शन बहुत ही खराब रहा था। टीम के मालिक ने डंगी से कहा कि 'वह बार-बार हार का सामना करके थक चुका है और अब उसे डंगी की मदद चाहिए।' डंगी इंडियानापेलिस पहुँच गए और कोल्ट्रस टीम के प्रधान कोच का पद संभाल लिया।

डंगी ने वहाँ जाकर भी उसी मूलभूत योजना को लागू किया। उन्होंने कोल्ट्रस टीम के खिलाड़ियों को उनके पुराने इशारों की मदद से नई क्रियाओं को आदत बनाने के लिए प्रशिक्षित किया। इसके बाद पहले खेल-सत्र में कोल्ट्रस ने 10-6 से जीत हासिल की और टीम को प्ले-ऑफ के लिए चुना गया। इसके अगले सत्र में वे 12-4 से जीते, लेकिन केवल एक खेल के कारण सुपर-बॉल में प्रवेश नहीं पा सके। डंगी एक बार फिर प्रसिद्ध होने लगे। देशभर के अखबारों और टी.वी. चैनलों में उनके चर्चे होने लगे। डंगी की प्रसिद्धी का आलम यह था कि देश के कोने-कोने से लोग उसी चर्च में प्रार्थना के लिए आने लगे, जिसमें डंगी प्रार्थना करते थे। डंगी के बेटे भी कोल्ट्रस के लॉकर रूम और मैदान के किनारे अक्सर नज़र आते रहते थे। वर्ष 2005 में डंगी के बड़े बेटे जेमी ने लोरिडा के एक कॉलेज में दाखिला लिया।

हालाँकि डंगी को सफलता तो मिल रही थी, लेकिन पुरानी समस्या कायम थी। कोल्ट्रस टीम ने पूरे खेल-सत्र में अनुशासन बरकरार रखा और अच्छा खेल दिखाया, पर प्ले-ऑफ का समय आते ही उन पर तनाव हावी हो गया और वे डंगी द्वारा सिखाई आदतों को अचानक भूल गए।

डंगी के अनुसार, 'पेशेवर फुटबॉल में सफल होने के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ है, विश्वास। कोल्ट्रस टीम विश्वास बनाकर रखना तो चाहती थी, पर जब भी तनाव बढ़ता था तो इसके खिलाड़ी वापस अपनी पुरानी आदतों की ओर मुड़ जाते थे।'

कोल्ट्रस ने वर्ष 2005 के नियमित खेल-सत्र के 12 मैचों में जीत हासिल की और 2

मैचों में उन्हें हार का सामना करना पड़ा। कोल्ट्रस के इतिहास में यह उनका सबसे अच्छा साल रहा।

फिर एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटी।

क्रिसमस के तीन दिन पहले देर रात टोनी डंगी के घर का फोन बजा। उनकी पत्नी को लगा कि शायद टीम के किसी खिलाड़ी का फोन होगा। इसलिए उन्होंने फोन उठाकर डंगी के हाथ में पकड़ा दिया। पर फोन किसी खिलाड़ी का नहीं बल्कि एक अस्पताल की नर्स का था। उस नर्स ने डंगी को बताया कि 'आपके बेटे जेमी को आज शाम अस्पताल लाया गया था। उसकी गर्दन पर गहरे निशान थे। जेमी की गर्लफ्रेंड को वह अपने अपार्टमेंट में बेल्ट के सहारे छत से लटका हुआ मिला। उसे तुरंत अस्पताल ले जाया गया, जहाँ उसे बचाने की सारी कोशिशें नाकाम रहीं और उसकी मृत्यु हो गई।'

डंगी का बेटा जेमी मर चुका था।

क्रिसमस के दिन पादरी डंगी के घर आए। उन्होंने बताया कि 'तुम सबकी जिंदगी अब पहले जैसी कभी नहीं हो पाएगी। लेकिन फिलहाल तुम जो भी महसूस कर रहे हो, वह समय के साथ गुज़र जाएगा।'

इस घटना से डंगी और उनके परिवार को गहरा सदमा पहुँचा। अब डंगी को मानसिक रूप से इस स्थिति से निकलने के लिए कहीं और मन लगाने की ज़रूरत थी। उनकी पत्नी और टीम के खिलाड़ियों ने उन्हें काम पर लौटने के लिए प्रोत्साहित किया। बेटे के क्रियाकर्म के कुछ ही दिनों बाद डंगी एक बार फिर मैदान पर लौट आए। आगे चलकर उन्होंने अपनी किताब में लिखा, 'उन सबके प्यार और सहारे ने मुझे भावविभोर कर दिया था। जब भी कठिन समय आया, एक टीम के तौर पर हम सबने एक-दूसरे को सहारा दिया। उस समय मुझे उन सबके सहारे की सबसे ज़्यादा ज़रूरत थी।'

उस वर्ष उनकी टीम पहले प्ले-ऑफ मैच में हार गई और उस खेल-सत्र से बाहर हो गई। उस दौर में टीम का हिस्सा रह चुके एक खिलाड़ी ने मुझे बताया कि 'डंगी को उस दुर्भाग्यपूर्ण घटना से गुज़रते देखकर हम सबके अंदर कुछ बदल सा गया था। इस दु:खदाई समय में हम सब किसी न किसी तरह अपने कोच की मदद करना चाहते थे।'

यह कहना गलत होगा कि एक जवान बेटे की मौत से फुटबॉल के खेल पर नकारात्मक असर पड़ सकता है। हालाँकि डंगी हमेशा कहते थे कि उनके लिए उनके परिवार से अधिक महत्वपूर्ण और कुछ नहीं है, पर कोल्ट्रस के खिलाड़ी बताते हैं कि जेमी की मौत के बाद जब वे अगले खेल-सत्र की तैयारी कर रहे थे, तो एक बड़ा बदलाव आया। फुटबॉल कैसे खेला जाए, अब इसे लेकर डंगी के पास एक अलग ही किस्म का दृष्टिकोण था। टीम ने खुद को पूरी तरह डंगी के हवाले कर दिया और आखिरकार खिलाड़ियों में विश्वास बढ़ गया।

नाम न लिखे जाने की शर्त पर कुछ खिलाड़ी उस समय के बारे में बात करने को तैयार हो गए। उनमें से एक ने बताया कि 'उस समय खेल-सत्र के दौरान मेरे दिमाग में अक्सर सैलरी और कॉन्ट्रैक्ट के विचार चलते रहते थे, पर जब कोच डंगी अपने बेटे का क्रियाकर्म करके मैदान पर लौटे तो उनका दु:ख कम करने के लिए मैं कुछ भी करने को तैयार था। मैंने खुद को पूरी तरह उनके हवाले कर दिया।'

एक अन्य खिलाड़ी ने बताया कि 'कुछ लोगों को दूसरों को गले लगाना पसंद होता है पर मैं उन लोगों में से नहीं हूँ। मैंने तो पिछले दस सालों में कभी अपने बेटों तक को गले नहीं लगाया। लेकिन जब कोच डंगी लौटकर आए तो मैं बहुत देर तक उन्हें गले से लगाए रहा। मैं बस उन्हें यह महसूस कराना चाहता था कि इस दु:ख की घड़ी में वे अकेले नहीं हैं, हम सब उनके साथ हैं।'

जेमी की मौत के बाद टीम के खेलने के तरीके में बदलाव आया। अब टीम के खिलाड़ी डंगी की योजना पर पूरी तरह भरोसा करने लगे। मैदान पर अभ्यास करने से लेकर सन 2006 का खेल-सत्र शुरू होने तक टीम कोल्ट्स ने हर मैच बहुत ही ध्यान लगाकर और अनुशासित होकर खेला।

एक अन्य खिलाड़ी ने कहा, 'फुटबॉल की अधिकतर टीमें असल में टीम की तरह नहीं होतीं। उनमें समूह-भावना नहीं होती। वे बस एक-दूसरे के साथ काम कर रहे होते हैं। लेकिन उस साल हम एक असली टीम बने, जो वाकई अद्भुत अनुभव था। कोच ने एक चिंगारी सी लगाई थी, पर वह सिर्फ उन्हीं तक सीमित नहीं थी। उनके वापस आने के बाद ऐसा लगा जैसे हम सब एक-दूसरे पर विश्वास करने लगे हैं। ऐसा लग रहा था जैसे अब हम एक साथ खेलना सीख चुके हैं।'

कोल्ट्स टीम को अपनी जीतने की काबिलियत पर और डंगी की योजनाओं पर विश्वास तब हुआ, जब एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटी। पर ऐसा विश्वास कई बार बिना किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बगैर भी पैदा हो सकता है।

वर्ष 1994 में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में एक शोध किया गया। इसमें ऐसे लोगों का अध्ययन किया गया था, जो अपने जीवन को पूरी तरह से बदलने में सक्षम थे। शोधकर्ताओं ने पाया कि इनमें से कुछ लोग ऐसे थे, जिन्होंने किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बाद अपनी आदतों को पूरी तरह बदला और एक नए रूप में लोगों के सामने आए। आमतौर पर इनमें तलाक या कोई जानलेवा बीमारी होने जैसी घटनाएँ शामिल थीं। कुछ लोगों ने अपने किसी करीबी दोस्त या रिश्तेदार को किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना से गुज़रते देखकर यह बदलाव किया था। जैसे कोल्ट्स के खिलाड़ियों ने डंगी को देखकर खुद को बदल लिया।

हालाँकि अनेकों लोग बगैर किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना के ही अपने अंदर बड़े और बेहतर परिवर्तन लाने में कामयाब हुए हैं। ये लोग स्वयं को बदलने में इसलिए सफल हो सके क्योंकि वे ऐसे किसी न किसी समूह का हिस्सा थे, जो स्वयं को बदलना आसान बना देता

है। शोधकर्ता से बातचीत के दौरान एक महिला ने बताया कि उसकी जिंदगी तब बदली, जब उसे एक मनोविज्ञान की कक्षा में जाने का मौका मिला। वहाँ उसे कुछ बेहतरीन लोग मिले। उस समूह का हिस्सा बनने के बाद उसके लिए खुद को बदलना बहुत आसान हो गया। एक महिला के अनुसार, 'उस समूह ने सचमुच मेरे लिए संभावनाओं का दरवाजा खोल दिया। अब मैं पुरानी बातों को और नहीं सह सकती थी, अब मैं पूरी तरह बदल चुकी थी।' एक अन्य इंसान ने बताया कि 'मैं बहुत ही शर्मीले स्वभाव का था। लेकिन मुझे ऐसे दोस्त मिले, जिनके सामने भी मैं अपने अंदर सुधार लाने की कोशिश कर सकता था। वे मेरा आँकलन करते थे, पर मुझे नीचा नहीं दिखाते थे। पहले जब मैं कहीं बाहर जाता था, तो आत्मविश्वास से भरा होने का नाटक करता था पर अंदर से मुझे ऐसा लगता, जैसे मेरे अंदर ज़रा भी आत्मविश्वास नहीं है। पर अपने दोस्तों के समूह के साथ अभ्यास कर अब मैं सचमुच आत्मविश्वास से भरपूर महसूस करता हूँ। अब मुझे नाटक नहीं करना पड़ता।'

जब लोग किसी ऐसे समूह का हिस्सा बन जाते हैं, जहाँ परिवर्तन संभव लगता है, तो उनके अंदर परिवर्तन की सच्ची आस पैदा हो जाती है। यह कोई ज़रूरी नहीं है कि खुद में मूलभूत परिवर्तन लानेवाले लोगों के जीवन में कोई न कोई जिंदगी बदलनेवाली घटना घटी ही हो। कई बार समूह के माध्यम से इंसान के अंदर परिवर्तन लाने का विश्वास जगाया जा सकता है और कई बार ऐसा भी हो सकता है कि यह समूह सिर्फ दो लोगों का एक जोड़ा हो।

एक महिला ने शोधकर्ताओं को बताया, 'मेरा जीवन शौचालय साफ करने के काम ने बदला।' आप जानना चाहेंगे यह कैसे संभव हुआ? क्योंकि वह अपने इस काम के दौरान कई सप्ताहों तक अपने सहकर्मियों के साथ इस विषय पर चर्चा कर सकी कि उसे अपने पति को तलाक देना चाहिए या नहीं।

इस अध्ययन से जुड़े एक मनोविज्ञानी टॉम हेथरटन कहते हैं, 'परिवर्तन तब संभव होता है, जब हम दूसरों की आँखों में उसकी झलक देख लेते हैं क्योंकि तब हमें यह विश्वास हो जाता है कि परिवर्तन संभव है।'

हम यह नहीं जानते कि विश्वास कैसे काम करता है। यह कोई नहीं बता सकता कि उस महिला को मनोविज्ञान की कक्षा में मिले समूह ने अलग नज़रिया कैसे दिया या डंगी के बेटे की मौत के बाद कोल्ट्स की टीम अचानक एकजुट होकर कैसे खेलने लगी। अनेकों लोग अपने दोस्तों से अपने दु:खी वैवाहिक जीवन के बारे में बातचीत करते हैं, लेकिन वे सब तलाक नहीं लेते। ऐसी कितनी ही टीमें होंगी जिन्होंने अपने कोच को किसी दु:खदाई समय से गुजरते देखा होगा पर हर टीम में बदलाव नहीं आता।

लेकिन हम यह जानते हैं कि लोगों को इस बात पर विश्वास होना चाहिए कि परिवर्तन संभव है, तभी वे आदतों को परिवर्तित करने में सफल हो सकते हैं। एल्कोहल एनॉनमस जैसे समूह इंसान को यही विश्वास रखना सिखाते हैं। यहाँ लोग एक साथ इकट्ठा होकर

एक-दूसरे की सहायता करते हैं। यही वह प्रक्रिया है, जिसने एल्कोहल एनॉनमस को इतना सफल संगठन बनाया है। क्योंकि समूह में रहने से विश्वास करना आसान हो जाता है।

***

जेमी की मृत्यु के दस महीनों बाद सन 2006 का फुटबॉल सत्र शुरू हुआ। इसमें कोल्ट्रस का प्रदर्शन अद्वितीय रहा। उन्होंने नौ मैच जीतकर 12-4 के स्कोर के साथ इस सत्र का अंत किया। इसी सत्र में उन्होंने अपना पहला प्ले-ऑफ जीता और बॉल्टीमोर रेवन्स की टीम को हराकर डीवीज़नल का खिताब भी जीता। अब वे कॉन्फ्रेंस चैम्पियनशिप खेल रहे थे और उस सुपर-बॉल से बस एक कदम दूर थे, जिसमें डंगी को आठ बार सिर्फ असफलता हाथ लगी थी।

यह मैच 21 जनवरी 2007 को हुआ। विपक्षी टीम ने इससे पहले भी दो बार कोल्ट्रस को हराकर उनका सुपर-बॉल में जगह बनाने का सपना नेस्तनाबूत किया था। यह टीम थी, न्यू इंग्लैड पेट्रीऑट्स ।

हालाँकि कोल्ट्रस ने खेल की शुरुआत दमदार ढंग से की, लेकिन पहला हाफ-टाइम आते-आते टीम के रूप में उनका प्रदर्शन फिर एक बार कमजोर पड़ने लगा। अधिकतर खिलाड़ी या तो गलती करने की चिंता से ग्रस्त थे या सुपर-बॉल में जाने को लेकर इतने उत्साही हो गए थे कि खेल पर ध्यान केंद्रित नहीं कर पा रहे थे। वे अपनी आदतों पर निर्भर न रहकर हर चीज़ से पहले सोच-विचार करने लगे। गेंद को ठीक से न खेल पाने का नतीजा टर्नओवर के रूप में सामने आया। एक बार जब पेटन मैनिंग नामक खिलाड़ी ने गेंद को आगे पास किया, तो विपक्षी टीम के खिलाड़ी ने उसे फौरन रोक लिया और गेंद को टचडाउन के लिए वापस ले आया। विपक्षी टीम का स्कोर बढ़ रहा था और वे 21-3 से आगे चल रहे थे। एन.एफ.एल. के आज तक के इतिहास में कोई भी टीम किसी मैच में इतना पीछे होने के बाद उलटफेर करने में सफल नहीं हुई थी। हर किसी को डंगी की टीम की एक और हार साफ नज़र आ रही थी।

तभी हाफ-टाइम हुआ और लॉकर रूम में बैठे कोल्ट्रस के खिलाड़ियों को डंगी ने एक जगह इकट्ठा होने का निर्देश दिया। उन्होंने कमरे का दरवाजा बंद कर दिया, इसके बावजूद स्टेडियम में बैठे दर्शकों का शोर अंदर तक सुनाई दे रहा था। कमरे में सारे खिलाड़ी चुपचाप बैठे थे। डंगी ने अपने खिलाड़ियों की ओर देखा।

‘तुम सबको विश्वास रखना होगा,’ उन्होंने खिलाड़ियों का हौसला बढ़ाते हुए कहा।

‘हम सब 2003 में भी इस स्थिति का सामना कर चुके हैं। यहाँ तक कि विपक्षी टीम भी वही है। तब भी हम केवल एक यार्ड के कारण जीत हासिल करने से चूक गए थे। केवल एक यार्ड से! लेकिन इस बार नहीं। कमर कस लो क्योंकि इस बार बाजी सिर्फ हमारी होगी। अब जीत का स्वाद चखने की बारी हमारी है!’

हाफ-टाईम समाप्त होते ही कोल्ट्रस टीम के सारे खिलाड़ी कमरे से बाहर आए और उन्होंने मैदान पर अपने जौहर दिखाने शुरू कर दिए। इस बार उन्होंने डंगी की सिखाई वही तकनीक अपनाई, जो उन्हें इस ऊँचाई तक लेकर आई थी। वे फिर से अपनी आदतों पर निर्भर हो गए और इशारों पर ध्यान केंद्रित करके खेलने लगे। वे पूरी सावधानी के साथ एक बार फिर वही क्रियाएँ करने लगे, जिनका अभ्यास वे पिछले पाँच वर्षों में कई बार कर चुके थे। ये क्रियाएँ करना अब उनकी आदत बन चुका था। विपक्षी टीम के खिलाड़ी मैदान पर 14 प्ले और 66 यार्ड दूर, ओपनिंग ड्राइव पर थे। उन्होंने टचडाउन स्कोर किया। इसके बाद एक बार फिर गेंद उनके पास आई और अगले तीन मिनटों में उन्होंने फिर से स्कोर किया।

चौथा क्वार्टर समाप्त होते-होते कोल्ट्रस ने काफी पॉइंट्स स्कोर किए और अब वे विपक्षी टीम की बराबरी पर आ गए। अब खेल में केवल 3.49 मिनट बाकी थे। तभी पेट्रीऑट्स ने फिर स्कोर किया और अब डंगी की टीम 34-31 से पीछे हो गई। कोल्ट्रस ने गेंद अपने कब्जे में ले ली और मैदान की दूसरी ओर जाने लगे। वे केवल 19 सेकंड में ही मैदान पार कर आखिरी छोर पर चले गए। अब मैच में पहली बार कोल्ट्रस 38-34 से आगे थे। घड़ी में केवल साठ सेकेंड बाकी थे। अगर डंगी के टीम ने पेट्रीऑट्स को टचडाउन स्कोर करने से रोक लिया तो कोल्ट्रस इस मैच को जीत सकते थे।

फुटबॉल में साठ सेकेंड का समय एक जन्म के बराबर होता है।

पेट्रीऑट्स के क्वार्टरबैक टॉम ब्रैडी ने इससे पहले अनेक मैचों में इससे भी कम समय में टचडाउन स्कोर किए थे। इसलिए खेल फिर से शुरू होने पर जब ब्रैडी ने तुरंत गेंद को अपने कब्जे में लेकर आधा मैदान पार कर लिया, तो किसी को आश्चर्य नहीं हुआ। अब केवल 17 सेकेंड बाकी थे और पेट्रीऑट्स टचडाउन के लिए बिलकुल तैयार थे। एक बार फिर उनकी जीत निश्चित होती नज़र आ रही थी और डंगी की टीम एक बार फिर पराजय की ओर बढ़ रही थी। यह मैच जीतकर पेट्रीऑट्स एक बार फिर कोल्ट्रस का सुपर-बॉल में जगह बनाने का सपना चकनाचूर करनेवाले थे।

जैसे ही पेट्रीऑट्स् स्क्रीमेज लाइन पर पहुँचे, कोल्ट्रस की डिफेन्स लाइन के खिलाड़ियों ने अपना स्थान ले लिया। कोल्ट्रस का कॉर्नरबैक मैर्लिन जैक्सन लाइन से दस यार्ड पीछे खड़ा था। उसने इशारों पर ध्यान केंद्रित किया और गौर किया कि पेट्रीऑट्स के लाइनमैन एक-दूसरे से कितनी दूरी पर खड़े है और पीछे दौड़नेवाला खिलाड़ी कितना झुका है। इन दोनों इशारों से जैक्सन को पेट्रीऑट्स की अगली चाल का पता चल गया। पेट्रीऑट्स का क्वार्टरबैक टॉम ब्रैडी गेंद आगे देने के लिए पीछे की ओर झुका, लेकिन वह गेंद तक पहुँच पाता इससे पहले ही जैक्सन नए स्थान पर पहुँच चुका था। ब्रैडी ने अपना हाथ उठाया और गेंद फेंकी। उसने वह गेंद पेट्रीऑट्स के रीसिवर की ओर फेंकी। वह उससे बीस यार्ड दूर मैदान के बीच में खड़ा था और उसके आसपास विपक्षी टीम का एक भी खिलाड़ी नहीं था। अगर रिसीवर गेंद पकड़ लेता तो वह आसानी से आखिरी छोर तक पहुँच सकता था या टचडाउन भी स्कोर कर सकता था।

गेंद हवा में उछली लेकिन कोल्ट्स का क्वार्टरबैक जैक्सन इससे पहले ही इशारों के अनुसार अपनी आदत के तहत आगे बढ़ चुका था। रिसीवर के बाईं ओर से गुजरती हुई गेंद उस तक पहुँचने से एक क्षण पहले ही उसने वहाँ पहुँचकर गेंद अपने कब्जे में ले ली। वह आगे दौड़ा और मैदान पर फिसला। इस पूरे समय उसने गेंद को कसकर अपने सीने से लगाए रखा था। यह सब केवल आखिरी पाँच सेकेंड में हुआ था और इसके बाद मैच का समय समाप्त हो गया। डंगी की टीम मैच जीत चुकी थी।

इसके दो हफ्तों बाद वे सुपर-बॉल भी जीत गए। कोल्ट्स आखिरकार चैम्पियन कैसे बने इसका स्पष्टीकरण देने के लिए दर्जनों कारण बताए जा सकते हैं। जैसे उस वर्ष किस्मत उनके साथ थी या शायद उनका समय अच्छा चल रहा था वगैरह। लेकिन डंगी के खिलाड़ी बताते हैं कि उनके चैम्पियन बनने का कारण था कि वे विश्वास करना सीख गए थे। इस विश्वास के कारण कठिन समय में भी डंगी के खिलाड़ी अपनी क्रियाओं और आदतों पर ही निर्भर बने रहे।

मैच के बाद लॉमबार्डी ट्रॉफी पकड़े पेटन मैनिंग ने स्टेडियम में बैठे दर्शकों से कहा, 'हमारी जीत का श्रेय कोच डंगी को जाता है। ये ट्रॉफी उनके विश्वास का परिणाम है।'

डंगी अपनी पत्नी की ओर मुड़े, 'हमने कर दिखाया।'

***

आदतों में परिवर्तन कैसे आता है?

दुर्भाग्यवश आदतों में परिवर्तन लाने का ऐसा कोई सीधा रास्ता नहीं है, जो हर किसी के काम आ सके। ऐसा कोई तरीका नहीं है, जिसे अपनाकर हर किसी को आदतें बदलने में सफलता हासिल हो सके। हम जानते हैं कि आदतों को जड़ से नहीं मिटाया जा सकता बल्कि पुरानी आदतों के स्थान पर नई आदतें विकसित करनी पड़ती हैं। साथ ही, हम यह भी जानते हैं कि आदत परिवर्तन का एक सुनहरा नियम होता है, जो आदतों में परिवर्तन लाना आसान बना देता है। यह सुनहरा नियम है - आदत के फंदे के इशारे और इनाम समान रखते हुए नई क्रियाओं का समावेश किया जाए।

लेकिन सिर्फ इतना काफी नहीं है। इसके लिए विश्वास भी ज़रूरी है। आदत में परिवर्तन लाने के लिए लोगों के अंदर यह विश्वास होना ज़रूरी है कि उनकी आदतों में परिवर्तन संभव है। आमतौर पर इंसान के अंदर यह विश्वास किसी समूह की मदद से ही पैदा होता है।

जैसे अगर आप धूम्रपान की आदत छोड़ना चाहते हैं, तो इसके लिए किसी ऐसी नई क्रिया का पता लगाना ज़रूरी है, जिससे आपकी निकोटीन के सेवन की इच्छा तृप्त हो सके। इसके बाद एक सपोर्ट-ग्रुप ढूँढ़ें। यानी ऐसे लोगों का समूह जो पहले धूम्रपान करते थे, पर अब इस लत से मुक्त हो चुके हैं। उनका समूह आपको यह विश्वास दिला

सकता है कि आपके लिए निकोटीन से दूर रहना संभव है। जब भी आपको ऐसा लगे कि नई आदत विकसित करने की प्रक्रिया में आपके कदम लड़खड़ा रहे हैं, तो इस समूह की सहायता ज़रूर लें।

इसी तरह अगर आप अपना वज़न घटाना चाहते हैं, तो सबसे पहले अपनी खान-पान की आदतों पर बारीकी से गौर करें। जैसे आप हर रोज काम करते-करते बीच में उठकर स्नैक्स खाने क्यों निकल पड़ते हैं। साथ ही कोई ऐसा इंसान ढूँढ़े, जिससे आप कुछ देर तक गप्पें लड़ा सकते हैं। ताकि फिर आप ब्रेक के दौरान कैंटीन में जाकर कुछ खाने के बजाय उस इंसान के पास जाएँ और उससे यूँ ही कुछ देर बातचीत करें। अगर आप यह सब नहीं कर सकते तो कोई ऐसा समूह ढूँढ़ सकते हैं, जिसके सदस्यों का लक्ष्य भी वज़न घटाना ही हो। अगर यह भी संभव नहीं है, तो कम से कम कोई ऐसा इंसान ढूँढ़ें, जो चिप्स या ऐसे ही अन्य स्नैक्स खाने के बजाय अपने बैग में फल वगैरह रखता हो।

स्पष्ट है कि अगर आप अपनी आदतों में परिवर्तन लाना चाहते हैं, तो उसके विकल्प के रूप में आपको कोई क्रिया ढूँढ़नी होगी। अगर आप किसी समूह का हिस्सा बनकर ऐसा करेंगे, तो आपको सफलता जल्दी मिलेगी। आपके अंदर विश्वास होना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है और समूह का हिस्सा बनने से विश्वास बढ़ता है। फिर चाहे वह समूह अनगिनत लोगों का हो या फिर सिर्फ दो लोगों का।

हम जानते हैं कि परिवर्तन संभव है। शराबी व्यक्ति अपनी लत से छुटकारा पा सकता है। धूम्रपान की लत से ग्रस्त व्यक्ति इससे मुक्त भी हो सकता है। निरंतर पराजित होनेवाले लोग चैम्पियन भी बन सकते हैं। आप अपनी नाखून चबाने की आदत से लेकर काम के समय ऑफिस में स्नैक्स खाने तक की आदत से छुटकारा पा सकते हैं। अपने बच्चों पर चिल्लाने, रातभर जागने, छोटी-छोटी बातों पर चिंतित रहने जैसी आदतों पर भी आसानी से काबू पाया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने अपने शोधों में पाया है कि अगर आदतों को बदलने की दिशा में सही कदम उठाए जाएँ, तो सिर्फ एक इंसान ही नहीं बल्कि बड़ी से बड़ी कंपनियों, संगठनों और समूहों की आदतों में परिवर्तन लाया जा सकता है। अगले अध्याय में इसी के बारे में बताया गया है।

***

1 आदत और लत के बीच बड़ा ही महीन फर्क होता है और इस फर्क को समझना अक्सर बहुत मुश्किल होता है। जैसे अमेरिकन सोसायटी ऑफ एडिक्शन मेडिसिन ने लत को कुछ इस तरह परिभाषित किया है, 'इंसानी दिमाग का वह प्राथमिक स्थाई रोग जो इनाम, प्रेरणा, याद्दाश्त और ऐसी ही अन्य चीज़ों से संबंधित है। लत अपनी श्रेणी की ऐसी बीमारी है, जिसे व्यवहार-नियंत्रण व निरंतर परहेज में असमर्थता, रिश्तों के मामले में नुकसान और तीव्र इच्छा जैसी समस्याओंवाली श्रेणी में रखा जाता है।' कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि लत को इस तरह परिभाषित करने से यह निर्धारित करना मुश्किल हो जाता है कि हर सप्ताह कोकेन का नशा करने के लिए 50 डॉलर खर्च करना गलत और हर सप्ताह कॉफी पर 50 डॉलर खर्च करना सही क्यों है? अगर किसी इंसान को हर सुबह कॉफी की तलब लगती है, तो इस परिभाषा पर विश्वास करनेवाले निरीक्षक को यह इंसान लती नज़र आएगा। क्योंकि वह निरीक्षक यह मानकर बैठा होगा कि कॉफी पर पाँच डॉलर खर्च करने का अर्थ आत्म-व्यवहार नियंत्रण में असमर्थता है। अगर इस परिभाषा के आधार पर सोचें, तब तो जो इंसान हर सुबह नाश्ता करने के बजाय अपने बच्चों के साथ दौड़ने और व्यायाम करने निकल जाता है, वह व्यायाम का लती है।

अधिकतर शोधकर्ताओं का यही मानना है कि लत एक जटिल चीज़ है और हम इसे अभी तक पूरी तरह समझ नहीं पाए हैं। क्योंकि ऐसे कई व्यवहार, जिन्हें हम लत से जोड़कर देखते हैं, वे आमतौर पर आदत के कारण हो रहे होते हैं। सिगरेट, शराब या ड्रग्स् जैसी चीज़ों का सेवन करने से इंसान अक्सर शारीरिक रूप से इन पर निर्भर हो जाता है, पर जैसे ही वह इनका सेवन पूरी तरह बंद कर देता है, तो इनके सेवन की शारीरिक इच्छा जल्द ही विलीन भी हो जाती है। उदाहरण के लिए जब कोई इंसान धूम्रपान करना छोड़ देता है, तो निकोटीन के प्रति उसकी शारीरिक निर्भरता तभी तक रहती है, जब तक उसके खून से इस रसायन का आखिरी अंश साफ नहीं हो जाता। आमतौर पर यह अवधि आखिरी सिगरेट पीने के बाद 100 घंटे की होती है। वास्तविकता यह है कि धूम्रपान छोड़ने के बहुत दिनों बाद भी इंसान जिन इच्छाओं को निकोटीन की अपनी पुरानी लत का परिणाम मानने लगता है, वे इच्छाएँ दरअसल इसलिए नहीं उठतीं क्योंकि उसे निकोटीन की ज़रूरत महसूस हो रही है। ये इच्छाएँ तो उसकी आदतों की वजह से उठती हैं क्योंकि रोज सुबह नाश्ते या खाने के बाद उसे धूम्रपान की आदत थी और अब चूँकि वह धूम्रपान करना छोड़ चुका है इसलिए उस आदत से मिलनेवाला आनंद उसे बार-बार याद आ रहा है। लत के इलाज पर हुए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि लत का सबसे प्रभावी इलाज है, उन आदतों को छोड़ना, जो हमारे किसी ऐसे व्यवहार से संबंधित हैं, जिसे हम अपनी लत मानते हैं। (यह बात ध्यान देने योग्य है कि ओपिएट्स जैसे कुछ रसायन दीर्घकालीन लत पैदा कर सकते हैं और इससे संबंधित कई अध्ययन यह इशारा करते हैं कि कुछ लोगों में लत पैदा करनेवाले रसायनों का इस्तेमाल करने की प्रवृत्ति स्पष्ट नज़र आती है, भले ही उनके व्यवहार को सुधारने की कितनी भी कोशिश की गई हो। हालाँकि ऐसे रसायनों की संख्या काफी कम है, जो किसी इंसान के अंदर दीर्घकालीन शारीरिक निर्भरता पैदा करने में सक्षम हैं और ऐसे रसायनों का इस्तेमाल करने की प्रवृत्तिवाले लोगों की संख्या भी शराब और ड्रग्स के लती लोगों से

बहुत कम है।)

2 यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि आदतों को बदलना जितना आसान नज़र आता है, उतना है नहीं। यह कहना गलत होगा कि धूम्रपान, शराब की लत, ज़रूरत से ज्यादा खाना और ऐसी ही अन्य अंतर्निहित समस्याओं को बिना किसी ठोस प्रयास के ठीक किया जा सकता है। सच्चे परिवर्तन के लिए ठोस प्रयास करने के अलावा इच्छा को सक्रिय करनेवाले व्यवहार की समझ होना भी ज़रूरी है। किसी भी आदत को बदलने के लिए दृढ़ संकल्प की ज़रूरत होती है। सिर्फ आदत के फंदे के बारे में जान लेने भर से कोई भी इंसान धूम्रपान की आदत छोड़ने में सफल नहीं हो सकता।

हालाँकि आदतें कैसे काम करती हैं, यह समझ लेने से हमें वह अंतर्दृष्टि ज़रूर मिल जाती है, जो नए व्यवहार को अपनाने में मददगार साबित होती है। व्यसन, लत या विनाशकारी व्यवहार से जूझ रहे लोग प्रशिक्षित चिकित्सकों, थेरेपी देने वाले विशेषज्ञों, सामाजिक कार्यकर्ताओं व पुरोहित-पादरियों समेत किसी भी अन्य व्यक्ति से मिलनेवाली मदद से लाभान्वित हो सकते हैं। हालाँकि इन क्षेत्रों में काम करनेवाले विशेषज्ञ इस बात से सहमति रखते हैं कि धूम्रपान और शराब के लती और ऐसी ही अन्य हानिकारक आदतों से ग्रस्त लोग कई बार बिना किसी उपचार या मदद के स्वत: ही इन आदतों को छोड़ देते हैं। आमतौर पर ऐसा तभी संभव होता है, जब लोग उन इशारों, इच्छाओं और इनामों को समझ लेते हैं, जो उनकी हानिकारक आदतों को सक्रिय करते हैं। इशारों, इच्छाओं और इनामों को समझ लेने के बाद ये लोग अपनी विनाशकारी दिनचर्या का स्वस्थ विकल्प ढूँढ़ते हैं और फिर उन विकल्पों को अपना लेते हैं। कई बार तो उन्हें खुद भी पता नहीं होता कि वे यह सब कैसे कर पा रहे हैं। हालाँकि आदतों को सक्रिय करनेवाले इशारों, इच्छाओं और इनामों को समझ लेने भर से आदतें अचानक गायब नहीं हो जातीं। हाँ, इससे आपको अपने पैटर्न्स बदलने का रास्ता ज़रूर नज़र आने लगता है।

भाग

दो

सफलता की ऊँचाईयों पर पहुँचे संगठनों की आदतें

4

मूल आदतें या पॉल ओ'नेल की यशोगाथा

कौन सी आदतें सर्वाधिक महत्त्व रखती हैं

1

अक्टूबर 1987 की बात है। मैनहट्टन के एक आलीशान होटल के बॉलरूम में, वॉलस्ट्रीट के प्रमुख निवेशकों और शेयर विश्लेषकों का एक समूह एकत्रित हुआ। वे वहाँ एल्यूमिनियम कंपनी ऑफ अमेरिका, जिसे 'एल्कोआ' के नाम से भी जाना जाता है, के नए सीईओ से मिलने आए थे। इस कंपनी ने पिछले सौ सालों में हरशेस् किसेस् चॉकलेट के रैपर और कोका-कोला की धातु से बनी कैन्स से लेकर उपग्रहों के निर्माण में इस्तेमाल होनेवाले बोल्ट्स तक अनगिनत चीज़ों का निर्माण किया था।

एल्कोआ के संस्थापक ने एक शताब्दी पहले एल्यूमिनियम को पिघलाने की प्रक्रिया का आविष्कार किया था और तभी से यह कंपनी विश्व की सबसे बड़ी कंपनियों में गिनी जाने लगी। इस सभा में बैठे श्रोताओं में से कई एल्कोआ में लाखों डॉलर निवेश कर भारी मुनाफा कमा रहे थे। लेकिन पिछले एक वर्ष से निवेशकों की ओर से कई तरह की शिकायतें आ रही थीं। एल्कोआ के प्रबंधन में गलतियाँ होने लगी थीं। कंपनी का विस्तार करने के लिए नए किस्म की वस्तुओं का उत्पादन किया जा रहा था, जो एक गलत कदम साबित हुआ। इसके कारण एल्कोआ ने अपने अनेकों ग्राहक खोए और मुनाफा भी कम होकर प्रतिस्पर्धी कंपनियों के पास जाने लगा।

इसीलिए जब एल्कोआ के मैनेजिंग बोर्ड ने नए सीईओ के चुनाव की घोषणा की, तो हर किसी ने राहत की साँस ली। पर इस राहत को बेचैनी में बदलने में ज़्यादा समय नहीं लगा क्योंकि नए सीईओ थे, पॉल ओ'नेल। वे एक पूर्व सरकारी अधिकारी थे। वॉलस्ट्रीट के अधिकतर लोग उनसे अनजान थे। इसलिए एल्कोआ ने मैनहट्टन के बॉलरूम में जब यह सभा रखी, तो हर प्रमुख निवेशक चाहता था कि उसे भी इस सभा में आमंत्रित किया जाए।

धारीदार स्लेटी रंग के सूट के साथ लाल टाई पहने 51 वर्षीय ओ'नेल, दोपहर करीब बारह बजे मंच पर आए। उनके बाल सफेद एवं मुद्रा स्थिर थी। उन्होंने उत्साह से आगे आकर सबकी ओर देखा और मुस्कराए। ओ'नेल एक आदर्श सीईओ की तरह ही गौरवशाली, सख्त और आत्मविश्वास से भरे नज़र आ रहे थे। फिर उन्होंने बोलना शुरू किया।

'मैं यहाँ आपसे कर्मचारियों की सुरक्षा के विषय पर बात करना चाहता हूँ', उन्होंने कहा। 'हर साल एल्कोआ के अनेक कर्मचारी काम के दौरान होनेवाली दुर्घटनाओं में चोटिल हो जाते हैं, जिसके कारण वे अगले एक-दो दिन काम नहीं कर पाते। हमारे कर्मचारी 1500 डिग्री तापमान की धातुओं और ऐसी मशीनों के साथ काम करते हैं, जिसमें ज़रा सी गलती से इंसान का हाथ कट सकता है। इसके बावजूद हमारा कर्मचारी सुरक्षा रिकॉर्ड अमेरिका की सामान्य श्रमिक संख्या से कहीं बेहतर है। लेकिन इतना काफी नहीं है। मैं एल्कोआ को अमेरिका की सबसे सुरक्षित कंपनी बनाना चाहता हूँ। मेरा लक्षय है कि कर्मचारियों के साथ होनेवाली आकस्मिक दुर्घटनाओं की संख्या घटकर शून्य हो जाए।'

सभा में बैठा हर इंसान पॉल ओ'नेल की बातें सुनकर हैरान था। आमतौर पर इस प्रकार की सभाओं में सब कुछ पहले से तय होता था। अब तक हर नया सीईओ अपने परिचय से सभा की शुरुआत किया करता था और आमतौर पर मंच पर खड़े होकर कुछ इस तरह के मज़ाक करता था कि कैसे उसने हार्वर्ड बिजनेस स्कूल में अपना सारा समय बिस्तर में पड़े रहकर गुज़ारा था। वह मुनाफा बढ़ाने और मूल्य घटाने का वचन देता था और इसके बाद टैक्स और व्यापार नियमन के विषयों को इस तरह कुरेदा जाता था, मानो वह स्वयं न्यायालय में तलाक दिलानेवाला वकील रह चुका हो और उसे हर विषय से जुड़ी बातों को कुरेदने का अनुभव हो। आखिरकार उसका भाषण तालमेल (Synergy), नवयोजना (rightsizing) और सहस्पर्धा (Co-Opetition) जैसे दमदार पर रटे-रटाए शब्दों के साथ समाप्त हो जाता था। इस तरह हर कोई उस सभा से इस आश्वासन के साथ वापस काम पर लौटता कि पूँजीवाद (capitalism) अब भी सुरक्षित है।

पर ओ'नेल ने न तो मुनाफे की बात की, न टैक्स की। उन्होंने इस विषय पर भी कुछ नहीं कहा कि 'बाजार को ध्यान में रखते हुए कैसी कार्यप्रणाली बनाई जाए, जिससे कंपनी को सफलता हासिल हो।' इसके विपरीत, ओ'नेल ने 'कर्मचारियों की सुरक्षा' से जुड़ी बातें कीं। उनकी ये बातें सुनकर सभा के श्रोताओं को लगने लगा कि कहीं ऐसा न हो कि ओ'नेल नियमों को लेकर बेहद सख्त निकलें या फिर इससे भी बुरा, कहीं वे लोकतांत्रिक ढंग से काम करने में विश्वास न रखते हों। उनका यह डर संभावना में तब्दील हो रहा था।

'आगे बढ़ने से पहले मैं आप सभी को इस कमरे के सुरक्षा निकास दरवाजों की स्थिति दिखाना चाहता हूँ', ऐसा कहते हुए ओ'नेल ने बॉलरूम के पीछे की ओर इशारा किया। 'वहाँ पीछे की ओर कुछ दरवाजे हैं। आग लगने जैसी किसी आपातकालीन स्थिति में आप शांतिपूर्वक उन दरवाज़ों से बाहर निकल सकते हैं और सीढ़ियों द्वारा लॉबी में पहुँचकर, सुरक्षित रूप से इस इमारत से बाहर निकल सकते हैं।'

यह सब सुनकर उस विशाल कमरे में सन्नाटा छा गया। अगर कोई आवाज़ बची थी, तो केवल खिड़कियों से आ रही ट्रैफिक की आवाज़। सुरक्षा? आपातकालीन निकास के दरवाजे? क्या मज़ाक है? श्रोताओं के बीच बैठे एक निवेशक के मन में यही सवाल उठे।

वह जानता था कि साठ के दशक में ओ’नेल वॉशिंग्टन डी.सी. में रहते थे। ‘कहीं यह व्यक्ति नशा तो नहीं करता...’ उसे शंका होने लगी।

अंतत: किसी ने हाथ उठाकर एयरोस्पेस डिवीजन (अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी विभाग) की इंवेन्ट्रीज (वस्तु-सूची) के बारे में पूछा। एक अन्य व्यक्ति ने कंपनी के पूँजी अनुपात (Capital Ratio) के बारे में बात की।

‘मुझे लगता है कि आप मेरी बात समझ नहीं पाए,’ ओ’नेल ने कहा। ‘यदि आप एल्कोआ के कामकाज का तरीका जानना चाहते हैं, तो आपको हमारे कार्यस्थल से संबंधित सुरक्षा-आँकड़ों पर नज़र डालनी चाहिए। अन्य चीफ एग्जिक्यूटिव ऑफिसर्स की तरह बेतुकी बातें करने या प्रोत्साहन देने भर से आकस्मिक दुर्घटनाओं की संख्या कम नहीं हो सकती। जब हर कोई यह निश्चय कर लेगा कि उसे स्वयं को बेहतरीन बनाने की आदत डालनी है, तो ऐसी दुर्घटनाओं की संख्या स्वत: ही कम होने लगेगी। हमारे सुरक्षा आँकड़े हमारे विकास के सूचक हैं। इन आँकड़ों से हम यह जान सकते हैं कि हमारे संगठन की आदतों में परिवर्तन हुआ है या नहीं। आगे से हमें इसी कसौटी पर परखा जाना चाहिए।

व्याख्यान समाप्त हुआ। कमरे से बाहर निकलने के लिए निवेशकों में अफरा-तफरी मच गई। एक निवेशक भागता हुआ लॉबी में पहुँचा और वहाँ रखे फोन से उसने अपने दस बड़े ग्राहकों को फोन किया।

उस निवेशक ने अपना अनुभव बताते हुए कहा, ‘मैंने अपने सारे ग्राहकों को फोन लगाकर एक ही बात कही कि ‘बाकी निवेशक अपने ग्राहकों को कंपनी के शेअर बेचने की सलाह दें, उससे पहले ही आप अपने सारे शेअर बेच दीजिए। बोर्ड ने कंपनी की बागड़ौर एक सनकी हिप्पी के हाथों सौंप दी है, जो कंपनी का सत्यानाश करनेवाला है।’ उसने आगे कहा, ‘मुझे बाद में समझ में आया कि मैंने अपने पूरे कार्यकाल में अपने ग्राहकों को इससे बुरी सलाह कभी नहीं दी।’

ओ’नेल के इस व्याख्यान को एक वर्ष भी नहीं हुआ था और एल्कोआ ने मुनाफे के मामले में नए कीर्तिमान स्थापित कर दिए। ओ’नेल 2000 में सेवानिवृत्त हुए। तब तक कंपनी की वार्षिक आय पहले के मुकाबले पाँच गुना बढ़ गई थी। कंपनी के बाज़ार पूँजीकरण में भी 27 अरब डॉलर की बढ़ोत्तरी हुई थी। ओ’नेल के सीईओ बनने के बाद जिन लोगों ने एल्कोआ में लाखों डॉलर निवेश किए थे, उन्हें ओ’नेल के कार्यकाल में बहुत लाभ हुआ। यहाँ तक की ओ’नेल के सेवानिवृत्त होने तक इन निवेशकों के शेअर का मूल्य भी पाँच गुना बढ़ गया था।

ओ’नेल के कार्यकाल में कंपनी का खूब विकास हुआ। एल्कोआ की गणना अब दुनिया की सबसे सुरक्षित कंपनियों में होने लगी। ओ’नेल के आगमन से पूर्व एल्कोआ के हर कारखाने में हर सप्ताह कम से कम एक दुर्घटना ज़रूर होती थी। पर ओ’नेल की सुरक्षा

योजनाओं के लागू होने के बाद कई सालों तक किसी भी कर्मचारी के साथ कोई आकस्मिक दुर्घटना नहीं घटी। अमेरिकी औसत दर के मुकाबले एल्कोआ की कर्मचारी दुर्घटना दर 20-1 थी।

तो ओ'नेल ने सबसे बड़ी, नीरस और सर्वाधिक संकटपूर्ण कंपनी को मुनाफे और सुरक्षा के नए कीर्तिमान स्थापित करनेवाली कंपनी में कैसे तब्दील किया?

इस सवाल का जवाब आसान है। उन्होंने एक आदत पर निशाना साधकर पूरे संगठन में परिवर्तन की लहर पैदा कर दी।

ओ'नेल बताते हैं, 'मैं जानता था कि मुझे एल्कोआ को पूरी तरह परिवर्तित करना होगा, पर आप लोगों को बदलने का आदेश नहीं दे सकते। हमारा दिमाग आदेश ग्रहण नहीं कर सकता। इसलिए मैंने शुरुआत में सिर्फ एक पहलू पर ध्यान केंद्रित करने का निर्णय लिया। क्योंकि मैं जानता था कि यदि मैं इस एक पहलू से संबंधित आदतों को परिवर्तित कर पाया, तो यह परिवर्तन पूरी कंपनी में लाया जा सकता है।'

ओ'नेल को विश्वास था कि कुछ आदतों में ऐसी शक्ति होती है, जिनसे परिवर्तन की एक श्रृंखला शुरू की जा सकती है, जिसकी मदद से पूरे संगठन की आदतें बदली जा सकती हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाए, तो कुछ आदतें पुनर्निर्माण के मामले में अधिक महत्वपूर्ण होती हैं। फिर वह पुनर्निर्माण व्यापार का हो या जीवन का। इन आदतों को 'मूल आदतें' कहा जाता है। ऐसी आदतें इंसान के जीवन के अनेक पहलुओं पर अपना प्रभाव डालती हैं। जैसे- काम, भोजन, खेल, खर्च और संवाद आदि। मूल आदतें इंसान के अंदर एक ऐसी प्रक्रिया शुरू करती हैं, जिससे समय के साथ सब कुछ परिवर्तित हो जाता है।

मूल आदतें सफल हों, इसके लिए यह ज़रूरी नहीं है कि हर छोटी से छोटी चीज़ भी सही हो। इसकी सफलता कुछ मुख्य प्राथमिकताओं को समझने और उन्हें शक्तिशाली उत्तेजकों में परिवर्तित करने पर निर्भर होती है। इस पुस्तक के पहले भाग में आपने आदत की कार्यप्रणाली, नई आदतों का निर्माण और परिवर्तन जैसे विषयों को समझा। पर एक प्रमुख आदत की शुरुआत किस बिंदु से होनी चाहिए, इसका जवाब मूल आदतों को समझने से ही मिलता है। जिन आदतों में परिवर्तन होने से रूटीन (तयशुदा क्रियाओं) और पैटर्न में परिवर्तन आता है, ऐसी आदतों का विशेष महत्त्व होता है।

माइकल फेल्प्स ऑलम्पिक विजेता कैसे बने? कॉलेज और स्कूल में कुछ छात्र अपने समकक्ष बाकी छात्रों से बेहतर क्यों होते हैं? इस तरह के सवालों के जवाब मूल आदत को जाने बिना विस्तार से नहीं समझाए जा सकते। मूल आदत से यह पता चलता है कि कैसे कुछ लोग सालों कोशिश करके अचानक अठारह-बीस किलो वजन घटा लेते हैं या काम में व्यस्त रहने और अच्छा प्रदर्शन करने के साथ-साथ कुछ लोग हर रोज रात का खाना परिवार के साथ खाने का समय कैसे निकाल लेते हैं। मूल आदतों को समझने से यह

पता चलता है कि कैसे एल्कोआ दुनिया की सबसे सुरक्षित कंपनी बनी और कैसे कंपनी के स्टॉक्स डॉव जोन्स की सूची में सबसे बढ़िया प्रदर्शन करनेवाले स्टॉक्स बने।

***

शुरुआत में जब ओ'नेल के सामने एल्कोआ का सीईओ बनने का प्रस्ताव रखा गया, तो वे बहुत उत्साहित नहीं थे। इस पद को स्वीकार करने को लेकर वे दुविधा में थे। वे अपने जीवन में काफी पैसा कमा चुके थे। वे कनेक्टिकट के निवासी थे और उनकी पत्नी को वहीं रहना पसंद था। जबकि एल्कोआ का मुख्यालय पीट्सबर्ग में स्थित था और ओ'नेल को इस शहर के बारे में ज्यादा जानकारी भी नहीं थी। इसलिए उन्होंने आखिरी निर्णय लेने के लिए एक सूची बनाई। इस सूची में उन्होंने ऐसी बातें लिखीं, जिनसे यह साफ हो सके कि सीईओ का पद स्वीकार करने पर उनकी सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण प्राथमिकताएँ क्या होंगी?

सूची बनाकर चीज़ों को समझने की इस पद्धति पर ओ'नेल बहुत विश्वास करते थे। अपना पूरा जीवन उन्होंने ऐसी सूचियाँ बनाकर ही सुनियोजित किया था। ओ'नेल ने अपने कॉलेज की पढ़ाई फ्रेस्नो राज्य में पूरी की थी। उन्होंने तीन साल में अपना कोर्स पूरा किया और इस दौरान वे पढ़ाई के अलावा सप्ताह में तीस घंटे काम भी करते थे। उस दौरान उन्होंने उन सभी चीज़ों की सूची बनाई, जो वे अपने जीवन में प्राप्त करना चाहते थे। इस सूची में सबसे ऊपर था 'परिवर्तन लाना'। सन 1960 में ग्रेज्यूएट होने के बाद एक मित्र के प्रोत्साहन से ओ'नेल ने फेडरल इंटर्नशिप का फॉर्म भरा। उनके अलावा करीब तीन लाख अन्य लोगों ने भी इस सरकारी नौकरी की परीक्षा दी। उनमें से तीन हज़ार लोगों का चयन इंटरव्यू के लिए हुआ और नौकरी के लिए केवल तीन सौ लोग चुने गए। ओ'नेल उनमें से एक थे।

उनकी शुरुआत वेटरन्स एडमिनिस्ट्रेशन (वयोवृद्ध प्रशासन) में मिडिल मैनेजर (मध्य प्रबंधक) पद से हुई। यहाँ उन्हें कंप्यूटर सीखने के लिए कहा गया। इस दौरान भी ओ'नेल अपनी सूचियाँ बनाते रहे, जैसे कुछ परियोजनाएँ अन्य परियोजनाओं से अधिक सफल क्यों हैं, कौन से कॉन्ट्रेक्टर समय पर माल देते हैं और कौन से देर करते हैं वगैरह। हर साल उनका प्रमोशन होता रहा। जैसे-जैसे वे ऊँचे पदों पर पहुँचने लगे, उनकी सूची बनाने की आदत भी प्रसिद्ध होने लगी। लोगों के बीच बातें होती रहती थीं कि चाहे कोई भी समस्या आ जाए, ओ'नेल की सूची में उस समस्या से निपटने के लिए एक बिंदु ज़रूर होगा।

सन 1960 के मध्य में वॉशिंग्टन डी.सी. में ऐसी प्रतिभाओं की भारी माँग थी। रॉबर्ट मैक्नमारा ने गणितज्ञों, सांख्यिकी विशेषज्ञों और कंप्यूटर प्रोग्रामर्स के एक दल को नौकरी पर रखकर, उनकी मदद से पेंटागन का पुनर्निर्माण किया। राष्ट्रपति जॉनसन भी ऐसे ही होशियार तकनीकी विशेषज्ञों को नौकरी पर रखना चाहते थे। अत: ओ'नेल को काम पर रखा गया। ओ'नेल के इस काम ने आगे चलकर डी.सी. की सबसे शक्तिशाली

एजेन्सी की शुरुआत की, जिसका नाम है - ऑफिस ऑफ मैनेजमेंट ऐंड बजट। इसके एक दशक बाद, 38 साल की उम्र में ही ओ'नेल को डेप्युटी डायरेक्टर (उप-निर्देशक) का पद दे दिया गया। वे रातों रात शहर के सबसे प्रभावशाली लोगों में गिने जाने लगे।

यही वो समय था जब संगठनात्मक आदतों पर ओ'नेल का अध्ययन शुरू हुआ। उनकी पहली जिम्मेदारी थी, स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं पर सरकार के कुल खर्च का अध्ययन करने के लिए विश्लेषणात्मक रूपरेखा बनाना। जल्द ही उन्होंने पाया कि सरकार की स्वास्थ्य संबंधी योजनाएँ तार्किक नियमों और प्राथमिकताओं को ध्यान में रखकर नहीं बनाई जातीं। इसके विपरीत ये योजनाएँ विचित्र संस्थागत प्रक्रियाओं के कारण बनाई जाती थीं। जो एक लिहाज आदतों की तरह संचालित होती थीं। सरकारी अधिकारी और नेता ठोस निर्णय लेने के बजाय ऐसे इशारों पर प्रतिक्रिया दे रहे थे, जिनकी क्रियाएँ पहले से तय थीं और जिनसे एक निश्चित इनाम मिलता था। यह इनाम था - पदोन्नति या पुनःनिर्वाचन। यह आदत का ऐसा फंदा था, जिसकी गिरफ्त में हज़ारों लोग और सरकार के अरबों डॉलर फँसे हुए थे।

उदाहरण के लिए दूसरा विश्वयुद्ध, जिसकी समाप्ति के बाद कांग्रेस ने एक योजना के अंतर्गत सामुदायिक अस्पताल बनाने का निर्णय लिया। यह योजना पच्चीस वर्ष गुज़रने के बावजूद भी जारी थी। इसलिए जब भी स्वास्थ्य योजना के लिए धनराशि मंजूर होती, सरकारी अधिकारी नए अस्पतालों की इमारतें बनाने लग जाते। जबकि जिन कस्बों में ये नए अस्पताल बनाए जाते थे, वहाँ के लोगों को नए अस्पतालों की ज़रूरत ही नहीं थी। लेकिन फिर भी इस पर किसी का ध्यान नहीं था। वे तो बस एक नई इमारत बनाना चाहते थे, जिसके बारे में बात करके नेता अपना वोटबैंक बढ़ा सकें।

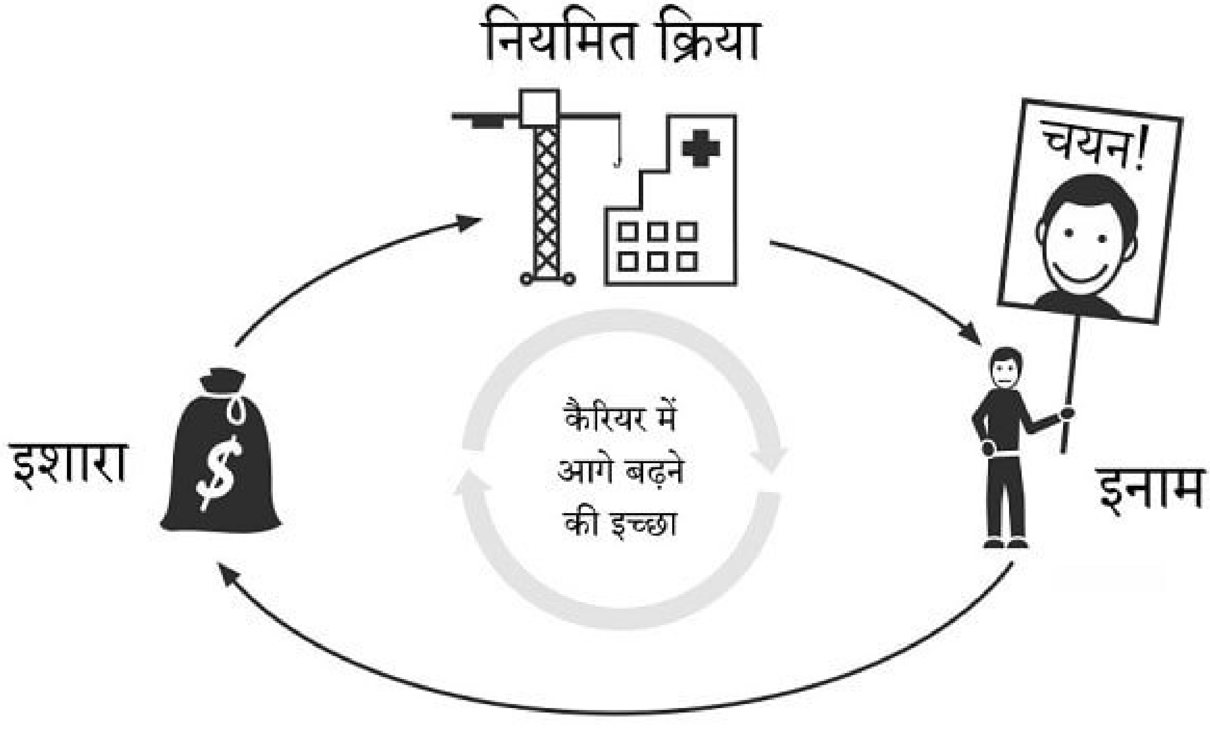

ओ’नेल बताते हैं कि जब अस्पताल के लिए इमारत का निर्माण होता था, तो छोटी-छोटी चीज़ें तय करने में भी सरकारी कामगार महीनों का कीमती समय गँवा देते थे। वे इस तरह की मामूली चीज़ें तय करने में समय बरबाद करते थे, जैसे ‘पर्दों का रंग नीला होना चाहिए या पीला, मरीजों के कमरे में एक टी.वी. होना चाहिए या दो, नर्सों के बैठने के लिए बनाए जा रहे कमरे का डिज़ाइन कैसा होना चाहिए वगैरह।’ आमतौर पर इस बात का पता ही नहीं लगाया जाता था कि कस्बे में वाकई नए अस्पताल की ज़रूरत है या नहीं। सरकारी अधिकारियों को आदत हो गई थी कि स्वास्थ्य के मामले में किसी भी प्रकार की समस्या सामने आने पर उसके समाधान के रूप में एक नए अस्पताल की इमारत खड़ी कर दी जाए ताकि चुनाव के समय नेता आसानी से वोट माँग सकें। यह सब बिलकुल अर्थहीन था, पर हर कोई बार-बार यही सब किए जा रहा था।

शोधकर्ताओं ने जिन कंपनियों या संगठनों का अध्ययन किया, वहाँ उन्हें संगठनात्मक आदतें नज़र आईं। संगठनात्मक आदतों के अध्ययन में पूरा जीवन लगानेवाले जेफ्री हॉग्सन लिखते हैं, ‘आदतें तो लोगों में होती हैं, पर संगठनों और संस्थाओं में रूटीन (तयशुदा क्रियाएँ) होते हैं। वास्तव में रूटीन (तयशुदा क्रियाएँ) आदतों का संगठनात्मक रूप होते हैं।’

ओ’नेल के अनुसार ऐसी आदतें हानिकारक होती हैं। वे कहते हैं, ‘हमारे निर्णय ऐसी प्रक्रियाओं पर निर्भर थे, जिनके पीछे कोई तार्किक विचार नहीं होता था।’ लेकिन कुछ एजेंसियाँ ऐसी भी थीं, जहाँ परिवर्तन की लहर आने लगी थी और उन्हें संगठनात्मक

आदतों से लाभ हो रहा था।

जैसे नासा (अमेरिका की अंतरिक्ष एजेंसी) के कुछ विभाग परिवर्तन लाने के लिए जान-बूझकर ऐसे संगठनात्मक रूटीन (तयशुदा क्रियाएँ) स्थापित कर रहे थे, जिनसे उनके इंजीनियर जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहित हों। नासा में कोई किसी चीज़ में असफल भी हो जाए, तब भी तालियाँ बजाकर उसका मनोबल बढ़ाने का चलन था। जैसे अगर अंतरिक्ष में छोड़ा गया इंसान-रहित रॉकेट कुछ ऊँचाई पर जाकर धमाके के साथ ध्वस्त हो जाए, तब भी उस रॉकेट के निर्माण में शामिल कर्मचारियों के लिए यह कहकर तालियाँ बजाई जातीं कि भले ही वे असफल हो गए हों, पर उन्होंने अपनी ओर से पूरी कोशिश की थी। धीरे-धीरे यह एक संगठनात्मक आदत बन गई थी। इसी तरह 1970 में अस्तित्व में आई ई.पी.ए. यानी एन्वायर्नमेंटल प्रोटेक्शन एजेंसी (पर्यावरण सुरक्षा एजेंसी) का उदाहरण लें। इस एजेंसी के पहले प्रबंधक विलियम रकेलशॉ ने ऐसी संगठनात्मक आदतें विकसित कीं, जिससे उनके अधिकारी नियम लागू करने का काम आक्रमक ढंग से कर सकें। वकीलों को मुकदमा दायर करने या किसी नियम को लागू करने हेतु अनुमति के लिए एक लंबी प्रक्रिया से गुज़रना पड़ता था। उनका लक्षय था नियमों को लागू करने की अनुमति फौरन प्राप्त करना। बात साफ थी - ई.पी.ए. में आक्रमक रूप से काम करने पर इनाम मिलता था। सन 1975 तक ई.पी.ए. हर साल 1500 से भी अधिक पर्यावरणीय नियम लागू करनेवाली एजेंसी बन गई थी।

ओ'नेल के अनुसार, 'जब भी मैं किसी सरकारी विभाग की ओर देखता, मुझे ऐसी आदतें नज़र आतीं, जिनके चलते या तो उस विभाग को सफलता हासिल हो रही थी या नाकामी। सबसे बेहतरीन एजेंसियों ने संगठनात्मक आदतों का महत्त्व जान लिया था। जिन एजेंसियों का काम वाहियात था, उन्हें चलानेवाले दरअसल वे लोग थे, जिन्होंने कभी संगठनात्मक आदतों पर ध्यान ही नहीं दिया। और फिर वे इस बात पर हैरान भी होते थे कि आखिर कोई उनके आदेशों का पालन क्यों नहीं करता।'

वॉशिंग्टन डी.सी. में सोलह साल गुज़ारने के बाद सन 1977 में ओ'नेल ने नौकरी छोड़ने का निर्णय लिया। वे सप्ताह के सातों दिन, रोज़ाना, पंद्रह घंटे काम करते थे। इसके कारण वे अपनी पत्नी और चार बच्चों को समय नहीं दे पा रहे थे। इस्तीफा देने के बाद ओ'नेल को 'इंटरनेशनल पेपर्स' में एक नई नौकरी मिल गई। यह लुग्दी और कागज़ बनानेवाली दुनिया की सबसे बड़ी कंपनी थी। आगे चलकर ओ'नेल इस कंपनी के अध्यक्ष बने।

तब तक ओ'नेल के कुछ पुराने मित्र, जो उनके साथ सरकारी अधिकारी रह चुके थे, एल्कोआ कंपनी के बोर्ड के सदस्य बन चुके थे। इसलिए जब एल्कोआ के लिए नया सीईओ चुनने का मौका आया, तो उन्होंने सबसे पहले ओ'नेल का नाम लिया। इस प्रकार ओ'नेल ने वह मशहूर सूची बनाई, जिसमें सीईओ का पद स्वीकार करने पर उनकी मुख्य प्राथमिकताओं का उल्लेख था।

उस समय एल्कोआ की स्थिति ठीक नहीं थी। समीक्षकों का कहना था कि एल्कोआ के कर्मचारियों में फुर्ती और चतुरता की कमी है और उनके द्वारा बनाए उत्पादों की गुणवत्ता बहुत ही खराब है। इसके बावजूद ओ'नेल की सूची में 'उत्पादों की गुणवत्ता' अथवा 'कर्मचारियों की कार्यक्षमता' को शीर्श स्थान नहीं मिला था। एल्कोआ एक बहुत बड़ी और पुरानी कंपनी थी। ऐसी कंपनियों या संगठनों में परिवर्तन लाना आसान नहीं होता। केवल कुछ सुझाव देने से कर्मचारियों की कार्यक्षमता नहीं बढ़ाई जा सकती। ओ'नेल से पहले एल्कोआ के जो सीईओ थे, उन्होंने जब नए सुधारों को लागू करने के आदेश दिए, तो कंपनी के 15,000 कर्मचारी हड़ताल पर चले गए थे। यह हड़ताल इतने घातक मोड़ पर पहुँच गई कि कर्मचारी पार्किंग लॉट में मैनेजर के पुतले बनाकर जलाने लगे थे। उस समय एल्काओ में काम करनेवाले एक व्यक्ति ने बताया, 'एल्कोआ के कर्मचारी खुश नहीं थे। यह संगठन मैन्सन परिवार (एक कुख्यात अमेरिकी संप्रदाय) जैसा हो गया था, बस फर्क ये था कि यहाँ धातुएँ पिघलाने का काम होता था।'

ओ'नेल समझ गए कि उनकी सबसे पहली प्राथमिकता ऐसी होनी चाहिए, जो यूनियन और अधिकारियों तक सभी को मंजूर हो। यह बहुत महत्वपूर्ण था। वे कुछ ऐसा चाहते थे, जिससे सभी लोग एक साथ आ सकें। कुछ ऐसा जिससे लोगों के काम करने और संवाद करने के तरीकों में परिवर्तन लाया जा सके।

वे बताते हैं कि 'मैं मूलभूत ज़रूरतों की ओर मुड़ गया। हर कोई चाहता है कि उसका काम ऐसा हो, जहाँ कोई खतरा न हो और वह पूरी तरह सुरक्षित रहे। आदर्श स्थिति यह होती है कि कोई कर्मचारी काम पर आते समय जितनी अच्छी स्थिति में हो, काम से लौटते समय भी उतनी ही अच्छी स्थिति में होना चाहिए। लोगों के दिमाग में यह विचार नहीं होना चाहिए कि यहाँ उनकी जान खतरे में है। उन्हें ऐसा नहीं लगना चाहिए कि अपने परिवार का पेट भरने के लिए मुझे रोज़ाना अपनी जिंदगी दाँव पर लगानी पड़ती है। इसीलिए मैंने अपना ध्यान कर्मचारी सुरक्षा पर केंद्रित करने का निर्णय लिया। मेरी सूची की पहली प्राथमिकता थी, लोगों की सुरक्षा संबंधी आदतें परिवर्तित करना।'

ओ'नेल ने अपनी सूची के शीर्ष पर 'सुरक्षा' लिखा और एक साहसपूर्ण उद्देश्य के साथ काम में जुट गए। यह उद्देश्य था - अकस्मात दुर्घटनाओं की संख्या शून्य तक पहुँचाना। न केवल कारखानों में बल्कि हर विभाग में शून्य दुर्घटनाएँ। उन्होंने स्वयं से वादा किया कि वे इस उद्देश्य को पूरा करके रहेंगे, भले ही इसके लिए उन्हें कोई भी कीमत चुकानी पड़े।

आखिरकार ओ'नेल एल्कोआ के सीईओ का पद स्वीकारने को राज़ी हो गए।

***

सीईओ का पद स्वीकारने के कुछ महीनों बाद ओ'नेल टेनेसी राज्य में स्थित एक कारखाने में गए, जहाँ धातुओं को पिघलाने का काम किया जाता था। ओ'नेल ने वहाँ के

कर्मचारियों से कहा कि वे उनसे मिलकर बहुत खुश हैं। हालाँकि सब कुछ ठीक नहीं चल रहा था। वॉलस्ट्रीट में एल्कोआ के सीईओ को लेकर अभी भी खलबली मची हुई थी। यूनियनें भी चिंताग्रस्त थीं। ऊपर से एल्कोआ के कुछ उपाध्यक्ष इस बात से नाराज़ थे कि सीईओ के पद के लिए उनके नाम पर विचार ही नहीं किया गया। वहीं, ओ'नेल का सारा ध्यान केवल कर्मचारियों की सुरक्षा पर था।

अमेरिका में एल्कोआ के कई कारखाने थे। ओ'नेल ने एक-एक करके सभी कारखानों का दौरा किया। इसके बाद वे 31 देशों में फैली एल्कोआ के सभी शाखाओं का भी दौरा करनेवाले थे। ऐसे ही एक दौरे पर उन्होंने एक कारखाने के कर्मचारियों से कहा, 'मैं आपसे किसी भी मसले पर समझौता करने को तैयार हूँ, लेकिन एक मसला ऐसा है, जिसमें कोई समझौता नहीं हो सकता और वह है, आपकी सुरक्षा। मैं चाहता हूँ कि आपको कभी यह कहने की नौबत न आए कि कंपनी की ओर से आपकी सुरक्षा में कोई कमी रह गई। अगर आप इस मसले पर मुझसे उलझेंगे, तो मैं आपको बता दूँ कि आप मुझसे जीत नहीं पाएँगे।'

ओ'नेल के इस प्रस्ताव की खासियत ये थी कि कोई भी कर्मचारी अपनी सुरक्षा के विरोध में कुछ नहीं कहना चाहता था। कई वर्षों से कर्मचारियों की यूनियनें सुरक्षा के कड़े नियमों के लिए संघर्ष कर रही थीं। मैनेजर भी इस विषय का विरोध नहीं चाहते थे क्योंकि सुरक्षा कम होने से दुर्घटना का डर था। दुर्घटनाओं से कंपनी की कार्यक्षमता कम होती है और कर्मचारियों का आत्मविश्वास कमज़ोर पड़ जाता है।

अधिकतर लोग यह समझ ही नहीं पाए कि ओ'नेल की 'शून्य दुर्घटना योजना' दरअसल एल्कोआ के अब तक के इतिहास में कंपनी के पुनर्निर्माण की सबसे उग्र योजना थी। एल्कोआ के कर्मचारियों को सुरक्षित रखने के लिए यहाँ होनेवाली दुर्घटनाओं के पीछे का मूल कारण ढूँढ़ना ज़रूरी था। इस कारण को जानने के लिए उत्पादन प्रक्रिया का अध्ययन कर उसमें होनेवाली गलतियाँ पहचानने की आवश्यकता थी और इसके लिए ऐसे लोगों को बुलाने की ज़रूरत थी, जो कारखानों की उत्पादन प्रक्रिया के विशेषज्ञ हों। इन विशेषज्ञों ने कर्मचारियों को क्वालिटी कंट्रोल (गुणवत्ता नियंत्रण) की जानकारी दी। साथ ही उन्हें सबसे सही और कारगर तरीके भी सिखाए गए ताकि काम आसानी से पूरा हो। क्योंकि सही तरीका ही सुरक्षित तरीका है।

दूसरे शब्दों में कहा जाए तो एल्कोआ को अपने कर्मचारियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए संसार की सबसे बेहतरीन और सुगठित एल्युमिनियम कंपनी बनना था।

ओ'नेल की 'कर्मचारी सुरक्षा योजना' आदत के फंदे को ध्यान में रखकर बनाई गई थी। उन्होंने एक सरल इशारा चुना - कर्मचारियों के साथ होनेवाली दुर्घटना। उन्होंने एक ऑटोमैटिक रूटीन (स्वयंचलित तयशुदा क्रिया) स्थापित किया - दुर्घटना की स्थिति में उस यूनिट के प्रमुख की यह जिम्मेदारी थी कि वह चौबीस घंटों के अंदर ओ'नेल को घटना की जानकारी दे और साथ ही ऐसी योजना भी बनाए, जिससे भविष्य में दोबारा

ऐसी दुर्घटना न हो। इसका एक इनाम भी था - केवल उन्हीं लोगों को पदोन्नत्ति मिलेगी, जो इस योजना को अपनाएँगे।

युनिट के प्रमुख हमेशा बेहद व्यस्त रहते थे। ओ'नेल को चौबीस घंटे के अंदर दुर्घटना की सूचना देने के लिए यह ज़रूरी था कि उन्हें दुर्घटना होते ही अपने उप-प्रमुख से इसकी जानकारी मिल जाए। इसके लिए उप-प्रमुखों को निरंतर फ्लोर-मैनेजर के संपर्क में रहना पड़ता था। इसके लिए ज़रूरी था कि काम में किसी भी प्रकार की समस्या नज़र आते ही कर्मचारी इस बारे में चेतावनी जारी कर दें। इसके साथ ही उन्हें सुझावों की एक सूची भी रखनी पड़ती थी ताकि कोई उप-प्रमुख जब भी इस योजना पर कुछ पूछना चाहे, तो उनके पास पहले से अनेकों सुझाव हों ताकि नई संभावनाओं के लिए रास्ता खुल सके। यह सब सुचारू रूप से संभव हो, इसके लिए हर यूनिट को संवाद की एक नई व्यवस्था बनानी पड़ी, जिसके जरिए छोटे से छोटा कर्मचारी भी, अपने सुझाव या कोई तरकीब, बड़े से बड़े अधिकारी तक जल्द से जल्द पहुँचा सकता था। ओ'नेल की सुरक्षा योजना को लागू करने के लिए कंपनी के अधिकारियों के अलग-अलग पदानुक्रम यानी उनकी श्रेणी (ग्रेड) को लगभग पूरी तरह परिवर्तित करना पड़ा। इस तरह ओ'नेल नई कॉरपोरेट आदतें विकसित कर रहे थे।

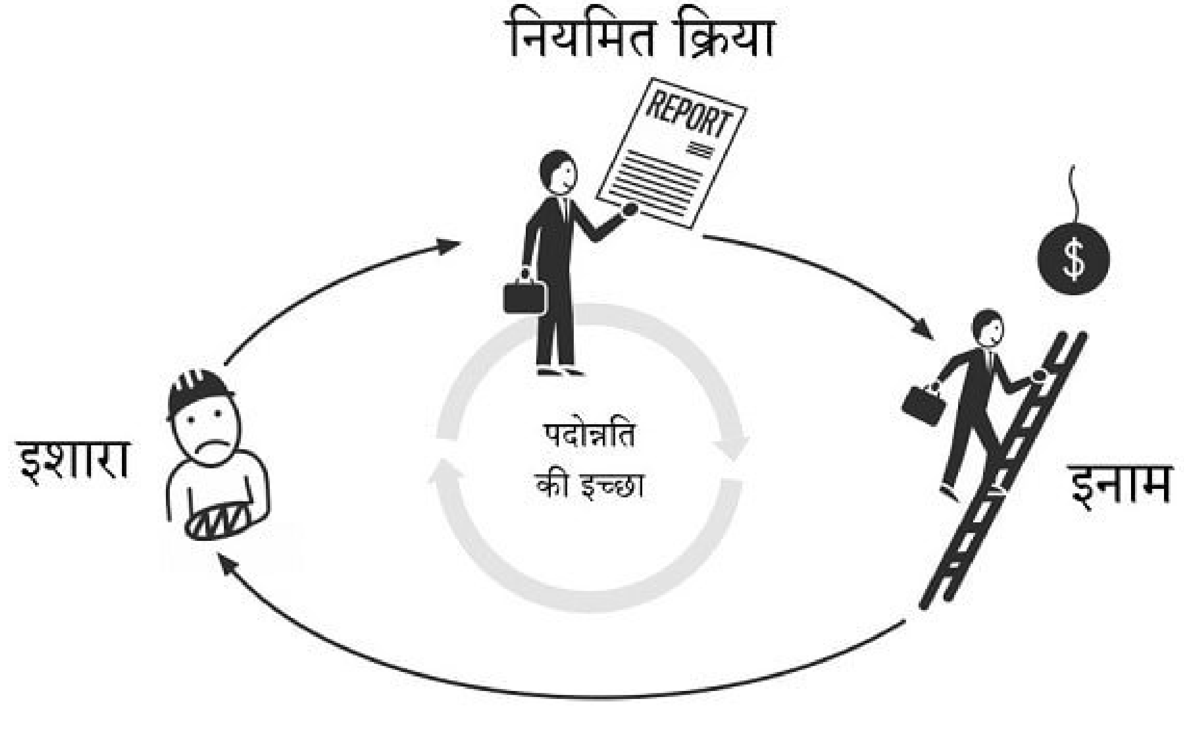

एल्कोआ की संगठनात्मक आदतों का फंदा

एल्कोआ की सुरक्षा संबंधी आदतें परिवर्तित होने पर कंपनी के दूसरे पहलुओं में भी आश्चर्यजनक गति से बदलाव होने लगे। कर्मचारी यूनियन कई वर्षों से 'हर कर्मचारी की

व्यक्तिगत कार्यक्षमता का आँकलन' जैसे नियमों का विरोध कर रही थीं। लेकिन अब इस पहलू पर अचानक हर कोई ध्यान देने लगा। क्योंकि उत्पादन प्रक्रिया में समस्या कहाँ पैदा हो रही है और कहाँ दुर्घटना होने की आशंका है, यह जानने के लिए हर कर्मचारी की कार्यक्षमता का आँकलन आवश्यक था। इसी प्रकार किसी प्रोडक्शन-लाइन (उत्पादन श्रेणी) की गति ज़रूरत से ज़्यादा तेज लगने पर कर्मचारी उस प्रोडक्शन-लाइन को बंद करने का निर्णय अब स्वयं ले सकते थे। जबकि मैनेजरों ने लंबे समय तक इस नीति का विरोध किया था। लेकिन दुर्घटना टालने का सबसे अच्छा तरीका भी यही था। इसलिए अब वे स्वयं इस नीति को लागू कर रहे थे। इन सब चीज़ों के कारण देखते ही देखते कंपनी में इतना परिवर्तन आ गया कि कुछ कर्मचारियों के व्यक्तिगत जीवन में भी सुरक्षा संबंधी आदतों के प्रभाव दिखने लगे।

एल्कोआ के तत्कालीन सुरक्षा संचालक जेफ शॉकी अपना अनुभव बताते हैं, 'दो-तीन वर्ष पहले की बात है। मैं अपने ऑफिस में था और मेरी नज़र यूँ ही खिड़की के बाहर गई। नाइंथ स्ट्रीट के पुल पर दो लोग काम कर रहे थे, लेकिन उनमें से कोई भी अपना काम सुरक्षित ढंग से नहीं कर रहा था।' वहाँ दो लोग थे, जिनमें से एक पुल की रेलिंग पर खड़ा था और दूसरे ने उसे गिरने से बचाने के लिए उसका बेल्ट पकड़ रखा था। उन दोनों ने न तो कोई सुरक्षा कवच पहना था, न ही उनके पास केबल, रस्सी आदि नज़र आ रहे थे। हालाँकि उन दोनों का जेफ शॉकी या एल्कोआ से कोई संबंध नहीं था क्योंकि वे किसी अन्य कंपनी के कर्मचारी थे। लेकिन वह सब देखकर जेफ शॉकी फौरन अपनी कुर्सी से उठे, सीढ़ियों से पाँच मंजिल नीचे उतरे और उन लोगों के पास जा पहुँचे। 'ज़रा सुनो! तुम लोग इतने असुरक्षित ढंग से क्यों काम कर रहे हो? तुम्हें सुरक्षा कवच का उपयोग करना चाहिए।' जेफ की यह सलाह सुनकर उनमें से एक ने बताया कि उनका सुपरवाइजर सुरक्षा उपकरण लाना ही भूल गया है। फिर क्या था, जेफ ने वहाँ के स्थानीय व्यावसायिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य प्रशासन कार्यालय में तुरंत उस सुपरवाइजर की शिकायत कर दी।

एक अन्य अधिकारी ने बताया कि एक दिन उसके घर के करीब रास्ता खोदने का काम चल रहा था। लेकिन उसने देखा कि उन कर्मचारियों के पास ट्रेंच बॉक्स (कर्मचारियों को चोट लगने से बचानेवाला एक उपकरण, जो ढाल की तरह काम करता है) नहीं था। यह देखकर वह अधिकारी उनके पास गया और उन्हें सही ढंग से काम करने का महत्त्व बताने लगा। जबकि वह सप्ताह का आखिरी समय था और अधिकारी अपने बच्चों के साथ कार में था। पर जब उसने यह दृश्य देखा तो उससे रहा नहीं गया और वह उन लोगों को सुरक्षा का महत्त्व समझाने लगा। उसकी यह प्रतिक्रिया सामान्य बात नहीं थी क्योंकि छुट्टी के दिन भला कौन अपने बच्चों के साथ समय बिताने के बजाय दूसरों को समझ देने निकलता है। लेकिन इस घटना से यह स्पष्ट था कि एल्कोआ के कर्मचारियों को अब सुरक्षा का ध्यान रखने के लिए सोचना नहीं पड़ता। अब यह उनसे स्वत: ही हो रहा था।

ओ'नेल ने कभी भी यह दावा नहीं किया था कि कर्मचारियों की सुरक्षा पर ध्यान देने से एल्कोआ का मुनाफा बढ़ जाएगा। लेकिन उनके द्वारा बताए गए नए रूटीन (तयशुदा

क्रियाएँ) जब पूरे संगठन में फैल गए, तो उत्पादन का खर्च कम हो गया, उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ी और कंपनी की कार्यक्षमता आसमान छूने लगी। अगर पिघली हुई धातुएँ उड़ेलते समय मज़दूरों को चोट लगती, तो धातु उड़ेलने की पूरी प्रणाली की पुनर्रचना कर दी जाती थी। इससे दुर्घटनाओं में कमी आने लगी और पैसों की भी बचत हुई क्योंकि दुर्घटनाओं के दौरान जो कच्चा माल गिरकर बर्बाद हो जाता था, वह बंद हो गया। अगर मशीन बार-बार बंद पड़ती थी, तो नई मशीन लगा दी जाती थी। इससे मशीन के किसी टूटे हिस्से से मज़दूरों को चोट लगने की घटनाओं की संख्या में कमी आई। एल्कोआ ने पाया कि मशीनों में खराबी के कारण एल्युमिनियम की गुणवत्ता कम हो जाती थी। इसलिए मशीनें बदलने से उत्पादन की गुणवत्ता में भी सुधार आया।

इस विषय का अध्ययन करनेवाले शोधकर्ताओं को अलग-अलग मौकों पर और लोगों के व्यक्तिगत जीवन में भी इस प्रकार की कार्यशीलता के उदाहरण मिले हैं।

उदाहरण के तौर पर ऐसे शोधकार्य, जिनमें तयशुदा दैनिक क्रियाओं पर व्यायाम के असर का अध्ययन किया गया। जब लोग आदतन व्यायाम करने लगते हैं, चाहे वह सप्ताह में केवल एक ही बार क्यों न हो, तो उनके जीवन के ऐसे पहलुओं में भी परिवर्तन होने लगता है, जिनका व्यायाम से कोई संबंध नहीं होता। कई बार यह परिवर्तन अनजाने में होता है। आमतौर पर आदतन व्यायाम करनेवाले लोग पौष्टिक भोजन करते हैं और उनकी कार्यक्षमता भी बढ़ जाती है। वे धूम्रपान वगैरह नहीं करते या अगर करते भी हैं, तो बहुत कम। इसके साथ ही वे अपने मित्रों एवं परिवार के साथ भी सब्र से पेश आते हैं। वे अपने क्रेडिट कार्ड का उपयोग भी कम करते हैं और अपेक्षाकृत कम चिंता करते हैं। इसका कारण पूरी तरह साफ नहीं है, पर अनेक लोगों के लिए व्यायाम एक ऐसी आदत रही है, जिससे उनके जीवन के सभी पहलुओं में परिवर्तन आया है। यूनिवर्सिटी ऑफ रोड आयलैंड के शोधकर्ता जेम्स प्रोचस्का कहते हैं, 'व्यायाम प्रभावी होता है। व्यायाम में कुछ ऐसा होता है, जिससे अन्य अच्छी आदतों को अपनाना आसान हो जाता है।'

इस दिशा में हुए अनेक शोधों से पता चला है कि जिन परिवारों को एक साथ भोजन करने की आदत होती है, उन परिवारों के बच्चों में गृहकार्य (स्कूल से दिया जानेवाला होमवर्क) पूरा करने और अच्छे अंक प्राप्त करने जैसे गुणों के अलावा बेहतर भावनात्मक नियंत्रण और ज़्यादा आत्मविश्वास भी होता है। रोज़ाना अपना बिस्तर ठीक करने की आदत बेहतर कार्यक्षमता, भलाई की भावना और बजट का पालन करने जैसे गुणों से जुड़ी होती है। ऐसा नहीं है कि एक साथ भोजन करने अथवा बिस्तर ठीक करने भर से पढ़ाई में अच्छे नंबर मिल जाते हैं या खर्चीला स्वभाव नियंत्रण में आ जाता है। इसके पीछे क्या कारण है यह तो स्पष्ट नहीं है, पर शुरुआती दौर के ये परिवर्तन प्रतिक्रियाओं की एक श्रृंखला को जन्म देते हैं, जिससे अन्य अच्छी आदतें अपनाना आसान हो जाता है।

अगर आप अपनी मूल आदत को परिवर्तित करने या विकसित करने पर ध्यान लगाते हैं, तो इसका व्यापक प्रभाव पड़ता है। लेकिन मूल आदतों को पहचानना मुश्किल काम

है। मूल आदतों का पता लगाने के लिए ज़रूरी है कि आप सही दिशा की ओर देखें। मूल आदतों का पता लगाने का अर्थ है, कुछ विशिष्ट गुणों का पता लगाना। अकादमिक परिभाषा के अनुसार मूल आदत का अर्थ है 'छोटी-छोटी जीत'। इनसे अन्य आदतों को खिलने और खुलने का मौका मिलता है। मूल आदतें ढाँचों का निर्माण करती हैं, जिनके कारण ऐसा वातावरण बन जाता है, जिसमें परिवर्तन की लहर पैदा हो सकती है।

लेकिन ओ'नेल और उनके जैसे अनेकों लोगों ने पाया है कि नियमों को समझना और उन्हें जीवन में उतारना दो अलग-अलग चीज़ें हैं। इसके लिए इंसान में प्रतिभा होना सबसे ज़्यादा ज़रूरी है।

2

माइकल फेल्प्स बीजिंग के ओलंपिक विलेज में रहते थे। 13 अगस्त 2008 को उनका दिन सुबह 6.30 के अलार्म से शुरू हुआ। वे बिस्तर से उठे और रोज़ की तरह अपनी नित्यक्रियाओं में लग गए।

उन्होंने कपड़े पहने और टहलते हुए नाश्ता करने जा पहुँचे। उन्होंने इसी सप्ताह तीन स्वर्ण पदक जीते थे। अब उनके पास कुल मिलाकर नौ स्वर्ण पदक थे। आज उनकी दो रेस होनेवाली थी। वे सात बजे कैफेटेरिया में पहुँच गए। उन्होंने नाश्ते में अंडे, ओटमील और चार एनर्जी ड्रिंक्स लिए। आमतौर पर रेस के दिन वे यही नाश्ता करते थे। इस तरह अगले सोलह घंटों में वे कुल छह हज़ार कैलोरीज ग्रहण करनेवाले थे।

दिन की पहली रेस 200 मीटर की बटरलाय रेस थी। फेल्प्स को इस श्रेणी की रेस में महारत हासिल थी। यह रेस दस बजे शुरू होनी थी। रेस शुरू होने से करीब दो घंटे पहले फेल्प्स ने स्ट्रेचिंगवाले व्यायाम शुरू किए। उन्होंने सबसे पहले हाथों का, फिर पीठ का और अंत में टखनों का व्यायाम किया। उनके टखने इतने लचीले थे कि बैले नर्तकों के टखनों से भी अधिक मुड़ने में सक्षम थे। साढ़े आठ बजे वे स्विमिंग पूल में उतरे और रेस के लिए तैयारी का पहला सत्र शुरू कर दिया। सबसे पहले उन्होंने 800 मीटर मिक्स्स स्टाईल किया, इसके बाद 600 मीटर किकिंग की, 400 मीटर तक बुआय को अपने पैरों में खींचा, 200 मीटर स्ट्रोक ड्रिल्स किए और दिल की धड़कनें बढ़ाने के लिए 25 मीटर स्प्रिंट सीरीज़ कीं। इस पूरे व्यायाम में उन्हें 45 मिनट का समय लगा।

सवा नौ बजे वे स्विमिंग पूल से बाहर निकले और अपना एलजेडआर रेसर बॉडीसूट पहनने लगे, जो इतना कसा हुआ होता है कि इसे पहनने में बीस मिनट का समय लग जाता है। इसके बाद उन्होंने हेडफोन पहनकर हिपहॉप म्यूज़िक चलाया, जो वे हर रेस के पहले सुनते थे। फिर वे इंतजार करने लगे।

फेल्प्स ने सात वर्ष की छोटी सी उम्र से ही तैरना शुरू कर दिया था। वे बेहद फुर्तीले थे और उन्हें किसी भी काम से थकान नहीं होती थी। उनकी इस असीमित ऊर्जा को देखकर माँ और शिक्षक हैरान रह जाते थे। फेल्प्स का धड़ चौड़ा, हाथ बड़े और पैर

अपेक्षाकृत ज़रा छोटे थे। पैरे छोटे होने से तैरने में आसानी होती है। फेल्प्स का शारीरिक गठन देखकर वहाँ के स्थानीय कोच बॉब बोमैन समझ गए कि वे तैराकी में चैम्पियन बन सकते हैं। लेकिन फेल्प्स हमेशा से भावुक स्वभाव के थे। रेस से पहले वे शांत नहीं रह पाते थे। ऊपर से उनके माता-पिता का तलाक होने जा रहा था और वे इस तनाव से भी जूझ रहे थे। बोमैन ने शरीर को आराम पहुँचानेवाले व्यायामों की एक पुस्तक खरीदकर फेल्प्स की माँ को दी और उन्हें सलाह दी कि वे इसे रोज ज़ोर-ज़ोर से पढ़कर फेल्प्स को सुनाया करें। इस पुस्तक में व्यायाम संबंधी निर्देश दिए गए थे, जैसे 'पहले दाहिने हाथ की मुट्ठी बंद करें, फिर मुट्ठी खोलें और कल्पना करें कि तनाव आपके शरीर से निकल रहा है।' इस पुस्तक के चलते हर रात सोने से पहले फेल्प्स के तनाव भरे शरीर का हर भाग शिथिल हो जाता।

बोमैन को विश्वास था कि तैराक की सफलता का रहस्य सही रूटीन (तयशुदा क्रियाएँ) बनाने में छुपा होता है। वे जानते थे कि फेल्प्स का शारीरिक गठन तैराकी के लिए उपयुक्त था। लेकिन ओलंपिक में हिस्सा लेनेवाले हर खिलाड़ी का शारीरिक गठन बेहतरीन दर्जे का ही होता है। फेल्प्स उस समय बहुत कम उम्र के थे, पर बोमैन ने उनमें खिलाड़ियों वाला जुनून देखा था। हर उत्कृष्ट खिलाड़ी में यह गुण ज़रूर होता है।

बोमैन ने फेल्प्स में कुछ ऐसी आदतें विकसित कीं, जिनकी मदद से वे मानसिक तौर पर सबसे शक्तिशाली तैराक बन सके और बाकी सभी तैराकों से अलग पहचान बनाने में कामयाब हो। इसके लिए बोमैन को फेल्प्स के जीवन के हर पहलू को नियंत्रित करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। उन्हें तो केवल फेल्प्स की कुछ चुनिंदा आदतों पर ध्यान देना था। ऐसी चुनिंदा आदतें, जिनका तैरने से कोई संबंध नहीं था, लेकिन जिनसे फेल्प्स में सही मानसिकता विकसित हो सकती थी। उन्होंने कुछ ऐसे व्यवहारों की श्रृंखला बनाई, जिससे फेल्प्स रेस से पहले शांत होकर अपना ध्यान केंद्रित कर सके। तैराकी की रेस में जीत और हार का फर्क केवल कुछ मिलीसेकेंड से भी तय हो सकता है। इसीलिए इन श्रृंखलाओं से फेल्प्स को वे छोटे-छोटे फायदे मिलते थे, जिनसे उनकी जीत पक्की हो सके।

किशोर उम्र के फेल्प्स जब अभ्यास पर निकलते थे, तो बोमैन उन्हें याद दिलाते थे कि 'हर रात सोने से पहले और रोज सुबह उठने के बाद वह वीडियो टेप ज़रूर देखना, जो मैंने तुम्हें बताया था।'

यह वीडियो टेप वास्तविक नहीं था। यह तो रेस में बेहतरीन प्रदर्शन का दृश्य अपने मन में देखने का व्यायाम था। इसे मानसिक-दर्शन कहा जा सकता है। हर रात सोने से पहले और रोज़ सुबह जागने के बाद फेल्प्स बिना कोई गलती किए धीमी गति से पूल-ब्लॉक्स में छलाँग लगाने की कल्पना करते थे। वे अपने स्ट्रोक्स, स्विमिंग पूल की दीवारें, मुड़ने की क्रिया और रेस का अंत आदि सारे दृश्यों की मानसिक-कल्पना करते थे। उनके पीछे पानी का बहाव, पानी से बाहर निकलने पर उसके भीगे शरीर से टपकता पानी, स्वीमिंग पूल से बाहर निकलने के बाद और अंत में अपने सिर से टोपी उतारना

आदि कैसा महसूस होगा; फेल्प्स इन सारे दृश्यों को अपने मन में देखते थे। वे अपने बिस्तर पर लेटकर अपनी आँखें बंद करते और पूरी तैराकी की रेस का मानसिक-दर्शन करते थे। वे उसके छोटे से छोटे ब्यौरे पर भी नज़र रखते थे। फेल्प्स इन दृश्यों को तब तक बार-बार दोहराते रहते, जब तक उन्हें इन दृश्यों का एक-एक हिस्सा अच्छी तरह याद न हो जाए।

अभ्यास के दौरान बोमैन जब फेल्प्स को रेस की गति से तैरने का आदेश देते, तो उनके शब्द होते थे, 'अपना वीडियो टेप चलाओ।' इससे फेल्प्स पहले से भी बेहतर प्रदर्शन करने की कोशिश करने लगते। हालाँकि पानी से निकलने के बाद भी उन्हें संतुष्टि नहीं मिलती थीं क्योंकि वे यह सब अपने दिमाग में इतनी बार देख चुके थे कि उन्हें सब कुछ रटा-रटाया सा लगता। लेकिन यह तरकीब कारगर थी और अच्छे परिणाम देती थी। फेल्प्स की तैरने की गति दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। आगे चलकर बोमैन को रेस से पहले फेल्प्स के कानों में केवल इतना कहना पड़ता था, 'अपना वीडियो टेप चलाओ,' और इसके बाद फेल्प्स के प्रतिस्पर्धियों के पास हार का सामना करने के अलावा कोई और विकल्प नहीं बचता था।

बोमैन ने फेल्प्स के जीवन में कुछ मुख्य रूटीन (तयशुदा क्रियाएँ) स्थापित किए। जिसके परिणाम स्वरूप फेल्प्स की बाकी सारी आदतें जैसे, पौष्टिक भोजन, अभ्यास, व्यायाम और आराम अपने आप नियमित हो गईं। ये आदतें इतनी प्रभावकारी क्यों थीं? इन आदतों ने मूल आदतों का काम कैसे किया? अकादमिक साहित्य में इन सब सवालों का बस एक ही जवाब है, 'छोटी जीत।'

***

'छोटी जीत' का अर्थ सीधा सा है। मूल आदतों द्वारा जिस तरह बड़े पैमाने पर परिवर्तन आता है, हर 'छोटी जीत' उसका महत्वपूर्ण हिस्सा होती है। अनेक शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि छोटी जीत में अपार शक्ति होती है और यह इंसान की सबसे बड़ी जीत को सुनिश्चित करने में उल्लेखनीय भूमिका निभाती है। यहाँ तक कि अगर इसकी तुलना सबसे बड़ी जीत से भी की जाए, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। कोर्नेल के एक प्रोफेसर ने सन 1984 में लिखा था, 'हर छोटी जीत दरअसल छोटे-छोटे फायदों की ओर पहला कदम होती है। एक छोटी सी जीत हासिल करने पर भी ऐसी शक्तियाँ कार्यरत हो जाती हैं, जिनसे कई छोटी-छोटी जीतें हासिल करने के दरवाजे खुल जाते हैं। निरंतर छोटी-छोटी जीतें हासिल करने से इंसान को कई छोटे-छोटे फायदे होते हैं, जिससे उसके अंदर एक पैटर्न बन जाता है। यह पैटर्न उसे भरोसा दिलाता है कि इन छोटी-छोटी जीतों की ही तरह बड़ी जीत भी हासिल की जा सकती है।

उदाहरण के लिए जब सन 1960 में समलैंगिक अधिकार संगठन ने होमोफोबिआ (समलैंगिक लोगों के प्रति प्रबल घृणा) के खिलाफ मोर्चा शुरू किया, तो शुरुआती दौर में उन्हें केवल असफलता ही हाथ लगी। उन्होंने समलिंगियों पर मुकदमा चलाने के

कानून को खत्म कराने की कोशिश की, पर राज्य विधानसभा में उन्हें हार का सामना करना पड़ा। कुछ अध्यापकों ने समलैंगिक किशोर छात्रों को परामर्श देने के उद्देश्य से ऐसे पाठ्यक्रमों की रचना की, जिनमें समलैंगिकता को अपनाने के बारे में सुझाव दिए गए थे। लेकिन इन अध्यापकों को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा। समलैंगिक अधिकार संगठन के मूल उद्देश्य थे, समलैंगिकों के साथ होनेवाले भेदभाव को जड़ से मिटाना, पुलिस द्वारा समलैंगिकों के उत्पीड़न पर रोक लगाना और अमेरिकी मनोवैज्ञानिक संघ को यह यकीन दिलाना कि समलैंगिकता मानसिक बीमारी नहीं है आदि। लेकिन अब उन्हें लगने लगा था कि इन उद्देश्यों को पूरा करना संभव नहीं है।

समलैंगिकों की आज़ादी के लिए कार्यरत अमेरिकी लाइब्रेरी एसोसिएशन की टास्क फोर्स ने सन 1970 में एक छोटे लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करने का निर्णय लिया। उनका लक्ष्य था कि लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस को इस बात के लिए राज़ी करना कि वह समलैंगिक स्वतंत्रता आंदोलन की पुस्तकों को एच.क्यू 71-471 (इस धारा में अप्राकृतिक यौन संबंध तथा यौन अपराध शामिल होते हैं) नामक श्रेणी से हटाकर किसी ऐसी श्रेणी में रखे, जो अपमानजनक न हो।

सन 1972 में, लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस को यह आवेदन-पत्र मिला। उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया और इस विषय की पुस्तकों को दोबारा श्रेणीबद्ध किया। उन्होंने इसके लिए पुस्तकों की एक नई श्रेणी बनाई - एच.क्यू. 76.5 (इस वर्ग में स्त्री-पुरुष समलैंगिकता और समलैंगिक स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ी सामग्री शामिल थी) यह एक छोटा सा परिवर्तन था। पुस्तकें श्रेणीबद्ध करके रखने की एक पुरानी संगठनात्मक आदत में एक छोटा सा सुधार, लेकिन इसके रोमांचक परिणाम सामने आए। इस नई नीति की खबर देशभर में फैली। इस जीत का हवाला देते हुए समलैंगिक अधिकार संगठन चंदा इकट्ठा करने के लिए कार्यक्रम आयोजित करने लगे। कुछ ही वर्षों में कैलिफोर्निया, न्यूयॉर्क, मैसाच्युसेट्स और ऑरेगॉन जैसे इलाकों के कई नेता अपनी समलैंगिकता सबके सामने स्वीकार करते हुए चुनाव में खड़े होने लगे। लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस के निर्णय से मिली जीत के कारण ही वे यह सब करने के लिए प्रोत्साहित हुए थे। अनेक वर्षों की कोशिशों के बाद, आखिरकार सन 1973 में, अमेरिकन साइकैट्रिक एसोसिएशन ने समलैंगिकता की परिभाषा में परिवर्तन किया और यह स्वीकार किया कि समलैंगिकता कोई मानसिक बीमारी नहीं है। इस परिभाषा ने समलैंगिकता पर नए कानून बनाने का रास्ता साफ कर दिया। इन नए कानून के चलते अब किसी के लैंगिक चुनाव के आधार पर उसके साथ भेदभाव करना गैरकानूनी तौर पर अपराध माना गया।

यह सब एक छोटी जीत के कारण ही संभव हो पाया।

प्रसिद्ध संगठनात्मक मनोवैज्ञानिक कार्ल वेईक लिखते हैं, ‘छोटी जीत का कोई निश्चित क्रम नहीं होता, यह एक सही क्रम में आगे नहीं बढ़ती। छोटी जीत से आप यह नहीं पता कर सकते कि आप अपना लक्ष्य प्राप्त करने के करीब पहुँच गए हैं या नहीं। छोटी जीत भिन्न परिस्थितियों में छोटे प्रयोगों की भाँति बिखरी हुई सी होती है।

पर इन प्रयोगों से बाधाओं और अवसरों का पता चलता है। साथ ही ऐसे नए संसाधनों और बाधाओं की जानकारी भी मिलती है, जो उस परिस्थिति के बनने से पहले अदृश्य थे।'

माइकल फेल्प्स के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ था! बॉब बोमैन ने जब फेल्प्स और उनकी माँ को मानसिक-दर्शन और आराम की मूल आदतों पर काम करने के लिए कहा तब उनमें से कोई भी नहीं जानता था कि वे दरअसल क्या कर रहे हैं। बोमैन अपना अनुभव बाँटते हुए कहते हैं, 'हम तब तक अलग-अलग चीज़ों के साथ प्रयोग करते रहे, जब तक किसी एक चीज़ से हमें लाभ नहीं होने लगा। आगे चलकर हमें ये एहसास हुआ कि हम जीत के छोटे क्षणों पर ध्यान लगाकर उनके द्वारा मानसिक ट्रिगर बना सकते हैं। हमने इसे अपने रूटीन (तयशुदा क्रिया) का हिस्सा बनाया। हम तैराकी की हर रेस के पहले कुछ विशिष्ट शृंखलाबद्ध क्रियाएँ करते हैं। इनका उद्देश्य होता है, फेल्प्स में जीत का अनुभव पैदा करना।'

'अगर आप फेल्प्स से यह सवाल करें कि स्पर्धा से पहले उसके दिमाग में क्या चल रहा होता है, तो वह कहेगा कि वह उस बारे में सोच ही नहीं रहा है क्योंकि वह केवल प्रोग्राम का पालन कर रहा है। लेकिन ये जवाब पूरी तरह सही नहीं है। दरअसल उस समय फेल्प्स की आदतें सक्रिय होती हैं। रेस शुरू होने तक फेल्प्स अपने लक्षय का आधा मार्ग तय कर चुका होता है और हर कदम पर उसे जीत हासिल हुई होती है। उसके सारे स्ट्रेचेस उसकी योजनानुसार ही हुए होते हैं। उसका वॉर्म-अप भी वैसा ही होता है, जैसा उसने अपने मानसिक-दर्शन में देखा था। उसके हेडफोन्स में वही संगीत चल रहा होता है, जो उसने सोचा था। यह पूरी योजना उसने दिन की शुरुआत में ही बनाई थी और असल रेस इस योजना का केवल एक हिस्सा थी; वह इस योजना के हर कदम पर विजयी हुआ था। अत: रेस में जीतना इस पूरी प्रक्रिया का केवल सहज विस्तार था।'

बीजिंग में, सुबह के 9 बजकर 56 मिनट का समय हुआ था। रेस में अब केवल 4 मिनट बाकी थे और फेल्प्स अपने शुरुआती बिंदु के पीछे खड़े, धीरे-धीरे अपने पंजों पर उछल रहे थे। रेस की घोषणा करनेवाले व्यक्ति ने फेल्प्स का नाम लिया। फेल्प्स हमेशा की तरह अपने शुरुआती बिंदु पर खड़े थे और फिर वे एक पायदान नीचे उतरे। वे बारह साल की उम्र से ही रेस शुरू होने से पहले, एक पायदान नीचे उतरकर तीन बार अपनी बाहें हवा में घुमाते थे। आज भी उन्होंने वही किया। वे एक बार फिर शुरुआती बिंदु पर आकर खड़े हो गए और अपनी मुद्रा में आ गए। इसके कुछ क्षणों बाद जैसे ही रेस शुरू होने की घोषणा के लिए बंदूक की गोली चली, वे पानी में कूद गए।

पानी में जाते ही फेल्प्स जान गए कि आज कुछ गड़बड़ है। पूल का पानी उनके गॉगल्स के अंदर तक आ रहा था। फेल्प्स ये भी नहीं जानते थे कि उनके गॉगल्स में नीचे छेद था या ऊपर। उन्होंने इस उम्मीद में अपना सिर पानी से बाहर निकाल लिया कि यह छेद ज़्यादा बड़ा न हो जाए।

लेकिन दूसरे मोड़ को पार करने तक उनके लिए सब कुछ धुँधला हो चुका था। फेल्प्स तीसरे मोड़ और आखरी लैप तक पहुँच पाते, इससे पहले ही उनके गॉगल्स में पूरी तरह पानी भर चुका था। अब फेल्प्स को न तो स्विमिंग पुल के नीचे बनी लकीर नज़र आ रही थी, न ही वो 'टी' नज़र आ रहा था, जिससे दीवार के करीब होने की सूचना मिलती है। वे ये भी नहीं देख पा रहे थे कि जीत के लिए कितने स्ट्रोक बचे हैं। फेल्प्स उस समय पूरी तरह दृष्टिहीन से हो गए थे। ओलंपिक के फाइनल में इस तरह की समस्या सामने आने से किसी भी तैराक के मन में खलबली मच सकती है।

लेकिन फेल्प्स एकदम शांत थे।

उस दिन भी बाकी सब कुछ फेल्प्स की योजना के अनुसार ही हुआ था। गॉगल्स में छेद होना, उसकी योजना में एक छोटी-सी रुकावट थी, जिसका सामना करने के लिए फेल्प्स पहले से तैयार थे। एक बार बोमैन ने फेल्प्स को मिशिगन के स्वीमिंग पूल में आँखें बंद करके तैरने के लिए कहा था। उनका कहना था कि फेल्प्स को हर अनपेक्षित परिस्थिति के लिए तैयार रहना चाहिए। फेल्प्स अपने मानसिक दर्शन में जो दृश्य देखते थे, उसमें से कुछेक में इस परिस्थिति का सामना करने की पूरी तैयारी थी। गॉगल्स खराब होने पर फेल्प्स क्या करेंगे, इसकी मानसिक तैयारी वे पहले ही कर चुके थे। अपना आखिरी लैप शुरू करते ही फेल्प्स ने अंदाजा लगा लिया कि इस लैप की समाप्ति के लिए करीब 19-20 स्ट्रोक्स की ज़रूरत है। उन्होंने गिनती शुरू की और आगे बढ़ते रहे। वे बहुत तेजी से तैर रहे थे और उनका मन बिल्कुल शांत था। जैसे ही उन्होंने आधा लैप पार किया, उन्होंने पूरी क्षमता लगाकर अपनी तैरने की गति बढ़ा दी। अपने प्रतिस्पर्धियों को पराजित करने की यह उनकी एक विशेष तकनीक थी। 18वें स्ट्रोक के बाद उन्हें लगने लगा कि स्वीमिंग पूल की दीवार बस आने ही वाली है। वे श्रोताओं को चीखते हुए सुन सकते थे, लेकिन गॉगल्स में पानी भरा होने के कारण वे ये नहीं देख पा रहे थे कि श्रोता उन्हें प्रोत्साहन देने के लिए चीख रहे हैं या फिर उनका कोई प्रतिस्पर्धी उन्हें पीछे छोड़ आगे बढ़ता जा रहा है। इसके बाद उन्नीसवाँ स्ट्रोक हुआ और फिर बीसवाँ। अपने मानसिक वीडिया-टेप से उन्हें लगा कि अभी एक और स्ट्रोक की आवश्यकता है। उन्होंने इक्कीसवें स्ट्रोक के लिए जैसे ही अपनी बाहें फैलाईं, उनका हाथ स्वीमिंग पूल की दीवार को छू गया। उन्होंने बिल्कुल सही अंदाजा लगाया था। वे पानी से बाहर आए और गॉगल्स उतारे। स्कोरबोर्ड पर माइकल फेल्प्स के नाम के आगे लिखा था - 'डब्लू. आर.' यानी वर्ल्ड रेकॉर्ड। फेल्प्स ने एक और स्वर्ण पदक अपने नाम कर लिया था।

इस रेस के बाद एक पत्रकार ने फेल्प्स से पूछा कि बिना देखे तैरते समय उन्हें कैसा महसूस हो रहा था?

'मुझे वैसा ही महसूस हो रहा था, जैसा मैंने सोचा था,' उन्होंने जवाब दिया। जीवनभर की छोटी-छोटी जीतों में यह उनकी एक और सफलता थी।

***

पॉल ओ'नेल को एल्कोआ का सीईओ बने छह महीने हो चुके थे। एक बार एरीजोना के कारखाने के मैनेजर ने उन्हें देर रात फोन किया। वह बहुत घबराया हुआ लग रहा था। उसने बताया कि एक नवयुवक ने कुछ ही हफ्तों पहले कारखाने में काम करना शुरू किया था। वह अपने काम को लेकर बहुत ही उत्साहित था क्योंकि कारखाने के नियमों के अनुसार उसकी गर्भवती पत्नी को चिकित्सा सुविधाएँ मिल रही थीं। पर आज जब कारखाने की एक्सट्रूजन प्रेस बंद हो गई, तो उस नवयुवक ने प्रेस को ठीक करने का प्रयास किया। उसने कूदकर प्रेस के इर्दगिर्द बनी पीले रंग की सुरक्षा दीवार लाँघी और आगे बढ़ा। प्रेस के अंदर छह फुट का एक लंबा और शक्तिशाली मशीनी हाथ था, जिसके जोड़ में एल्युमिनियम का एक टुकड़ा फँस गया था। इसी कारण मशीन बंद हो गई थी। उस नवयुवक ने एल्युमिनियम का वह टुकड़ा खीचकर बाहर निकाल दिया और मशीन ठीक हो गई। लेकिन जैसे ही प्रेस शुरू हुआ, नवयुवक के पीछे लगा मशीनी हाथ गतिशील हुआ और सीधे आकर उसके सिर से टकराया। इससे उस युवक का सिर बुरी तरह कुचल गया और उसी क्षण उसकी मौत हो गई।

घटना के चौदह घंटों बाद ओ'नेल ने सभी कारखानों के अधिकारियों और एल्कोआ के पीट्सबर्ग ऑफिस के सभी मुख्य अधिकारियों को बुलाकर आपातकालीन बैठक की। उन सभी ने दिनभर बार-बार वीडियो टेप देखकर और ढेरों रेखाचित्र बनाकर बड़ी मुश्किल से कागज़ पर इस हादसे की तस्वीरें बनाई थीं। ताकि यह समझा जा सके कि इस दुःखद घटना के पीछे क्या कारण थे। इन तस्वीरों का अध्ययन करने पर उन्हें हादसा होने के एक दर्जन से भी ज़्यादा कारण नज़र आए। उन्हें कारखाने के दो मैनेजरों की गलती भी नज़र आई, जिन्होंने उस युवक को दीवार लाँघते देखा पर उसे रोका नहीं। कर्मचारियों के प्रशिक्षण कार्यक्रम में उस युवक को यह बात ठीक से नहीं समझाई गई थी कि मशीन खराब होने का दोष मज़दूरों को नहीं दिया जाएगा। उस युवक को यह सूचना भी ठीक से नहीं दी गई थी कि मशीन ठीक करने की कोशिश करने से पहले उसे अपने मैनेजर से बात करनी चाहिए। साथ ही हादसे का एक कारण यह भी समझ में आया कि चूँकि मशीन में ऐसे अत्याधुनिक सेंसर नहीं लगे थे, जो किसी कर्मचारी के दीवार लाँघकर मशीन के करीब जाने की स्थिति में मशीन को तुरंत बंद कर दें इसलिए भी यह हादसा हुआ।

ओ'नेल ने बड़ी गंभीरता से कहा, 'इस युवक की मृत्यु हमारे कारण हुई है, यह मेरी लीडरशीप की हार है। उसकी मौत का कारण मैं हूँ। हम सभी अधिकारी उसकी मौत के जिम्मेदार हैं।'

कमरे में बैठे सभी अधिकारी अचंभे में पड़ गए। इसमें कोई दोराय नहीं था कि यह घटना बहुत ही दुःखद थी। लेकिन एल्कोआ एक विशाल कंपनी थी, जिसके मज़दूर रोज़ाना गर्म धातुओं और आत्मघाती मशीनों के बीच काम करते थे और कभी न कभी एल्कोआ में ऐसी घटनाएँ हो ही जाती थीं। कंपनी के एक प्रमुख अधिकारी बील ओ'रूरके बताते हैं कि 'पॉल व्यापार की दुनिया से नहीं थे। वे एल्कोआ में एक बाहरी व्यक्ति थे। जब उन्होंने पद सँभालते ही सुरक्षा की बात शुरू की थी, तभी से लोगों को उनकी कुशलता पर संदेह होने लगा था। हम सभी ने सोचा कि शायद वे कुछ दिनों तक

इस विषय पर बात करेंगे और फिर इसे भूलकर किसी और विषय पर ध्यान केंद्रित कर लेंगे। लेकिन नवयुवक की मौत के बाद जो मीटिंग हुई, उसमें पॉल के शब्दों को सुनकर हर कोई हड़बड़ा गया। अब सभी को समझ में आ गया था कि ओ'नेल ने इस विषय को कितनी गंभीरता से लिया था। वे एक ऐसे मज़दूर के लिए रात-रातभर जाग रहे थे, जिससे वे कभी मिले भी नहीं थे। इस क्षण के बाद ही कंपनी में असल परिवर्तन शुरू हुआ।'

इस मीटिंग के एक सप्ताह बाद ही एल्कोआ के सभी कारखानों की सुरक्षा दीवारें भड़कीले पीले रंग में रंग दी गईं। साथ ही नई सुरक्षा नीतियाँ भी बनाई गईं। मैनेजरों ने सभी कर्मचारियों को कारखानों और मशीनों के रखरखाव के बारे में सुझाव देने के लिए प्रोत्साहित किया। सभी को दोबारा सारे नियम समझाए गए और एक-एक सूचना विस्तार से साफ-साफ बताई गई। ताकि कोई भी कर्मचारी किसी मशीन को ठीक करने के लिए असुरक्षित तरीका न अपनाए। इस नई सतर्कता के चलते बहुत ही कम समय में दुर्घटनाओं की संख्या तेजी से कम हो गई। इस तरह एल्कोआ को एक छोटी जीत का अनुभव मिल गया।

इसके बाद एक बार फिर ओ'नेल ने कुछ ऐसा किया, जिसकी उम्मीद किसी ने नहीं की थी।

उन्होंने एक मेमो लिखा, जो कंपनी के हर कारखाने और दफ्तर में भेजा गया। इसमें उन्होंने लिखा था, 'मैं आप सभी को बधाई देना चाहता हूँ। आप सभी ने कंपनी में दुर्घटनाओं की संख्या कम करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, भले ही अभी ऐसा हुए सिर्फ दो सप्ताह ही क्यों न बीते हों। पर हमें इस बात की खुशी नहीं मनानी है कि हमने नियमों का पालन किया है या दुर्घटनाओं की संख्या कम कर ली है। हमें तो इस बात की खुशी मनानी है कि हम सभी ने मिलकर कितनी सारी जिंदगियाँ बचाई हैं।'

इस संदेश से कंपनी के कर्मचारी इतने प्रभावित हुए कि कई कारखानों के मज़दूरों ने ओ'नेल के मेमो की ढेरों प्रतियाँ बनाकर अपने-अपने लॉकर में चिपका लीं। एक कर्मचारी ने तो धातु गलाने के कारखाने की दीवार पर ओ'नेल का चित्र बना दिया। इस चित्र के नीचे ओ'नेल के मेमो का एक वाक्य भी लिख दिया गया। जिस तरह माइकल फेल्प्स के रूटीन्स (तयशुदा आदतों) का उनके तैरने से कोई संबंध नहीं था पर वे उनकी सफलता का कारण थे, ठीक उसी तरह ओ'नेल की कोशिशों ने भी अपना असर दिखाया और ऐसे बदलाव लाए, जिनका सुरक्षा से कोई सीधा संबंध नहीं था, पर वे कंपनी के रूपांतरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण थे।

ओ'नेल बताते हैं, 'मैंने मज़दूरों से कहा कि अगर आपका प्रबंधन सुरक्षा के मुद्दे पर काम नहीं कर रहा है, तो आप मुझे मेरे घर पर भी फोन लगा सकते हैं। ये रहा मेरा नंबर...।' मज़दूरों ने फोन करना शुरू भी कर दिया। लेकिन वे दुर्घटनाओं के बारे में नहीं बल्कि नए सुझावों के बारे में बात करना चाहते थे।'

एल्कोआ का एक कारखाना घरों में लगनेवाली एल्युमिनियम की पट्टियों का उत्पादन करता था। यह कारखाना कई वर्षों से मुनाफा हासिल करने के लिए जूझ रहा था। उसके अधिकारी पट्टियों के लिए उन रंगों का चुनाव करने की कोशिश करते, जो उस समय चलन में होते, लेकिन वे इस काम में अक्सर चूक जाते थे। वे सही रंगों का चुनाव करने के लिए सलाहकारों पर लाखों डॉलर खर्च कर डालते, जिसके बाद छह महीनों में ही गोदाम 'सूरजमुखी' जैसे पीले रंग की पट्टियों से भर जाता और तभी अचानक बाज़ार में 'गहरे हरे' रंग की पट्यिों की माँग बढ़ जाती। एक दिन एक छोटे पद पर काम करनेवाले कर्मचारी ने ऐसा सुझाव दिया, जो तुरंत जनरल मैनेजर तक पहुँचाया गया। उसका सुझाव था कि अगर कंपनी अलग-अलग रंग में रंगनेवाली सभी मशीनों को एक साथ एक जगह इकट्ठा कर दे, तो वे ग्राहकों की माँग के अनुसार मशीन में भरे जानेवाले रंग को आसानी से बदल पाएँगे। इस सुझाव से एक ही साल में एल्युमिनियम की पट्टियों के उत्पादन से कंपनी को दोगुना मुनाफा होने लगा।

ओ'नेल द्वारा सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित करके एक छोटी जीत हासिल करने से कंपनी में इतना सकारात्मक माहौल बन गया, जिससे नई-नई कल्पनाओं और सुझावों को सामने आने का मार्ग प्रशस्त हो गया।

एल्कोआ के एक अधिकारी ने बताया, 'हमें बाद में पता चला कि रंगों की मशीनों को एक जगह इकट्ठा करने की यह कल्पना उस कर्मचारी के मन में पिछले एक दशक से थी। लेकिन उसने कभी किसी को बताने की हिम्मत ही नहीं की। फिर जब कंपनी ने हर कर्मचारी से सुरक्षा के लिए सुझाव माँगे, तो उस कर्मचारी ने सोचा कि यह सुझाव भी देकर देखा जाए। बस फिर क्या था, हमें तो जैसे लॉटरी का टिकट मिल गया हो।'

3

पॉल ओ'नेल अपनी जवानी में एक सरकारी कर्मचारी थे। वहाँ उन्होंने ऐसी योजना बनाई थी, जिससे यह पता लग सके कि चिकित्सा से जुड़ी योजनाओं पर सरकार कितना पैसा खर्च करती है। उस समय अधिकारियों के सामने सबसे गंभीर विषय था, नवजात शिशुओं की बढ़ती मृत्यु दर। अमेरिका दुनिया के सबसे अमीर राष्ट्रों में से एक था। इसके बावजूद वहाँ की नवजात शिशु मृत्यु दर यूरोप और दक्षिण अमेरिका से भी ज़्यादा थी। अमेरिका के ग्रामीण इलाकों में तो यह आँकड़ा और भी ज़्यादा था। यहाँ ज़्यादातर शिशु जन्म के एक साल के अंदर मर जाते थे।

ओ'नेल को इसका कारण ढूँढ़ने की जिम्मेदारी सौंपी गई। उन्होंने दूसरी सरकारी एजेंसियों से संपर्क किया और उन्हें नवजात शिशुओं की मृत्यु से जुड़ी सारी जानकारी का अध्ययन करने के लिए कहा। इसके बाद जब भी इन सरकारी एजेंसियों का कोई व्यक्ति इस विषय से पर कोई जवाब लेकर ओ'नेल के पास जाता, तो वे उससे इसी विषय पर नए प्रश्न पूछने लगते। लोग उनके इस व्यवहार से परेशान हो चुके थे पर वे तो बस समस्या की जड़ तक पहुँचने के लिए ऐसा करते थे। वे हर समय सभी को नई चीज़ें सीखने और

इस समस्या को और गहराई से समझने के लिए कहते रहते थे। (एक अधिकारी ने बताया, 'मैं ओ'नेल को बहुत पसंद करता हूँ, लेकिन अब आप मुझे कितना भी पैसा दें, मैं उनके लिए दोबारा काम नहीं करनेवाला। अगर कोई उस इंसान के एक सवाल का जवाब दे देता था, तो वह उसके लिए बीस घंटे का काम और बढ़ा देता था।)

कुछ शोधों से पता चला कि नवजात शिशुओं की मृत्यु का एक बड़ा कारण था, उनका समय से पहले जन्म लेना। ऐसा इसलिए होता था क्योंकि गर्भवती महिलाएँ कुपोषण का शिकार थीं। यानी शिशुओं की मृत्यु दर कम करने के लिए ज़रूरी था कि गर्भवती महिलाओं को पोषक आहार दिया जाए। यह सब सुनने में बड़ा आसान लगता है, लेकिन कुपोषण रोकने के लिए महिलाओं को गर्भधारण करने से पहले ही अपना आहार सुधारने की आवश्यकता थी। इसके लिए ज़रूरी था कि सरकार महिलाओं को यौन संबंधों के लिए तैयार होने से पहले ही सही आहार लेने के लिए प्रशिक्षित करें। इसका सबसे सटीक तरीका यही था कि महाविद्यालयों में पौष्टिक आहार के बारे में जानकारी देने के लिए नए पाठ्यक्रम शुरू किए जाएँ।

जब ओ'नेल ने इस विषय पर सवाल पूछने शुरू किए कि पौष्टिक आहार के बारे में जानकारी देनेवाला पाठ्यक्रम कैसे बनाया जाए, तो एक और बात सामने आई। उन्होंने पाया कि ग्रामीण इलाकों के शिक्षकों को जीवविज्ञान का इतना ज्ञान नहीं था कि वे पौष्टिक आहार के बारे में ठीक से पढ़ा सकें। इस समस्या के हल के तौर पर सरकार को इस बात पर ध्यान देना पड़ा कि महाविद्यालयों में भावी शिक्षकों को कैसे पढ़ाया जा रहा है। यहाँ इन भावी शिक्षकों को जीवविज्ञान का विषय ठीक से पढ़ाने पर ज़ोर दिया गया ताकि वे आगे चलकर किशोर लड़कियों को आहार संबंधी विषय बेहतर ढंग से पढ़ा सकें। तभी यह संभव था कि लड़कियों का शरीर यौन संबंधों के लिए तैयार हो, उससे पहले ही उन्हें पौष्टिक भोजन मिल सके और आगे चलकर वे एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दे सकें।

आखिरकार ओ'नेल के लिए काम करनेवालों ने शिशु मृत्यु दर का मूल कारण खोज निकाला - भावी शिक्षकों के प्रशिक्षण की अयोग्यता। अगर अधिकारियों को शिशुओं का मृत्यु दर कम करने के लिए योजना बनाने को कहा जाता तो इसके लिए शिक्षकों का प्रशिक्षण सुधारने की बात कोई नहीं करता। वे इन दोनों विषयों के बीच की कड़ी खोज ही नहीं पाते। लेकिन ओ'नेल ने सुनिश्चित किया कि उच्च महाविद्यालयों में जीवविज्ञान ठीक से पढ़ाकर ऐसे शिक्षक तैयार हो सकें, जो आनेवाली पीढ़ी को पौष्टिक आहार का ज्ञान दे सकें। ताकि किशोरावस्था के लोग सही आहार लेने लगें और वर्षों बाद स्वस्थ बच्चों को जन्म देने लगें। जब ओ'नेल ने यह नौकरी शुरू की थी, उस समय के मुकाबले आज अमेरिका की शिशु मृत्यु दर 68 फीसदी कम हो चुकी है।

मूल आदतें अन्य आदतों को परिवर्तित करने का सरल मार्ग तैयार करती हैं। इसका एक ठोस सबूत हमें पॉल ओ'नेल के नवजात शिशुओं की मृत्युदर घटाने के अनुभव से मिलता है। यानी ऐसी प्रणाली का निर्माण, जिसमें मूल आदत को परिवर्तित करने से उसका प्रभाव बाकी आदतों पर भी पड़ता है। नवजात शिशु मृत्युदर घटाने के लिए

शिक्षक प्रशिक्षण केंद्रों का पाठ्यक्रम बदलने से प्रतिक्रियाओं की ऐसी श्रृंखला शुरू हुई, जिससे सामने आया कि ग्रामीण लड़कियों को कैसी शिक्षा दी जाती है और गर्भधारणा के दौरान उन्हें सही आहार मिलता है या नहीं। इसके साथ ही अपने अधिकारियों को समस्या का मूल कारण ढूँढ़ने पर ज़ोर देने की ओ'नेल की आदत ने सरकार को नवजात शिशु मृत्युदर और इस प्रकार की अन्य समस्याओं को सुलझाने के लिए नया दृष्टिकोण भी दिया।

लोगों के जीवन में भी बिलकुल इसी प्रकार के प्रभाव नज़र आ सकते हैं। जैसे लगभग बीस वर्षों पहले इसे पारंपारिक ज्ञान माना जाता था कि वज़न घटाने का सबसे अच्छा उपाय है, अपना जीवन पूरी तरह परिवर्तित कर देना। डॉक्टर मोटापे से जूझते मरीज़ों को खान-पान के सख्त नियमों का पालन करने की और जिम लगाने की सलाह देते थे। साथ ही, विशेषज्ञों से सलाह-मशवरा करने के लिए भी कहा जाता था। रोज़ाना की चीज़ें बदलने पर जोर होता था। जैसे लिफ्ट के बजाय सीढ़ीयों का उपयोग वगैरह। इस पारंपारिक मान्यता के अनुसार इंसान के जीवन को पूरी तरह परिवर्तित करने के बाद ही उसकी बुरी आदतें सुधारी जा सकती हैं।

लेकिन इस पद्धति के प्रभावों का लंबे समय तक अध्ययन करने पर शोधकर्ताओं ने पाया कि इससे अक्सर असफलता ही हाथ लगती है। मोटापे से जूझते उनके मरीजों ने लिफ्ट के स्थान पर सीढ़ियों का इस्तेमाल किया, जिम जाना शुरू कर दिया, खान-पान भी सुधार लिया, पर यह सब तभी तक चल सका, जब तक वज़न घटाने की कल्पना से उनके अंदर जोश आता रहा। यह सब करते-करते जैसे ही करीब एक महीना बीता, लोग फिर से टी.वी. देखते हुए भोजन करने और ऐसी ही अन्य पुरानी आदतों की ओर मुड़ गए। बात यह थी कि बहुत सारे परिवर्तन करने की कोशिश में एक भी क्रिया आदत में परिवर्तित नहीं हो सकी।

फिर सन 2009 में नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ हेल्थ की मदद से शोधकर्ताओं के एक समूह ने वज़न घटाने के एक नए पहलू को उजागर किया। इन शोधकर्ताओं ने मोटापे से जूझ रहे सोलह सौ लोगों को एकत्रित किया। इन लोगों को सप्ताह में कम से कम एक दिन उन सारी वस्तुओं की सूची बनानी थी, जो उन्होंने दिनभर में खाई हो।

शुरू में यह सब बहुत ही कठिन था। कभी लोग खान-पान का हिसाब रखनेवाली डायरी भूल जाते या कभी किसी चटपटी वस्तु खाने के बाद भी उसे डायरी में लिखना भूल जाते। लेकिन धीरे-धीरे लोग यह सूची बनाने लगे। कुछ लोग सप्ताह में एक दिन और कुछ एक से भी ज़्यादा दिनों का हिसाब रखने लगे। फिर इस समूह के अधिकतर लोग प्रतिदिन के खान-पान का हिसाब भी रखने लगे। कुछ ही समय में यह उनकी आदत बन गई। फिर कुछ अप्रत्याशित हुआ। इन लोगों को अपनी डायरी में गौर करने पर अपने कई हानिकारक पैटर्न्स का पता चला। कुछ लोगों ने पाया कि वे रोज़ाना सुबह 10 बजे के आसपास कुछ चटपटा खाते थे। इससे बचने के लिए उन्होंने अपने साथ सेब या केला जैसे फल रखने शुरू कर दिए ताकि जब भी खाने का मन करे, तो फल खाएँ। कुछ लोग

भोजन के लिए पहले से योजना बनाने लगे और अपनी डायरी में पहले से खाने का मेन्यू लिखने लगे। इससे वे रात को घर लौटने पर फ़्रिज़ में रखा चटपटा या पैकेटबंद या फिर बासी खाना न खाकर पौष्टिक आहार लेने लगे।

शोधकर्ताओं ने इन लोगों को यह सब करने का सुझाव नहीं दिया था। उन्होंने तो केवल सप्ताह में एक दिन उन सारी वस्तुओं की सूची बनाने के लिए कहा था, जो इन लोगों ने खाई हो। लेकिन खान-पान की डायरी रखने की इस मूल आदत ने एक ऐसी व्यवस्था शुरू कर दी कि इन लोगों के अंदर अन्य आदतें विकसित होने लगीं। इस अध्ययन के छह महीनों बाद, खान-पान की डायरी रखनेवाले लोग अन्य लोगों के मुकाबले दो-गुना वज़न घटाने में कामयाब रहे।

इनमें से एक व्यक्ति ने अपना अनुभव बताते हुए कहा, 'एक समय के बाद मेरे दिमाग में बार-बार उस डायरी का ही खयाल आने लगा। मैं अपने आहार के बारे में एक अलग ही नज़रिए से सोचने लगा। इस डायरी से मुझे ऐसा तरीका मिला, जिससे मैं बगैर निराश हुए अपने भोजन के बारे में सोच-विचार कर सकता था।'

एल्कोआ का सीईओ पद ओ'नेल को मिलने पर भी कुछ ऐसा ही हुआ था। जिस तरह खान-पान की डायरी रखने से दूसरी आदतों के निर्माण के लिए एक नया तरीका सामने आया, ठीक उसी प्रकार ओ'नेल ने कर्मचारियों में जो सुरक्षा संबंधी व्यवहार विकसित किए, उससे नई आदतों के लिए एक सही व्यवस्था शुरू हो सकी। शुरुआत में ही ओ'नेल ने एक असामान्य सा कदम उठाया था। एल्कोआ के दुनियाभर में जितने भी ऑफिस थे, उन्होंने उन सभी को एक इलेक्ट्रॉनिक नेटवर्क से जोड़ने का आदेश दिया। यह सन 1980 के शुरुआती दौर की बात है। तब तक बड़े इंटरनेशनल नेटवर्क लोगों के डेस्कटॉप कंप्यूटरों से जोड़े नहीं गए थे। ओ'नेल ने अपने आदेश का औचित्य साबित करने के लिए कहा कि यह अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे सुरक्षा प्रणाली की ताज़ा जानकारी हर ऑफिस के सारे मैनेजरों तक फौरन पहुँच सकेगी और समस्या को सुलझाने के लिए कंपनी का कोई भी व्यक्ति सुझाव दे सकेगा। इसके परिणामस्वरूप एल्कोआ विश्व की ऐसी पहली कंपनी बनी, जहाँ एक सटीक ई-मेल प्रणाली विकसित हुई।

कंपनी के हर कर्मचारी ने इस प्रणाली में लॉग-इन किया है या नहीं, यह पता करने के लिए ओ'नेल हर सुबह स्वयं लॉग-इन कर सभी को मैसेज भेजते थे। शुरू में तो हर कोई केवल सुरक्षा संबंधी समस्या और सुझावों पर चर्चा करने के लिए ही इस प्रणाली का उपयोग करता था, लेकिन जब ई-मेल करना एक सहज आदत बन गई, तो हर कोई, हर प्रकार की जानकारी के आदान-प्रदान के लिए इसका उपयोग करने लगा। जैसे स्थानीय बाज़ार की स्थितियाँ, बिक्री कोटा और व्यवसायिक समस्याएँ। उच्च पदों पर बैठे अधिकारियों को हर शुक्रवार रिपोर्ट तैयार करके भेजनी पड़ती थी, जो कंपनी का कोई भी इंसान पढ़ सकता था। ब्राज़ील में बैठा मैनेजर अब स्टील की कीमतों में हुए बदलावों की जानकारी न्यूयॉर्क में बैठे अपने सहयोगी को बड़ी आसानी से दे सकता था। फिर न्यूयॉर्क का सहयोगी इस जानकारी द्वारा वॉलस्ट्रीट में तुरंत कंपनी को मुनाफा कमाकर

दे देता था। जल्द ही हर कोई, हर प्रकार के संवाद के लिए ई-मेल का उपयोग करने लगा। एक मैनेजर ने अपना अनुभव बताते हुए कहा, ‘मैं दुर्घटना की रिपोर्ट भेजता था। मुझे पता था कि ये रिपोर्ट सभी पढ़ते है। इसलिए मैंने सोचा कि क्यों न इसी प्रणाली से अन्य जानकारियाँ भी भेजी जाएँ; जैसे लागत तय करने संबंधी जानकारियाँ और अन्य कंपनियों की खुफिया जानकारियाँ आदि। यह कुछ ऐसा था मानो हमें कोई गुप्त हथियार मिल गया हो। दूसरी कंपनियाँ जान ही नहीं पाती थीं कि हम यह सब कैसे कर रहे हैं।’

इसके बाद जब इंटरनेट वेब का प्रसार हर जगह होना शुरू हुआ तो एल्कोआ उसका फायदा उठाने के लिए पहले से तैयार थी। ओ’नेल द्वारा परिवर्तित की गई सुरक्षा की मूल आदत ने नए व्यवहारों के लिए योग्य वातावरण बनाया और कंपनी में ई-मेल करने की शुरुआत हुई। उस समय यह आदत इतनी नई थी कि अन्य कंपनियों को इससे परिचित होने में कई वर्ष लग गए।

***

सन 1996 तक ओ’नेल को एल्कोआ में आए लगभग एक दशक बीत चुका था। हॉर्वर्ड बिजनेस स्कूल और केनेडी स्कूल ऑफ गवर्मेंट में उनके नेतृत्व संबंधी गुणों का अध्ययन किया जाने लगा। अब हर दूसरे दिन ऐसी बातें उठने लगीं कि जल्द ही वे देश के वाणिज्य सचिव या सुरक्षा सचिव के पद पर नियुक्त किए जाएँगे। उनके कर्मचारी और यूनियनें उन्हें बहुत ऊँचे दर्जे पर रखते थे। उनके नेतृत्व में एल्कोआ के स्टॉक की कीमतों में 200 प्रतिशत से भी ज़्यादा की बढ़ोत्तरी हुई थी। उन्हें पूरे विश्व में सफलता के श्रेष्ठ उदाहरण के तौर पर देखा जाता था।

इसी वर्ष के मई महीने में पीट्सबर्ग शहर में शेअरधारकों की एक मीटिंग हुई। इस मीटिंग में एक ईसाई नन ने ओ’नेल पर झूठ बोलने का आरोप लगाया। यह नन एक सामाजिक वकालत समूह का प्रतिनिधित्व कर रही थी। यह समूह मेक्सिको के सियुडैड अकुना शहर से था। इसी शहर में एल्कोआ का एक कारखाना था, जहाँ के वेतन और कार्यस्थितियों को लेकर मेरी मार्गरेट नामक इस नन ने आवाज़ उठाई थी। उसका कहना था कि यहाँ ओ’नेल एल्कोआ के सुरक्षा परिमाणों की प्रशंसा कर रहे हैं और वहाँ मेक्सिको के कारखाने से निकलनेवाले खतरनाक धुँए के कारण मज़दूर बीमार पड़ रहे हैं।

‘यह सच नहीं है,’ ओ’नेल ने मेक्सिको के उस कारखाने के सुरक्षा रिकॉर्ड निकाले और कमरे में उपस्थित लोगों को दिखाए। उनके रिकॉर्ड के अनुसार उस कारखाने को सुरक्षा परिमाण, पर्यावरण नियमों का पालन और कर्मचारी संतुष्टि के मामले में अच्छे अंक मिले थे। उस कारखाने के मुख्य अधिकारी रॉबर्ट बारटॉन एल्कोआ के सबसे पुराने और वरिष्ठ मैनेजर थे। वह कई दशकों से एल्कोआ से जुड़े हुए थे और कंपनी की कई बड़ी भागीदारियों का श्रेय उन्हें ही जाता था। लेकिन नन मार्गरेट ने श्रोताओं को बताया कि उन्हें ओ’नेल की बातों पर भरोसा नहीं करना चाहिए।

मीटिंग समाप्त होने पर ओ'नेल ने नन को अपने ऑफिस में बुलाया। इस नन की धार्मिक संस्था के पास एल्कोआ के कुल पचास शेअर थे। वे कई महीनों से शेअरधारकों का मत जानना चाहते थे ताकि कंपनी के मेक्सिकोवाले कारखाने की जाँच-पड़ताल हो सके। ओ'नेल ने उस नन से पूछा, 'क्या आप स्वयं किसी कारखाने में गई हैं?' इस पर नन ने 'ना' में जवाब दिया। ओ'नेल ने सुरक्षा के लिए कंपनी के मानव संसाधन विभाग के प्रमुख और वकीलों को मेक्सिको जाकर तसल्ली करने के लिए कहा।

अधिकारी मेक्सिको गए और सियुडैड अकुना के कारखाने में जाँच-पड़ताल के बाद उन्हें पता चला कि वहाँ हुई एक घटना की जानकारी मुख्यालय तक पहुँचाई ही नहीं गई है। दरअसल कुछ महीनों पहले कारखाने की इमारत में धुँआ भर गया था। हालाँकि यह कोई बहुत आपत्तिजनक घटना नहीं थी क्योंकि कारखाने के प्रमुख बारटॉन ने धुँआ बाहर जाने के लिए इमारत में वेंटिलेटर लगा दिए थे और जो लोग धुँए से बीमार हो गए थे, वे भी एक-दो दिनों में पूरी तरह स्वस्थ हो गए थे।

लेकिन बारटॉन ने इसकी रिपोर्ट कंपनी के उच्च पदाधिकारियों को नहीं भेजी थी।

जब अधिकारी रिपोर्ट लेकर पीट्सबर्ग पहुँचे, तब ओ'नेल ने उनसे सवाल किया।

'क्या बॉब बारटॉन जानते थे कि लोग बीमार पड़े थे?'

'हमारी उनसे मुलाकत तो नहीं हुई, पर यह बात साफ है कि उन्हें इसकी पूरी जानकारी थी,' अधिकारियों ने उत्तर दिया।

इसके दो दिनों बाद बारटॉन को नौकरी से बरखास्त कर दिया गया।

अन्य कंपनियों को इस निर्णय से बहुत आश्चर्य हुआ। बारटॉन की गिनती कंपनी के सबसे महत्वपूर्ण और मूल्यवान अधिकारियों में की जाती थी। एल्कोआ से जुड़ी अन्य कंपनियों को बारटॉन को इस तरह निकाले जाने से बड़ा झटका लगा।

लेकिन एल्कोआ में इस बात से किसी को भी आश्चर्य नहीं हुआ। ओ'नेल ने जो वातावरण और कार्य-संस्कृति शुरू की थी, उसमें ऐसा परिणाम आना तय था।

एक सहयोगी ने मुझे बताया कि 'बारटॉन ने खुद ही अपने आपको बरखास्त कर दिया था। उस स्थिति में सबसे सही कदम यही था।'

मूल आदतें बड़े पैमाने पर परिवर्तन लाती हैं। इसका आखिरी तरीका था, ऐसा वातावरण निर्मित करना, जहाँ नए मूल्य इंसान के मन में गहराई में समा जाएँ। मूल आदतों से उच्चाधिकारियों को नौकरी से बरखास्त करने जैसे कठिन चुनाव भी आसान हो जाते हैं। क्योंकि जब कोई इंसान इस वातावरण में भी नियमों का उल्लंघन करता है, तो यह साफ हो जाता है कि उस इंसान को कंपनी छोड़नी ही होगी। कभी-कभी इस

वातावरण से नई शब्दावली भी निर्मित होती है, जिनके प्रयोग की आदत उस संगठन को पुन: परिभाषित करती है। जैसे एल्कोआ के विशेष कार्यक्रमों और सुरक्षा दर्शन से जुड़ी कुछ आधिकारिक बातें ऐसी थीं, जो कंपनी की प्राथमिकताओं, लक्षय और लोगों के सोचने के तरीकों को बयाँ करती थीं।

ओ'नेल बताते हैं, 'दूसरी कंपनी में इतने पुराने अधिकारी को इस तरह काम से निकाल देना बहुत मुश्किल होता। लेकिन मेरे लिए यह ज़रा भी कठिन नहीं था। हमारे मूल्य बिलकुल स्पष्ट थे। बारटॉन को तो निकालना ही था। उसने हादसे की रिपोर्ट उच्च अधिकारियों को नहीं भेजी, जिससे दूसरे लोग उसके अनुभव से सीखने से वंचित रह गए और एल्कोआ में ये किसी अपराध से कम नहीं था।'

संगठन प्रमुख को इस बात की जानकारी हो या न हो, लेकिन हर संगठन में मूल आदतों के कारण नया वातावरण निर्मित होता है। इसे एक उदाहरण से समझते हैं। कुछ शोधकर्ताओं ने वेस्ट पॉइंट (अमेरिकी सैन्य अकादमी) में भर्ती किए गए नए छात्रों का अध्ययन किया। इन छात्रों के ग्रेड पॉइंट के औसत, शारीरिक योग्यता, सैन्य क्षमता और आत्म-अनुशासन आदि का आँकलन किया गया। फिर इन आँकलनों को इस बात से जोड़कर देखा गया कि कौन से छात्र यह कोर्स पूरा करते हैं और कौन बीच में ही निकल जाते हैं। ऐसा करने पर शोधकर्ताओं ने पाया कि ये चीजें ज़्यादा महत्त्व नहीं रखतीं। दरअसल ज़्यादा महत्त्व तो 'धैर्य' और 'साहस' का था। 'धैर्य' और 'साहस' को इन शोधकर्ताओं ने इस प्रकार स्पष्ट किया - 'वर्षों तक पराजय और विपत्तियों का सामना करने के बावजूद भी पूरी लगन से प्रयास करने और कड़ी मेहनत से हर समस्या का सामना करने की प्रवृत्ति।'

धैर्य और साहस की सबसे अनोखी बात है उसका उगम। छात्र अपने लिए जो वातावरण निर्मित करते हैं, उसी से इन चीज़ों का उगम होता है और ऐसा वातावरण अक्सर उन मूल आदतों के कारण निर्मित होता है, जो उन्हें वेस्ट पॉइंट में मिली थीं। एक छात्र ने बताया, 'इस अकादमी में बहुत सी चीज़ें कठिन होती हैं। पहले सत्र में यहाँ सभी को इतनी मेहनत करनी पड़ती है कि उस समय को 'बीस्ट बैरक्स्' कहा जाता है। अगला सत्र आरंभ होने से पहले अनेकों छात्र अकादमी छोड़ चुके होते हैं।'

'लेकिन मेरे शुरुआती दिनों में ही मुझे यहाँ हमउम्र लकड़ों का एक बेहतरीन समूह मिला। हम सब रोज़ाना मिलते और एक-दूसरे को खूब प्रोत्साहित करते। किसी दिन अगर मुझे चिंता, निराशा जैसे भावों ने घेरा हो, तो मैं तुरंत समूह के लोगों से जाकर मिलता हूँ। मुझे विश्वास होता है कि वे मेरा मनोबल बढ़ाने में सहायता करेंगे। हमारा समूह नौ लड़कों का है और हम खुद को 'मस्कीटिअर' बुलाते हैं। अगर यह समूह न होता तो शायद मैं यहाँ एक महीना भी न टिक पाता।'

वेस्ट पॉइंट में सफल होनेवाले छात्रों में यहाँ आने से पहले ही मानसिक और शारीरिक अनुशासन की आदतें होती हैं। लेकिन ये गुण केवल सफलता प्राप्ति के मार्ग

पर चलना सिखाते हैं। सफलता पाने के लिए उन्हें मूल आदतों की आवश्यकता होती है। मूल आदतों से समान मन:स्थितिवाले लोगों के समूह बनते हैं और नए वातावरण का निर्माण होता है। जिससे इन छात्रों को समस्याओं का सामना करने की शक्ति मिलती है। इस वातावरण में ऐसे मूल्य पनपते हैं, जो मुश्किल निर्णय या दुविधा के समय में हमारे काम आते हैं।

***

सन 2000 में ओ'नेल एल्कोआ से सेवानिवृत्त हुए और अमेरिका के राष्ट्रपति जॉर्ज बुश के अनुरोध पर खजाने के सचिव[1] बने। इसके दो वर्ष बाद उन्होंने इस पद से इस्तीफा दिया। अब वे अपना ज़्यादातर समय अस्पतालों को कर्मचारी सुरक्षा संबंधी शिक्षा देने में लगाते हैं। साथ ही, ऐसी मूल आदतें विकसित करवाते हैं, जिनसे इलाज संबंधी गलतियाँ कम से कम हों। इसके साथ ही वे अनेक कॉरपोरेट बोर्ड्स के सदस्य भी हैं।

इस दौरान, अमेरिका की लगभग सभी कंपनियों और संगठनों ने मूल आदतों द्वारा अपनी कार्यप्रणाली का पुनर्निर्माण शुरू कर दिया है। उदाहरण के लिए आयबीएम कंपनी के लाउ गर्स्टनर ने एक मूल आदत पर ध्यान लगाकर कंपनी का पुनर्निर्माण किया। यह मूल आदत थी - कंपनी की शोध और बिक्री संबंधी तयशुदा क्रियाएँ। मैकिंसे एंड कंपनी नामक कंसन्टिंग फर्म ने भी एक मूल आदत पर ध्यान केंद्रित किया - हर परियोजना में आंतरिक समीक्षा करना। इससे वे ऐसा वातावरण निर्मित करने में सफल हो सके, जिससे सुधारों में निरंतरता आई। इसी तरह गोल्डमैन सैश के हर निर्णय के पीछे भी जोखिम मूल्यांकन की मूल आदत सक्रिय थी।

एल्कोआ में ओ'नेल की विरासत आज भी कायम है। उनके जाने के बाद भी यहाँ के दुर्घटनाओं की संख्या लगातार कम ही होती गई। सन 2010 के आँकड़ों के अनुसार एल्कोआ के 82 कारखानों के एक भी कर्मचारी ने दुर्घटना के कारण छुट्टी नहीं ली है। यह आँकड़ा आज तक का सबसे उच्चतम आँकड़ा है। इन आँकड़ों के अनुसार अमेरिका में सॉफ्टवेअर कंपनियों या फिल्म स्टूडिओ का कोई कर्मचारी एनिमेटेड कार्टून बनाते हुए या फिर किसी कंपनी का कोई अकाउन्टेंट टैक्स का हिसाब रखते हुए भले ही जख्मी हो जाए, लेकिन एल्कोआ में पिघले हुए एल्युमिनियम के साथ काम करते हुए कोई कर्मचारी जख्मी नहीं हो सकता।

एल्कोआ के अधिकारी जेफ शॉकी कहते हैं, 'कारखाने का मैनेजर बनने के पहले ही दिन मुझे एक महत्वपूर्ण अनुभव मिला। पहले दिन जब मैं अपनी गाड़ी पार्किंग में लगा रहा था, तो मैंने देखा कि कारखाने के सामनेवाले दरवाज़े के पास ही पार्किंग का स्थान था और वहाँ लोगों के पद लिखे हुए थे। यानी जो लोग महत्वपूर्ण थे, उन्हें पार्किंग के लिए सबसे अच्छा स्थान दिया गया था। मैं अपने ऑफिस के अंदर गया और सबसे पहले रखरखाव प्रबंधक को बुलाकर पार्किंग से पदों के नाम मिटाने के लिए कहा। इस कदम से सभी तक मेरा संदेश पहुँच गया - कारखाने में हर कर्मचारी का महत्त्व बराबर का है। पॉल

ओ’नेल कर्मचारी सुरक्षा से जुड़े कदम उठा रहे थे। मेरा यह कदम भी उसी योजना का हिस्सा था। मेरे इस कदम से कारखाने में सकारात्मक ऊर्जा का संचार हुआ और कुछ ही समय में हर कोई काम के लिए सुबह जल्दी आने लगा।’

***

1 खजाने के सचिव के तौर पर ओ’नेल का कार्यकाल एल्कोआ की तरह सफल नहीं रहा। सचिव का पद सँभालते ही उन्होंने कुछ मुख्य समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया, जिसमें कर्मचारियों की सुरक्षा, नई नौकरियाँ पैदा करना, अधिकारियों की जिम्मेदारी तय करना और अफ्रीका की गरीबी की समस्या से लड़ना प्रमुख थीं।

हालाँकि ओ’नेल की यह राजनीतिक सक्रियता राष्ट्रपति जॉर्ज बुश की राजनीति से मेल नहीं खाती थी। ऊपर से उन्होंने बुश की टैक्स में कमी की भावी योजना का खुलकर विरोध करना भी शुरू कर दिया था। इन सब कारणों से उन्हें सन 2002 में त्यागपत्र देने के लिए कह दिया गया। ओ’नेल बताते हैं, ‘राष्ट्रपति जॉर्ज बुश जो भी चाहते थे, वह मेरी आर्थिक नीतियों से बिलकुल अलग था। यह किसी भी कोषाध्यक्ष (Treasury secretary) के लिए सकारात्मक स्थिति नहीं है, इसीलिए मुझे उस पद से हटा दिया गया।’

5

स्टारबक्स और सफलता की आदत

जब इच्छा-शक्ति आदत बन जाए

1

ट्रेविस लीच नौ साल का था, जब उसने पहली बार अपने पिता को ड्रग-ओवरडोज (नशीली दवाओं का अत्यधिक सेवन) से बीमार पड़ते देखा। ट्रेविस और उसका परिवार हाल ही में अपने पुराने घर को छोड़कर नई जगह रहने गया था। अब गली के अंत में बना एक छोटा सा मकान उसका घर कहलाता था। ट्रेविस के परिवार को बार-बार घर बदलना पड़ता था। इस बार भी जब उन्हें मकान खाली करने का नोटिस मिला तो उन्हें अपना बोरिया-बिस्तर समेटकर आधी रात को ही निकलना पड़ा। मकान मालिक ने घर से निकालने का कारण बताते हुए कहा था कि उनके घर में देर रात तक लोगों की भीड़ जमा रहती है, जिससे बहुत शोर होता है।

ट्रेविस का परिवार जब पुराने घर में रहता था, तब कभी-कभी स्कूल से लौटने पर ट्रेविस को घर बिलकुल साफ-सुथरा मिलता। बचा हुआ खाना डिब्बों में डालकर फ्रिज़ में रखा होता और हॉट सॉस तथा केचअप के पैकेट भी अच्छे से डिब्बों के अंदर रखे होते। इस नज़ारे को देखते ही ट्रेविस समझ जाता कि आज उसके माता-पिता ने हेरोईन (नशीली दवा) को छोड़कर अपने सनकीपन का सहारा लिया है और पूरा दिन आवेश में आकर सफाई करते हुए बिताया है। उसका अनुभव था कि ऐसा दिन तभी आता है, जब कुछ न कुछ बुरा हुआ होता है। जब ट्रेविस को अपना घर गंदा मिलता और माता-पिता नशे में चूर सोफे पर बैठे टी.वी. पर कार्टून देखते मिलते, तो वह सुरक्षित महसूस करता। उसका अनुभव यही था कि अगर उसके माता-पिता का दिन हेरोईन के नशे में गुज़रा है, तो इसका अर्थ है कि आज कुछ भी बुरा नहीं हुआ है।

ट्रेविस के पिता अच्छे स्वभाव के थे। उन्होंने अपनी जवानी का कुछ समय नौसेना में बिताया था। पर इस अवधि को छोड़कर अपनी पूरी जिंदगी उन्होंने अपने माता-पिता के घर से कुछ ही किलोमीटर दूर कैलिफोर्निया के लॉडी नामक शहर में बिताई थी। ट्रेविस के पिता को खाना बनाने का भी बहुत शौक था। जब ट्रेविस का परिवार गली के अंत में बने मकान में रहने पहुँचा, तब तक उसकी माँ अपने पास हेरोईन रखने और वेश्यावृत्ति करने के आरोप में जेल जा चुकी थीं। संक्षेप में कहा जाए तो ट्रेविस के माता-पिता नशे के लती थे और उसका परिवार सामान्य होने का केवल दिखावा करता था। वे हर साल गर्मियों में कैंपिंग (शहरी भागदौड़ से दूर प्रकृति के बीच कैंप लगाकर समय बिताना) के

लिए जाते थे और लगभग हर शुक्रवार शाम को उसके भाई-बहन का सॉट-बॉल का मैच देखने भी जाते थे। जब ट्रेविस चार साल का था तो अपने पिता के साथ मशहूर थीम पार्क डिज्नीलैंड भी गया था। वहाँ जीवन में पहली बार उसकी तस्वीर खींची गई थी, जो वहाँ काम करनेवाले एक कर्मचारी ने ली थी। हालाँकि उनके परिवार के पास एक कैमरा था, पर उसे सालों पहले ही कुछ पैसों के लिए एक दुकान में बेच दिया गया था।

वे हर रात सोने के लिए सामनेवाले कमरे में बिस्तर बिछाते थे। जिस दिन ट्रेविस के पिता ड्रग-ओवरडोज़ से बीमार हुए थे, उस दिन सुबह ट्रेविस अपने भाई के साथ बिस्तर पर ही खेल रहा था। उसके पिता नाश्ते के लिए पैनकेक बनानेवाले थे पर उससे पहले वे बाथरूम में गए। वे अपने साथ सुई, चम्मच, लाईटर और रूई लेकर गए थे। कुछ मिनटों बाद वे बाहर आए, अंडे निकालने के लिए फ्रिज खोला और जमीन पर गिर पड़े। गिरने की आवाज़ से जब बच्चे किचन में आए, तो उनके पिता जमीन पर पड़े काँप रहे थे और उनका चेहरा नीला पड़ गया था।

ट्रेविस का बड़ा भाई ऐसी स्थितियाँ पहले भी देख चुका था। इसलिए उसने तुरंत अपने पिता को एक तरफ खींचा और ट्रेविस की बहन ने उनका मुँह खोल दिया ताकि कहीं बेहोशी में ज़बान गले के पिछले हिस्से में फँसने से उनके पिता का दम न घुट जाए। इसके बाद उन्होंने ट्रेविस को फौरन पड़ोसी के फोन से 911 (आपातकालीन नंबर) पर कॉल करके सहायता माँगने के लिए भेज दिया।

'मेरा नाम ट्रेविस है। मैं नहीं जानता क्या हुआ, लेकिन मेरे पिता जमीन पर बेहोश पड़े हैं और उनकी साँसें बंद हो रही हैं।' ट्रेविस ने फोन पर पुलिस ऑपरेटर से झूठ बोल दिया। नौ साल की छोटी सी उम्र में भी ट्रेविस को पता था कि उसके पिता की बेहोशी का कारण क्या है। लेकिन वह अपने पड़ोसी के सामने सच बोलना नहीं चाहता था। दरअसल करीब तीन वर्ष पहले उनके तलघर में उसके पिता के एक पुराने मित्र की ड्रग-ओवरडोज़ से मौत हो गई थी। उसकी लाश ले जाने में जब ट्रेविस और उसकी बहन चिकित्सा-सहायकों की मदद कर रहे थे, तो पड़ोसी अपने-अपने घरों से झाँककर देख रहे थे। एक पड़ोसी का भतीजा ट्रेविस के स्कूल में पढ़ता था इसलिए यह बात जल्द ही पूरे स्कूल में फैल गई थी।

फोन रखने के बाद ट्रेविस गली के दूसरे छोर पर जाकर एम्बुलेंस का इंतजार करने लगा। आखिरकार एम्बुलेंस आई और उसके पिता को अस्पताल ले गई। वह सुबह का समय था। फिर दोपहर होते-होते उसके पिता होश में आ गए और उन्हें अपनी इस हरकत के लिए पुलिस स्टेशन में जुर्माना देना पड़ा। रात होते-होते वे घर वापस पहुँच गए और उस रात उन सभी ने डिनर में स्पेगेटी खाई। इसके कुछ सप्ताह बाद ट्रेविस का दसवाँ जन्मदिन आनेवाला था।

***

सोलह वर्ष की उम्र में ट्रेविस ने स्कूल छोड़ दिया। उसने बताया कि 'लोग मुझे फैगट (समलैंगिक पुरुषों के लिए एक अपमानजनक शब्द) बुलाते थे। घर लौटते समय मेरे ऊपर तरह-तरह की चीज़ें फेंकते थे। मैं इन सब चीज़ों से परेशान हो चुका था। इससे बेहतर तो ये था कि मैं स्कूल छोड़ दूँ और कहीं और चला जाऊँ।' स्कूल छोड़ने के बाद ट्रेविस अपने घर से करीब दो घंटे की दूरी पर स्थित शहर फ्रेस्नो चला गया। वहाँ उसे गाड़ियाँ साफ करने की नौकरी मिल गई। लेकिन जल्द ही उसे वहाँ से निकाल दिया गया। उसे मैकडॉनल्ड और हॉलिवुड वीडिओ में भी नौकरी मिली, लेकिन जब ग्राहक उसके साथ अभद्र भाषा का प्रयोग करते या गाली-गलौज करते, तो ट्रेविस अपना आपा खो देता।

'निकल जाओ यहाँ से!' ट्रेविस ने गुस्से में आकर एक औरत से चीखते हुए कहा और फिर उसकी कार पर चिकन नगेट्स फेंकने लगा। आखिरकार उसके मैनेजर को दखल देना पड़ा और वह ट्रेविस को खींचकर वापस अंदर ले आया।

कभी-कभी तो वह इतना नाराज़ हो जाता कि अपनी काम की शिफ्ट के बीच ही रोने लग जाता। वह अक्सर देरी से आता और कई बार बिना कारण छुट्टियाँ लेता। सुबह के समय वह आइने के सामने खड़ा होकर अपने आप पर चिल्लाता, खुद को अच्छी तरह काम करने व अपना आपा न खोने की नसीहत देता। लेकिन इसके बावजूद वह लोगों के साथ घुलमिल नहीं पाता था, न ही उसमें खुद की समीक्षा करने या अपमान सहने की ताकत थी। जब उसके सामने ग्राहकों की लंबी लाइन लग जाती और उसका मैनेजर उस पर चिल्लाने लगता, तो अचानक ट्रेविस के हाथ काँपने लगते और उसे साँस लेने में दिक्कत होने लगती। जब ऐसा कुछ होता तो वह सोच में पड़ जाता कि जब उसके माता-पिता ने ड्रग्स लेना शुरू किया था, तो क्या वे भी इसी तरह जीवन से हारा हुआ महसूस करते थे?

हॉलिवुड वीडिओ के नियमित ग्राहकों में से कुछेक के साथ ट्रेविस की अच्छी जान-पहचान हो गई थी। एक दिन एक ग्राहक ने ट्रेविस को स्टारबक्स में काम करने का सुझाव दिया। 'स्टारबक्स कॉर्पोरेशन यह अमेरिका की एक प्रसिद्ध कॉफी कंपनी और कॉफीफेस श्रृंखला है। अब स्टारबक्स का नया स्टोअर फोर्ट वॉशिंग्टन में खुल रहा है और मैं वहाँ सहायक मैनेजर हूँ। तुम वहाँ नौकरी के लिए आवेदन देकर तो देखो।' एक महीने बाद ट्रेविस स्टारबक्स में सुबह की शिफ्ट में बरिस्ता के तौर पर काम करने लगा।' बरिस्ता यानी जो कॉफी शॉप में आनेवाले ग्राहकों को कॉफी देने का कार्य करता है।

यह छह साल पहले की बात है। आज पच्चीस साल की उम्र में ट्रेविस स्टारबक्स के दो स्टोअर्स का मैनेजर है। उसकी देखरेख में चालीस कर्मचारी काम करते हैं। आज स्टारबक्स कंपनी की सालाना कमाई दो अरब डॉलर से ज़्यादा की हो चुकी है। स्टारबक्स के सैकड़ों कर्मचारियों की ही तरह इसमें ट्रेविस का भी योगदान है। आज ट्रेविस की आमदनी भी 44000 डॉलर प्रति माह है, उस पर कोई कर्ज नहीं है और उसके पास 401 (के) भी है, जो कंपनी द्वारा प्रायोजित एक बढ़िया सेवानिवृत्ति योजना है। अब वह

रोज़ाना समय पर ऑफिस पहुँच जाता है और कभी अपना आपा भी नहीं खोता है।

एक बार जब एक ग्राहक के चिल्लाने पर ट्रेविस की एक युवा कर्मचारी रोने लगी, तो ट्रेविस ने उसे एक ओर ले जाकर समझाया।

'तुमने यह जो एप्रन पहन रखा है, यह तुम्हारी ढाल है। कोई भी व्यक्ति अपने शब्दों से तुम्हें तकलीफ नहीं पहुँचा सकता। अपनी अंदरूनी हिम्मत को पहचानो। तुम जितना चाहोगी, उतना ही हिम्मती महसूस करोगी,' ट्रेविस ने उसे समझाते हुए कहा।

ये प्रेरणादायक वाक्य उसने स्टारबक्स के प्रशिक्षण कोर्स में सीखे थे। यह प्रशिक्षण कोर्स स्टारबक्स में नौकरी के पहले दिन ही शुरू हो जाता है और कार्यकाल के दौरान भी चलता रहता है। यह कोर्स इस प्रकार बनाया गया है कि इसे पूरा कर कॉलेज क्रेडिट तक हासिल किए जा सकते हैं। ट्रेविस का कहना है कि इस प्रशिक्षिण ने उसका जीवन बदल दिया है। स्टारबक्स ने उसे जीने की कला सिखाई है। मन लगाकर काम करना, समय पर ऑफिस पहुँचना और अपनी भावनाओं को नियंत्रण में रखना, यह सब उसने स्टारबक्स से ही सीखा है। स्टारबक्स में उसने जो सबसे महत्वपूर्ण सबक सीखे हैं, उनमें सबसे ऊपर है इच्छाशक्ति का सबक।

वह कहता है, 'मेरे जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में स्टारबक्स में नौकरी करना शीर्ष स्थान पर है। मैंने जीवन में जो कुछ भी हासिल किया, वह सब इसी कंपनी की देन है।'

***

स्टारबक्स जैसी कुछ गिनी-चुनी कंपनियों ने ट्रेविस जैसे हज़ारों लोगों को जीवन के ऐसे गुण सिखाए हैं, जो उनका परिवार, स्कूल और समाज कभी नहीं सिखा पाया। स्टारबक्स में 1,37,000 से भी ज्यादा कर्मचारी काम करते हैं। कंपनी के भूतपूर्व कर्मचारियों की संख्या भी दस लाख से ऊपर है। इन आँकड़ों पर नज़र डालने के बाद अगर स्टारबक्स को अपने आपमें देश के सबसे बड़े शिक्षाकेंद्रों में से एक के रूप में देखा जाए, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अपने पहले साल में स्टारबक्स का हर कर्मचारी कंपनी की विशेष कक्षा में करीब पचास घंटे विशेष रूप से नियुक्त किए गए सलाहकर्ताओं से बातचीत करने में बिताता है। इसके साथ ही वह घर पर कई घंटे कंपनी की कार्यपुस्तिका का पठन भी करता है।

इस शिक्षा के मूल में है, एक महत्वपूर्ण आदत पर विशेष ध्यान केंद्रित करना। यह आदत है, इच्छाशक्ति की आदत। अनेकों शोधकर्ताओं ने अपने दर्जनों शोधों से यह साबित किया है कि व्यक्तिगत सफलता में आमतौर पर इच्छाशक्ति की आदत ही मूल-आदत के तौर पर सक्रिय होती है। सन 2005 में, यूनिवर्सिटी ऑफ पेंसिल्वेनिया के शोधकर्ताओं ने आठवीं कक्षा के 164 छात्रों का परीक्षण किया। इसमें उनके आई.क्यू. (बौद्धिक स्तर) और अन्य कारकों की जाँच की गई। इसके अलावा उनके स्व-अनुशासन

का परीक्षण कर उनकी इच्छाशक्ति को भी परखा गया।

जिन छात्रों में इच्छाशक्ति अधिक थी, उन्हें कक्षा में सबसे अच्छे अंक मिलते थे और आगे चलकर उन्हें अच्छे कॉलेजों में प्रवेश भी मिला। कक्षा में उनकी उपस्थिति भी अच्छी थी और वे टी.वी. देखने में कम व पढ़ाई में ज़्यादा समय देते थे। शोधकर्ताओं ने इसके बारे में लिखा है, ‘स्व-अनुशासित छात्र शिक्षा के मामले में अपने सहपाठियों से कहीं बेहतर थे। आई.क्यू. (बौद्धिक स्तर) के मुकाबले स्व-अनुशासन द्वारा छात्रों के शैक्षिक प्रदर्शन को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। स्व-अनुशासन से यह समझने में भी मदद मिली कि शैक्षिक वर्ष के दौरान कौन-से छात्र अपने अंदर आवश्यक सुधार ला सकते हैं। जबकि आई.क्यू. (बौद्धिक स्तर) की जाँच करके यह पता नहीं लगाया जा सकता। शैक्षिक प्रदर्शन के मामले में आई.क्यू. (बौद्धिक स्तर) के मुकाबले स्व-अनुशासन अधिक महत्त्व रखता है।’

इन शोधों से पता चलता है कि छात्रों की इच्छाशक्ति बढ़ाने और उनके प्रदर्शन को बेहतर बनाने के लिए आवश्यक है कि इच्छाशक्ति को एक आदत बनाया जाए। यूनिवर्सिटी ऑफ पेंसिल्वेनिया की एक शोधकर्ता एंजेला डकवर्थ ने बताया, ‘कई बार ऐसा लगता है कि स्व-अनुशासित लोग कड़ी मेहनत नहीं कर रहे हैं। जबकि वास्तविकता यह होती है कि उन्होंने इसे अपनी आदत बना लिया होता है यानी अब उन्हें अपनी इच्छाशक्ति का इस्तेमाल करने के लिए सोच-विचार करने की ज़रूरत नहीं पड़ती है।’

स्टारबक्स के लिए इच्छाशक्ति का अर्थ शैक्षिक जिज्ञासा से कहीं अधिक गहरा है। कंपनी ने 90 के दशक के अंत में जब अपने विकास की नई रणनीति बनानी शुरू की, तो तत्कालीन अधिकारियों को एक महत्वपूर्ण बात समझ में आई। उन्होंने पाया कि अगर वे चाहते हैं कि ग्राहक मात्र एक कप कॉफी के लिए चार डॉलर खर्च करे, तो उन्हें ग्राहकों को उसी स्तर का वातावरण भी देना होगा। इसके लिए ज़रूरी था कि कंपनी के कर्मचारियों को इस बात के लिए प्रशिक्षित किया जाए कि वे ग्राहकों को तरह-तरह की कॉफी और नाश्ते के साथ थोड़ी सी खुशी भी परोस सकें। इसलिए स्टारबक्स ने इस विषय पर शोध शुरू कर दिया ताकि उसके कर्मचारियों को भावनाओं पर नियंत्रण रखना सिखाया जा सके और उन्हें इस तरह स्व-अनुशासित किया जा सके कि वे हर ग्राहक का ऑर्डर लेते ही उसे अच्छा महसूस करवा सकें। कंपनी के अधिकारी समझ गए कि जब तक कर्मचारी काम के दौरान अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को खुद से अलग करना नहीं सीख लेते, तब तक किसी न किसी कर्मचारी की भावनाएँ उसके काम में खलल डालती रहेंगी। इसका सीधा असर ग्राहकों के साथ उनके व्यवहार पर पड़ेगा। जबकि अगर कर्मचारी आठ घंटों की शिफ्ट के बाद भी अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रखना सीख लें, तो वे ग्राहकों को उनकी उम्मीद के मुताबिक उच्च श्रेणी की सेवाएँ दे पाएँगे।

कर्मचारियों को स्व-अनुशासन सिखाने के लिए उपयुक्त पाठ्यक्रम बनाने की ज़रूरत थी। इसलिए कंपनी ने पाठ्यक्रम बनाने की प्रक्रिया पर लाखों डॉलर खर्च किए। कंपनी के अधिकारियों ने ऐसी वर्कबुक्स (कार्य-पुस्तिकाएँ) लिखीं, जो दरअसल

इच्छाशक्ति को आदत में बदलने के लिए ज़रूरी मार्गदर्शन देनेवाली पुस्तिकाएँ थीं। स्टारबक्स सिएटल जैसे शांत शहर के एक छोटे-से कॉफी हाउस से शुरुआत करके सत्रह हज़ार स्टोअर्सवाली विशाल कंपनी बनी और उनकी इस असाधारण सफलता में इस पाठ्यक्रम का बहुत बड़ा हाथ है। आज स्टारबक्स की सालाना आय दस अरब डॉलर है।

स्टारबक्स ने यह कैसे किया? ट्रेविस जैसा लड़का, जिसका बचपन नशे में चूर माँ-बाप के बीच गुज़रा, जिसने अपनी पढ़ाई भी बीच में ही छोड़ दी और जिसका आत्म-नियंत्रण इतना कमज़ोर था कि वह मैकडॉनल्ड तक में नौकरी नहीं कर पाया, ऐसे लड़के को स्टारबक्स ने ऐसी शिक्षा दी कि अब वह दर्जनों कर्मचारियों का और हर महीने हज़ारों डॉलर की आय का हिसाब रखता है। यह कैसे संभव हुआ? आखिर ट्रेविस ने स्टारबक्स में ऐसा क्या सीखा?

2

केस वेस्टर्न रिजर्व यूनिवर्सिटी के एक कमरे में एक महत्वपूर्ण प्रयोग किया जा रहा था। जिन लोगों ने भी वह प्रयोग देखा, वे एक चीज़ को लेकर एकमत थे कि कमरे में रखी कुकीज़ की सुगंध बहुत अच्छी है। ये कुकीज़ कुछ ही समय पहले गरमा गरम ओवन में से निकली थीं और उनमें से पिघले हुए चॉकलेट चिप्स बहते हुए बाहर निकल रहे थे। कुकीज़ के बगल में ही दूसरी मेज़ पर एक कटोरा भरकर मूली रखी हुई थी। दिनभर में अनेकों भूखे छात्र उस कमरे में आकर उन मेज़ों के सामने बैठ चुके थे। उन्होंने अनजाने में ही इच्छाशक्ति जाँचने के इस प्रयोग के शोधकर्ताओं को एक महत्वपूर्ण जानकारी दे दी थी। जिससे यह सामने आया कि दुनिया में स्व-अनुशासन कैसे काम करता है।

उस समय इच्छाशक्ति को लेकर ज़्यादा शोध नहीं हुए थे। मनोविज्ञानी ऐसी चीज़ों को 'स्व-अनुशासन' का हिस्सा तो मानते थे पर इस विषय के प्रति लोगों में बहुत जिज्ञासा नहीं थी। 1960 के दशक में स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने चार साल की उम्रवाले बच्चों की इच्छाशक्ति परखने का एक प्रसिद्ध प्रयोग किया था। बच्चों को कमरे में लाकर उनके सामने तरह-तरह की मिठाइयाँ रखी गईं और उनसे कहा गया कि अगर वे मिठाई तुरंत खाना चाहते हैं, तो उन्हें केवल एक टुकड़ा मिलेगा, लेकिन अगर वे कुछ मिनट इंतजार करें, तो उन्हें दो टुकड़े दिए जाएँगे। यह कहकर वैज्ञानिक कमरे से निकल गए। कुछ बच्चों ने जैसे ही देखा कि अब कमरे में कोई बड़ी उम्र का व्यक्ति मौजूद नहीं है, वे स्वयं को रोक नहीं सके और तुरंत मिठाई खा ली। लेकिन उनमें से 30 बच्चे ऐसे थे, जिन्होंने खुद को रोककर रखा और मिठाई को हाथ भी नहीं लगाया। पंद्रह मिनट बाद वैज्ञानिकों के लौटने पर इन 30 बच्चों को मिठाई के दो-दो टुकड़े खाने को मिले। वैज्ञानिकों ने कमरे से बाहर निकलने के बाद वहाँ लगे एक विशेष दो-तरफा आइने से बच्चों पर निगरानी रखी थी, जिससे वे जान चुके थे कि जिन बच्चों ने अपनी इच्छा पर नियंत्रण रखा, उन्हें मिठाई के दो टुकड़े मिलने चाहिए।

इस प्रयोग के कई वर्षों बाद उन वैज्ञानिकों ने उन बच्चों के बारे में अनेकों जानकारियाँ

प्राप्त कीं। तब तक वे सारे बच्चे उच्च महाविद्यालयों में पढ़ने लगे थे। वैज्ञानिकों ने उन बच्चों के स्कूल के ग्रेड्स, एस.ए.टी. (अमेरिकी कॉलेजों में एडमिशन के लिए होनेवाला एक टेस्ट) स्कोर, मित्रता निभाने की क्षमता, समस्याओं का सामना करने की क्षमता आदि के बारे में पता किया। उन्होंने पाया कि वर्षों पहले जिन बच्चों ने अपनी इच्छाओं को नियंत्रित करते हुए मिठाई को हाथ नहीं लगाया था, उन्हें सबसे अच्छे ग्रेड्स मिले और उनका एस.ए.टी. स्कोर भी 210 पॉइंट से अधिक रहा। यह आँकड़ा उन बच्चों के मुकाबले कहीं ज़्यादा था, जो अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण नहीं रख पाए थे। आत्म-नियंत्रण में सफल रहे वे 30 बच्चे अपेक्षाकृत अधिक प्रसिद्ध थे और ड्रग्स या अन्य नशीली दवाओं से बिलकुल दूर थे। वैज्ञानिकों ने पाया कि नर्सरी में पढ़नेवाले जो बच्चे मिठाई की लालसा जैसी छोटी-छोटी चीज़ों को काबू कर सकते हैं, उनके लिए किशोरावस्था में कक्षा में समय पर पहुँचना, पढ़ाई पर अधिक ध्यान देना, अच्छे मित्र बनाना, सबके बीच स्वीकृति हासिल करने के लिए साथियों के दबाव में न आना आसान होता है। मिठाई खाने की लालसा को नियंत्रित करनेवाले बच्चों में स्व-अनुशासन के ऐसे गुण थे, जिनका उपयोग वे जीवनभर करते रहे।

अब वैज्ञानिक इस विषय से संबंधित नए प्रयोग करने लगे। वे जानना चाहते थे कि स्व-अनुशासन के गुणों को कैसे विकसित किया जा सकता है। इन प्रयोगों में उन्होंने पाया कि बच्चों को आत्म-नियंत्रण सिखाने का एक सफल तरीका यह सिखाना है कि वे मिठाई नज़र आने पर भी अपना ध्यान बँटा सकें। यानी अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण रख सकें। इसके लिए वे कोई चित्र बनाकर अपना ध्यान दूसरी ओर केंद्रित कर सकते हैं या फिर ऐसा ही कोई और काम कर सकते हैं। इसके अलावा अगर वे मिठाई नज़र आने पर उसके इर्दगिर्द तस्वीर की एक फ्रेम होने की कल्पना करें, जिससे उन्हें मिठाई असली न लगकर किसी तस्वीर जैसी लगे, तब भी वे आत्म-नियंत्रण सीख सकते हैं।

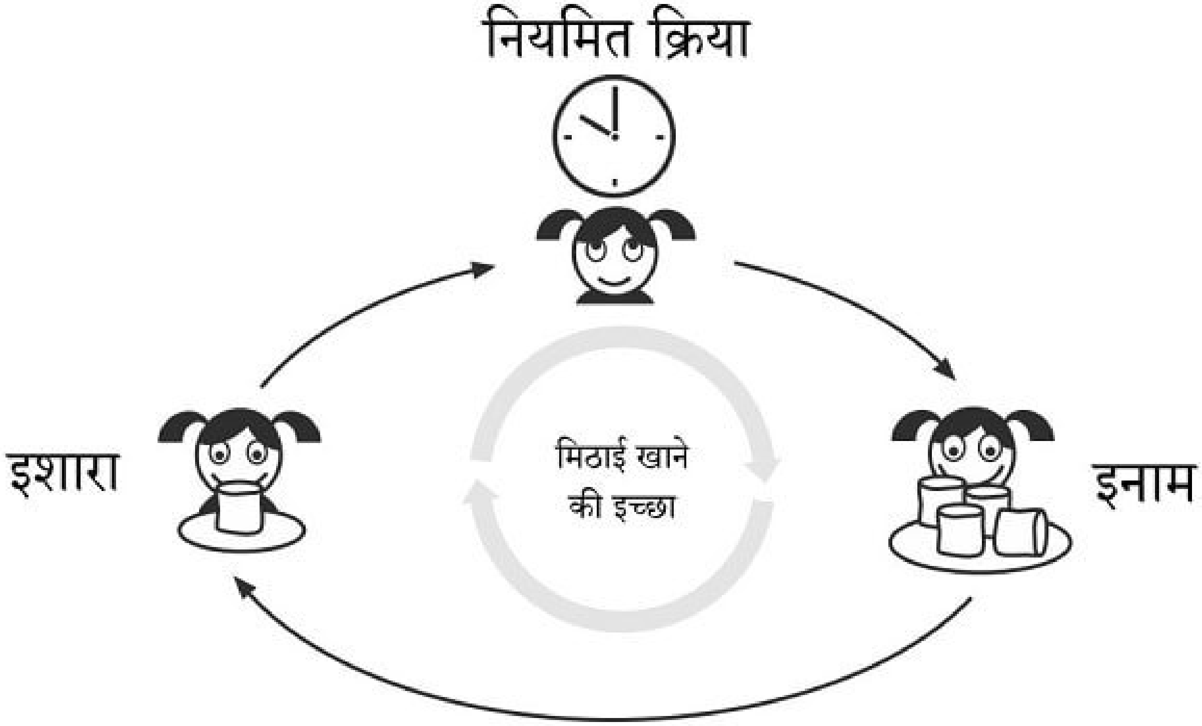

जब बच्चे अपनी इच्छाओं को देर से पूरा करने की आदत सीखते हैं

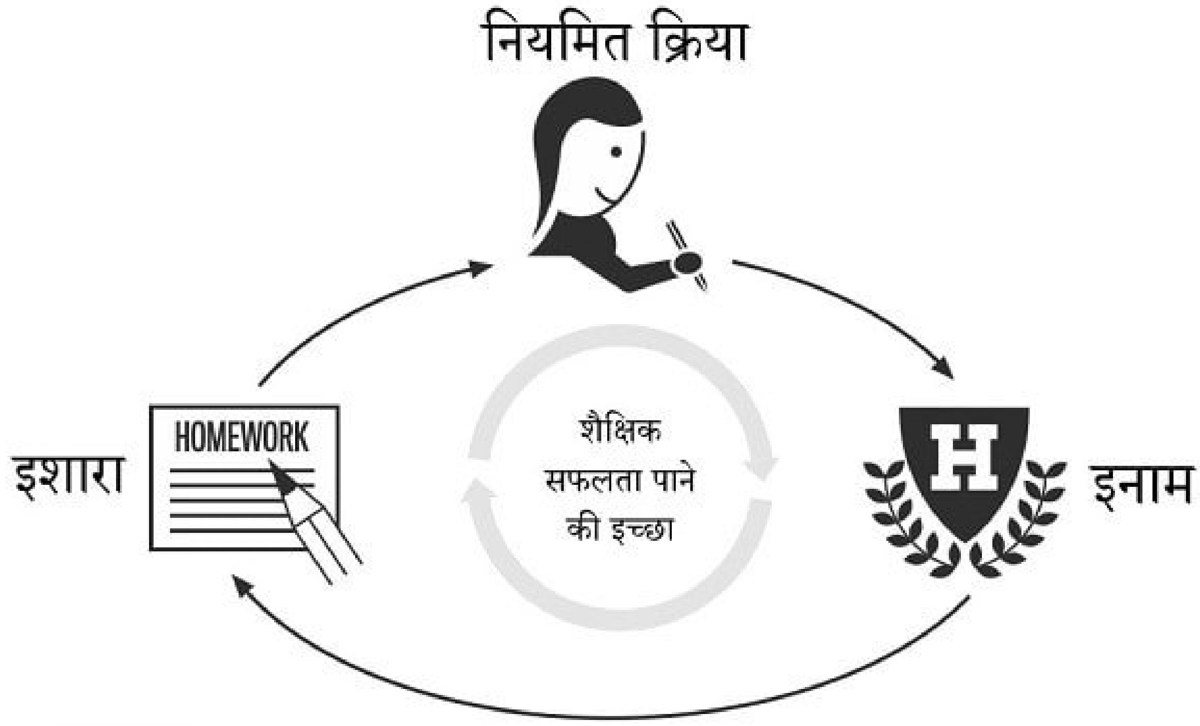

यही आदतें जीवन के दूसरे मौकों में भी काम आती हैं

1980 के दशक तक इस मसले पर एक नया मत सामने आने लगा, जो अधिकतर लोगों को मंजूर था। इच्छाशक्ति एक ऐसा गुण है, जिसे सिखाया जा सकता है। ठीक वैसे ही जैसे किसी इंसान को गणित सिखाई जाती है या दूसरों को धन्यवाद कहना सिखाया जाता है। हालाँकि इसके बावजूद इस विषय पर शोध करने के लिए ज़्यादा धन नहीं मिलता था। इसके कारण चूँकि इच्छाशक्ति विषय पर शोध करना प्रचलन में नहीं था इसलिए स्टेनफोर्ड के अनेक वैज्ञानिक अन्य विषयों पर शोध करने लगे।

1990 के दशक में केस वेस्टर्न में मनोविज्ञान में शोध कर रहे पी.एच.डी. छात्रों के एक समूह को स्टेनफोर्ड के कुछ पुराने शोधपत्र मिले। इन्हें पढ़कर उन छात्रों ने कुछ ऐसी चीज़ों पर प्रश्न पूछे, जिनके बारे में पहले के वैज्ञानिकों ने सोचा भी नहीं था। इस समूह में मार्क मुरॉवेन भी थे। मुरॉवेन इस मॉडल से संतुष्ट नहीं थे कि 'इच्छाशक्ति एक गुण है।' क्योंकि गुण कोई भी हो, हमेशा स्थिर रहना उसकी पहली विशेषता होती है। जैसे अगर आज आपको यह पता है कि ऑमलेट कैसे बनता है, तो कल भी आपको यह याद रहेगा कि ऑमलेट कैसे बनता है।

जबकि मुरॉवेन का अनुभव यह था कि वह हर समय अपनी इच्छाशक्ति को सक्रिय

नहीं रख सकता। कभी-कभी वे शाम को घर लौटते और फौरन जॉगिंग के लिए चले जाते, लेकिन कई बार वे घर लौटकर केवल अपने सोफे पर बैठकर टी.वी. देखने का आनंद लेना चाहते थे। जिस दिन वे टी.वी. देखना चाहते थे, उस दिन ऐसा लगता मानो उनके दिमाग का वह हिस्सा जो उन्हें व्यायाम करने के लिए प्रोत्साहित करता है, वह अपना काम भूल गया हो। कभी वे स्वास्थ्यवर्धक भोजन पसंद करते तो कभी वेंडिग मशीन से चिप्स और चॉकलेट लेकर उसी से पेट भर लेते।

इसलिए मुरॉवेन ने सोचा कि यदि इच्छाशक्ति एक गुण है, तो यह प्रतिदिन एक समान या स्थिर क्यों नहीं रहता? उन्हें आशंका हुई कि शायद पहले के वैज्ञानिक इच्छाशक्ति के बारे में सब कुछ पता नहीं लगा पाए थे। पर इस बात का परीक्षण प्रयोगशाला में कैसे किया जाए?

***

आखिरकार मुरॉवेन ने अपनी दुविधा का हल निकाल ही लिया। उन्होंने प्रयोगशाला में दो मेज़ रखे। उनमें से एक पर कुकीज़ और दूसरे पर एक कटोरा भरकर मूली रख दी। यह प्रयोगशाला दो-तरफा आइने के पीछे स्थित थी, जिसकी मदद से बाहर से भी अंदर देखा जा सकता था कि अंदर क्या हो रहा है। इसके साथ ही यहाँ मेज़, लकड़ी की कुर्सी, घंटी और टोस्टर ओवन भी रखा था। इस प्रयोग के लिए 67 अंडरग्रेज्युएट छात्रों को चुना गया। उन्हें उस दिन दोपहर का भोजन करने से मना किया गया था। जब प्रयोग शुरू हुआ तो एक-एक कर सभी छात्र दोनों मेज़ों के सामने आकर बैठ गए।

मुरॉवेन ने प्रत्येक छात्र को बताया कि ‘यह प्रयोग स्वाद के प्रति आपकी संवेदन शक्ति जानने के लिए किया जा रहा है,’ जबकि यह झूठ था। प्रयोग का असल उद्देश्य था, छात्रों को उनकी इच्छाशक्ति का प्रयोग करने के लिए मज़बूर करना। इसके अंतर्गत आधे छात्रों को कुकीज़ खाने के लिए कहा गया और बाकी के छात्रों को कुकीज़ को अनदेखा कर मूली खाने का आदेश मिला। मुरॉवेन का मत था कि कुकीज़ को अनदेखा करना मुश्किल है और ऐसा करने के लिए इच्छाशक्ति की आवश्यकता होगी। वहीं दूसरी ओर मूली को अनदेखा कर कुकीज़ खाना बहुत ही आसान काम था।

‘याद रहे! आपको जो चीज़ खाने को कहा गया है सिर्फ वही खाएँ।’ इतना कहकर मुरॉवेन कमरे से बाहर चले गए।

अब कमरे में केवल छात्र बचे थे। उन्होंने खाना शुरू किया। कुकीज़ खानेवाले छात्र खुश थे, लेकिन मूली खानेवाले छात्रों को ज़रा भी अच्छा नहीं लग रहा था। वे बड़ी नाराज़गी से खुद पर संयम रखकर कुकीज़ को अनदेखा करने की कोशिश कर रहे थे। कमरे के आगे लगे दो-तरफा आइने से मुरॉवेन ने देखा कि जिन छात्रों को सिर्फ मूली खाने को कहा गया था, उनमें से एक ने एक कुकी उठाई, तरसते हुए उसकी सुगंध ली और फिर वापस कटोरे में रख दी। उन्हीं में से एक अन्य छात्र ने एक साथ कई कुकीज़ ऊठाईं और

फिर वापस रख दीं। इसके बाद वह अपनी उँगलियों पर लगा चॉकलेट ज़ुबान से चाटने लगा।

पाँच मिनट बाद मुरॉवेन कमरे में लौटे। मुरॉवेन के अनुसार, कुकीज़ को अनदेखा कर मूली जैसी कड़वी चीज़ खानेवाले छात्रों की इच्छाशक्ति अब तक पूरी तरह इस्तेमाल हो चुकी थी। वहीं कुकीज़ खानेवाले छात्रों को तो अपने आत्म-नियंत्रण का ज़रा सा भी उपयोग नहीं करना पड़ा था।

उन्होंने हर छात्र को बताया कि 'आपके मस्तिष्क से स्वाद-संवेदना की स्मृति हटाने के लिए हमें पंद्रह मिनट रुकना होगा।' इस दौरान उन्होंने छात्रों को समय गुज़ारने के लिए एक पहेली हल करने को कहा। यह पहेली बड़ी आसान नज़र आ रही थी। छात्रों को एक ज्यामितीय आकृति दी गई और इस आकृति के हर हिस्से पर पेंसिल चलाकर उस पर निशान लगाने को कहा गया। शर्त यह थी कि इस दौरान न तो वे पेन्सिल को कागज़ से उठा सकते थे और न ही किसी एक रेखा पर दो बार पेन्सिल घुमा सकते थे। शोधकर्ता ने उन्हें बताया कि अगर आप पहेली पूरी करने के बजाय बीच में छोड़ना चाहते हैं, तो इसके लिए सामने लगी घंटी बजा सकते हैं। शोधकर्ता ने छात्रों से कहा कि उन्हें पहेली पूरी करने में ज़्यादा समय नहीं लगेगा।

सच्चाई यह थी कि इस पहेली को सुलझाना नामुमकिन था।

यह पहेली समय गुज़ारने के लिए नहीं दी गई थी बल्कि इस प्रयोग का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा यह पहेली ही थी। इस पहेली को हल करने की कोशिश करते रहने के लिए अत्याधिक इच्छाशक्ति की आवश्यकता थी क्योंकि आप चाहे जितनी कोशिश कर लें, सफलता मिलना नामुमकिन था। मुरॉवेन के मन में यह सवाल था कि जो छात्र कुकीज़ को अनदेखा कर पहले ही अपनी इच्छाशक्ति को खर्च कर चुके हैं, क्या वे इस पहेली को बीच में ही छोड़ देंगे? क्या वे अन्य छात्रों से पहले ही पहेली सुलझाने की आशा छोड़ देंगे? दूसरे शब्दों में, क्या इच्छाशक्ति एक सीमित संसाधन है, जिसका उपयोग बस एक निश्चित सीमा तक ही किया जा सकता है?

एक बार फिर मुरॉवेन कमरे से बाहर जाकर आइने के दूसरी ओर से छात्रों का निरीक्षण करने लगे। कुकीज़ खानेवाले छात्र, जिन्होंने अपने आत्म-नियंत्रण के संग्रह से ज़रा भी खर्च नहीं किया था, तुरंत पहेली सुलझाने में व्यस्त हो गए। वे शांत लग रहे थे। उनमें से एक ने उस ज्यामितीय आकृति पर सीधी रेखा खींचना शुरू किया, लेकिन उसे असफलता हाथ लगी। फिर उसने दोबारा कोशिश की। वह कई बार यही चक्र दोहराता रहा और हर बार असफल रहा। उनमें से अनेक छात्र तब तक पहेली सुलझाने की कोशिश करते रहे, जब तक मुरॉवेन ने आकर उन्हें रुकने के लिए नहीं कहा। तब तक करीब आधा घंटा बीत चुका था। कुकीज़ खानेवाले छात्रों का परिणाम यह था कि उन्होंने औसतन 19 मिनट तक पहेली सुलझाने की कोशिश करने के बाद ही घंटी बजाई थी।

जबकि अपनी इच्छाशक्ति का पहले ही भरपूर उपयोग कर चुके, मूली खानेवाले छात्र इससे बिलकुल उल्टे ढंग से पेश आए। वे पहेली सुलझाते हुए बुदबुदा रहे थे, निराश हो रहे थे। एक ने तो यह कहना शुरू कर दिया कि यह पूरा प्रयोग समय की बरबादी के अलावा और कुछ नहीं है। यहाँ तक कि कुछ छात्र तो मेज़ पर सिर टिकाकर सो भी गए। मुरॉवेन के कमरे में लौटने पर एक छात्र ने तो इस प्रयोग पर अपनी नाराजगी भी जता दी। कुल मिलाकर मूली खानेवाले छात्रों का परिणाम यह था कि उन्होंने घंटी बजाने से पहले औसतन केवल 8 मिनट तक पहेली सुलझाने का प्रयास किया था। यह परिणाम कुकीज़ खानेवालों के मुकाबले में 60 प्रतिशत कम था। इसके बाद जब शोधकर्ता ने सभी से पूछा कि वे कैसा महसूस कर रहे हैं, तो मूली खानेवाले एक छात्र ने खीझकर जवाब दिया, 'मैं आपके इस मूर्खतापूर्ण प्रयोग से तंग आ चुका हूँ।'

मुरॉवेन ने बताया कि 'कुकीज़ को अनदेखा करने के लिए कहकर हमने उस समूह के छात्रों को उनकी इच्छाशक्ति का उपयोग करने के लिए मज़बूर किया। जिसके चलते अगले कार्य में यानी पहेली सुलझाने में वे जल्द ही हार मान रहे थे। इस प्रयोग के बाद इस विषय पर दो सौ से भी ज़्यादा शोध हो चुके हैं और उन सभी को कुछ इसी प्रकार के परिणाम मिले हैं। इच्छाशक्ति केवल एक गुण नहीं है, यह एक मांसपेशी जैसी है, ठीक वैसे ही जैसी आपके हाथ और पैरों में होती है। इसलिए आप इससे जितनी ज़्यादा मेहनत कराएँगे, यह उतना ही थकेगी और फिर अन्य कामों के लिए इसमें शक्ति नहीं बचेगी।'

शोधकर्ताओं ने इस मत के आधार पर अनेक घटनाओं का स्पष्टीकरण देने की कोशिश की है। कुछ शोधकर्ताओं का कहना है कि इससे पता चलता है कि क्यों कुछ लोग विवाहेत्तर संबंधों में पड़ जाते हैं (ऐसे संबंध अक्सर रात के समय शुरू होते हैं क्योंकि तब तक इंसान दिनभर काम करके अपनी इच्छाशक्ति का पूरा इस्तेमाल कर चुका होता है)। इससे यह भी पता चलता है कि क्यों कुछ अच्छे डॉक्टर भी मूर्खतापूर्ण गलतियाँ कर बैठते हैं। ऐसी गलतियाँ होने की संभावना अक्सर तब होती है, जब वह डॉक्टर लंबे समय तक चला कोई मुश्किल काम करके लौटा हो। मुरॉवेन के अनुसार, 'अगर आप शाम को काम से लौटने के बाद जॉगिंग के लिए जाना चाहते हैं, तो ज़रूरी है कि आप दिनभर अपनी इच्छा-शक्ति की ताकत बचाकर रखें। अगर आप अपनी शक्ति को दिनभर ईमेल लिखने या मुश्किल और उबाऊ फॉर्मों को भरने में खर्च कर देंगे, तो शाम को घर लौटने तक आपकी सारी ताकत समाप्त हो चुकी होगी।'

***

लेकिन यह उदाहरण कितना उपयुक्त है? क्या इच्छाशक्ति की मांसपेशी व्यायाम कर वैसे ही मज़बूत बनाई जा सकती है, जैसे डम्बल्स उठाने से बाजुओं की मांसपेशियाँ मज़बूत बन जाती हैं?

2006 में ऑस्ट्रेलिया के मेगन ओटेन और केन चेंग नामक दो शोधकर्ताओं ने इच्छाशक्ति को समझने के लिए व्यायाम पर आधारित एक विशेष प्रयोग करके इस

प्रश्न का जवाब ढूँढ़ने की कोशिश की। उन्होंने 18 से 50 साल के बीच की उम्रवाले दो दर्जन लोगों को शारीरिक व्यायाम के एक कोर्स के लिए चुना। इस कोर्स में लगभग दो महीनों से भी ज़्यादा समय तक इन लोगों से प्रतिदिन ज़्यादा से ज़्यादा वेट लिफ्टिंग (भारोत्तोलन) रेजिस्टेंस ट्रेनिंग (प्रतिरोध प्रशिक्षण) और एरोबिक रूटीन्स (एरोबिक संबंधी तयशुदा क्रियाएँ) कराए गए। सप्ताह दर सप्ताह लोगों ने खुद को बार-बार व्यायाम करने के लिए मज़बूर किया। हर बार जब वे व्यायाम करने पहुँचते, तो अपनी इच्छाशक्ति का अधिक से अधिक उपयोग करते।

दो महीनों बाद शोधकर्ताओं ने उन लोगों को यह जानने के लिए परखा कि व्यायाम करने के लिए उन्होंने जो इच्छाशक्ति बढ़ाई, क्या जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी वह इच्छाशक्ति बढ़ी है? यह प्रयोग शुरू होने से पहले इसके ज़्यादातर सहभागी खुद अपने बारे में बताते हुए कहते थे कि उन्हें एक जगह पर आराम से बैठे रहने में बड़ा सुख मिलता है। जबकि लगातार दो माह तक व्यायाम करने से अब उनके शारीरिक गठन में सकारात्मक बदलाव आ गए थे, पर बदलावों का यह सिलसिला शरीर तक ही सीमित नहीं था। उनके जीवन के अन्य पहलुओं में भी स्वास्थ्यवर्धक बदलाव आए थे। उन्होंने जिम में जितना ज़्यादा समय बिताया, उतना ही उन लोगों ने धूम्रपान, शराब, जंकफूड आदि का सेवन कम कर दिया। अब वे घर के कामों में ज़्यादा समय दे रहे थे और टी.वी. देखने में कम समय खर्च कर रहे थे। इसके अलावा उनके डिप्रेशन का स्तर भी कम हो गया था।

लेकिन ओटेन और चेंग को यह भी लगा कि हो सकता है कि इन परिणामों का इच्छाशक्ति से कोई संबंध ना हो। संभावना तो यह भी थी कि नियमित व्यायाम से इंसान का ज़्यादा खुश महसूस करना और जंकफूड तथा नशीली चीज़ों से दूर रहना सामान्य बात हो।

इसलिए उन्होंने एक और प्रयोग किया। इस बार उन्होंने 29 लोगों को चार महीने का एक कोर्स करने के लिए चुना। इस कोर्स में हिस्सा लेनेवालों को जीवन में पैसे का नियोजन करना सिखाया जाना था। शोधकर्ताओं ने इन 29 लोगों को अगले चार महीने तक थिएटर में फिल्में देखने या रेस्त्रां में खाना खाने जैसी विलासिताओं से दूर रहने को कहा। साथ ही हर किसी को अपने छोटे से छोटे खर्च का भी हिसाब रखने के लिए कहा गया। शुरू-शुरू में इस कोर्स में हिस्सा लेनेवालों के लिए यह सब बहुत परेशानी भरा था। लेकिन धीरे-धीरे सभी ने अपने अंदर वह आत्म-अनुशासन विकसित कर लिया, जिससे वे नियमित रूप में अपने सारे खर्चों का हिसाब लिखने लगे।

कोर्स के दौरान इन 29 लोगों की आर्थिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ। इससे भी ज़्यादा आश्चर्यजनक था कि उन्होंने धूम्रपान और शराब व कैफीन का सेवन भी पहले के मुकाबले कम कर दिया था। इनमें से कॉफी और शराब के आदी लोग अब औसतन दो कप कॉफी और दो बियर कम पीते थे। वहीं धूम्रपान के आदी लोग औसतन दिनभर में पंद्रह सिगरेट कम पीने लगे। उन्होंने जंकफूड खाना भी काफी कम कर दिया था। नौकरी,

व्यवसाय और स्कूल-कॉलेज में उनकी कार्यक्षमता भी बढ़ गई थी। यह शोध भी काफी हद तक शारीरिक व्यायामवाले शोध जैसा ही था। लोगों ने अपने जीवन के एक पहलू, जैसे व्यायाम या पैसे का नियोजन करके अपनी इच्छाशक्ति मज़बूत की। जिसका असर उनके जीवन के सभी पहलुओं पर नज़र आया।

इसके बाद ओटेन और चेंग ने एक और प्रयोग किया। उन्होंने 45 छात्रों को एक अकादमिक सुधार कोर्स में भर्ती किया। इस कोर्स का लक्षय छात्रों में पढ़ाई संबंधी नई आदतें निर्मित करना था। जाहिर है, इस कोर्स से छात्रों के सीखने और आत्मसात करने के गुणों में सुधार आया। साथ ही धूम्रपान और शराब के सेवन जैसे आदतों में भी उल्लेखनीय कमी आई। वे टी.वी. भी कम देखने लगे। इसके अलावा उनके अंदर व्यायाम करने और पौष्टिक भोजन करने जैसी आदतें भी विकसित हुईं। हालाँकि इस कोर्स में पढ़ाई संबंधी आदतों के अलावा बाकी सारे विषयों पर कुछ भी नहीं कहा गया था। एक बार फिर, इच्छाशक्ति की मांसपेशी मज़बूत होने से जीवन के अन्य क्षेत्रों से संबंधित अच्छी आदतें भी विकसित हुईं।

डार्थमाउथ के शोधकर्ता टॉड हेथरटन ने भी इच्छाशक्ति के विषय पर काफी शोध किया है। वे कहते हैं कि ‘जब आप खुद को जिम जाकर व्यायाम करने के लिए या समय पर काम पूरा करने के लिए या फिर बर्गर की जगह सलाद खाने के लिए प्रोत्साहित करना सीख लेते हैं, तो इससे जाहिर होता है कि आप अपना सोच-विचार का तरीका बदलने की ओर अग्रसर हैं। इस तरह के प्रयासों से लोग अपनी इच्छाओं को बेहतर ढंग से नियंत्रित करने लगते हैं। वे सीखने लगते हैं कि प्रलोभन से कैसे बचना है। जब आप अपनी इच्छाशक्ति का ऐसा उपयोग करना सीख लेते हैं, तो आपका दिमाग लक्षय पर केंद्रित रहना सीख जाता है।’

आजकल तो लगभग हर महत्वपूर्ण विश्वविद्यालय में अनेकों शोधकर्ता इच्छाशक्ति का अध्ययन कर रहे हैं। फिलाडेल्फिया, सीएटल, न्यूयॉर्क वगैरह के पब्लिक और चार्टर स्कूलों के पाठ्यक्रमों में इच्छाशक्ति को मज़बूत करने के सबक जोड़े गए हैं। के.आई.पी.पी. या ‘नॉलेज इज पॉवर प्रोग्राम’ (ज्ञान ही शक्ति है कार्यक्रम) अमेरिका के अनेकों चार्टर स्कूलों का एक समूह है, जो देशभर में कम आयवाले परिवारों के बच्चों को शिक्षा देता है। इस समूह के स्कूलों का मुख्य दर्शन ही यह है कि बच्चों को आत्म-नियंत्रण की शिक्षा दी जाए। के.आई.पी.पी. के सदस्य फिलाडेल्फिया के एक स्कूल ने तो अपने छात्रों को ऐसी शर्टस् भी बाँटीं, जिन पर यह संदेश लिखा हुआ था कि ‘मार्शमेलो मत खाओ।’ मार्शमेलो शक्कर और जिलेटिन के मिश्रण से बनी एक अमेरिकी मिठाई होती है, जो स्वास्थ्य के लिए अच्छी नहीं मानी जाती। ऐसी तमाम कोशिशों के कारण इस प्रोग्राम में शामिल अनेकों स्कूलों में छात्रों के परीक्षा परिणामों में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है।

‘यही कारण है कि बच्चों के लिए खेलकूद गतिविधियों में शामिल होना या पियानो जैसा कोई वाद्ययंत्र सिखाना बहुत महत्वपूर्ण होता है। हालाँकि इसका उद्देश्य यह नहीं

होता कि बच्चा बड़ा होकर संगीतकार या खेल में चैम्पियन बन जाए। पर इससे बच्चे के अंदर कई सकारात्मक आदतें ज़रूर निर्मित होती हैं। जैसे जब आप खुद को एक घंटा व्यायाम करने या पंद्रह मिनट तक दौड़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, तो आपके अंदर आत्म-अनुशासन आने लगता है। इसी तरह जब पाँच साल की उम्र का छोटा सा बच्चा दस मिनट तक फुटबॉल के पीछे भागना सीखता है, तो फिर यही बच्चा छठी कक्षा में जाकर समय पर अपना होमवर्क भी करता है,' हेथर्टन ने बताया।

अब इच्छाशक्ति विज्ञान पत्रिकाओं और समाचार-पत्रों में प्रकाशित होनेवाले लेखों का प्रसिद्ध विषय बन गई है। इसके साथ ही अमेरिका के कॉर्पोरेट जगत में भी इच्छाशक्ति का विषय प्रचलित होने लगा है। स्टारबक्स से लेकर द गैप, वॉलमॉर्ट और रेस्त्रां जैसे अनेक व्यवसाय जो नौसिखिए कर्मचारियों पर निर्भर होते हैं, इन सबको एक ही समस्या का सामना करना पड़ता है। यह समस्या है कि उनके कर्मचारी चाहे जितनी अच्छी तरह काम करना चाहें, पर अधिकतर कर्मचारियों में आत्म-अनुशासन की कमी होती है इसलिए अच्छे इरादों के बावजूद वे असफल हो जाते हैं। वे अक्सर देर से आते हैं, ग्राहकों के सामने अपना आपा खो देते हैं, कार्यस्थल से जुड़े अन्य प्रलोभनों जैसे गपशप और अफवाह वगैरह के चक्कर में पड़ जाते हैं और कई बार तो बिना किसी कारण के ही नौकरी तक छोड़ देते हैं।

स्टारबक्स में एक दशक तक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करनेवाली क्रिस्टीन डेप्यूटी ने बताया, 'बहुत सारे कर्मचारियों के लिए स्टारबक्स पहला व्यावसायिक अनुभव होता है। नौकरी शुरू करने से पहले लोगों को उनके माता-पिता और शिक्षक वगैरह ही सब कुछ समझाते हैं। फिर अचानक ग्राहक चिल्लाने लगता है और बॉस अपनी व्यस्तता में सही सलाह नहीं दे पाता। ऐसे में इन लोगों के लिए कठिन परिस्थितियों से सामंजस्य बिठाना मुश्किल हो जाता है और वे स्वयं को हारा हुआ महसूस करने लगते हैं। बहुत से लोग इस बदलाव को स्वीकार नहीं कर पाते। इसीलिए हम अपने कर्मचारियों को वह आत्म-अनुशासन सिखाने की कोशिश करते हैं, जो उन्हें स्कूल-कॉलेज में नहीं सिखाया जाता।'

लेकिन जब स्टारबक्स जैसी कंपनियों ने कार्यस्थल पर मूली और कुकीज़ जैसे प्रयोगों के निष्कर्ष लागू किए, तो कुछ नई समस्याएँ उनके सामने आने लगीं। उन्होंने वज़न घटाने का कोर्स शुरू करके कर्मचारियों को जिम की मुफ्त सदस्यता दी। इसके पीछे कंपनी का उद्देश्य था कि उनके कर्मचारियों में नियमित व्यायाम करने की आदत विकसित होगी और इसका सकारात्मक असर ग्राहकों को कॉफी परोसने के तरीकों पर भी पड़ेगा। लेकिन इस कोर्स में बहुत कम कर्मचारियों ने हिस्सा लिया। कर्मचारियों के लिए पूरा दिन काम करने के बाद कोर्स के लिए जाना या जिम जाकर व्यायाम करना मुश्किल था। वे शिकायत करने लगे। इस बारे में मुरॉवेन कहते हैं, 'अगर किसी इंसान को आत्म-अनुशासन के चलते नौकरी में दिक्कतें आ रही हैं तो यह तय है कि आत्म-अनुशासन बढ़ानेवाले कोर्स में उपस्थित रहने के मामले में भी उसे मुश्किल ही होगी।'

लेकिन स्टारबक्स ने इस समस्या को सुलझाने का दृढ़-निश्चय कर लिया था। 2007 में कंपनी की व्यवसाय विस्तार-प्रक्रिया चरम सीमा पर थी। उस समय स्टारबक्स हर दिन लगभग सात नए स्टोअर्स शुरू कर रही थी और हर सप्ताह लगभग पंद्रह सौ लोगों को नौकरी दे रही थी। ऐसे में नौसिखिए कर्मचारियों को कुछ बातें सिखाना अत्यंत आवश्यक था। जैसे समय पर आना, ग्राहक पर गुस्सा न होना, चेहरे पर हर समय मुस्कराहट रखना और अगर संभव हो, तो ग्राहकों का ऑर्डर और उनका नाम जबानी याद रखना आदि। लोग जब स्टारबक्स में आकर महँगी कॉफी खरीदते हैं, तो बदले में कर्मचारियों से अच्छे व्यवहार की अपेक्षा भी करते हैं। स्टारबक्स के पूर्व अध्यक्ष हॉवर्ड बेहर कहते हैं, 'हमारे व्यवसाय में ग्राहकों को परोसी जानेवाली कॉफी उतनी महत्वपूर्ण नहीं है। महत्त्व तो उन ग्राहकों का है, जिन्हें हम कॉफी परोसते हैं। हमारा पूरा व्यवसाय अच्छी ग्राहक सेवा पर निर्भर करता है। इसके बिना हमारा इस व्यवसाय में बने रहना नामुमकिन है।'

आखिरकार तमाम कोशिशों के बाद स्टारबक्स को अपनी समस्या का हल मिल ही गया। कंपनी को समझ में आ गया कि उसे अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए आत्म-अनुशासन को एक संगठनात्मक आदत बनाना होगा।

3

सन 1992 में, ब्रिटेन की एक मनोविज्ञानी स्कॉटलैंड के सबसे व्यस्त ऑर्थोपेडिक (हड्डी रोग संबंधी) अस्पताल गई। वहाँ उन्होंने अपने प्रयोग के लिए पाँच दर्जन मरीज़ों को चुना। उनके प्रयोग का उद्देश्य था, इस बात का पता लगाना कि बदलाव का प्रतिरोध करनेवाले लोगों की इच्छाशक्ति कैसे बढ़ाई जाए।

प्रयोग के लिए चुने गए अधिकतर मरीज़ करीब 68 साल के थे। इनमें से अधिकतर की सालाना आमदनी केवल दस हजार डॉलर्स थी और उन्होंने हाई स्कूल से आगे की पढ़ाई नहीं की थी। कुछ ही दिनों पहले उन सभी की कूल्हे या घुटने की रिप्लेसमेंट सर्जरी हुई थी। उनमें से कई लोगों की शिक्षा और आमदनी कम होने के चलते उन्होंने इस सर्जरी के लिए वर्षों तक इंतजार किया था। उनमें से ज़्यादातर मरीज़ सेवानिवृत्त बूढ़े मैकेनिक और स्टोअर क्लर्क आदि थे। वे अपने जीवन के आखिरी पड़ाव पर थे और उनमें से ज़्यादातर लोगों को कोई नई किताब उठाकर पढ़ने तक की इच्छा नहीं होती थी।

कूल्हे या घुटने की सर्जरी बहुत तकलीफदेह होती है। इस सर्जरी में संयुक्त मांसपेशियों को अलग कर हड्डियाँ काटनी पड़ती है। सर्जरी के बाद काफी दिनों तक बिस्तर में थोड़ा सा भी हिलने या पैर सीधे करने जैसी छोटी-छोटी चीज़ों में भी अत्यधिक दर्द होता है। लेकिन साथ ही, यह भी बहुत ज़रूरी होता है कि मरीज़ सर्जरी के बाद होश में आते ही व्यायाम शुरू कर दे। इससे पहले कि उनकी मांसपेशियों और त्वचा के घाव भरें, मरीज़ों को अपने पैर और कूल्हे को हिलाने जैसी क्रियाएँ शुरू करनी होती हैं। वरना घाव के निशान भरते-भरते इन अंगों का लचीलापन खत्म हो जाता है। इसके साथ ही अगर मरीज़ तुरंत व्यायाम शुरू न करे, तो ब्लड क्लॉट (खून का थक्का जमना)

होने का भी खतरा रहता है। सर्जरी के बाद मरीज़ों को इतना ज़्यादा दर्द होता है कि वे अक्सर स्वास्थ्यलाभ-सत्रों में नहीं जाते। इन्हीं सब कारणों से कई बार मरीज़, जिनमें अक्सर बुजुर्ग लोग शामिल होते हैं, वे डॉक्टर के निर्देशों को अनसुना कर देते हैं।

स्कॉटलैंड के उस शोध में हिस्सा लेनेवालों में से ज़्यादातर ऐसे थे, जो स्वास्थ्य लाभ केंद्रों में नहीं गए। प्रयोग करनेवाली महिला वैज्ञानिक जानना चाहती थीं कि क्या इन लोगों की इच्छाशक्ति जगाने में कुछ मदद की जा सकती है? उन्होंने सभी मरीज़ों को उनकी सर्जरी के बाद एक निर्देश-पुस्तिका दी, जिसमें उनके स्वास्थ्य लाभ-सत्रों की पूरी जानकारी थी। लेकिन इसके साथ ही पुस्तिका के अंत में, हर सप्ताह के लिए 13 पन्ने अलग से जोड़े गए थे। हर पन्ना कुछ सूचनाएँ छोड़कर पूरी तरह खाली था। सूचना कुछ इस प्रकार थी - 'मेरे इस सप्ताह के लक्षय हैं.................! आप क्या-क्या करनेवाले हैं, वह सब यहाँ लिखें। उदाहरण के लिए अगर आप इस सप्ताह टहलने के लिए जानेवाले हैं, तो आप कहाँ जाएँगे और कब जाएँगे, वह सब इसमें लिखें।' शोधकर्ता ने हर मरीज़ को सभी पन्नों पर अपनी योजना स्पष्ट शब्दों में लिखने की सलाह दी। फिर जब उन मरीज़ों ने शोधकर्ता को वे पुस्तिकाएँ वापस दीं, तो उसने उन पुस्तिकाओं की दो श्रेणियाँ बनाईं। पहली श्रेणी में वे पुस्तिकाएँ रखी गईं, जिनका मरीज़ों ने पूरा उपयोग किया और आखिर के पन्नों में अपने लक्षय और योजनाएँ लिखीं। दूसरी श्रेणी में उन मरीज़ों की पुस्तिकाएँ रखी गईं, जिन्होंने आखिरी पन्नों में कुछ भी नहीं लिखा। इसके बाद शोधकर्ता ने दोनों श्रेणी की पुस्तिकाओं की आपस में तुलना की।

यह बात सुनने में बिलकुल बेतुकी लगती है कि सर्जरी के बाद मरीज़ कितनी जल्दी ठीक होगा, इस मामले में कुछ कोरे पन्ने प्रभावकारी साबित होंगे। लेकिन जब शोधकर्ता तीन महीने बाद उन मरीज़ों से मिलीं, तो उन्होंने दोनों श्रेणियों के मरीज़ों में उल्लेखनीय अंतर देखा। जिन मरीज़ों ने अपनी योजनाएँ पुस्तिका में लिखी थीं वे दूसरे मरीज़ों के मुकाबले दो-गुना ज़्यादा तेज़ी से चलने लगे थे। वे बिना सहायता के ही अपनी कुर्सी से भी उठ सकते थे। वे अन्य मरीज़ों के मुकाबले अपने जूते भी ज़्यादा तेज़ी से पहन सकते थे। यहाँ तक कि वे अपने कपड़े खुद धो लेते थे और अपने लिए खाना तक पका लेते थे।

मनोविज्ञानी जानना चाहती थीं कि ऐसा क्यों है। उन्होंने सारी पुस्तिकाओं का ठीक से निरीक्षण किया और पाया कि अधिकतर पन्नों पर सर्जरी के बाद मरीज़ के ठीक होने से जुड़े साधारण पहलुओं के बारे में स्पष्ट शब्दों में विस्तृत योजनाएँ लिखी हैं। जैसे एक मरीज़ ने पुस्तिका में कुछ इस प्रकार अपनी योजना लिखी थी - 'कल जब मेरी पत्नी काम से लौट रही होगी, उस समय मैं उसे बसस्टॉप पर मिलने जाऊँगा।' इसके बाद उसने इससे जुड़ी अन्य साधारण चीज़ों का जिक्र किया, जैसे वह पत्नी से मिलने के लिए घर से कब निकलेगा, कौन से रास्ते से जाएगा, क्या पहनेगा, चूँकि कल बारिश की आशंका है, तो वह कौन सा कोट अपने साथ रखेगा और कौन सी दवाइयाँ रखेगा, जो दर्द ज़्यादा होने की स्थिति में काम आएँ।' एक अन्य मरीज़ ने तो उन पन्नों पर स्पष्ट शब्दों में अपनी यह योजना लिखी थी कि वह हर बार बाथरूम जाने पर कौन से व्यायाम करेगा। एक और मरीज़ ने चौक तक घूमने जाने के बारे में मिनट दर मिनट की योजना लिखी थी।

जब वह मनोविज्ञानी इन पुस्तिकाओं का निरीक्षण कर रही थीं, तब एक और बात उनके ध्यान में आई, जो सभी पुस्तिकाओं में समान थी। इन सभी योजनाओं में सबसे ज़्यादा ध्यान इस बात पर दिया गया था कि दर्द होने पर उसे कैसे नियंत्रण में लाया जाएगा। जैसे जिस मरीज़ ने बाथरूम जाने पर व्यायाम की योजना बनाई थी, उसका दर्द हर बार सोफे से उठते समय बहुत बढ़ जाता था। इसलिए उसने इस दर्द को नियंत्रण में लाने के लिए लिखा - 'सोफे से उठते ही तुरंत अगला कदम उठाकर आगे बढ़ जाओ, ताकि फिर से बैठने के प्रलोभन से बच सको।' वह मरीज़ जो अपनी पत्नी से मिलने बस स्टॉप जाता था, उसे शाम के इंतजार से ही पसीने छूटने लगते थे क्योंकि हर दिन बस स्टॉप तक की उसकी यात्रा उसे बहुत लंबी लगती थी और इस दौरान उसे बहुत दर्द भी होता था। इसलिए पहले उसने इस बात का जायजा लिया कि उसके सामने कौन-कौन सी रुकावटें आ सकती हैं। इस तरह उसने पहले ही उन रुकावटों से निपटने का हल ढूँढ़ लिया था।

अगर दूसरे दृष्टिकोण से देखें, तो मरीज़ों की अधिकतर योजनाएँ उन क्षणों के इर्दगिर्द बनाई गई थीं, जब दर्द सबसे ज़्यादा होता है और ये सारे प्रयास बंद करने की इच्छा भी सबसे प्रबल होती है। यानी इन योजनाओं के माध्यम से मरीज़ खुद को ये बता रहे थे कि जब कठिनाई आएगी तो वे क्या करेंगे।

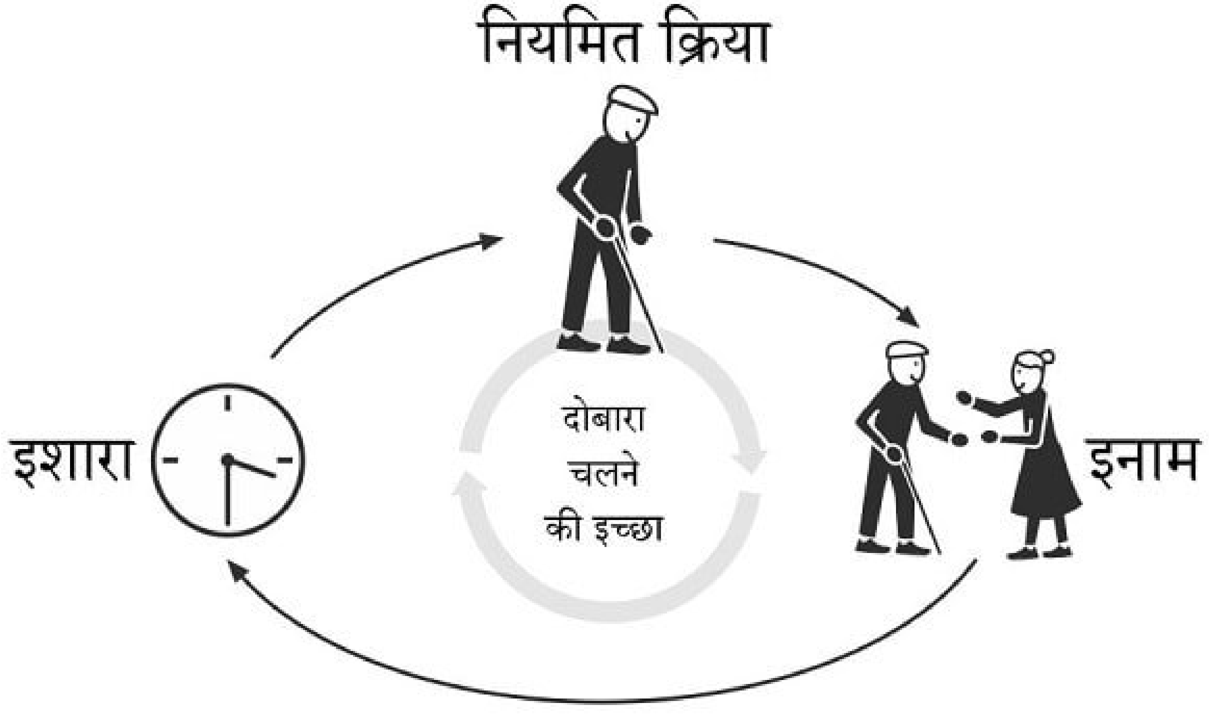

तकलीफदेह मौकों से पार पाने के लिए मरीज़ों द्वारा विकसित की गई संकल्पशक्ति बढ़ानेवाली आदतें

इन मरीज़ों ने अपने सहजज्ञान से उसी नियम का उपयोग किया था, जिसका उपयोग

करके क्लॉउड हॉपकिन्स ने पेप्सोडेंट बेचा था। उन्होंने सहज इशारे और स्पष्ट इनाम ढूँढ़ें। जैसे अपनी पत्नी को बस स्टॉप पर मिलने जानेवाले मरीज़ ने जो सहज इशारा ढूँढ़ा, वह था, 'दोपहर 3.30 बज गया है, मेरी पत्नी बस काम से घर लौट ही रही होगी।' यहाँ उसने एक प्रत्यक्ष इनाम भी रखा था - 'अपनी पत्नी से मिलना।' जब आधा रास्ता पार करते ही उसका दर्द तेजी से बढ़ता और उसकी इच्छा होती कि वह अभी के चलने का व्यायाम बंद कर दे, तो वह अपनी इस इच्छा को नज़रअंदाज कर देता क्योंकि अब उसने आत्म-अनुशासन की आदत विकसित कर ली थी।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि जिन मरीज़ों ने पुस्तिकाओं में अपनी योजनाएँ नहीं लिखीं, वे भी इस प्रकार की प्रतिक्रिया कर सकते थे। सभी मरीज़ों को अस्पताल में एक जैसी जानकारियाँ और चेतावनियाँ दी गई थीं। वे सभी जानते थे कि पूरी तरह ठीक होने के लिए उनका व्यायाम करना आवश्यक है। उन सभी ने स्वास्थ्य लाभ केंद्र में अनेक सप्ताह गुज़ारे थे।

जिन मरीज़ों ने अपनी योजनाएँ पुस्तिकाओं में नहीं लिखी थीं, उनका बहुत नुकसान हो रहा था क्योंकि उनमें इतनी दूर-दृष्टि ही नहीं थी कि वे दर्द बढ़ने की स्थिति में उसे नियंत्रित करने का तरीका पहले से ढूँढ़कर रखें। वे अपने अंदर इच्छाशक्ति संबंधी आदतें विकसित नहीं कर पाए। इसलिए अगर वे चौक तक घूमने जाने का निर्णय लेते भी, तो कुछ कदम चलने के बाद ही दर्द बढ़ जाने के कारण वापस लौटने लगते।

***

स्टारबक्स ने कर्मचारियों की इच्छाशक्ति बढ़ाने के लिए जिम की मुफ्त सदस्यता और सही खान-पान की सलाह देनेवाली वर्कशॉप की जो योजना बनाई थी, वह असफल रही। इसके बाद अधिकारियों ने इस समस्या को नए दृष्टिकोण से देखने का निर्णय लिया। उन्होंने इस बात का बारीकी से जायजा लिया कि उनके स्टोअर्स के अंदर क्या हो रहा है। उन्होंने देखा कि स्कॉटिश मरीज़ों की तरह ही उनके कर्मचारी अनपेक्षित परेशानी के क्षणों में कमज़ोर पड़ने लगते हैं। उनके कर्मचारियों को ऐसी संगठनात्मक आदतों की आवश्यकता थी, जिनसे उनमें आसानी से आत्म-अनुशासन पैदा हो सके।

अपने निरीक्षण से अधिकारी इस नतीजे पर पहुँचे कि अब तक वे कुछ मायनों में इच्छाशक्ति को सही नज़रिए से नहीं देख रहे थे। उन्होंने पाया कि ऐसे कर्मचारी, जिनकी इच्छाशक्ति अक्सर कमज़ोर पड़ जाती है, वे अधिकतर मौकों पर अपना काम बिना किसी दिक्कत के कर लेते हैं। जैसे अगर किसी दिन किसी कर्मचारी की इच्छाशक्ति कम हो, तब भी वह अन्य कर्मचारियों के समान ही कार्य करता है। लेकिन कभी-कभी, खासतौर पर जब कोई अनपेक्षित तनाव की या अनिश्चितता की स्थितियाँ उभरती हैं, तो ये कर्मचारी अपना आपा खो देता है और उसका आत्म-नियंत्रण अचानक गायब हो जाता है।

जैसे अगर कभी कोई ग्राहक अचानक किसी बात पर चिल्लाने लगे तो आमतौर पर शांत रहनेवाली कर्मचारी अपना आपा खो देती है। कई बार स्टोअर्स में ग्राहकों की बेतहाशा भीड़ के कारण वहाँ काम कर रहा बरिस्ता (ग्राहकों को कॉफी देनेवाला कर्मचारी) इतना परेशान हो जाता है कि उसकी आँखों में आँसू आ जाते हैं।

दरअसल कर्मचारियों को स्कॉटिश मरीज़ों की पुस्तिका की ही तरह सीधी-सरल जानकारियों की आवश्यकता थी, जिससे वे अनपेक्षित परेशानी या तनाव की स्थिति में आत्म-नियंत्रण रख सकें। कर्मचारियों को ऐसी तयशुदा क्रियाओं की ज़रूरत थी, जो उनकी इच्छाशक्ति की मांसपेशियों के कमज़ोर पड़ने पर उन्हें मज़बूती दे सकें। इसलिए कंपनी ने कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए नया पाठ्यक्रम तैयार किया। जिसमें इस बारे में स्पष्ट जानकारी दी गई थी कि कर्मचारियों के सामने दिक्कतें आने पर उन्हें क्या करना चाहिए। इसमें उन्हें कुछ सहज इशारे बताए गए थे, जैसे ग्राहकों के चिल्लाने या ग्राहकों की लंबी लाइन जैसे इशारे नज़र आने पर उन्हें कैसी प्रतिक्रिया देनी चाहिए। मैनेजरों ने अपने कर्मचारियों के साथ रोल-प्ले (अलग-अलग भूमिकाएँ निभाकर अभ्यास करना) द्वारा इन तयशुदा क्रियाओं का अभ्यास तब तक किया, जब तक कि ये उनकी आदत नहीं बन गए। इसके लिए कंपनी ने संतुष्ट ग्राहकों और मैनेजरों द्वारा प्रशंसा करने जैसे स्पष्ट इनाम भी रखे, जिससे कर्मचारियों को यह प्रमाण मिल सके कि उन्होंने अपना काम अच्छी तरह किया है।

स्टारबक्स ने अपने कर्मचारियों को इच्छाशक्ति की आदत का फंदा देकर विपत्ति के क्षणों का सामना करना सिखाया।

जब ट्रेविस ने स्टारबक्स में नौकरी करना शुरू किया था, तो उसके मैनेजर ने तुरंत उसे इन आदतों से परिचित कराया था। उसके मैनेजर ने उसे बताया कि 'इस नौकरी का सबसे कठिन हिस्सा है, गुस्सैल ग्राहकों को सँभालना।' उसने ट्रेविस से पूछा, 'अगर कोई ग्राहक अचानक तुम्हारे पास आकर चिल्लाने लग जाए कि उसे गलत ऑर्डर मिला है तो तुम्हारी प्रतिक्रिया क्या होगी?'

'पता नहीं! शायद मैं डर जाऊँगा या उस पर भड़कने लगूँगा,' ट्रेविस ने जवाब दिया।

'हाँ! यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक है। लेकिन हमारा काम है, तनाव के क्षणों में भी ग्राहक को सबसे बेहतरीन सेवा देना,' मैनेजर ने जवाब दिया। फिर उन्होंने स्टारबक्स के उस पाठ्यक्रम की पुस्तिका खोलकर ट्रेविस को वह पन्ना दिखाया, जिसका ज़्यादातर हिस्सा कोरा था। इस पन्ने के ऊपरी हिस्से पर लिखा था कि 'ग्राहक के नाखुश होने की स्थिति में मेरी योजना यह होगी कि..............।'

मैनेजर ने ट्रेविस को बताया कि 'तुम्हें इस पुस्तिका में नकारात्मक परिस्थितियों की कल्पना करके यह लिखना है कि उन स्थितियों में तुम्हारी प्रतिक्रिया क्या होगी? हमारी एक प्रणाली है, जिसका नाम है- लाते पद्धति। इसमें 'लाते' शब्द एक किस्म की

इटैलियन कॉफी के नाम से लिया गया है। इस पद्धति का अर्थ है कि हम ग्राहकों की बात सुनते हैं, उनकी शिकायत स्वीकार करते हैं, उनकी समस्या को हल करने का काम करते हैं, फिर उन्हें धन्यवाद देते हैं और इसके बाद आखिर में उन्हें यह समझाते हैं कि यह समस्या क्यों हुई थी।

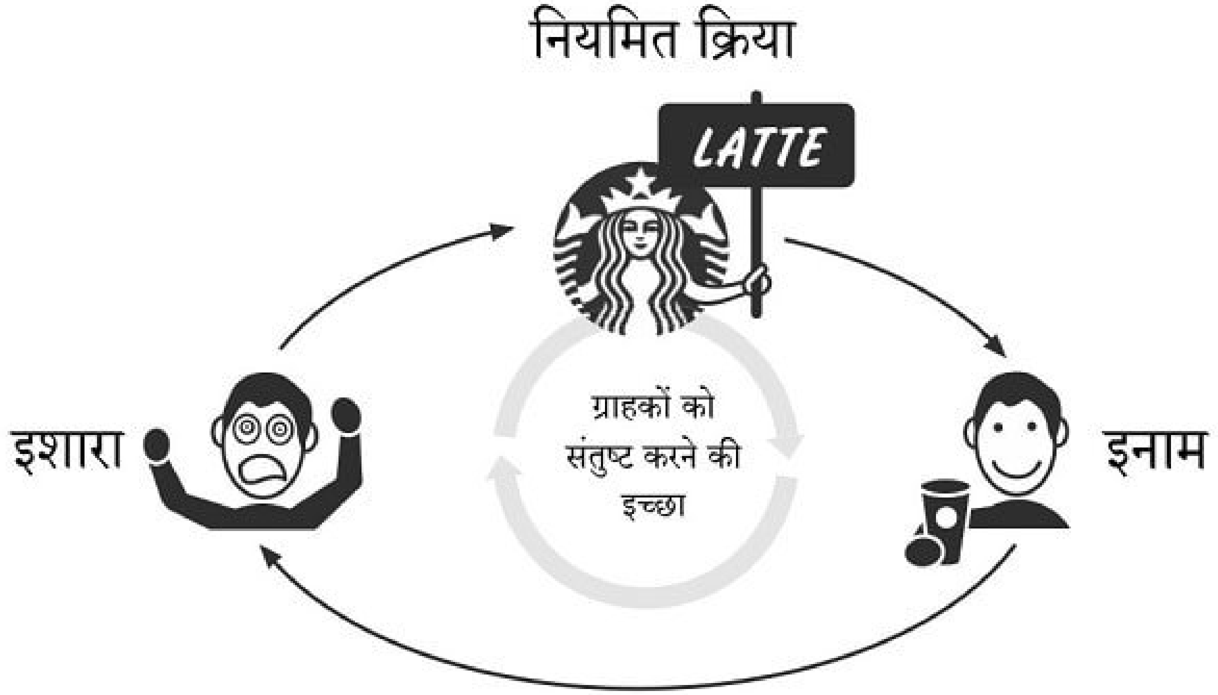

लाते आदत का फंदा

'क्यों न तुम कुछ देर सोच-विचार करो और इस बारे में अपनी योजना पुस्तिका में लिखो कि तुम लाते पद्धति का उपयोग करके किसी नाराज ग्राहक को कैसे सँभालोगे? इसके बाद हम कुछ देर रोल-प्ले करके तुम्हारी योजना का अभ्यास भी कर सकते हैं।'

स्टारबक्स ने अपने कर्मचारियों को ऐसी दर्जनों तयशुदा क्रियाएँ सिखाई हैं, जो तनाव के क्षणों में उनके काम आएँ। कंपनी के पास आलोचना की 'क्या-क्या-क्यों' नामक एक प्रणाली भी है और ग्राहकों की भीड़ बढ़ने पर 'जुड़ें, खोजें और प्रतिक्रिया दें' नामक एक अन्य प्रणाली भी है। कर्मचारियों को ऐसी आदतें भी सिखाई गई हैं, जिनसे एक बरिस्ता अपने अलग-अलग किस्म के ग्राहकों की ज़रूरत को फौरन समझ सकता है। जैसे किस ग्राहक को फटाफट सिर्फ अपनी कॉफी चाहिए, जैसे जो ग्राहक जल्दी में होता है, तेज़ बोलता है, जिसके चेहरे पर अधीरता का भाव होता है और जो बार-बार अपनी घड़ी की ओर देख रहा होता है। कौन सा ग्राहक आराम से स्टारबक्स की सेवा का लुत्फ उठाने आया है, जैसे नियमित रूप से आनेवाला ग्राहक, जो बरिस्ता को उनके नाम

से जानता है और हमेशा एक जैसी चीज़ का ऑर्डर देता है। कंपनी की प्रशिक्षण पुस्तिकाओं में दर्जनों कोरे पन्ने होते हैं। कर्मचारी इन पन्नों पर कठिन परिस्थितियों का सामना करने की योजनाएँ लिख सकते हैं। फिर वे इन योजनाओं का अभ्यास तब तक करते हैं, जब तक उन्हें नियमित रूप से लागू करना उनकी आदत न बन जाए।

इच्छाशक्ति को आदत में परिवर्तित करने की प्रक्रिया इस प्रकार है - 'समय से पहले ही क्रियाओं का चुनाव करना और कठिन परिस्थिति सामने आने पर उनका पालन करना।' जब उन स्कॉटिश मरीज़ों ने अपनी पुस्तिकाओं में योजनाएँ लिखीं या जब ट्रेविस ने 'लाते' पद्धति का उपयोग किया; उस समय उन सभी ने कठिन परिस्थिति निर्मित होने से पहले ही अपनी क्रियाओं का चुनाव कर लिया था। उनकी कठिन परिस्थिति का इशारा था - जोड़ों में दर्द या गुस्सैल ग्राहक। इशारा मिलते ही उनकी क्रियाएँ आदतन अपना कार्य शुरू कर देती थीं।

इस प्रकार की प्रशिक्षण पद्धतियों का उपयोग करनेवाली कंपनियों में स्टारबक्स अकेली नहीं है। उदाहरण के लिए विश्व की सबसे बड़ी कर और वित्तीय सेवा कंपनी, डेलॉयट कन्सल्टिंग के कर्मचारियों को एक विशेष पाठ्यक्रम सिखाया जाता है। जिसका नाम है, 'मोमेंट्स दैट मैटर (महत्वपूर्ण क्षण)।' इसमें मुख्य रूप से इस बात की ओर ध्यान केंद्रित किया जाता है कि कंपनी की फीस के बारे में ग्राहक की शिकायत आने, किसी सहकर्मी को काम से निकाले जाने और कंपनी के सलाहकर्ता द्वारा कोई गलती करने जैसी कठिन परिस्थितियों में कर्मचारियों को क्या करना चाहिए। इन सभी परिस्थितियों के लिए पहले से ही कुछ तयशुदा क्रियाएँ हैं, जैसे अपनी जिज्ञासा जगाएँ, वह बात कहें, जो कोई और नहीं कहेगा, 5/5/5 नियम को लागू करें वगैरह। इन तयशुदा क्रियाओं की मदद से कर्मचारी कठिन परिस्थितियों को आसानी से सँभाल पाते हैं।

इसी तरह कंटेनर स्टोअर नामक कंपनी में कर्मचारियों को पहले ही साल में कुल 185 घंटों से भी ज़्यादा का प्रशिक्षण दिया जाता है। उन्हें गुस्सैल सहकर्मियों और व्यग्र ग्राहकों को पहचानने, ग्राहकों को शांत करने, विवाद की स्थिति को टालने जैसी तयशुदा क्रियाओं का प्रशिक्षण दिया जाता है। उदाहरण के लिए यदि कोई ग्राहक व्यग्र लगे, तो कर्मचारी तुरंत उन्हें अपने घर के उस जगह की कल्पना करने के लिए कहते हैं, जिसे वे ठीक करना चाहते हैं और फिर ग्राहक से इस बात की व्याख्या करने को कहा जाता है कि उस जगह पर सब कुछ सुनियोजित करने के बाद वे कैसा महसूस करेंगे। कंपनी के सीईओ ने एक बार एक पत्रकार से बात करते वक्त कहा था, 'इस बारे में कुछ ग्राहकों ने तो अपनी प्रतिक्रिया देते हुए यहाँ तक कहा कि ऐसी स्थिति में आपके कर्मचारी जो करते हैं, वह किसी मनोविज्ञानी की सलाह से भी ज़्यादा कारगर होता है।'

4

स्टारबक्स को एक विशाल कंपनी बनानेवाले हॉवर्ड शुल्ज़ की कहानी ट्रेविस से ज़्यादा अलग नहीं है। उनका बचपन ब्रुकलिन के एक पब्लिक हाउसिंग प्रोजेक्ट

(सार्वजनिक आवास परियोजना) में गुज़रा था। यहाँ वे अपने माता-पिता और भाई-बहनों के साथ दो बेडरूम के एक फ्लैट में रहते थे। शुल्ज़ सात साल के थे, जब एक दुर्घटना में उनके पिता का टखना टूट गया और उन्हें अपनी डाइपर-ट्रक ड्राइवर की नौकरी से हाथ धोना पड़ा। इसके बाद शुल्ज़ परिवार के बुरे दिन शुरू हो गए। टखना ठीक होने के बाद शुल्ज़ के पिता ने कई नौकरियाँ कीं, लेकिन किसी भी नौकरी में उन्हें ज़्यादा वेतन नहीं मिला। शुल्ज़ बताते हैं कि 'मेरे पिता दोबारा अपने लिए नया रास्ता नहीं बना पाए। मुझे लगता है कि वे बहुत कुछ कर सकते थे, काफी कुछ हासिल कर सकते थे, लेकिन मैंने धीरे-धीरे उनका आत्मसम्मान चकनाचूर होते देखा है।'

शुल्ज़ के स्कूल में भी किसी तरह की सुविधाएँ नहीं थीं। इस स्कूल में बच्चे ज़्यादा थे और जगह कम। उनके स्कूल के खेल का मैदान डामर का था और उस पर फुटबॉल, बॉस्केटबॉल, सॉफ्टबॉल, पंच बॉल, स्लैप बॉल और हर वह खेल खेला जाता था, जिसकी बच्चे कल्पना कर सकें। अगर एक बार आपकी टीम किसी खेल में हार जाए, तो खेलने के लिए फिर से मैदान मिलने में कम से कम एक घंटे का समय लग जाता था। इसलिए शुल्ज़ हर कीमत पर अपनी टीम को जिताकर ही मानते थे। उनके हाथों और घुटनों पर रोज़ाना छोटे-मोटे जख्म होते रहते थे और उनकी माँ गीले कपड़े से उनके जख्मों को साफ करते हुए उन्हें समझाया करती थीं कि 'जीवन में कभी भी हार मत मानना।'

उनकी इसी प्रतियोगी प्रवृत्ति से उन्हें कॉलेज की फुटबॉल स्कॉलरशिप मिल गई हालाँकि एक बार फुटबॉल खेलते समय उनका जबड़ा टूट गया और उन्होंने दोबारा कभी फुटबॉल नहीं खेला। उन्होंने कॉलेज से कम्युनिकेशन विषय में डिग्री हासिल की और फिर वे न्यूयॉर्क में झेरॉक्स सेल्समैन के तौर पर नौकरी करने लगे। वे रोज़ाना सुबह उठकर, न्यू मिडटाउन स्थित कई दफ्तरोंवाली एक इमारत में जाते। जहाँ वे लिफ्ट से सबसे ऊपरी माले पर पहुँचते और फिर एक-एक करके हर माले पर स्थित हर ऑफिस में जा-जाकर विनम्र अंदाज में यह पूछताछ करते कि कहीं उन्हें टोनर या फोटोकॉपी मशीन की ज़रूरत तो नहीं है।

1980 दशक की शुरुआत में शुल्ज़ एक प्लास्टिक निर्माता के यहाँ काम कर रहे थे। इस निर्माता के पास एक बार कॉफी ड्रिप कोन का एक बहुत बड़ा ऑर्डर आया। यह ऑर्डर सिएटल के एक विक्रेता की ओर से आया था, जो कोई ज़्यादा मशहूर तो नहीं था, पर इसके बावजूद उसका ऑर्डर काफी बड़ा था। जैसे ही शुल्ज़ को इस बात का पता चला, वे फौरन सिएटल जा पहुँचे। उस विक्रेता की कंपनी का दौरा करने पर उन्हें उसके काम करने का तरीका बहुत पसंद आया। यह कंपनी थी स्टारबक्स। इसके दो साल बाद शुल्ज़ ने सुना कि स्टारबक्स का मालिक अपनी कंपनी बेच रहा है। उस समय तक स्टारबक्स के कुल छह स्टोअर्स थे। तब शुल्ज़ ने अपने जान-पहचान के लगभग सभी लोगों से उधार माँगकर पैसे इकट्ठा किए और स्टारबक्स को खरीद लिया।

यह सन 1987 की बात है। इसके केवल तीन साल बाद स्टारबक्स के स्टोअर्स की संख्या बढ़कर 84 हो गई और छह सालों में इसके हज़ार से भी ज़्यादा स्टोअर खुल गए।

फिलहाल दुनिया के पचास देशों में स्टारबक्स के कुल सत्रह हज़ार से भी ज़्यादा स्टोअर्स हैं।

उस स्कूल के डामर के मैदान पर खेलनेवाले सभी बच्चों में से शुल्ज़ ने अपने जीवन में इतनी सफलता कैसे हासिल की? उनके सहपाठियों में से कुछ आज ब्रुकलिन शहर के पुलिस विभाग में काम करते हैं, कुछ फायर ब्रिगेड में काम करते हैं, तो कुछ जेल की सलाखों के पीछे हैं, जबकि आज शुल्ज़ की कुल संपत्ति करीब सौ करोड़ डॉलर है। उनकी गिनती बीसवीं सदी के सबसे महान सीईओ में होने लगी है। पब्लिक हाउसिंग प्रोजेक्ट (सार्वजनिक आवास परियोजना) के घर से निकलकर एक प्राइवेट जेट का मालिक बनने के लिए उनके अंदर लगन कहाँ से आई? उनके अंदर ऐसी इच्छाशक्ति का निर्माण कैसे हुआ?

'मैं नहीं जानता,' शुल्ज ने मेरे सवाल का जवाब देते हुए कहा। शुल्ज का कहना है, 'मेरी माँ मुझसे हमेशा कहा करती थीं कि हमारे परिवार में कॉलेज जानेवाले तुम पहले व्यक्ति हो। तुम बड़े होकर एक पेशेवर इंसान बनोगे और हम सबको तुम पर बहुत गर्व होगा।' वे हमेशा मुझसे कोई न कोई सवाल पूछती रहती थीं जैसे 'आज रात तुम पढ़ाई कब शुरू करोगे? कल दिनभर तुम क्या करनेवाले हो? तुम परीक्षा के लिए तैयार होने का दावा कब कर सकते हो?' उनके इन सवालों से ही मुझे अपना लक्षय तय करने का प्रशिक्षण मिला।'

वे आगे कहते हैं कि 'मैं बहुत ही भाग्यशाली हूँ। अगर आप लोगों को इस बात का भरोसा दिला देते हैं कि उनमें जीत हासिल करने की क्षमता है, तो उन्हें जीतने से कोई नहीं रोक सकता। मैं सचमुच इस बात पर बहुत विश्वास करता हूँ।'

स्टारबक्स खरीदने के बाद शुल्ज़ ने अपना ध्यान कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने और ग्राहकों को सर्वोत्तम सेवा उपलब्ध कराने पर केंद्रित कर लिया। इसी वजह से स्टारबक्स दुनिया की सबसे सफल कंपनियों में गिनी जाने लगी। सालों तक शुल्ज़ कंपनी के हर पहलू पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देते रहे। फिर सन 2000 में उन्होंने कंपनी की दिन-प्रतिदिन की बागडोर सँभालने का जिम्मा अपने अधिकारियों को सौंप दिया। इसके साथ ही स्टारबक्स की प्रसिद्धि में कमी आने लगी। कुछ ही सालों में लोग स्टारबक्स की कॉफी की गुणवत्ता और ग्राहक सेवा के बारे में शिकायतें करने लगे। यह सब इसलिए हो रहा था क्योंकि कंपनी के अधिकारी स्टारबक्स के ज़्यादा से ज़्यादा स्टोअर खोलने के लक्षय पर ध्यान लगाए बैठे थे। ऐसे में वे जाने-अंजाने ग्राहकों की शिकायतों को नज़रअंदाज कर रहे थे। इसके अलावा कर्मचारी भी अपने काम से खुश नहीं थे। एक शोध से पता चला कि लोग स्टारबक्स को खराब कॉफी और झूठी मुस्कानोंवाली कंपनी मानने लगे।

यह सब देखकर 2008 में शुल्ज़ ने एक बार फिर कंपनी के सीईओ का पद सँभालने का निर्णय लिया। पद सँभालते ही उन्होंने कंपनी के प्रशिक्षण कार्यक्रम को नए ढंग से

तैयार करने को पहली प्राथमिकता दी। इस नए प्रशिक्षण कार्यक्रम में कर्मचारियों की इच्छाशक्ति और आत्मविश्वास को बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया गया था। स्टारबक्स की भाषा में कर्मचारियों को 'पार्टनर' (साथी) कहा जाता है। शुल्ज़ कहते हैं कि 'हमें एक बार फिर से अपने ग्राहक और साथियों का विश्वास जीतने की ज़रूरत थी।'

इसी दौरान इच्छाशक्ति पर हुए कुछ नए किस्म के शोधों के परिणाम भी सामने आए। इन शोधों में इच्छाशक्ति के विज्ञान को एक अलग ही दृष्टिकोण से देखा गया था। शोधकर्ताओं ने पाया कि ट्रेविस जैसे लोग अपने अंदर बड़ी आसानी से इच्छाशक्ति की आदतों का निर्माण कर सकते हैं। जबकि कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जिन्हें चाहे जितना प्रशिक्षण और सहारा दिया जाए, लेकिन उनमें ये आदतें विकसित नहीं हो पातीं। ये शोधकर्ता जानना चाहते थे कि इन दो किस्म के लोगों के बीच ऐसा फर्क क्यों होता है?

यूनिवर्सिटी ऑफ एलबेनी के प्रोफेसर मॉर्क मुरॉवेन ने एक नया प्रयोग किया था। उन्होंने कुछ अंडरग्रेज्युएट छात्रों को एक कमरे में एकत्रित किया। जहाँ ताजी बनी हुई कुकीज़ रखी हुई थीं, लेकिन छात्रों को इन कुकीज़ से ध्यान हटाने के लिए कह दिया गया। इनमें से आधे छात्रों के साथ आदरपूर्वक बरताव किया गया और उनसे कहा गया, 'हम चाहते हैं कि आप ये कुकीज़ न खाएँ। क्या आप ऐसा कर सकते हैं?' शोधकर्ता ने इन छात्रों को शोध के पीछे का उद्देश्य बताते हुए कहा कि 'हम लुभावनी चीज़ों से ध्यान हटाने की आपकी क्षमता का परीक्षण करना चाहते हैं।' इसके बाद शोधकर्ता ने इन छात्रों को इस प्रयोग में हिस्सा लेने के लिए धन्यवाद दिया और साथ ही यह भी कहा कि 'अगर आप प्रयोग में सुधार लाने के बारे में कुछ सुझाव देना चाहें, तो ज़रूर बताइए। क्योंकि हम चाहते हैं कि इस अनुभव को अच्छे से अच्छा बनाने में आप हमारी मदद कर सकें।'

पर बाकी के आधे छात्रों के साथ इतना आदरपूर्वक व्यवहार नहीं किया गया। उन्हें सिर्फ स्पष्ट आदेश दिए गए।

शोधकर्ता ने उनसे साफ-साफ कह दिया कि 'आप ये कुकीज़ नहीं खा सकते।' उन्होंने छात्रों को प्रयोग के उद्देश्य की जानकारी भी नहीं दी और न ही छात्रों को अपने सुझाव देने के लिए कहा। उन्होंने तो बस छात्रों को आदेशों का पालन करने के लिए कहा। आखिरकार उसने कहा, 'अब हम प्रयोग शुरू करेंगे।'

दोनों ही समूह के छात्रों को शोधकर्ता के कमरे से बाहर जाने के बाद बस पाँच मिनट के लिए कुकीज़ से ध्यान हटाना था। इस दौरान दोनों समूहों में से किसी भी समूह के छात्र कुकीज़ के प्रलोभन में नहीं आए।

शोधकर्ता ने पाँच मिनट बाद कमरे में लौटकर छात्रों को कंप्यूटर स्क्रीन पर ध्यान देने के लिए कहा। स्क्रीन पर पाँच सौ मिलीसेकेंड के अंतर पर, एक-एक कर अंक नज़र आ रहे थे। छात्रों को स्क्रीन पर '6' के बाद '4' का अंक नज़र आते ही कीबोर्ड पर स्पेस

का बटन दबाना था। यह इच्छाशक्ति को जाँचने का एक सामान्य तरीका है। इसमें अंकों की एक नीरस श्रृंखला पर ध्यान देना होता है, जो किसी कठिनतम पहेली को सुलझाने से कम नहीं है।

इस परीक्षा में उन छात्रों के परिणाम बेहतर थे, जिनके साथ शोधकर्ता ने आदरपूर्वक बरताव किया था। स्क्रीन पर 6 के बाद 4 का अंक दिखते ही वे तुरंत स्पेस का बटन दबा देते थे। यह परीक्षा पूरे 12 मिनट चली और इस पूरे समय उन छात्रों का ध्यान स्क्रीन पर ही था। कुकिज़ को अनदेखा करने के बावजूद उनकी इच्छाशक्ति में कमी नहीं आई थी।

वहीं, दूसरी ओर, जिन छात्रों के साथ आदरपूर्वक व्यवहार नहीं किया गया बल्कि सिर्फ स्पष्ट आदेश दिया गया था, उनके परीक्षा के परिणाम बुरे थे। वे स्पेस का बटन दबाना भूल जाते थे। इस समूह के छात्रों ने बताया कि वे थके हुए हैं और यही वजह है कि वे इसमें ध्यान नहीं दे पा रहे हैं। इससे शोधकर्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला कि छात्रों के साथ किए गए बुरे बर्ताव के कारण ही उनकी इच्छाशक्ति की माँसपेशियों में थकान आई है।

अब मुरॉवेन ने इस बात का अध्ययन करना शुरू किया कि जिन छात्रों से अच्छा व्यवहार हुआ, उनकी इच्छाशक्ति में बढ़ोत्तरी क्यों हुई? मुरॉवेन ने पाया कि छात्रों के दोनों समूहों में एक महत्वपूर्ण अंतर था। जिन छात्रों के साथ अच्छा व्यवहार हुआ था, उन्हें महसूस हुआ कि इस अनुभव पर उनका नियंत्रण है। क्योंकि उन्हें यह विश्वास दिलाया गया था कि सब कुछ उनकी इच्छा के मुताबिक ही किया जाएगा। मुरॉवेन बताते हैं कि 'अगर लोगों को कोई ऐसा काम करने को कहा जाए, जिसमें आत्म-नियंत्रण की ज़रूरत होती है और अगर उन्हें लगता है कि वे यह काम निजी कारणों से कर रहे हैं यानी अगर उन्हें लगता हैं कि यह उनका अपना चुनाव है - कुछ ऐसा, जिसे करने में उन्हें आनंद आता है क्योंकि इससे दूसरों की मदद होती है - तो लोगों के लिए वह काम करना आसान हो जाता है। अगर इंसान को ऐसा लगे कि उसके अपने अनुभव पर उसका नियंत्रण नहीं है और उसे केवल निर्देशों या आदेशों का पालन करना है, साथ ही उसे खुद कोई चुनाव करने की सहूलियत भी नहीं है, तो उस इंसान की इच्छाशक्ति की माँसपेशियाँ जल्द ही कमज़ोर पड़ने लगती हैं। कुकीज़ से अपना ध्यान हटाने की कोशिश तो इन छात्रों के दोनों समूहों ने की थी, पर जिस समूह के छात्रों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया गया था, उन्हें ऐसा करने में अधिक इच्छाशक्ति का उपयोग करना पड़ा।'

कंपनियों और संगठनों के लिए यह प्रयोग बहुत मायने रखता है। कर्मचारियों को जब ऐसा महसूस होता है कि सब कुछ उनके नियंत्रण में है और उनके पास निर्णय लेने की शक्ति है, तो अपने काम में ध्यान लगाने की उनकी क्रियाओं में नाटकीय परिवर्तन आता है। जैसे सन 2010 में ओहिओ के एक कारखाने पर शोध किया गया था। इस शोध के दौरान कारखाने के कर्मचारियों को उनके काम के समय और स्थान के बारे में निर्णय लेने की छूट दे दी गई। इसके बाद उन कर्मचारियों ने अपनी यूनिफॉर्म और काम पर आने जाने

की शिफ्ट का समय भी स्वयं तय किया। जबकि कारखाने की निर्माण प्रक्रिया, कर्मचारियों के वेतन आदि में कोई बदलाव नहीं किया गया था। इसके बावजूद केवल दो ही महीनों में कर्मचारियों की उत्पादन क्षमता में 20 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी देखी गई। काम के बीच में खाना खाने और कुछ देर आराम करने में जो समय पहले लगता था, उसे कर्मचारियों ने अपने आप ही थोड़ा कम कर लिया। इसके अलावा कारखाने में कर्मचारियों द्वारा होनेवाली गलतियों की संख्या में भी काफी कमी आई। यह सब इसीलिए हुआ क्योंकि कर्मचारियों को नियंत्रण का एहसास होने से उनके अंदर अपने आप ही आत्म-नियंत्रण के गुण आ गए थे।

स्टारबक्स में भी कुछ ऐसा ही हुआ था। वर्तमान में कंपनी का ध्यान अपने कर्मचारियों में प्रभुत्व या अधिकार की भावना बढ़ाने पर है। उन्होंने कर्मचारियों को यह अधिकार दिया है कि वे अपने हिसाब से तय करें कि स्टोअर में कॉफी मशीन और कैश रजिस्टर का स्थान कहाँ होगा, ग्राहकों का अभिवादन कैसे किया जाएगा और कंपनी की प्रचार सामग्री को स्टोअर में कैसे प्रदर्शित किया जाएगा। अब स्टोअर मैनेजर अपने कर्मचारियों के साथ घंटों इस विषय पर चर्चा कर सकता है कि ब्लेंडर कहाँ रखा जाना चाहिए। अब स्टारबक्स में इस तरह की चीज़ें आम बात हो गई हैं।

स्टारबक्स के उपाध्यक्ष क्रिस एंग्सकोव कहते हैं, ‘हम अपने साथियों से यह नहीं कहते कि ‘बक्से में से कॉफी निकालो, फिर उसे यहाँ रखो और नियमों का पालन करो’ बल्कि हम तो उन्हें इस बात के लिए प्रोत्साहित करते हैं कि वे अपनी बौद्धिक और सृजनात्मक क्षमताओं का उपयोग करें। अपने जीवन पर अपना नियंत्रण होना किसे पसंद नहीं होता?’

शुल्ज़ के फिर एक बार सीईओ बनने से स्टारबक्स को अपनी खोई हुई प्रसिद्धि वापस मिल गई। उनके वापस लौटने के बाद स्टारबक्स की कमाई में प्रतिवर्ष 1.2 अरब डॉलर की बढ़त हो गई।

5

स्कूल छोड़ने और स्टारबक्स में नौकरी शुरू करने से पहले सोलह साल के ट्रेविस को उसकी माँ ने एक कहानी बताई थी। वह अपनी माँ के साथ कार में कहीं जा रहा था, जब उसने पूछा कि उसके सिर्फ एक भाई-बहन ही क्यों हैं, इससे ज़्यादा क्यों नहीं? उसकी माँ अपने बच्चों के साथ हमेशा ईमानदार रही थीं इसलिए उन्होंने ट्रेविस को साफ-साफ बता दिया कि ‘तुम्हारे जन्म के दो साल पहले भी मैं गर्भवती हुई थी, लेकिन उस समय तक मैं दो बच्चों की माँ थी। इसके साथ ही मैं और तुम्हारे पिता नशीली दवाओं के आदी भी थे। इसलिए उस समय मैंने गर्भपात कराना ही उचित समझा। लेकिन एक साल के बाद मैं फिर से गर्भवती हुई और उस समय तुम मेरे पेट में थे। हालाँकि उस समय भी मैंने गर्भपात कराने का विचार किया था लेकिन दोबारा ऐसा करना मेरे लिए बहुत मुश्किल था। उस समय मुझे महसूस हुआ कि प्राकृतिक रूप से जो हो रहा है, उसे होने देना

चाहिए। ट्रेविस, इस तरह तुम्हारा जन्म हुआ।’

‘मैंने अपने जीवन में बहुत सी गलतियाँ की हैं ट्रेविस, लेकिन तुम्हारा जन्म होना मेरे जीवन की सबसे अच्छी घटना थी,’ ट्रेविस की माँ ने उससे कहा था। ट्रेविस के अनुसार, ‘जब आपका बचपन ड्रग्स के लती माता-पिता के साथ गुज़रता है, तो आप बहुत जल्दी ये सीख लेते हैं कि आप उन पर निर्भर नहीं रह सकते। लेकिन मैं बहुत भाग्यशाली हूँ कि जब मैंने अपना पेशेवर जीवन शुरू किया तो मुझे हमेशा अच्छे बॉस मिले, जिन्होंने मेरे जीवन की कई कमियाँ पूरी कर दीं। मुझे लगता है कि यदि मेरी माँ भी मुझ जैसी भाग्यशाली होतीं, तो शायद उनका जीवन भी कुछ और होता।’

अपनी माँ के साथ हुई उस बातचीत के कुछ साल बाद एक दिन ट्रेविस के पास उसके पिता का फोन आया। उन्होंने ट्रेविस को बताया कि उसकी माँ ड्रग्स लेने के लिए अपने हाथ में सुई लगाती थीं, जिससे उनके खून में विषाणु फैल गए हैं। यह सुनकर ट्रेविस तुरंत लॉडी में अपने घर लौटा, लेकिन उसके पहुँचने तक उसकी माँ अपने होश गँवा चुकी थीं। एक घंटे बाद उनके लाईफ सपोर्ट की मशीन बंद कर दी गई और इस तरह आखिरकार उनका देहांत हो गया।

इसके एक सप्ताह बाद ट्रेविस के पिता को न्यूमोनिआ के कारण अस्पताल में भर्ती कराया गया। उनका एक फेफड़ा काम नहीं कर रहा था। ट्रेविस एक बार फिर लॉडी लौटा। लेकिन जब तक वह अस्पताल के इमरजेंसी रूम पहुँचा, तब तक रात के 8 बजकर 2 मिनट हो चुके थे और मरीज़ों से मुलाकात का समय 8 बजे तक का ही था। अस्पताल की नर्स ने बड़े रूखे ढंग से उससे कह दिया कि मुलाकात का समय समाप्त हो चुका है और अगर उसे अपने पिता से मिलना है, तो कल सुबह आए।

ट्रेविस को अपने जीवन का वह क्षण अक्सर याद आ जाता है। उस समय तक उसने स्टारबक्स में नौकरी शुरू नहीं की थी और वह नहीं जानता था कि अपनी भावनाओं को कैसे नियंत्रित किया जाता है। स्टारबक्स में आकर उसने वर्षों तक अभ्यास कर-करके जो आदतें अपने अंदर विकसित की थीं, उस समय वह उनसे पूरी तरह अनजान था। वह जब अपने जीवन के उन क्षणों पर विचार करता है, जहाँ ड्रग्स के ओवरडोज़ होते थे, घर की गली में चोरी की गाड़ियाँ लाई जाती थीं और जहाँ एक नर्स भी कभी भी खत्म न होनेवाली किसी मुसीबत के समान लगती थी, तो ट्रेविस को आश्चर्य होता है कि इतने कम समय में उसने अपने जीवन में कितना लंबा फासला तय कर लिया है।

ट्रेविस कहता है कि ‘अगर मेरे पिता की मौत एक साल बाद हुई होती, तो सब कुछ अलग होता क्योंकि तब तक मैं जान गया होता कि उस नर्स के साथ शांति से पेश आकर उससे अपनी बात मनवाई जा सकती है। अगर तब मुझे पता होता कि मुझे उसके पद का सम्मान करना चाहिए और फिर विनम्रता के साथ अपनी बात रखनी चाहिए, तो मुझे इमरजेंसी रूम में प्रवेश मिल जाता और मैं अपने पिता से आखिरी बार मिल लेता। लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। मैंने तो उस नर्स से केवल इतना कहा कि मुझे केवल एक बार

अपने पिता से बात करनी है। जिस पर उसका जवाब था कि 'मरीज़ सो रहा है और मिलने का समय खत्म हो चुका है इसलिए कल सुबह आना।' उसके वे रूखे शब्द सुनकर मुझे समझ में ही नहीं आया कि मैं उससे क्या कहूँ। उस समय मैं खुद को बहुत ही छोटा महसूस कर रहा था।'

उसी रात ट्रेविस के पिता की मृत्यु हो गई।

हर साल अपने पिता की पुण्यतिथि पर ट्रेविस सुबह जल्दी उठता है, देर तक नहाता है, फिर बड़ी सावधानी से, छोटी से छोटी बात का खयाल रखते हुए पूरे दिन की योजना बनाता है और फिर ऑफिस पहुँच जाता है। अब वह हमेशा समय पर आता है।

6

संकट की शक्ति

लीडर्स कैसे दुर्घटनाओं और डिजाइन के ज़रिए आदतें निर्मित करते हैं

1

जब मरीज को रॉड आइलैंड अस्पताल के ऑपरेशन हॉल में लाया गया, तब वह बेहोश था। उसका जबड़ा ढीला पड़ गया था, आँखें बंद थीं और उसके होठों के ऊपर एक नली लगी हुई थी। जैसे ही नर्स ने उस मरीज को फेफड़ों में ऑक्सीजन पहुँचानेवाली मशीन के साथ जोड़ा, तो उसकी एक बाँह बिस्तर से फिसली और उसकी त्वचा के धब्बे स्पष्ट नज़र आने लगे।

वह मरीज 86 साल का था और तीन दिन पहले अपने घर में फिसलकर गिर पड़ा था। इसके बाद उसके लिए होश में रहना और दूसरों की बातों का जवाब देना मुश्किल हो गया। आखिरकार उसकी पत्नी उसे अस्पताल ले आई। इमरजेंसी रूम में जब डॉक्टर ने उस मरीज से पूछा कि 'आपको क्या हुआ है?' तो उसने अपना सिर हिलाकर इशारे से कुछ कहने की कोशिश की, पर कुछ बोल नहीं पाया। इसका कारण उसके सिर की स्कैन रिपोर्ट से पता चला। दरअसल फिसलकर गिरने के कारण उसके सिर पर चोट लगी थी और उसके मस्तिष्क को हानि पहुँची थी। इस स्थिति को डॉक्टरी भाषा में 'सबडचूरल हेमाटोमा' कहते हैं। उसके सिर के बाएँ हिस्से में खून जम गया था, जो उस हिस्से में मौजूद संवेदनशील ऊतकों (ढर्ळीर्रीश) को नुकसान पहुँचा रहा था। उस हिस्से में खून का जमाव पिछले 72 घंटे से जारी था। इंसानी मस्तिष्क के वे हिस्से जो साँस लेने और दिल की धड़कन को सुचारू रूप से चलाने का काम करते हैं, खून के जमाव के कारण वे ठीक ढंग से काम नहीं कर पा रहे थे। अगर इस जमे हुए खून को जल्द ही साफ नहीं किया गया, तो इस मरीज की जान जा सकती थी।

उस समय रॉड आइलैंड अस्पताल की गिनती देश के अग्रणी चिकित्सा संस्थानों में होती थी। यह न सिर्फ ब्राउन यूनिवर्सिटी का मुख्य शिक्षण-अस्पताल था बल्कि दक्षिण-पूर्व न्यू इग्लैंड का इकलौता लेवल-1 ट्रॉमा सेंटर (सर्वोच्च स्तरीय आघात केंद्र) भी था। ईंटों और काँच से बनी अस्पताल की ऊँची इमारत में अल्ट्रासाउंड किरणों से ट्यूमर नष्ट करने जैसी अत्याधुनिक चिकित्सा तकनीकें भी उपलब्ध थीं। सन 2002 में स्वास्थ्य रक्षा पर बने राष्ट्रीय गठबंधन ने अपने मूल्यांकन में अस्पताल के आई.सी.यू. को देश के सबसे अच्छे आई.सी.यू. में से एक करार दिया था।

हालाँकि जब यह बुजुर्ग मरीज़ रॉड आइलैंड अस्पताल में भर्ती हुआ, तब तक यह अस्पताल अपने स्टाफ के बीच तनाव के कारण भी मशहूर हो चुका था। दरअसल अस्पताल की नर्सों और डॉक्टरों के बीच भारी तनाव था और वे एक-दूसरे से घृणा करते थे। क्योंकि सन 2000 में नर्सों की यूनियन इस शिकायत के साथ हड़ताल पर चली गई थी कि उनसे घंटों तक जबरदस्ती ओवरटाइम (अतिरिक्त कार्य) कराया जाता है। हड़ताल के दौरान करीब 300 से भी अधिक नर्सों ने हाथों में तख्तियाँ लेकर अस्पताल के बाहर प्रदर्शन किया और अपना विरोध जताया था। इन तख्तियों पर लिखा था, 'हमें गुलाम बनाना बंद करो' और 'तुम हमसे हमारा आत्म-सम्मान नहीं छीन सकते।'

'यह बिलकुल वाहियात जगह है,' एक नर्स ने एक न्यूज रिपोर्टर को अपनी आपबीती सुनाते हुए कहा। 'यहाँ के डॉक्टर्स हम नर्सों के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं, मानो हमारी कोई कीमत ही न हो, मानों हमें जब चाहे उठाकर बाहर फेंका जा सकता है। वे हमसे जिस तरह पेश आते हैं, ऐसा लगता है जैसे हमें यहाँ साँस लेने के लिए भी उनका आभारी होना चाहिए।'

आखिरकार अस्पताल प्रबंधन नर्सों का अनिवार्य ओवरटाइम घटाने को तैयार हो गया, पर इससे नर्सों और डॉक्टरों के बीच तनाव कम नहीं हुआ। कुछ सालों बाद, जब एक सर्जन एक मरीज के पेट के ऑपरेशन की तैयारी में लगा हुआ था, एक नर्स ने उससे टाइम-आउट के लिए कहा। टाइम आउट सर्जरी के ठीक पहले की जानेवाली एक सामान्य प्रक्रिया है, जिसमें मरीज की पहचान, सर्जरी का प्रकार और ऐसी ही अन्य जानकारियों को आखिरी बार सुनिश्चित किया जाता है ताकि किसी भी संभावित गलती से बचा जा सके। दरअसल एक बार जब एक सर्जन ने गलती से एक लड़की की आँखों की सर्जरी करने के बजाय उसके टॉन्सिल निकाल दिए थे, तभी से रॉड आइलैंड अस्पताल का नर्सिंग स्टाफ टाइम-आउट पर जोर देने लगा था। किसी भी अस्पताल के स्टाफ द्वारा सर्जरी के पहले टाइम-आउट इसीलिए लिया जाता है ताकि किसी भी प्रकार की गड़बड़ी होने की गुंजाइश न रह जाए।

सर्जन मरीज के पेट के ऑपरेशन की तैयारी में लगा हुआ था और ऑपरेशन रूम की मुख्य नर्स ने बाकी नर्सों से टाइम आउट के लिए मरीज के चारों ओर एकत्रित होने के लिए कह दिया। यह सुनते ही सर्जन दरवाजे की ओर मुड़कर जाने लगा।

'तुम खुद ही सब कुछ क्यों नहीं कर लेतीं?' सर्जन ने उस नर्स से कहा। 'मैं बाहर जा रहा हूँ। जब तुम लोग अपनी तरफ से तैयार हो, तो मुझे आवाज दे देना।'

'आपको बाहर नहीं जाना चाहिए,' नर्स ने जवाब में कहा।

'नहीं! तुम खुद ये सब कर सकती हो,' इतना कहकर वह सर्जन ऑपरेशन रूम से बाहर जाने लगा।

'डॉक्टर! आपका इस तरह बाहर जाना ठीक नहीं होगा।' डॉक्टर पल भर के लिए

ठिठका और मुड़कर उस नर्स की ओर देखते हुए बोला, 'मुझे तुमसे ये सीखने की ज़रूरत नहीं है कि क्या सही है और क्या गलत। दोबारा मेरे अधिकार क्षेत्र में दखल देने की सोचना भी मत। अगर तुम अपना काम नहीं कर सकती तो दफा हो जाओ यहाँ से।'

आखिरकार उस नर्स ने अन्य नर्सों के साथ मिलकर टाइम-आउट की प्रक्रिया पूरी की और कुछ ही मिनटों में सर्जन को वापस बुला लिया। इसके बाद सर्जरी शुरू हुई और बिना किसी समस्या के पूरी भी हो गई। इसके बाद उस नर्स ने दोबारा किसी डॉक्टर से इस मसले पर कुछ नहीं कहा। यहाँ तक कि जब डॉक्टर अन्य सुरक्षा-नीतियों को भी नज़रअंदाज करते थे, तब भी वह नर्स चुप ही रहती थी।

'कुछ डॉक्टर्स अच्छे थे, पर कुछ तो सचमुच किसी राक्षस से कम नहीं थे,' एक नर्स ने मुझसे कहा। वह रॉड आइलैंड अस्पताल में 2000 के दशक के मध्य में काम कर चुकी थी। हम इस अस्पताल को 'काँच का कारखाना' कहते थे क्योंकि हर वक्त ऐसा लगता था, मानो यह कभी भी टूटकर चकनाचूर हो सकता है।

इस तनाव का सामना करने के लिए अस्पताल के स्टाफ ने कुछ अनौपचारिक नियम विकसित कर लिए थे। ये नियम दरअसल कुछ और नहीं बल्कि अस्पताल की स्थितियों को ध्यान में रखकर विकसित की गई आदतें थीं, जिनकी मदद से संभावित समस्याओं और संघर्षों से बचा जा सकता था। उदारहण के लिए नर्सों ने डॉक्टरों के निर्देशों की सच्चाई को बार-बार जाँचना-परखना शुरू कर दिया था। क्योंकि डॉक्टर्स अक्सर गलत निर्देश (सूचना) दे देते थे। इस तरह नर्स बिना किसी से कुछ कहे, मरीज को दवा की सही खुराक देने से लेकर उसका सही इलाज करने जैसी तमाम बातों को सुनिश्चित करने लगीं। उन्होंने मरीजों के चार्ट पर हर चीज़ स्पष्ट ढंग से लिखने के लिए अतिरिक्त समय देना शुरू कर दिया ताकि कहीं जल्दबाजी से सर्जन मरीज के शरीर में गलत जगह पर सर्जरी न कर दे। एक नर्स ने मुझे बताया कि उन्होंने आपस में एक-दूसरे को डॉक्टरों के स्वभाव के बारे में चेतावनी देने के लिए रंगों पर आधारित एक तरीका विकसित किया था। हम सफेद रंग के बोर्ड पर अलग-अलग डॉक्टरों के नाम अलग-अलग रंगों में लिखकर रखते थे। नीले रंग का अर्थ था, 'अच्छा डॉक्टर।' लाल रंग का अर्थ था, 'वाहियात डॉक्टर' और काले रंग का अर्थ था, 'जो भी करो, बस इस डॉक्टर की बात मत काटना वरना ये तुम्हारा सिर काट देगा।'

रॉड आइलैंड अस्पताल एक विनाशकारी संस्कृतिवाला अस्पताल था। जहाँ नर्सों को डॉक्टरों और सर्जनों के अहंकार से निपटने में ही अपनी बहुत सी ऊर्जा खर्च करनी पड़ती थी। यहाँ की स्थितियाँ एल्कोआ से बिलकुल अलग थीं, जहाँ कर्मचारियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए बड़ी ही सावधानी से कुछ मूल आदतें विकसित की गई थीं। रॉड आइलैंड अस्पताल के रुटीन (तयशुदा आदतें) के पीछे भी कोई सोच-विचार नहीं किया गया था। यहाँ के रुटीन (तयशुदा आदतें) तो दुर्घटनावश अपनाए हुए जान पड़ते थे, जिनके बारे में यहाँ काम करनेवाले एक-दूसरे को दबी आवाज में चेताया करते थे। ऐसा तब करना पड़ता था, जब कामकाज के तरीके में कोई जहरीला पैटर्न उभर आया हो। यह

सब ऐसी किसी भी संस्था में हो सकता है, जहाँ आदतों को सोच-समझकर निर्मित नहीं किया जाता। जिस तरह सही मूल आदतें चुनकर महत्वपूर्ण सकारात्मक बदलाव लाए जा सकते हैं, ठीक उसी तरह गलत आदतें मुसीबतें भी पैदा कर सकती हैं।

और जब रॉड आइलैंड अस्पताल की आदतें अचानक सामने आईं, तो भयंकर गलतियों का कारण बन गईं।

***

अस्पताल के इमरजेंसी रूम के स्टाफ ने जब सबडच्यूरल हेमाटोमा से ग्रस्त उस 86 वर्षीय मरीज के मस्तिष्क की स्कैन रिपोर्ट देखी, तो उन्होंने फौरन उस समय ड्यूटी पर मौजूद न्यूरोसर्जन को इसकी सूचना दी। वह न्यूरोसर्जन उस समय किसी मरीज की रीढ़ की सर्जरी कर रहा था। पर जब उसे इसकी सूचना मिली, तो उसने उस सर्जरी की जिम्मेदारी अपने सहायक सर्जन को सौंपी और मस्तिष्क की स्कैन रिपोर्ट को तुरंत कंप्यूटर पर देखा। रिपोर्ट देखने के बाद सर्जन ने अपनी एक सहायक को सर्जरी के लिए उस 86 वर्षीय मरीज की पत्नी से सहमति-पत्र पर हस्ताक्षर कराने के लिए इमरजेंसी रूम भेज दिया। फिर वह दोबारा अपने पिछले मरीज की रीढ़ की सर्जरी में लग गया। करीब आधे घंटे बाद उस बुजुर्ग मरीज को इसी ऑपरेशन रूम में ले आया गया।

नर्सेस चारों ओर भाग-दौड़ रही थीं। वह बुजुर्ग मरीज ऑपरेशन टेबल पर अचेत लेटा था। नर्सों ने उसकी पत्नी के हस्ताक्षर वाला सहमति पत्र और उसका मेडिकल चार्ट देखा।

'डॉक्टर,' एक पुरुष-नर्स ने उस मरीज के मेडिकल चार्ट की ओर देखते हुए कहा। इस सहमति-पत्र में यह नहीं लिखा है कि हेमाटोमा की समस्या सिर के किस हिस्से में है। नर्स ने वह सहमति-पत्र डॉक्टर के सामने रख दिया। उसमें कहीं भी इस बात का उल्लेख नहीं था कि मरीज के सिर के किस हिस्से का ऑपरेशन करना है।

किसी भी सर्जरी के बारे में ज़रूरी जानकारियाँ देने के लिए हर अस्पताल इन दस्तावेजों पर ही निर्भर होता है। मरीज के शरीर में सर्जरी का पहला चीरा लगाने से पहले उसके परिवार के किसी सदस्य से एक सहमति-पत्र पर हस्ताक्षर कराए जाते हैं और सर्जरी की हर प्रक्रिया के लिए उनकी सहमति ली जाती है, साथ ही मरीज से संबंधित सारी जानकारी को सत्यापित भी कराया जाता है। ऑपरेशन से पहले दर्जनों डॉक्टरों और नर्सों द्वारा मरीज की एक-एक चीज़ की जाँच की जा रही होती है और उसे ऑपरेशन के लिए तैयार किया जा रहा होता है। ऐसे तनावपूर्ण माहौल में सहमति-पत्र ही वह दस्तावेज होता है, जिसमें ये लिखा होता है कि मरीज के साथ ऑपरेशन रूम में क्या होनेवाला है। हस्ताक्षर करवाकर ली गई सहमति के बिना कोई भी व्यक्ति मरीज के सर्जरी-रूम में प्रवेश नहीं कर सकता।

'मैं पहले भी यह स्कैन रिपोर्ट देख चुका हूँ,' सर्जन ने कहा। मरीज के सिर के दाएँ हिस्से

में समस्या है। अगर हमने सर्जरी में और देर की, तो उसकी जान जा सकती है।

‘शायद हमें एक बार फिर से स्कैन रिपोर्ट पढ़ लेनी चाहिए,’ कंप्यूटर टर्मिनल की ओर जाते हुए उस पुरुष-नर्स ने कहा। दरअसल सुरक्षा के कारणों से अस्पताल के कंप्यूटर आखिरी बार इस्तेमाल किए जाने के पंद्रह मिनट बाद लॉक हो जाते थे। अगर वह पुरुष-नर्स दोबारा कंप्यूटर को लॉग-इन करता और मरीज के मस्तिष्क की स्कैन रिपोर्ट को स्क्रीन पर लोड करता तो इसमें कम से कम एक मिनट का समय और लगता।

‘समय बहुत कम है,’ सर्जन ने कहा। ‘मुझे बताया गया था कि मरीज की जान खतरे में है। हमें उसके सिर के अंदर बन रहे दबाव को जल्द से जल्द खत्म करना होगा।’

‘अगर मैं फटाफट जाकर उसके परिवार के किसी सदस्य को ढूँढ़ लाऊँ तो?’ पुरुष-नर्स ने पूछा।

‘भाड़ में जाओ! जो करना है करो!’ सर्जन ने चीखते हुए नर्स से कहा। ‘तुम उसके परिवार को ढूँढ़ो या किसी और को! मुझे उससे कोई मतलब नहीं है! मेरे लिए उसकी जान बचाना सबसे ज़रूरी है और मैं अब सर्जरी शुरू कर रहा हूँ।’ सर्जन ने मरीज के दस्तावेज उठाए और उस पर ‘सिर के दाईं तरफ’ लिख दिया।

‘ये लो,’ उसने कहा। ‘अब हम फौरन ऑपरेशन शुरू करेंगे।’

वह पुरुष-नर्स रॉड आइलैंड अस्पताल में पिछले करीब एक साल से काम रहा था और अस्पताल की संस्कृति से अच्छी तरह परिचित था। उस पुरुष-नर्स सहित बाकी सभी नर्सों को भी पता था कि उस सर्जन का नाम गलियारे पर टँगे बोर्ड पर काले रंग से लिखा रहता है, जिसका अर्थ यह था कि सभी नर्सों को उससे सावधान रहना चाहिए। वे सब इस अलिखित नियम से परिचित थे कि जीत हमेशा इस सर्जन की ही होती है।

डॉक्टर के चीखने के बाद उस पुरुष-नर्स ने मरीज का चार्ट एक ओर रख दिया और चुपचाप किनारे खड़ा हो गया। जबकि डॉक्टर ने मरीज को ऑपरेशन टेबल पर इस तरह लिटाया कि उसकी खोपड़ी का दायाँ हिस्सा ऊपर की ओर रहे। फिर उसने मरीज की खोपड़ी के उस हिस्से के बाल शेव किए और उस पर एंटीसेप्टिक लगा दिया। उसकी योजना यह थी कि खोपड़ी के इस हिस्से को काटकर खोला जाए और अंदर मस्तिष्क के पास जो खून जमा हुआ है, उसे साफ कर दिया जाए। उसने अपने एक बारीक चाकू से मरीज की खोपड़ी के एक हिस्से को काटा, उसे जरा सा खोला और फिर वहाँ से झाँक रही सफेद रंग की हड्डी को ड्रिल करना शुरू कर दिया। वह खोपड़ी की उस हड्डी पर तब तक ड्रिल करता रहा, जब तक एक हल्की सी आवाज के साथ उसका एक छोटा सा हिस्सा टूट नहीं गया। उसने ठीक यही प्रक्रिया दोहराते हुए उस हड्डी में दो और छेद बनाए। फिर एक अन्य बारीक औज़ार की मदद से तीनों छेदों के बीच का खोपड़ी का एक छोटा सा त्रिकोणीय टुकड़ा काट दिया। उसके नीचे मस्तिष्क के आसपास एक पारदर्शी आवरण था, जिसे ड्यूरा कहते हैं।

‘हे भगवान,’ किसी के मुँह से अचानक निकला।

दरअसल खोपड़ी के उस हिस्से में कोई हेमाटोमा नहीं था। वे अब तक खोपड़ी के उल्टे हिस्से पर सर्जरी कर रहे थे।

‘हमें मरीज को पलटना होगा,’ सर्जन चीखा।

मरीज की खोपड़ी का जो त्रिकोणीय हिस्सा काटकर निकाला गया था, उसे धातु की छोटी-छोटी पट्टियों और शिकंजों की मदद से फिर से जोड़कर खोपड़ी को सिल दिया गया। इसके बाद उसकी खोपड़ी के बाएँ हिस्से को ऊपर की ओर किया गया। एक बार फिर वही प्रक्रिया दोहराई गई। बाल शेव करना, एंटीसेप्टिक लगाना, खोपड़ी के ऊपरी हिस्से को काटना, फिर हड्डी में छेद करके उसका एक टुकड़ा तोड़कर जगह बनाना। इसके बाद जैसे ही ड्यूरा नामक आवरण में छेद किया गया, तो हेमाटोमा फौरन नज़र आ गया, जो गहरे रंग का गाढ़ा द्रव था और मस्तिष्क के एक छोटे से हिस्से में चारों ओर जमा हुआ था। आखिरकार सर्जन ने जैसे ही वह पूरा खून साफ किया, मरीज के सिर पर बना दबाव फौरन कम हो गया। आदर्श स्थिति में यह सर्जरी करीब एक घंटे में पूरी हो जाती, लेकिन सर्जन ने जो गड़बड़ की थी, उसके कारण इसमें करीब दोगुना समय लगा।

सर्जरी के बाद मरीज को आई.सी.यू. में ले जाया गया। हालाँकि वह पूरी तरह कभी होश में नहीं आ पाया और दो सप्ताह बाद उसकी मौत हो गई।

मरीज की मौत के बाद इस मामले की जाँच की गई। जाँच के नतीजों के अनुसार मरीज की मौत का सटीक कारण बता पाना असंभव था। पर मरीज के परिवार ने तर्क दिया कि मरीज की हालत पहले ही नाजुक थी और सर्जन की गलती ने उसे और बिगाड़ दिया। एक तो उसकी खोपड़ी के दोनों ओर के हिस्सों को काटा गया और दोनों ओर छेद भी किए गए। इसके अलावा सर्जरी में सामान्य से ज्यादा समय लगा और सर्जन की गलती के कारण मस्तिष्क के पास जमे खून को साफ करने में काफी देर हो गई। मरीज की सर्जरी सफल होने की जो भी गुंजाइश थी, वह इन सभी गलतियों के कारण खत्म हो गई। मरीज के परिवार ने दावा किया कि अगर सर्जन ने गलती नहीं की होती तो शायद मरीज अब भी जिंदा होता। आखिरकार किसी तरह दोनों पक्षों के बीच समझौता हुआ और अस्पताल प्रबंधन ने मरीज के परिवार को मुआवजा देकर मामला खत्म किया। रॉड आइलैंड अस्पताल ने उस सर्जन पर आजीवन प्रतिबंध भी लगा दिया।

इस घटना के बाद कुछ नर्सों ने दावा करते हुए कहा, ‘यह तो होना ही था, यहाँ के हालात ही ऐसे थे।’ रॉड आइलैंड अस्पताल की संगठनात्मक आदतें इतनी गलत थीं कि कभी न कभी ऐसी कोई गलती होना तय था।[1] हालाँकि ऐसा नहीं है कि इस तरह के खतरनाक पैटर्न्स बनने के लिए सिर्फ अस्पताल ही जिम्मेदार होते हैं। हानिकारक संगठनात्मक आदतें हर उद्योग और कंपनी में पाई जाती हैं। और करीब-करीब हमेशा ही ये आदतें उन लीडरों की विचारहीनता के कारण निर्मित होती हैं, जो कंपनी या उद्योग की

संस्कृति के बारे में सोच-विचार करने से बचते हैं। सही मार्गदर्शन के अभाव में इस तरह की आदतें निर्मित हो जाती हैं। संसार में ऐसी कोई संस्था नहीं है, जिसमें कोई संगठनात्मक आदत न हो। कुछ संस्थाओं में संगठनात्मक आदतें जानबूझकर निर्मित की जाती हैं, जबकि कुछ संस्थाओं में उनके पीछे कोई सोच नहीं होती। इसीलिए ऐसी संस्थाओं में इन आदतों के निर्मित होने के पीछे अक्सर प्रतिद्वंदिता या डर कारण बन जाता है।

हालाँकि जो लीडर्स सही अवसरों का लाभ उठाना जानते हैं, वे हानिकारक आदतों को भी बदलने में सक्षम होते हैं। अच्छी आदतें, कभी-कभी संकट की घड़ी में भी उभर आती हैं।

2

सन 1982 में जब एन इवोल्यूशनरी थ्योरी ऑफ इकोनॉमिक चेंज (आर्थिक बदलाव का विकासमूलक सिद्धांत) नामक किताब पहली बार प्रकाशित हुई थी, तो अकादमिक लोगों के अलावा बहुत कम लोगों ने इस पर गौर किया। इस किताब का नीरस कवर पेज और पहली पंक्ति ऐसी थी, मानों पाठकों को दूर रखने के लिए ही लिखी गई हो। यह पहली पंक्ति कुछ इस प्रकार थी, 'इस किताब में हमने बाज़ार में सक्रिय व्यापारिक संस्थानों की क्षमताओं और व्यवहार पर एक विकासमूलक सिद्धांत प्रस्तुत किया है और इस सिद्धांत के अनुरूप विभिन्न मॉडल तैयार करके उनका विश्लेषण किया है।' इस किताब के लेखक थे येल यूनिवर्सिटी के रिचर्ड नेल्सन और सिडनी विंटर। ये दोनों ही शुम्पटिएरियन सिद्धांत पर ऐसे विश्लेषणात्मक पेपर प्रस्तुत करने के लिए जाने जाते थे, जिन्हें समझने का दावा पीएडी के उम्मीदवार भी नहीं कर सकते थे।

हालाँकि उनकी इस नई किताब ने व्यापारिक रणनीति और संगठनात्मक सिद्धांतों की दुनिया में तहलका मचा दिया। जल्द ही इसे शताब्दी की सबसे महत्वपूर्ण किताबों में से एक करार दे दिया गया। बिजनेस स्कूलों में पढ़ानेवाले अर्थशास्त्र के प्रोफेसर्स इसके बारे में अपने सहकर्मियों से चर्चा करने लगे। ये सहकर्मी इसके बारे में व्यापारिक सम्मेलनों में आनेवाले विभिन्न कंपनियों के सीईओ और अधिकारियों से चर्चा करने लगे। जल्द ही ये अधिकारी जनरल इलेक्ट्रिक, फाइजर और स्टारवुड होटल्स जैसे बड़े कॉरपोरेशंस के कार्यक्रमों में इस किताब की पंक्तियाँ सभी को सुनाने लगे।

नेल्सन और विंटर ने करीब एक दशक तक कंपनियों के काम करने के तरीके से संबंधित ढेर सारे डाटा का परीक्षण किया था। इसके बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि 'कंपनियों का ज़्यादातर व्यवहार उनके निर्णयों से संबंधित विस्तृत सर्वेक्षणों का परिणाम नहीं होता बल्कि उनके अतीत से निकली सामान्य आदतों और रणनीतिक झुकावों का प्रतिबिंब होता है।'

इसे सरल शब्दों में समझें तो 'एक बार ऐसा लग सकता है कि अधिकतर व्यापारिक

संस्थाओं के चुनाव तर्कसंगत होते हैं और विचारपूर्वक ढंग से लिए गए निर्णयों पर आधारित होते हैं।' पर वास्तविकता यह है कि कंपनियाँ इस तरह काम नहीं करतीं। वे तो लंबे समय से सक्रिय उन संगठनात्मक आदतों और पैटर्न्स के हिसाब से काम करती हैं, जो उनके हज़ारों कर्मचारियों द्वारा लिए जानेवाले स्वतंत्र निर्णयों से बनते हैं। इसके पहले कोई नहीं जानता था कि संगठनात्मक आदतें ही सबसे अधिक प्रभावी होती हैं।

उदाहरण के लिए कपड़े बनानेवाली एक कंपनी का मुख्य अधिकारी कंपनी के कैटलॉग के कवर पेज पर लाल रंग का स्वेटर पेश करने का निर्णय लेता है। इसे देखनेवाले को यही लगेगा, यह निर्णय कंपनी के सेल्स और मार्केटिंग डाटा का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करने के बाद ही लिया गया होगा। जबकि वास्तव में ऐसा इसलिए हुआ था क्योंकि कंपनी का उपाध्यक्ष अक्सर जापानी फैशन ड्रेसेस के बारे में जानकारी देनेवाली वेबसाइट्स को देखता रहता था। पिछली सर्दियों में जापान में लाल रंग के स्वेटरों का ट्रेंड सबसे ज़्यादा था। इसके अलावा कैटलॉग के कवर पर लाल स्वेटर रखने के कुछ अन्य कारण भी थे, जैसे कंपनी के मार्केटिंग अधिकारी अपने दोस्तों से नियमित रूप से पूछते रहते थे कि आजकल कौन सा रंग सबसे ज़्यादा पसंद किया जा रहा है। इसके अलावा अपनी वार्षिक पेरिस यात्रा में रनवे शो देखकर आए कंपनी के अधिकारियों ने बताया कि उन्होंने सुना है कि प्रतिद्वंदी कंपनियों के डिजाइन अपने कपड़ों में मेजेन्टा रंग (लाल और बैंगनी का मिश्रित रंग) इस्तेमाल करनेवाले हैं। ये सब छोटी-छोटी जानकारियाँ अधिकारियों के बीच प्रतिद्वंदियों को लेकर होनेवाली गपशप और दोस्तों से उनकी बातचीत जैसे अलग-अलग असंगठित पैटर्न्स का परिणाम थीं, जो कंपनी के औपचारिक रिसर्च और डेवलपमेंट रुटीन (तयशुदा आदत) के साथ मिलाई गईं। इस तरह यह निष्कर्ष निकला कि इस साल लाल रंग ही सबसे ज़्यादा पसंद किया जाएगा। कोई एक व्यक्ति सोच-विचार करने के बाद इस निर्णय पर नहीं पहुँचा था। बल्कि दर्जनों आदतों, प्रक्रियाओं और व्यवहारों के घालमेल से यह तय हुआ कि लाल रंग ही सबकी पसंद होगा।

ये संगठनात्मक आदतें या नेल्सन और विंटर के शब्दों में कहें तो रुटीन (तयशुदा आदतें) बहुत ही महत्वपूर्ण होते हैं। क्योंकि इनके बिना अधिकतर कंपनियों में कोई काम पूरा नहीं किया जा सकता। रुटीन यानी तयशुदा आदतें वे सैकड़ों अलिखित नियम उपलब्ध कराते हैं, जो कंपनी चलाने के लिए ज़रूरी होते हैं। इनके कारण ही कर्मचारियों को हर कदम पर अनुमति लिए बिना नए विचारों के साथ प्रयोग करने का मौका मिलता है। रुटीन एक किस्म की संगठनात्मक याद्दाश्त उपलब्ध कराते हैं। जिससे मैनेजरों को हर छह महीने में बिक्री प्रक्रिया को नए सिरे से निर्माण करने की ज़रूरत न पड़े और कंपनी के वाइस प्रेसिडेंट जैसे किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति द्वारा अचानक नौकरी छोड़ने पर मैनेजरों को परेशान न होना पड़े। रुटीन (तयशुदा आदतें) से अनिश्चितता में कमी आती है। उदाहरण के लिए मैक्सिको और लॉस एंजलिस में भूकंप के बाद किए गए राहत प्रयासों पर एक अध्ययन हुआ। इस अध्ययन से पता चला कि राहत कार्यों में लगे कार्यकताओं की आदतें बहुत ही महत्वपूर्ण थीं क्योंकि उनके बिना नीतियाँ बनाना और उन्हें लागू करना लगभग नामुमकिन था। ये कार्यकर्ता लगातार ऐसे संकटग्रस्त क्षेत्रों

में काम करते हैं और राहत कार्यों में इस हद तक शामिल होते हैं कि अन्य जिम्मेदारियों के अलावा ये बच्चों की मदद से दो पड़ोसी इलाकों में संवाद स्थापित करने जैसी जिम्मेदारियाँ भी निभाते हैं।

पर रुटीन (तयशुदा आदतें) का सबसे महत्वपूर्ण फायदा है कि ये किसी संस्था के दो संभावित विरोधी सोचवाले समूहों या व्यक्तियों के बीच भी सर्वसम्मति बनाने में कारगर होते हैं।

अधिकतर अर्थशास्त्री कंपनियों को ऐसी शांतिपूर्वक जगहें मानकर बैठ जाते हैं, जहाँ हर कर्मचारी का एक ही उद्देश्य होता है : जितना हो सके, उतना अधिक धन कमाना। नेल्सन और विंटर ने इस बात की ओर इशारा किया कि असली दुनिया में ऐसा बिलकुल नहीं होता। कंपनियाँ कोई संयुक्त परिवार नहीं हैं, जहाँ हर कोई खुश हो और एक-दूसरे से अच्छा व्यवहार कर रहा हो। सच तो यह है कि अधिकतर दफ्तरों में अधिकारियों के बीच शक्ति और श्रेय हासिल करने को लेकर संघर्ष चल रहा होता है। यह संघर्ष दबी-छिपी झड़पोंवाला संघर्ष होता है, जिसमें उन्हें प्रतिद्वंदी का प्रदर्शन कमज़ोर और अपना प्रदर्शन बेहतर नज़र आता है। अलग-अलग विभाग कंपनी के संसाधनों को हासिल करने के लिए एक-दूसरे का मुकाबला करते हैं और स्वयं प्रतिष्ठा हासिल करने के लिए बाकी विभागों को तबाह करने के लिए उत्सुक रहते हैं। अधिकतर संस्थाओं के बॉस अपने कर्मचारियों को एक-दूसरे का विरोधी बना देते हैं ताकि कोई कर्मचारी उनसे ज़्यादा महत्त्व हासिल न कर सके।

कंपनियाँ परिवारों जैसी नहीं होतीं। वे गृहयुद्ध के माहौल में युद्ध के मैदान जैसी होती हैं।

हालाँकि इस परस्पर विनाशकारी युद्धक्षमता से लैस होने के बावजूद अधिकतर कंपनियाँ सालों तक इसीलिए शांति से काम करती रहती हैं क्योंकि उनके कुछ रुटीन होते हैं। ये रुटीन दो विरोधी संघों के बीच सर्वसम्मति तो बनाते ही हैं, साथ ही हर किसी को अपनी आपसी दुश्मनी भुलाकर प्रतिदिन काम पूरा करने का मौका भी देते हैं।

संगठनात्मक आदतें एक बुनियादी वचन देती हैं कि अगर आप पहले से स्थापित पैटर्न्स का पालन करते हैं और आपसी मतभेद के बावजूद शांति बनाए रखते हैं, तो आपसी प्रतिद्वंदिता से कंपनी बरबाद नहीं होगी, उसे लाभ होता रहेगा, जिसका फायदा आखिरकार सबको मिलेगा। जैसे एक सेल्समैन जानता है कि अगर वह अपने विशेष ग्राहकों से बड़े ऑडर्स हासिल करके, उन्हें बदले में अच्छी-खासी छूट दिलवा दे, तो कंपनी उसका बोनस बढ़ा देगी। पर साथ ही वह ये भी जानता है कि अगर हर सेल्समैन ग्राहकों को अच्छी-खासी छूट दिलवाने लगा, तो कंपनी का दिवाला निकल सकता है और फिर उसे भी कोई बोनस नहीं मिलेगा। इससे एक रुटीन (तयशुदा आदत) उभरता है कि कंपनी के सभी सेल्समैन हर साल जनवरी के महीने में आपस में मिलकर यह तय कर लेते हैं कि वे अपने ग्राहकों को अधिकतम कितनी छूट देंगे। इस तरह वे कंपनी का लाभ

सुनिश्चित कर लेते हैं, जिसके चलते साल के अंत में कंपनी उन सभी का वेतन बढ़ा देती है।

अब एक ऐसे युवा अधिकारी का उदाहरण लें, जो कंपनी का वाइस प्रेसिडेंट बनने का प्रयास कर रहा है। अगर वह अधिकारी चाहे तो कंपनी के सबसे बड़े और महत्वपूर्ण ग्राहक को एक गुप्त फोन कॉल करके कंपनी की बिक्री प्रभावित कर सकता है या फिर किसी सहकर्मी को नुकसान पहुँचाकर उसकी पदोन्नति रुकवा सकता है। ऐसी कोई भी हरकत करने में बस एक ही समस्या होती है कि इससे भले ही आपका थोड़ा-बहुत फायदा हो जाए, पर इससे कंपनी का सिर्फ नुकसान ही होता है। इसीलिए अधिकतर कंपनियों में एक अलिखित नियम लागू रहता है कि आपका महत्वाकांक्षी होना अच्छा है पर अगर आप अपनी महत्वाकांक्षा पूरी करने के चक्कर में दूसरों का नुकसान करते हैं, तो जल्द ही आपके सहकर्मी आपके खिलाफ खड़े हो जाएँगे। जबकि अगर आप अपने प्रतिद्वंदी को नीचा दिखाने के बजाय स्वयं अच्छा प्रदर्शन करके अपने विभाग का प्रदर्शन बेहतर बनाते हैं, तो जल्द ही आप कंपनी की नज़र में आ जाएँगे और इससे आपको लाभ होगा।

रुटीन (नियमित आदतों) से आपसी मतभेद के बावजूद शांति

बनी रहती है, जिससे काम करना आसान हो जाता है।

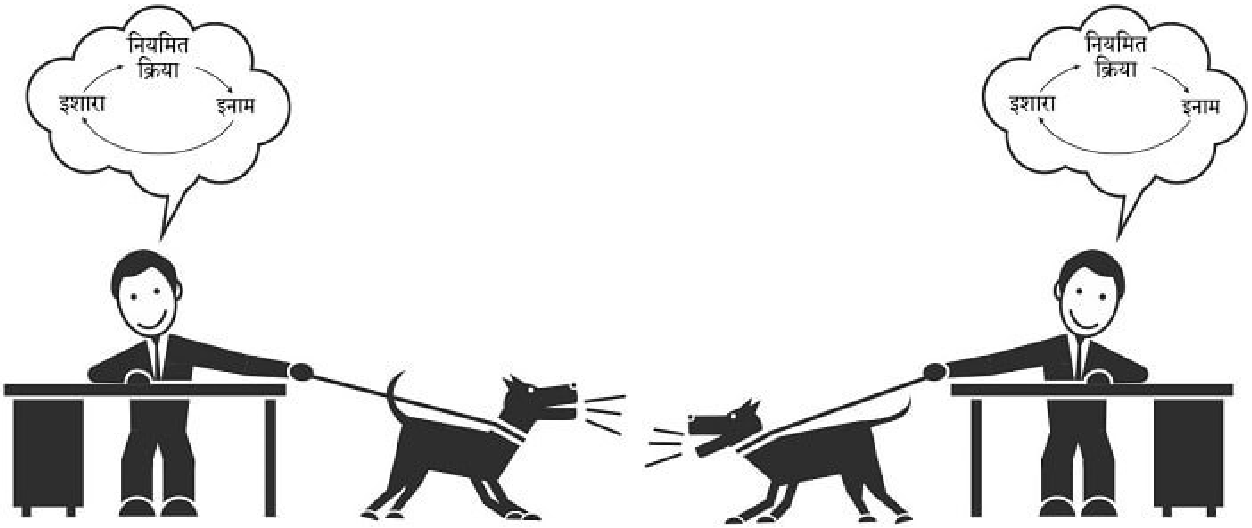

रुटीन (तयशुदा आदतें) और आपसी मतभेद के बावजूद शांति बनाए रखने से दरअसल एक आधी-अधूरी न्यायपूर्ण स्थिति बनती है। इसी के चलते नेल्सन और विंटर ने लिखा था कि ‘कंपनियों के अंदर होनेवाली प्रतिद्वंदिता और मतभेदों में कोई नयापन नहीं होता और वे अक्सर कंपनी के रुटीन (तयशुदा आदतें) के दायरे में ही सीमित रहते हैं। प्रतिद्वंदिता और मतभेदों के बावजूद कंपनी में जितना काम होना चाहिए, उतना काम होता है। इसके साथ ही कर्मचारी एक-दूसरे की तारीफें भी कर रहे होते हैं... क्योंकि कोई

भी कर्मचारी अपने प्रतिद्वंदी को नुकसान पहुँचाने के लिए कंपनी को नुकसान पहुँचाना नहीं चाहता।'

आमतौर पर कंपनियों के अंदर रुटीन (तयशुदा आदतें) चलते रहते हैं और आपसी मतभेद के बावजूद शांतिपूर्ण स्थितियाँ बनी रहती है। आपसी प्रतिद्वंदिता होती है, पर संगठनात्मक आदतों के कारण यह प्रतिद्वंदिता भी एक दायरे तक ही सीमित रहती है और इस तरह व्यापार चलता रहता है और कंपनी फलती-फूलती रहती है।

हालाँकि कभी-कभी आपसी मतभेद के बावजूद शांतिपूर्ण स्थितियाँ कायम रखना ही काफी नहीं होता। जैसा कि रॉड आइलैंड अस्पताल के मामले से पता चलता है कि अस्थिर शांति भी कभी-कभी गृहयुद्ध जितनी विनाशकारी साबित हो सकती है।

***

संभव है कि जिस दिन आपने अपने ऑफिस में पहली बार कदम रखा हो, उस दिन आपको एक हैंडबुक मिली हो, जो अब शायद ऑफिस की ही किसी दराज में पड़ी धूल खा रही हो। इस तरह की हैंडबुक में खर्चों के फॉर्म, छुट्टी लेने संबंधी नियम, बीमा के विकल्प और कंपनी की संगठनात्मक सूचियाँ वगैरह का उल्लेख होता है। इसके साथ ही इसमें स्वास्थ्य रक्षा योजना संबंधी रंगीन ग्राफ, ज़रूरी फोन नंबर, ऑफिस का अपना ई-मेल उपयोग करने संबंधी जानकारी और कंपनी द्वारा प्रायोजित सेवानिवृत्ति योजना 401 (के) में नामांकन का तरीका भी लिखा होता है।

अब कल्पना कीजिए कि अगर आपका कोई नया सहकर्मी कंपनी में सफलता प्राप्त करने के बारे में आपसे सलाह माँगे, तो आप उससे क्या कहेंगे। आप उसे जो भी सलाह दें, लेकिन आपकी सलाह में ऐसा कुछ नहीं होगा, जो उस हैंडबुक में बताया गया हो। बल्कि आप तो उसे कुछ इस तरह की बातें बताएँगे कि कंपनी में कौन भरोसे के लायक है, कौन से विभागों के सचिव की अपने बॉस से भी ज्यादा चलती है, कंपनी की नौकरशाही में अपना काम कैसे निकालना चाहिए वगैरह। इसके साथ ही आप उसके सामने अपनी उन आदतों का भी जिक्र करेंगे, जिनकी मदद से आप रोज़ाना अपना काम अच्छी तरह करने की कोशिश करते हैं। आप अपनी काम संबंधी आदतों के अलावा उसके सामने कंपनी के अंदर मौजूद अनौपचारिक पॉवर स्ट्रक्चर (शक्तिशाली लोगों का आपसी गठजोड़), अधिकारियों के आपसी रिश्तों, गठजोड़ व उनके बीच होनेवाले संघर्षों का खाका भी खींच सकते हैं। इसके साथ ही आप अपने नए सहकर्मी को यह बता सकें कि इन्हीं सब पहलुओं पर अन्य सहकर्मी क्या सोचते हैं, तो आप उसे यह समझाने में कामयाब हो सकते हैं कि कंपनी के अंदर मौजूद सीक्रेट हाइरैरकी (गुप्त पदक्रम) कैसी है। यह जानकारी कंपनी में अपना काम निकालने में उसका सहयोग करेगी और साथ ही दूसरों से आगे निकलने का रास्ता भी दिखाएगी।

नेल्सन और विंटर द्वारा उल्लेखित रुटीन (तयशुदा आदतें) और आपसी शांति बनाए

रखने के लिए किए गए समझौते किसी भी व्यवसाय के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। नीदरलैंड की यूट्रेक्ट यूनिवर्सिटी में हुए एक अध्ययन में फैशन की दुनिया में मौजूद रुटीन आदतों पर गौर किया गया। किसी भी फैशन डिज़ाइनर को इस व्यवसाय में बने रहने के लिए एक बुनियादी हुनर की ज़रूरत पड़ती है। इनमें पहला हुनर है, रचनात्मकता और ऊँचे दर्ज़े के वस्त्र बनाने की कला। पर इस व्यवसाय में सफल होने के लिए सिर्फ इतना ही काफी नहीं है। एक डिज़ाइनर के रुटीन्स से ही तय होता है कि वह कामयाब होगा या नाकाम। इन रुटीन्स में कई चीज़ें शामिल हैं, जैसे थोक विक्रेता (wholesaler) का माल खत्म होने से पहले ही उससे इटैलियन ब्रॉडक्लॉथ (कपड़ों के थान) हासिल करना, बटन और जिपर (कपड़ों में लगाई जानेवाली चैन) टाँकने के लिए सबसे हुनरमंद दर्ज़ी ढूँढ़ना और महत्वपूर्ण स्टोअर्स में अपने डिज़ाइन किए हुए कपड़ों को जल्द से जल्द पहुँचाना वगैरह। फैशन का व्यवसाय इतना जटिल है कि इन सभी कार्यों का निपटारा सर्वश्रेष्ठ ढंग से करनेवाली कारगर प्रक्रियाओं के बिना, इस क्षेत्र में उतरनेवाली कोई भी नई कंपनी अपना काम ढंग से नहीं कर सकती। फैशन के क्षेत्र में जैसे ही एक बार किसी कंपनी का काम बिगड़ना शुरू होता है, तो फिर उसे डूबने में ज़्यादा समय नहीं लगता। क्योंकि फिर कंपनी का संचालन सुनिश्चित करने के चक्कर उसकी रचनात्मकता प्रभावित होने लगती है।

किस तरह के फैशन डिज़ाइनरों में सबसे सही आदतें होने की सबसे ज़्यादा संभावना होती है? इसका जवाब है कि यह संभावना उन फैशन डिज़ाइनरों में सबसे ज़्यादा होती है, जिन्होंने अपने काम आनेवाले लोगों के साथ सबसे कारगर संबंध बनाए रखे हों। इसके साथ ही जिनके सहायकों और कर्मचारियों ने कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए आपस में सबसे कारगर समझौते किए हों। कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए किए गए आपसी समझौते बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। आमतौर पर ऐसे समझौतों के कारण ही बाजार में उतरनेवाले नए फैशन लेबल या ब्रांड को सफलता तब मिलती है, जब उनका नेतृत्व करनेवालों ने अपनी पिछली फैशन कंपनियों को छोड़ने के बावजूद उनसे अच्छे रिश्ते बनाकर रखे हों।

भले ही कुछ लोगों को ऐसा लगे कि नेल्सन और विंटर तो बस कुछ नीरस आर्थिक सिद्धांतों पर एक किताब लिख रहे थे। पर सच यह है कि उन्होंने आखिरकार जो किताब लिखी, वह अमेरिका की कॉरपोरेट दुनिया में अपना अस्तित्व बचाकर रखने की मार्गदर्शिका साबित हुई।

इसके अलावा नेल्सन और विंटर के सिद्धांत यह भी बताते हैं कि रॉड आइलैंड अस्पताल में इतनी गंभीर स्थिति क्यों बन गई। दरअसल अस्पताल के रुटीन (तयशुदा आदतें) ऐसे थे, जिससे नर्सों और डॉक्टरों के लिए एक असहज शांति की स्थिति निर्मित हो गई। उदाहरण के लिए सफेद रंग के वे बोर्ड, जिनमें नर्सों ने डॉक्टरों के नाम अलग-अलग रंगों में लिख रखे थे और वे चेतावनियाँ जो नर्सेस एक-दूसरे को गुपचुप तरीके से देती रहती थीं। ये सब ऐसी आदतें थीं, जिनके जरिए कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए कुछ बुनियादी समझौते बनाए गए। इन नाजुक समझौतों ने सुनिश्चित किया कि

अधिकतर समय अस्पताल का काम बिना किसी रुकावट के चलता रहे। पर वास्तव में कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए हुए समझौते तभी कारगर साबित होते हैं, जब वे वास्तव में न्यायपूर्ण हों। अगर ऐसा कोई भी समझौता असंतुलित है - जैसे आपस में वास्तविक शांति की जगह आपसी चुप्पी होना, जो दरअसल नकली शांति है - तो वहाँ के रुटीन (तयशुदा आदतें) अक्सर उसी समय असफल साबित होते हैं, जब उनकी सबसे ज़्यादा ज़रूरत होती है।

रॉड आइलैंड अस्पताल में महत्वपूर्ण मुद्दा यह था कि सिर्फ नर्सेस ही कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए समझौते की कोशिश कर रही थीं। वे नर्सेस ही थीं, जो मरीजों को दवा देने से पहले कम से कम दो बार उसकी जाँच कर रही थीं और अपनी ओर से अतिरिक्त प्रयास कर मरीज के चार्ट में हर चीज़ को स्पष्ट ढंग से उल्लेखित कर रही थीं। ऊपर से इन्हीं नर्सों को तनावग्रस्त डॉक्टरों और सर्जनों का दुर्व्यवहार झेलना पड़ता था। यही नर्सेस मिलकर अच्छे स्वभाववाले सर्जनों को दुर्व्यवहार करनेवाले सर्जनों से अलग श्रेणीबद्ध करती थीं। ताकि अस्पताल का पूरा स्टाफ इस बात को लेकर जागरूक रहे कि कौन सा सर्जन ऑपरेशन-थिएटर के अंदर आपके सुझाव सुनेगा और कौन सा सर्जन आपके मुँह खोलते ही बरस पड़ेगा। अधिकतर डॉक्टर तो नर्सों के नाम जानने तक में रुचि नहीं दिखाते थे। अस्पताल की एक नर्स बताती है कि 'वहाँ हमेशा डॉक्टर ही प्रभारी होते थे, सारा नियंत्रण उन्हीं के पास रहता था। जबकि हम कमज़ोर थे और अपने मुँह पर ताला जड़कर बस किसी तरह अपना अस्तित्व बचाने के लिए संघर्ष कर रहे थे।'

रॉड आइलैंड अस्पताल में शांति कायम रखने के लिए हुए समझौते एकतरफा थे। इसीलिए जब भी कोई महत्वपूर्ण क्षण में, जैसे ऑपरेशन थिएटर में मरीज को सर्जरी का पहला चीरा लगाते समय किसी नर्स के टोकने या कुछ याद दिलाने से, डॉक्टरों के वे रुटीन बिगड़ जाते, जो दुर्घटनाओं को रोक सकते थे। ऐसी स्थिति में ही किसी 86 वर्षीय बुजुर्ग के सिर के उल्टे हिस्से का ऑपरेशन करने जैसी गलतियाँ होती थीं।

इस मसले पर एक सुझाव यह भी हो सकता है कि कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए हुए समझौते और न्यायसंगत होने चाहिए। यानी अगर अस्पताल प्रशासन यह स्पष्ट कर दे कि किस मौके पर नेतृत्व करने का अधिकार किसके पास होगा, तो अस्पताल के स्टाफ के बीच शक्ति का संतुलन स्थापित हो जाएगा। जिससे डॉक्टर और नर्स एक-दूसरे का सम्मान करने के लिए मज़बूर हो जाएँगे।

यह एक अच्छी शुरुआत हो सकती है पर दुर्भाग्य से सिर्फ इतना काफी नहीं है। एक सफल संस्थान चलाने का अर्थ सिर्फ शक्ति का संतुलित बँटवारा करना भर नहीं है। एक संस्था को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए यह ज़रूरी है कि उसके लीडर्स अपने अंदर ऐसी आदतें विकसित करें, जिनसे संस्था के अंदर एक सच्ची और संतुलित शांति स्थापित हो। इसके साथ ही विरोधाभासी ढंग से यह भी पूरी तरह स्पष्ट हो जाए कि नेतृत्व करने का अधिकार किसके पास है।

43 वर्षीय फिलिप ब्रिकेल लंदन की भूमिगत परिवहन सेवा (लंदन अंडरग्राउंड) के कर्मचारी थे। नवंबर 1987 की एक शाम को वे किंग्स क्रॉस सबवे स्टेशन के गुफानुमा मुख्य हॉल के अंदर काम में व्यस्त थे। एक यात्री, जो अपने लिए टिकट खरीदने आया था, उसने फिलिप को बताया कि उसने पास ही लगे एक एस्केलेटर (स्वचलित सीढ़ियाँ) के निचले हिस्से में एक जलता हुआ रूमाल देखा है।

किंग्स क्रॉस लंदन का सबसे बड़ा, सबसे श्रेष्ठ और सबसे व्यस्त सबवे स्टेशन है। यह ढेर सारे एस्केलेटरों (स्वचलित सीढ़ियाँ), गलियारों और सुरंगों की भूलभुलैया जैसा है। इनमें से कुछ गलियारे और सुरंगें तो 100 साल से भी ज़्यादा पुरानी हैं। इस स्टेशन के एस्केलेटर (स्वचलित सीढ़ियाँ) न सिर्फ अपने विशाल आकार के लिए जाने जाते हैं बल्कि इसलिए भी मशहूर हैं क्योंकि ये बरसों पुराने हैं। इनमें से कई एस्केलेटर लकड़ी के पट्टों और रबर के हैंडलों से निर्मित किए गए हैं। दशकों पहले भी लंदन में एस्केलटर इन्हीं चीज़ों से बनाए जाते थे। इनमें से कुछ एस्केलेटर जमीन से पाँच मंजिल अंदर तक जाते हैं। किंग्स क्रॉस की छह अलग-अलग रेल लाइनों से हर रोज़ करीब ढाई लाख यात्री गुज़रते हैं। शाम को जब स्टेशन पर सबसे ज़्यादा भीड़भाड़ होती है, उस समय यहाँ टिकटिंग हॉल में इतने लोग होते हैं कि उन्हें सँभालना मुश्किल हो जाता है। स्टेशन की छत इतनी बार रंगी जा चुकी है कि उसका मूल रंग अब किसी को याद नहीं है। इसी छत के नीचे सैकड़ों यात्री हर शाम टिकट लेने की जद्दोजहद में लगे होते हैं।

फिलिप ब्रिकेल को उस यात्री ने बताया कि जलता हुआ रूमाल जिस एस्केलेटर के निचले हिस्से में पड़ा है, वह स्टेशन का सबसे बड़ा एस्केलेटर है, जो पिकाडिली लाइन की ओर बना हुआ है। यह जानकारी मिलते ही ब्रिकेल फौरन अपनी सीट से उठे और उसी एस्केलेटर से नीचे उतरकर जलते हुए रूमाल के पास पहुँच गए। फिर उन्होंने एक पत्रिका लेकर उसे गोल-गोल मोड़ा और उससे पीटते हुए आग को बुझा दिया। इसके बाद वे अपनी सीट पर वापस लौट आए।

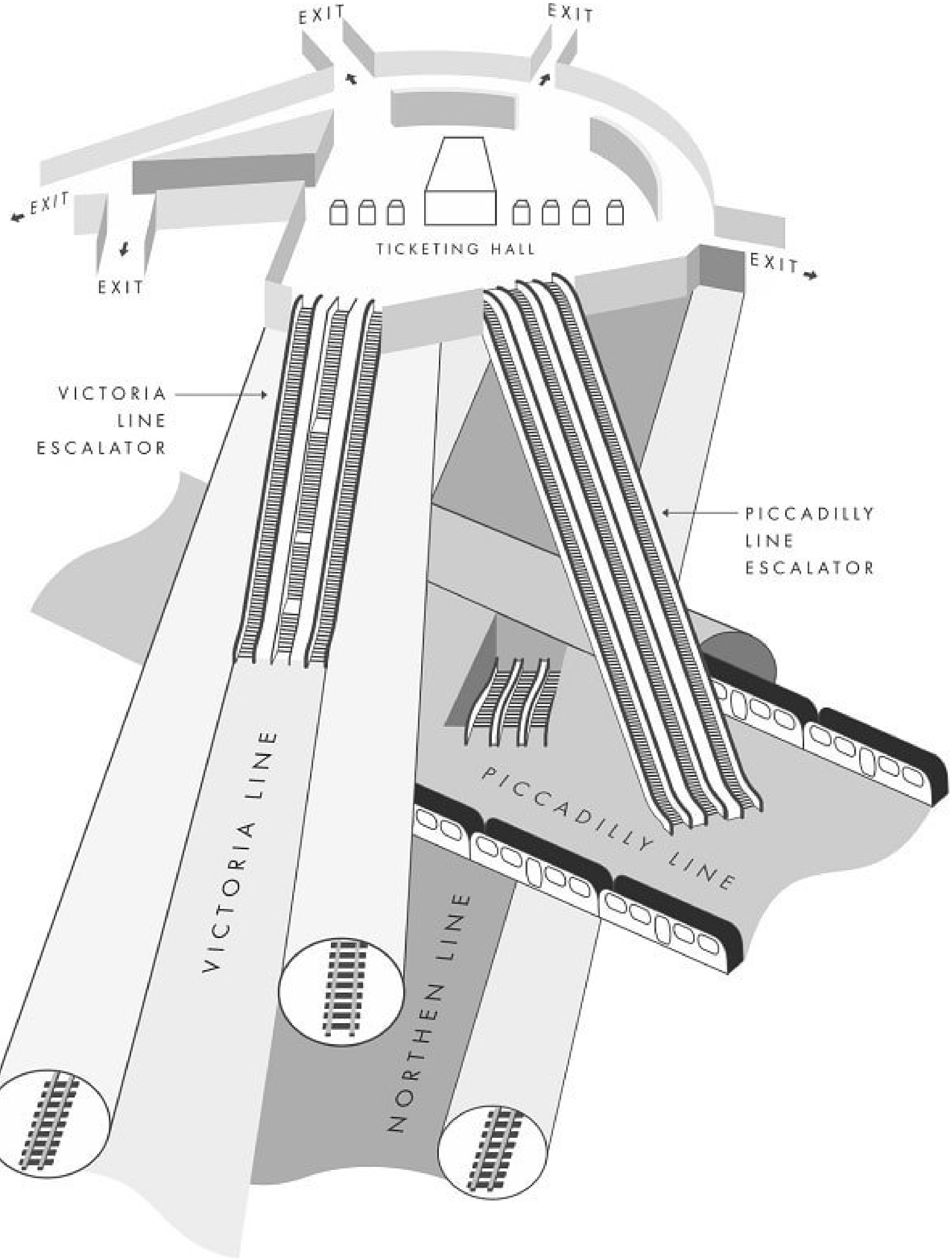
EXIT
EXIT
EXIT
EXIT
EXIT
TICKETING HALL
VICTORIA LINE ESCALATOR
PICCADILLY LINE ESCALATOR
VICTORIA LINE
PICCADILLY LINE
NORTHEN LINE

ब्रिकेल ने इससे आगे कोई जाँच नहीं की। उन्होंने यह पता करने की कोशिश नहीं की कि जलता हुआ रूमाल वहाँ पर कहाँ से आया। उन्होंने न तो किसी सहकर्मी को इसके बारे में बताया और न ही अग्निशमन विभाग को इसकी सूचना दी। इस तरह की समस्याओं को सुलझाने के लिए एक अलग विभाग था। ब्रिकेल अच्छी तरह जानते थे कि आग बुझाना उनका काम नहीं था और अगर उन्होंने इस पर ज्यादा जोर दिया, तो इसे दूसरे के कार्यक्षेत्र में दखल देने की तरह भी देखा जा सकता है। अगर उन्होंने यह पता भी कर लिया होता कि जलता रूमाल स्टेशन के अंदर कैसे आया, तब भी उन्हें यह नहीं पता था कि इस सूचना का उन्हें क्या करना चाहिए। लंदन अंडरग्राउंड के स्टेशनों में किसी भी विभाग को कोई जानकारी पहुँचाना एक मुश्किल कार्य था। क्योंकि जब तक आपने अपने वरिष्ठ अधिकारी से सीधी अनुमति न ली हो, तब तक आप कुछ नहीं कर सकते। लंदन अंडरग्राउंड के रुटीन (तयशुदा आदतें) हर कर्मचारी को मालूम थे। जिनके अनुसार आप किसी भी स्थिति में एक स्टेशन के अंदर ऊँची आवाज में इस बात की घोषणा नहीं कर सकते कि स्टेशन के अंदर कहीं आग लगी हुई है क्योंकि इससे यात्रियों के बीच अफरा-तफरी होने का खतरा था।

लंदन अंडरग्राउंड को एक ऐसी सैद्धांतिक नियम-पुस्तिका की मदद से संचालित किया जाता था, जिसे कभी किसी ने देखा या पढ़ा नहीं था। वास्तविकता यह थी कि ऐसी कोई सैद्धांतिक नियम-पुस्तिका थी ही नहीं। बस कुछ अलिखित नियम थे और हर कर्मचारी की जिंदगी उन्हीं नियमों के आधार पर चलती थी। पिछले कई दशकों से लंदन अंडरग्राउंड को चार अलग-अलग शक्ति-केंद्र चला रहे थे, चीफ ऑफ सिविल, सिग्नल, इलेक्ट्रिकल और मैकेनिकल इंजीनियरिंग। इन चारों विभागों में ऐसे बॉस और अधिकारी पदस्थ थे, जो ईर्ष्यापूर्ण ढंग से अपनी शक्ति और प्रभुत्व को बचाने में लगे रहते थे। सारी अंडरग्राउंड ट्रेनें समय पर इसलिए चल पाती थीं क्योंकि लंदन अंडरग्राउंड के नब्बे हज़ार कर्मचारी एक ऐसी नाजुक व्यवस्था के साथ सहयोग कर रहे थे, जो सारे यात्रियों और ट्रेनों को दिनभर मात्र कुछ दर्जन लोगों के भरोसे लाने-ले जाने का काम कर रही थीं। पर व्यवस्था के साथ इस तरह सहयोग करना चारों विभागों और उनके प्रभारियों के बीच शक्ति के संतुलन पर निर्भर था। वे खुद ऐसी हज़ारों आदतों पर निर्भर थे, जिन पर उनके कर्मचारी भी दृढ़ थे। इन आदतों से चारों शक्ति-केंद्रों और उनके अधिकारियों के बीच कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखनेवाले समझौते संभव हुए। इन समझौतों से ही ऐसी नीतियाँ उभरीं, जो दरअसल ब्रिकेल को यह निर्देश दे रही थीं कि आग बुझाना तुम्हारा काम नहीं है। अपनी सीमा से बाहर जाकर दूसरे के काम में दखल मत दो।

इस मामले की छानबीन करनेवाले एक जाँचकर्ता ने बाद में कहा, 'ऐसा नहीं है कि इन नीतियों के कारण केवल ब्रिकेल के स्तर के कर्मचारी ही स्वयं को कोई नया कदम उठाने से रोकते हों। सबसे उच्च स्तर पर कार्यरत संस्थान का कोई निर्देशक भी शायद ही अपनी सीमा से निकलकर कोई ऐसी जिम्मेदारी उठाए, जो किसी अन्य निर्देशक के कार्यक्षेत्र से जुड़ी हो। इसीलिए इंजीनियरिंग निर्देशक ने इस बारे में विचार तक नहीं किया कि संचालक स्टाफ आग से बचाव और आपातकाल में यात्रियों को वहाँ से हटाकर किसी

सुरक्षित स्थान में ले जाने की प्रक्रिया जैसी चीज़ों में प्रशिक्षित है या नहीं। क्योंकि उसका मानना था कि यह जिम्मेदारी संचालन निर्देशालय की है।'

शायद इसी कारण से ब्रिकेल ने जलते हुए रूमाल के बारे में किसी को कुछ नहीं बताया। कोई और स्थिति होती तो शायद यह इतना महत्वपूर्ण नहीं होता। पर इस मामले में जलता हुआ रूमाल दरअसल एक चेतावनी था। क्योंकि ईंधन के भंडारण क्षेत्र से, जो आसानी से दिखाई भी नहीं देता था, थोड़ा सा ईंधन बहकर बाहर निकल गया था, जिसके कारण उस रूमाल ने आग पकड़ ली थी। इससे पता चलता है कि कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखनेवाले समझौते भले ही कितने भी संतुलित हों, पर अगर ये समझौते सभी पहलुओं को ध्यान में रखकर न किए गए हों, तो ये खतरनाक साबित हो सकते हैं।

ब्रिकेल के अपनी सीट पर वापस लौटने के करीब पंद्रह मिनट बाद एक अन्य यात्री जब पिकाडेली लाइनवाले उस एस्केलेटर पर चढ़ा तो उसने गौर किया कि एस्केलेटर के निचले हिस्से से धुँआ उठ रहा है। उसने तुरंत एक कर्मचारी को इसकी सूचना दी। आखिरकार किंग्स क्रॉस स्टेशन के सुरक्षा-अधिकारी क्रिस्टोफर हायेस जाँच करने निकले। एक अन्य यात्री ने जैसे ही एस्केलेटर के नीचे धुँआ देखा, तो उसने फौरन इमरजेंसी बटन दबाया और अन्य यात्रियों की ओर देखकर चिल्लाना शुरू कर दिया कि सबको अपनी जान बचाने के लिए फौरन स्टेशन से बाहर निकल जाना चाहिए। एक पुलिसवाले ने गौर किया कि एस्केलेटर की सुरंग से धुँआ निकल रहा है। जब उसने पास जाकर देखा तो वहाँ से आग की लपटें निकलकर एस्केलेटर तक आ रही थीं।

इसके बावजूद सुरक्षा-अधिकारी क्रिस्टोफर हायेस ने लंदन शहर के अग्निशमन विभाग को खबर नहीं की। उनकी नज़र आग की लपटों तक नहीं पहुँची थी और लंदन अंडरग्राउंड का एक और अलिखित नियम यह था कि जब तक बहुत ज़रूरी न हो, तब तक अग्निशमन विभाग से संपर्क नहीं करना चाहिए। हालाँकि जिस पुलिसवाले ने धुँए का गुब्बार देखा था, उसने स्थिति को समझते हुए फौरन मुख्यालय से संपर्क करने की कोशिश की। पर भूमिगत होने के कारण उसके रेडियो को सिग्नल नहीं मिल रहे थे। वह रेडियो लेकर फौरन एक लंबी सीढ़ी चढ़ता हुआ बाहर गया और अपने वरिष्ठों को इस घटना की जानकारी दी। उसके वरिष्ठों ने आखिरकार अग्निशमन विभाग को सूचना दे दी। ब्रिकेल को जलते हुए रूमाल की सूचना मिलने के 20 मिनट बाद शाम के 7:36 बजे अग्निशमन विभाग के पास एक कॉल आया, जिसमें बताया गया कि 'किंग्स क्रॉस के एक छोटे से हिस्से में आग की लपटें देखी गई हैं।' जब वह पुलिसवाला स्टेशन के ठीक बाहर खड़े होकर रेडियो पर अपने वरिष्ठों से बात कर रहा था, उसी समय स्टेशन से यात्रियों की भीड़ का एक रेला स्टेशन के अंदर सुरंग की ओर जा रहा था। ये सारे यात्री अगली ट्रेन पकड़ने की जल्दी में थे ताकि फटाफट घर पहुँचकर अपने परिवार के साथ समय बिता सकें।

कुछ ही मिनटों में उनमें से कई यात्रियों की मौत की संभावना बन रही थी।

7 बजकर 36 मिनट पर एक अंडरग्राउंड वर्कर ने पिकाडेली लाइन के उस एस्केलेटर की ओर यात्रियों का प्रवेश बंद कर दिया। एक अन्य कर्मचारी ने यात्रियों को दूसरी सीढ़ियों की ओर भेजना शुरू कर दिया। स्टेशन पर हर कुछ मिनटों के अंतर पर कई ट्रेनें आकर रुक रही थीं। जिन प्लेटफॉर्म्स पर यात्री उतर रहे थे, वहाँ भारी भीड़ थी। एक संकरी सीढ़ी के पास इतनी ज़्यादा भीड़ जमा हो गई थी कि यात्रियों का निकलना मुश्किल होने लगा।

सुरक्षा-अधिकारी हायेस एक गलियारे में गए, जो पिकाडेली एस्केलेटर के मशीन-रूम की ओर जाता था। वहाँ काफी अंधेरा था। उसी मशीन-रूम में एस्केलेटर में आग लगने की स्थिति में पानी की बौछार शुरू करनेवाले कंट्रोलर लगे थे। सालों पहले जब एक अन्य स्टेशन पर आग लगी थी, उसके बाद ऐसी कई रिपोर्ट्स आईं, जिनमें स्टेशनों में अचानक आग लगने के खतरे गिनाए गए थे। इसके बाद सुरक्षा के मद्देनज़र ये कंट्रोलर किंग्स क्रॉस स्टेशन में भी लगा दिए गए थे। करीब दो दर्जन से भी अधिक अध्ययनों से यह बात पहले ही स्पष्ट हो चुकी थी कि लंदन अंडरग्राउंड अचानक आग लगने की स्थिति से निपटने के लिए तैयार नहीं है। इन अध्ययनों से यह भी पता चला कि स्टाफ को हर प्लेटफॉर्म पर लगे आग बुझानेवाले उपकरणों को चलाने का प्रशिक्षण देने की भी ज़रूरत है। करीब दो साल पहले लंदन अग्निशमन विभाग के डिप्टी सहायक-प्रमुख ने रेल्वे के संचालन-निर्देशक को एक पत्र लिखा था। इस पत्र में उन्होंने सबवे कर्मचारियों की सुरक्षा-आदतों को लेकर चेतावनी दी थी।

अपने इस पत्र में उन्होंने लिखा था, 'मैं इस समस्या को लेकर काफी चिंतित हूँ। कर्मचारियों को इस बात के स्पष्ट निर्देश दिए जाने चाहिए कि अगर स्टेशन के किसी हिस्से में आग लगने का संदेह भी हो, तो फौरन अग्निशमन विभाग को खबर करना ज़रूरी है। आग लगने जैसी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में मासूम यात्रियों की जान बचाने का यही एक तरीका है।'

सुरक्षा-अधिकारी हायेज ने वह पत्र कभी नहीं देखा था क्योंकि वे सुरक्षा विभाग के अलग मंडल के कर्मचारी थे। लंदन अंडरग्राउंड ने भी कभी डिप्टी सहायक-प्रमुख की चेतावनी को ध्यान में रखकर अपनी नीतियों को पुन:परिभाषित नहीं किया था। किंग्स क्रॉस स्टेशन पर काम करनेवाले किसी भी कर्मचारी को यह नहीं पता था कि आग पर काबू पाने के लिए पानी की बौछार शुरू करनेवाले कंट्रोलर का इस्तेमाल कैसे किया जाता है। न ही कोई कर्मचारी अग्नि-शामक यंत्रों का इस्तेमाल करने के लिए अधिकारिक तौर पर अधिकृत था क्योंकि ये यंत्र और कंट्रोलर्स किसी अन्य विभाग के अंतर्गत आते थे। हायेज पूरी तरह यह भूल चुके थे कि स्टेशन में आग बुझाने के लिए पानी की बौछार करने का सिस्टम और अग्नि-शामक यंत्र लगे हुए हैं। लंदन अंडरग्राउंड के कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए जो अलिखित समझौते किए गए थे, उनसे हर कर्मचारी में अपने दायरे में सीमित रहकर काम करने की आदत विकसित हो गई थी। जिसके चलते अपने दायरे से बाहर जाकर कुछ नया सीखने की उनकी सारी संभावनाएँ भी धूमिल हो गई थीं। हायेज पानी की बौछार करनेवाले कंट्रोलर पर बिना

नज़र डाले, उसके पास से गुज़र गए। उन्हें याद ही नहीं था कि यह कंट्रोलर यहाँ लगा हुआ है।

जब वे मशीन-रूम में पहुँचे, तो आगे की तपिश से काफी दूर थे। अब आग इस हद तक फैल गई थी कि उस पर काबू पाना नामुमकिन हो चुका था। वे वापस मुख्य हॉल की ओर दौड़े। टिकट मशीन पर यात्रियों की लाइन लगी हुई थी और सैकड़ों यात्री उस विशाल हॉल में इधर से उधर आ-जा रहे थे। किसी को प्लेटफॉर्म पहुँचना था, तो कोई अपनी यात्रा पूरी करके स्टेशन से बाहर निकल रहा था। तभी हायेस की नज़र एक पुलिसवाले पर पड़ी।

'हमें फौरन सभी ट्रेनों को रोककर सारे यात्रियों को स्टेशन से बाहर करना होगा, आग बेकाबू हो रही है,' हायेस ने उस पुलिसवाले से कहा।

जलते हुए रूमाल के बारे में पता चलने के करीब आधे घंटे बाद शाम को 7:42 पर किंग्स क्रॉस स्टेशन पर पहला अग्निशमन कर्मचारी पहुँचा। जैसे ही वह स्टेशन के टिकटिंग हॉल में पहुँचा, उसने स्टेशन की छत पर नज़र आ रहे गहरे काले धुँए को देखा। आग एस्केलेटर में लगे रबर के हैंडलों तक पहुँच चुकी थी। जैसे-जैसे रबर जलने की असहनीय बदबू फैलनी शुरू हुई, टिकटिंग हॉल में मौजूद यात्रियों को एहसास हो गया कि कोई बड़ी गड़बड़ हो गई है। जैसे ही अग्निशमन विभाग के कर्मचारी भीड़ को चीरते हुए स्टेशन के अंदर घुसे, तब सारे यात्री स्टेशन से बाहर निकलने के लिए दरवाजों की ओर जाने लगे।

नीचे आग तेजी से फैलती जा रही थी। अब पूरा एस्केलेटर आग की चपेट में आ चुका था। इस आग से गर्म गैस निकल रही थी, जो एस्केलेटर के दूसरे सिरे पर जाकर सुरंग की उस छत पर रुक रही थी, जिस पर पिछले कई सालों में पेंट की करीब बीस पर्तें पोती जा चुकी थीं। कुछ साल पहले लंदन अंडरग्राउंड के संचालन निर्देशक ने सुझाव दिया कि आग लगने की स्थिति में यह पेंट खतरनाक साबित हो सकता है। उनका सुझाव था कि इससे बचने के लिए पेंट की नई पर्त पोतने से पहले पुरानी पर्त को निकालकर साफ कर देना चाहिए।

हालाँकि स्टेशन पर कैसा पेंट होना चाहिए, यह उनके कार्यक्षेत्र में नहीं आता था। यह काम तो रख-रखाव विभाग का था, जिसके प्रमुख ने उनके सुझाव के लिए उन्हें धन्यवाद दिया और साथ ही यह भी जता दिया कि अगर वे दूसरे विभागों के काम में हस्तक्षेप करेंगे, तो उनके विभाग के काम में भी हस्तक्षेप किया जाएगा।

इसके तुरंत बाद संचालन-निर्देशक ने अपना सुझाव वापस ले लिया।

जैसे ही गर्म गैसें एस्केलेटर के एक सिरे की छत के आसपास जमा हुईं, तो छत पर लगी पेंट की सालों पुरानी पर्तें वह गर्मी अवशोषित करने लगीं। जब भी कोई नई ट्रेन स्टेशन पर आकर रुकती, ऑक्सीजन का एक नया झोंका उसके साथ अंदर आकर आग को

और हवा दे देता।

शाम 7:43 बजे एक ट्रेन स्टेशन पर आकर रुकी और उसमें से सेल्समैन मार्क सिल्वर उतरे। वे तुरंत समझ गए कि यहाँ कुछ न कुछ गड़बड़ ज़रूर है। स्टेशन के अंदर की हवा में भारीपन था और प्लेटफॉर्म यात्रियों की भीड़ से खचाखच भरा हुआ था। वे जहाँ खड़े थे, आग का धुँआ वहाँ तक आ चुका था और धीरे-धीरे ट्रेन के चारों ओर फैलने लगा था। वे वापस ट्रेन के अंदर जाने के लिए मुड़े, पर तब तक उसके दरवाजे बंद हो चुके थे। उन्होंने हड़बड़ाहट में आकर ट्रेन की खिड़कियों पर मुक्के बरसाना शुरू कर दिया कि शायद इससे किसी तरह दरवाजा खुल जाए, पर रेलवे की नीति के अनुसार एक बार दरवाजा बंद होने के बाद दोबारा तभी खुलता है, जब ट्रेन अगले स्टेशन पर पहुँच जाती है। प्लेटफॉर्म पर मार्क सिल्वर सहित ऐसे बहुत से यात्री थे, जो वापस ट्रेन में जाना चाहते थे। वे ड्राइवर को चीखते हुए दोबारा दरवाजे खोलने को कह रहे थे। तभी ट्रेन का सिग्नल हरा हुआ और कुछ ही पलों में ट्रेन वहाँ से रवाना हो गई। यह देखकर एक महिला यात्री इतने आवेश में आ गई कि ट्रेन के पीछे पटरियों पर कूद पड़ी और दौड़ती हुई ट्रेन का पीछा करने लगी। वह ट्रेन की ओर देखकर चीख रही थी, 'मुझे यहाँ मत छोड़ो। मुझे ले चलो।'

कोई और चारा न देख मार्क सिल्वर प्लेटफॉर्म से निकले और उस पुलिसवाले की ओर चल पड़े, जो लोगों को पिकाडेली लाइनवाले एस्केलेटर के बजाय दूसरी ओर जाने का रास्ता दिखा रहा था। वहाँ घबराए हुए यात्रियों की भीड़ लगी हुई थी, जो बस किसी भी तरह ऊपर चढ़कर स्टेशन से बाहर निकल जाना चाहती थी। उन सबको धुएँ की बदबू आ रही थी। स्टेशन के एक हिस्से में आग लगने और भीड़ ज़्यादा होने के कारण वहाँ का तापमान भी काफी बढ़ गया था। आखिरकार मार्क सिल्वर एक अन्य एस्केलेटर के नीचे पहुँच गए, जिसे पहले ही बंद कर दिया गया था। जैसे ही वे टिकटिंग हॉल की ओर गए, उन्हें अपने पैरों पर इतनी गर्मी महसूस हुई कि लगा जैसे उनके पैर जल गए हों। उन्होंने गौर किया कि यह गर्मी दरअसल उस पंद्रह फीट की दीवार की थी, जिसके पीछे पिकाडेली लाइन का एस्केलेटर जल रहा था। उन्होंने बाद में बताया, 'मैंने ऊपर की ओर नज़र डाली और पाया कि दीवार व छत बुरी तरह तप रहे थे।'

शाम 7:45 बजे जैसे ही एक ट्रेन स्टेशन पर रुकी, उसके साथ आए ऑक्सीजन के झोंके ने एस्केलेटर की आग को और भड़का दिया। एस्केलेटर के ऊपर की छत के पास जमी गर्म गैसें नीचे जलती आग और छत के तपते हुए पेंट के कारण और गर्म होकर दहन-तापमान तक पहुँच गईं, जिसे विज्ञान की भाषा में 'फ्लैशओवर पॉईंट' कहा जाता है। इसके बाद एस्केलेटर का हर वह हिस्सा, जो किसी ज्वलनशील चीज़ से निर्मित था, जैसे लकड़ी से बनी सीढ़ियाँ और उस पर लगा पेंट वगैरह, वह सब अचानक इतनी तेजी से जला कि वहाँ विस्फोट हो गया। यह विस्फोट बारूद से होनेवाले एक मध्यम तीव्रतावाले विस्फोट के बराबर था। विस्फोट के कारण आग ऊपर की ओर बढ़ने लगी, जिससे वहाँ का तापमान बहुत बढ़ गया। आग बढ़ते-बढ़ते सुरंग से होते हुए टिकटिंग हॉल तक पहुँच चुकी थी। जिससे वहाँ की सारी चीज़ें, जैसे धातु के पल्ले और जमीन पर

जड़ी टाइल्स धू-धूकर जलने लगे। मात्र आधे सेकेंड में ही हॉल का तापमान भयंकर रूप से बढ़कर 150 डिग्री तक पहुँच गया। उस समय बगल के एक एस्केलेटर पर सवार एक पुलिसवाले ने बाद में बताया, 'आग की लपटें बहुत तेजी से आगे बढ़ीं और पलभर में हर चीज़ को अपनी चपेट में ले लिया। उस समय हॉल में करीब पचास यात्री मौजूद थे।'

इसके ठीक ऊपर स्टेशन के बाहर स्थित सड़क से गुज़र रहे एक व्यक्ति ने देखा कि सबवे के मुख्य दरवाजे से आग की लपटें निकल रही हैं। उसने गौर किया कि एक व्यक्ति वहाँ से किसी तरह निकलने की कोशिश कर रहा है। वह उस व्यक्ति की मदद करने दौड़ पड़ा। 'मैंने उसे वहाँ से निकालने के लिए जैसे ही उसके दाएँ बाजू को पकड़ा, मुझे ऐसा लगा, जैसे मेरा हाथ उसे छूने भर से जल गया हो। मुझे महसूस हुआ कि उसके बाजू की चमड़ी का एक हिस्सा भारी गर्मी के कारण मेरे हाथ में चिपक गया है।' एक पुलिसवाला, जो विस्फोट के ठीक पहले टिकटिंग हॉल में घुसा था, उसने बाद में अस्पताल में अपना इलाज कराते हुए बताया, 'मैंने देखा कि मैं अचानक आग की लपटों की चपेट में आ गया हूँ। मैं वहीं गिर पड़ा। मेरे हाथों ने आग पकड़ ली और मुझे ऐसा लगा कि शायद मेरा आखिरी समय आ गया है।'

वह उन चुनिंदा लोगों में से था, जो ऐन मौके पर उस हॉल से जिंदा बाहर निकलने में कामयाब हो गए।

विस्फोट के कुछ ही पलों बाद अग्निशमन के दर्जनों ट्रक वहाँ पहुँच गए पर अग्निशमन विभाग के नियमों के अनुसार ऐसी स्थिति में भी अग्निशमन कर्मचारी केवल अपने पाइप्स को सड़क किनारे लगे अपने विभाग के नलकों से ही जोड़ सकते थे। जबकि स्टेशन के अंदर कई भूमिगत नलके लगे हुए थे और उनसे पानी लेकर आग बुझाना आसान होता। हालाँकि इसके लिए स्टेशन के अंदर के नक्शे की ज़रूरत थी, पर किसी भी सबवे कर्मचारी के पास उस समय वहाँ का नक्शा उपलब्ध नहीं था। दरअसल वह नक्शा स्टेशन ऑफिस में रखा हुआ था और फिलहाल किसी भी टिकटिंग एजेंट या मैनेजर के पास उस ऑफिस की चाभी नहीं थी। इन सब समस्याओं के कारण काफी देर हो गई और अग्निशमन कर्मचारियों को आग बुझाने में घंटों लग गए।

आखिरकार उस जलते हुए रूमाल के नज़र आने के करीब छह घंटे बाद देर रात 1:46 बजे आग पर काबू पा लिया गया। तब तक 31 लोगों की जान जा चुकी थी और दर्जनों घायल हो चुके थे। इस घटना में घायल एक बीस वर्षीय म्यूजिक टीचर ने अस्पताल के बिस्तर पर पड़े हुए गुस्से से पूछा, 'आखिर उन लोगों ने मुझे आग की ओर क्यों धकेल दिया? मुझे वहाँ आग की लपटें साफ नज़र आ रही थीं, लोग मदद के लिए चीख रहे थे, लेकिन वहाँ कोई नहीं था, जो हालात पर काबू पा सके। आखिर ऐसी भयंकर स्थिति से निपटने की जिम्मेदारी किसकी है?' इन सवालों का जवाब देने के लिए लंदन अंडरग्राउंड द्वारा कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए किए गए उन समझौतों पर गौर करना होगा, जिनकी मदद से इस संस्था को संचालित किया जाता था।

टिकटिंग क्लर्कस् को खासतौर पर यह चेतावनी दी गई थी कि उनका काम सिर्फ टिकट बेचना है। इसीलिए जब उन्हें स्टेशन पर जलता हुआ रूमाल नज़र आया, तो उन्होंने इस डर से किसी को चेतावनी नहीं दी कि कहीं इसे अपनी सीमा से बाहर जाकर दूसरे विभागों के काम में दखल देने के रूप में न देखा जाए। स्टेशन के कर्मचारियों को कभी भी इसके लिए प्रशिक्षित नहीं किया गया था कि आग लगने जैसी स्थिति में पानी की बौछार करनेवाले कंट्रोलर या अग्निशामक यंत्रों का उपयोग कैसे किया जाए। ऐसा इसीलिए था क्योंकि इन उपकरणों से संबंधित सारे कार्यों की जिम्मेदारी कई अलग-अलग विभागों पर थी।

स्टेशन के सुरक्षा-अधिकारी को लंदन फायर ब्रिगेड द्वारा भेजा गया वह पत्र कभी देखने को भी नहीं मिला, जिसमें चेतावनी दी गई थी कि स्टेशन में आग लगने जैसी घटना कभी भी हो सकती है। ऐसा इसीलिए हुआ क्योंकि यह पत्र संचालन-निर्देशक को भेजा गया था और लंदन सबवे का कोई भी विभाग इस तरह की सूचनाएँ दूसरे विभाग के साथ साझा नहीं करता था।

स्टेशन के कर्मचारियों को पहले से ही ये निर्देश थे कि अग्निशमन विभाग से सिर्फ उसी स्थिति में संपर्क किया जाना चाहिए, जब कोई और विकल्प न बचा हो ताकि बेवजह यात्रियों के बीच अफरा-तफरी जैसी स्थिति न बने। अग्निशमन विभाग के कर्मचारियों ने भी टिकटिंग हॉल के उन पाइप्स का इस्तेमाल नहीं किया, जिनसे पानी आसानी से छिड़का जा सकता था। बल्कि वे अपने विभाग के उन नलकों पर ही निर्भर रहे, जो सड़क किनारे लगे होते हैं। अग्निशमन कर्मचारियों ने ऐसा इसीलिए किया क्योंकि उन्हें पहले से ही ये निर्देश थे कि उन्हें दूसरी किसी भी संस्था द्वारा लगाए गए उपकरणों का इस्तेमाल नहीं करना है।

इन सारे अनौपचारिक नियमों ने संबंधित लोगों की मन:स्थिति ऐसी बना दी थी, जो आपातकालीन स्थिति में घातक साबित हुई। उदाहरण के लिए टिकटिंग क्लर्कों की आदत थी कि उन्हें बाकी हर चीज़ से ध्यान हटाकर - भले ही आग लगने जैसी आपातकालीन स्थिति बन रही हो - सिर्फ टिकट बेचने में अपना ध्यान केंद्रित करना है। यह आदत इसीलिए थी क्योंकि सालों पहले लंदन अंडरग्राउंड टिकट बेचनेवाले कर्मचारियों की कमी से जूझ रहा था। उस समय जो कर्मचारी टिकट बेचते थे, वे अक्सर स्टेशन पर कचरा उठाने या यात्रियों को सही ट्रेन की जानकारी देने में व्यस्त हो जाते थे। जिसके चलते स्टेशन पर टिकट खरीदने के लिए यात्रियों की लंबी-लंबी लाइनें लग जाती थीं। इसीलिए इन कर्मचारियों को ये निर्देश दिए गए थे कि बाकी किसी भी काम की फिक्र करने के बजाय उन्हें सिर्फ टिकट बेचने हैं। इससे फायदा भी हुआ। टिकट लेनेवाले यात्रियों की लंबी लाइनें लगनी बंद हो गईं। इसीलिए अब अगर किसी टिकटिंग क्लर्क को अपने टिकट बूथ के बाहर कहीं कुछ ऐसा नज़र आता, जिससे निपटना उनकी जिम्मेदारी न हो, तो वे उस पर ध्यान ही नहीं देते थे।

और अग्निशमन विभाग की सिर्फ अपने ही उपकरणों को इस्तेमाल करने के प्रति जोर

देने की आदत? उसके पीछे भी एक कारण था। दरअसल करीब एक दशक पहले किसी और स्टेशन पर आग लगी थी, तब अग्निशमन कर्मचारियों ने अपने पाइप्स को किसी और के नलकों से जोड़ने में बहुत सा कीमती समय बरबाद कर दिया था। ऐसा इसीलिए हुआ क्योंकि उन कर्मचारियों ने उस किस्म के नलके पहले कभी नहीं देखे थे और उनमें पाइप फिट करने का तरीका भी अलग था। इसके बाद अग्निशमन विभाग के कर्मचारियों ने मिलकर यह तय किया कि वे आग बुझाने के लिए उन्हीं चीज़ों और उपकरणों पर निर्भर रहेंगे, जिनसे वे अच्छी तरह परिचित हों।

इनमें से कोई भी रुटीन (तयशुदा आदतें) विवेकपूर्ण ढंग से नहीं बना था। उन सबके पीछे कोई न कोई ठोस कारण था। लंदन अंडरग्राउंड का कार्यक्षेत्र इतना विशाल और जटिल था कि इसे सिर्फ तभी अच्छी तरह संचालित किया जा सकता था, जब कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखनेवाले समझौते ऐसे हों, जो किसी भी संभावित बाधा को रोक सकें। रॉड आइलैंड अस्पताल के विपरीत लंदन अंडरग्राउंड के सारे समझौते शक्ति-संतुलन पर आधारित थे। इन समझौतों से किसी भी विभाग को किसी दूसरे विभाग से ज़्यादा शक्तियाँ या अधिकार नहीं मिल रहे थे।

इसके बावजूद स्टेशन पर हुए इस हादसे में 31 लोगों की जान चली गई।

लंदन अंडरग्राउंड के सारे रुटीन (तयशुदा आदतें) और कार्यक्षेत्र में शांति कायम करने के लिए हुए सारे समझौते तब तक बिलकुल तार्किक लग रहे थे, जब तक यह हादसा नहीं हुआ था। पर इस हादसे से एक भयानक सच्चाई सामने आई थी कि यात्रियों की सुरक्षा की जिम्मेदारी दरअसल 'किसी भी एक व्यक्ति, विभाग या सबवे के सबसे शक्तिशाली लोगों के किसी भी समूह पर थी ही नहीं।'

कभी-कभी कोई एक प्राथमिकता - एक विभाग या एक व्यक्ति या एक उद्देश्य - बाकी सभी चीज़ों से ज़्यादा महत्वपूर्ण होनी ज़रूरी है, भले ही यह विकल्प सभी को पसंद न आए या इससे शक्ति का वह संतुलन बिगड़ जाए, जिसके चलते सारी ट्रेनें समय पर चलती हैं। कभी-कभी कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखनेवाले समझौते ही ऐसे खतरे पैदा कर देते हैं, जो किसी भी तरह की शांति को भंग कर सकते हैं।

इस अवलोकन में निश्चित ही विरोधाभास है। आखिर कोई भी संस्था ऐसी आदतें कैसे विकसित करे, जिनसे हर किसी को बराबर अधिकार भी मिल जाएँ और एक ऐसा इंसान या उद्देश्य भी चुन लिया जाए, जो बाकी सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण हो? आखिर ऐसा कैसे संभव है कि नर्सों और डॉक्टरों को बराबर अधिकार भी मिल जाएँ और साथ ही हर किसी के सामने यह भी स्पष्ट हो जाए कि असल में प्रभार (Incharge) किसके पास है? एक सबवे सिस्टम यह कैसे सुनिश्चित करे कि उसके कर्मचारियों के बीच प्रभुत्व को लेकर संघर्ष भी न हो और साथ ही सबके सामने यह बात भी स्पष्ट हो कि सुरक्षा सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण है, भले ही इसके लिए यह पुनः परिभाषित करना पड़े कि सबसे ज़्यादा अधिकार किसके पास है।

इन सभी सवालों का जवाब है, संकटपूर्ण स्थिति से बने अवसरों को पहचानना और उनका लाभ उठाना। बार-बार हार का सामना करने के कारण अपना मनोबल गँवा चुकी बुकॉनीर्स नामक फुटबॉल टीम का कोच बनकर टोनी डंगी ने ठीक यही किया था। पॉल ओ'नेल ने भी नाकामी की हद तक पहुँच चुकी एल्कोआ कंपनी का सीईओ बनकर ऐसा ही किया था। 2007 में जब हार्वर्ड शुल्ज ने स्टारबक्स कंपनी को बचाने के लिए दोबारा शीर्ष पद ग्रहण किया, तब उन्होंने भी अवसर को पहचानकर उसका लाभ उठाया था। इन सभी लीडरों ने संकटपूर्ण स्थिति से बने अवसरों को हाथ से जाने नहीं दिया बल्कि उनका भरपूर लाभ उठाया। उथल-पुथल के दौर में संगठनात्मक आदतें इतनी लचीली हो जाती हैं कि उनकी मदद से नए सिरे से जिम्मेदारी सौंपना और शक्ति का बेहतर संतुलन बनाना संभव हो जाता है। संकटपूर्ण स्थितियाँ इतनी महत्वपूर्ण होती हैं कि कभी-कभी विनाश के डर पर काबू पाने के बजाय उसे उकसाना ज़्यादा फायदेमंद होता है।

4

रॉड आइलैंड अस्पताल में सिर की सर्जरी में गलती होने के बाद उस 86 वर्षीय मरीज की मौत हो गई थी। उसकी मौत के चार महीने बाद अस्पताल के एक और सर्जन ने ठीक वैसी ही गलती फिर से कर दी। उसने भी एक मरीज के सिर के उल्टी ओर सर्जरी कर दी। इसके बाद स्टेट हेल्थ डिपार्टमेंट ने अस्पताल को न सिर्फ कड़ी फटकार लगाई बल्कि 50 हज़ार डॉलर का जुर्माना भी लगाया। इस घटना के डेढ़ साल बाद एक सर्जन ने एक बच्चे के मुँह की सर्जरी में गलती कर दी। उसने बच्चे के मुँह के उस हिस्से की सर्जरी कर डाली, जिस हिस्से में रोग था ही नहीं। इसके पाँच महीने बाद एक मरीज की गलत उँगली का ऑपरेशन कर दिया गया। इसके दस महीने बाद एक बार फिर एक मरीज के सिर की सर्जरी में गड़बड़ी हुई। दरअसल सर्जन ने सर्जरी के दौरान सिर में ड्रिल करनेवाली मशीन का एक महीन टुकड़ा मरीज के सिर के अंदर ही छोड़ दिया और सर्जरी पूरी करके उसका सिर सिल दिया। इन गलतियों के लिए अस्पताल पर 4 लाख 50 हजार डॉलर का भारी जुर्माना लगाया गया।

निश्चित ही रॉड आइलैंड अस्पताल कोई अकेला ऐसा चिकित्सा संस्थान नहीं है, जहाँ इस तरह की घटनाएँ हुई हों। पर दुर्भाग्यवश यह अस्पताल इन गलतियों के लिए प्रसिद्ध हो गया। स्थानीय अखबारों में अस्पताल की हर गलती के बारे में विस्तृत खबरें प्रकाशित हुईं। टी.वी. पत्रकारों ने भी अपने कैमरों के साथ अस्पताल के बाहर डेरा डाल लिया। राष्ट्रीय मीडिया भी इन घटनाओं को दिखाने में पीछे नहीं रहा। राष्ट्रीय अस्पताल मान्यता संगठन के उपाध्यक्ष ने एसोसिएट प्रेस के एक रिपोर्टर से इस मसले पर बातचीत करते हुए कहा कि 'यह इतनी गंभीर समस्या बन चुकी है कि खत्म होने का नाम ही नहीं ले रही है।' राज्य के चिकित्सा अधिकारियों ने रिपोर्टरों के सामने घोषित कर दिया कि रॉड आइलैंड अस्पताल एक अराजक संस्थान बन चुका है।

'वहाँ काम करना किसी युद्ध ग्रस्त स्थान पर रहने जैसा था,' एक नर्स ने अस्पताल में काम करने के अपने अनुभव के बारे में कहा। 'डॉक्टर जब अस्पताल पहुँचकर अपनी कार

से उतरते तो टी.वी. रिपोर्टरों की भीड़ उन्हें घेर लेती। यहाँ तक कि एक छोटे बच्चे ने भी अपनी सर्जरी के पहले मुझसे कहा कि मैं डॉक्टरों को आगाह कर दूँ। उसे डर था कि गलतियाँ करने के लिए कुख्यात इस अस्पताल के डॉक्टर कहीं गलती से उसका बाज़ू न काट दें। यह सब देखकर लगता था, मानो अब हमारे बस में कुछ नहीं रहा।'

मीडिया और आलोचकों द्वारा बुरी तरह घेरे जाने के बाद अस्पताल के स्टाफ और प्रबंधन में संकट का भाव पैदा हो गया। कुछ प्रबंधकों को यह चिंता सताने लगी कि कहीं सरकारी अधिकारी अस्पताल की मान्यता रद्द न कर दें। बाकी प्रबंधक बचाव की मुद्रा में आ गए और मीडिया पर यह आरोप लगाने लगे कि सिर्फ उन्हीं के अस्पताल को निशाना बनाया जा रहा है। एक डॉक्टर ने बताया, 'मैं इतना परेशान था कि मैंने एक ऐसी जर्सी खरीद ली, जिसमें बलि का बकरा लिखा हुआ था। मैं उसे पहनकर अस्पताल जाने की सोच रहा था। पर मेरी पत्नी ने समझाया कि ऐसा करना ठीक नहीं होगा।'

उस 86 वर्षीय मरीज की सर्जरी में गलती होने के कुछ सप्ताह पहले ही प्रबंधक डॉ. मैरी रीच कूपर को अस्पताल की मुख्य गुणवत्ता अधिकारी बनाया गया था। डॉ. कूपर ने अस्पताल प्रबंधन और स्टाफ के सदस्यों के साथ बैठकें कीं और कहा कि वे सब इस संकट को गलत नज़रिए से देख रहे हैं।

उनका कहना था कि हमारी जो आलोचना हो रही है, वह कोई बुरी चीज़ नहीं है। बल्कि इससे तो रॉड आइलैंड अस्पताल को एक ऐसा अवसर मिला है, जो बहुत कम संगठनों को मिलता है।

'मैंने इसे एक अवसर की तरह देखा,' डॉ. कूपर ने मुझे बताया। 'ऐसे अस्पतालों की कमी नहीं है, जिन्होंने अपनी समस्याओं से निपटने की बहुत कोशिश की, पर हमेशा असफल रहे। कभी-कभी हमें सुधार करने के लिए एक बड़े झटके की ज़रूरत होती है। चारों ओर हमारा जो नकारात्मक प्रचार हो रहा था, वह हमारे लिए बहुत बड़ा झटका ही था। इससे हमें हर चीज़ को फिर से परखने का मौका मिला।'

फिर रॉड आइलैंड अस्पताल ने अपनी सभी वैकल्पिक सर्जरी इकाइयों को एक दिन के लिए बंद कर दिया। यह अस्पताल के लिए आर्थिक रूप से काफी नुकसानदायक था, पर ऐसा इसलिए किया गया ताकि पूरे स्टाफ को विशेष प्रशिक्षण दिया जा सके। इस प्रशिक्षण में टीमवर्क पर काफी ज़ोर दिया गया और साथ ही इस बात को भी रेखांकित किया गया कि नर्सों व मेडिकल स्टाफ का सशक्तिकरण कितना ज़रूरी है। इसके बाद न्यूरोलॉजी विभाग के अध्यक्ष ने इस्तीफ दे दिया और उनकी जगह एक अन्य विशेषज्ञ को नियुक्त कर दिया गया। अस्पताल ने अपने सर्जिकल सेफगार्ड्स (शल्य-चिकित्सा संरक्षण व्यवस्था) को फिर से डिज़ाइन करने के लिए देश के उच्चतम चिकित्सा संस्थानों के प्रतिनिधि संघ 'सेंटर फॉर ट्रांसफॉर्मिंग हेल्थ केयर' से मदद माँगी। अस्पताल प्रबंधन ने सभी ऑपरेशन रूम में वीडियो कैमरे भी लगा दिए ताकि टाइम-आउट (सर्जरी से पहले मरीज से जुड़ी हर जानकारी को आखिरी बार सुनिश्चित करना) और

चेकलिस्ट की प्रक्रिया (सर्जरी से जुड़ी हर छोटी-बड़ी प्रक्रिया के चार्ट पर गौर करना) सुनिश्चित हो सके। इसके अलावा कर्मचारी अपनी पहचान उजागर किए बिना मरीज के स्वास्थ्य पर बुरा असर डालनेवाली किसी भी समस्या की शिकायत कर सके, इसके लिए अस्पताल में एक कंप्यूटर आधारित व्यवस्था भी शुरू कर दी गई।

अस्पताल प्रबंधन के सामने पहले भी ऐसे बदलाव करने का प्रस्ताव रखा गया था, पर उन्हें गंभीरता से नहीं लिया गया। डॉक्टर और नर्स स्टाफ ये नहीं चाहते थे कि उनकी सर्जरी को कैमरों में रिकॉर्ड किया जाए। वे नहीं चाहते थे कि दूसरे अस्पताल उन्हें यह समझाएँ कि उन्हें अपना काम किस तरह करना चाहिए। पर जैसे ही रॉड आइलैंड अस्पताल पर संकट के बादल गहराने लगे, तो सभी कर्मचारियों ने नए बदलावों के प्रति खुला रवैया अपना लिया।

रॉड आइलैंड अस्पताल पर आए संकट को देखते हुए अन्य अस्पतालों में भी समान बदलाव आया। इससे अस्पतालों में होनेवाली उन गलतियों की संख्या अचानक बहुत कम हो गई, जिनसे बचना कुछ साल पहले तक असंभव लगता था। रॉड आइलैंड अस्पताल की तरह ही इन संस्थानों को भी एहसास हो गया कि आमतौर पर सुधार तभी संभव हो पाता है, जब कोई बड़ा संकट सामने हो। उदाहरण के लिए 90 के दशक के उत्तरार्ध में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के शिक्षण अस्पताल 'बेथ इजराइल डेकोनेस मेडिकल सेंटर' में भी कई गलतियाँ हुईं, जिससे संगठन के आंतरिक झगड़े बढ़ गए। अखबारों ने इन घटनाओं को बड़े विस्तार से छापा। इसके साथ ही अस्पताल की सार्वजनिक बैठकों में नर्सों और अस्पताल प्रबंधन के बीच कई बार तीखी बहस हुई और एक-दूसरे के ऊपर लांछन लगाए गए। उस समय राज्य के सरकारी अधिकारी विचार करने लगे कि अस्पताल के कुछ विभागों को तब तक के लिए बंद कर दिया जाए, जब तक यह सुनिश्चित नहीं हो जाता कि दोबारा गलतियाँ नहीं होंगी। चूँकि अस्पताल पर चारों ओर से हमला हो रहा था इसलिए गलतियों की संभावना बढ़ानेवाली अपनी संस्कृति को बदलने के लिए अस्पताल हर किस्म के समाधान अपनाने लगा। इन्हीं में से एक समाधान था, 'सेफ्टी राउंड,' जिसके तहत हर तीन महीने में कोई वरिष्ठ डॉक्टर अपने सैकड़ों सहकर्मियों के सामने किसी एक सर्जरी या इलाज और उसके दौरान होनेवाली गलतियों पर बेहद विस्तार से चर्चा करेगा।

हालिया समय तक 'बेथ इजराइल डेकोनेस मेडिकल सेंटर' के एसोसिएट सर्जन इन चीफ रहे डॉ. डोनाल्स मूरमैन कहते हैं, 'सार्वजनिक तौर पर अपनी गलती मानना बहुत कष्टदाई अनुभव होता है। बीस साल पहले तो डॉक्टरों द्वारा सबके सामने अपनी गलती मानने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। पर अब हर अस्पताल में घबराहट का माहौल है और इसीलिए बड़े से बड़ा सर्जन भी इस बारे में चर्चा करने को तैयार है कि उससे कब-कब कोई बड़ी गलती होते-होते रह गई। चिकित्सा क्षेत्र की संस्कृति बदल रही है।'

***

अच्छे लीडर संकटपूर्ण स्थितियों को संगठनात्मक आदतों को बदलने के अवसर की तरह इस्तेमाल करते हैं। उदाहरण के लिए अमेरिका की अंतरिक्ष एजेंसी नासा के प्रबंधकों ने सालों तक अपने संस्थान की सुरक्षा संबंधी आदतों में सुधार करने की कोशिश की, पर उनकी सारी कोशिशें तब तक काम नहीं आईं, जब तक सन 1986 में 'चैलेंजर' नामक अंतरिक्ष यान में विस्फोट नहीं हो गया। इस त्रासदी को मद्देनज़र रखते हुए नासा ने अपने गुणवत्ता मानकों को लागू करने के तरीके में कई सुधार किए। यात्री विमानों के मामले में भी पायलट सालों तक विमान-निर्माताओं को इस बात के लिए मनाते रहे कि विमानों के कॉकपिट और एयर ट्रैफिक कंट्रोलरों के संवाद करने के तरीकों में सुधार किया जाए, पर ऐसा नहीं हुआ। फिर जब सन 1977 में स्पेन के टेनेरिफ आइलैंड में रनवे में हुई एक गलती से 583 लोग मारे गए तो अगले पाँच सालों के अंदर ही विमानों के कॉकपिट के डिज़ाइन, रनवे प्रक्रियाओं और एयर ट्रैफिक कंट्रोलर द्वारा संवाद के रुटीन (तयशुदा आदतें) में बहुत से सुधार किए गए।

दरअसल कोई भी संकटपूर्ण स्थिति में इतना महत्वपूर्ण अवसर होता है कि एक बुद्धिमान लीडर ऐसे में अक्सर जानबूझकर आपातकाल की भावना को बढ़ा देता है। लंदन के किंग्स क्रॉस स्टेशन में आग लगने के बाद ठीक ऐसा ही हुआ। आगजनी की इस घटना के पाँच दिन बाद ही ब्रिटिश सेक्रेटरी ऑफ स्टेट ने इसका अध्ययन करने के लिए एक विशेष जाँचकर्ता डेसमंड फेनेल को नियुक्त कर दिया। फेनेल ने अपनी जाँच की शुरुआत लंदन अंडरग्राउंड के शीर्ष नेतृत्व करनेवाले अधिकारी के इंटरव्यू से की। जल्द ही फेनेल को समझ में आ गया कि पिछले कई साल से हर किसी को यह अंदाजा था कि स्टेशन में आग से सुरक्षा के इंतजाम नाकाफी हैं, पर इसके बादजूद कोई सुधार नहीं किया गया। कुछ प्रबंधक नई हाइरैरकी (किसी प्रशासनिक निकाय में अलग-अलग पद पर बैठे लोगों का पदक्रम) का प्रस्ताव दे चुके थे, जिससे यह साफ हो सके कि आग से बचाव की जिम्मेदारी किन लोगों की है। अन्य प्रबंधक स्टेशन-मैनेजर के अधिकार बढ़ाने का सुझाव दे चुके थे ताकि अलग-अलग विभागों के बीच आई दूरी को कम किया जा सके। लेकिन इनमें से किसी भी सुधार को अब तक लागू नहीं किया गया था।

जब फेनेल ने अपनी ओर से बदलाव के सुझाव देने शुरू किए, तो उनके रास्ते में कई बाधाएँ आईं। जैसे विभागों के अध्यक्ष स्वयं जिम्मेदारी लेने से बच रहे थे या अपने कर्मचारियों को दबी जुबान में ये धमकी दे रहे थे कि फेनेल को सहयोग न करें। इन बाधाओं को देखते हुए फेनेल ने तय किया कि अब वे इस मामले को एक मीडिया सर्कस में बदल देंगे।

उन्होंने सार्वजनिक सुनवाई शुरू कर दी, जो 91 दिनों तक चली। इन सुनवाइयों से यह स्पष्ट हो गया कि लंदन अंडरग्राउंड को कई बार ऐसी दुर्घटना की चेतावनी दी गई थी, पर उसे गंभीरता से नहीं लिया गया। फेनेल ने अखबारों से बातचीत में बार-बार यह जताया कि सबवे ट्रेन का उपयोग करके हर यात्री अपनी जान जोखिम में डाल रहा था। उन्होंने दर्जनों गवाहों से बार-बार बातचीत की, जिससे सामने आया कि इस संस्था के लिए यात्रियों की सुरक्षा से ज़्यादा महत्वपूर्ण थे आंतरिक झगड़े। फेनेल ने इस दुर्घटना

के करीब एक साल बाद अपनी अंतिम रिपोर्ट दी। 250 पेज की इस रिपोर्ट में फेनेल ने लंदन अंडरग्राउंड को दोषी ठहराते हुए कहा था कि 'यह संगठन नौकरशाही अक्षमता से ग्रस्त है।' वे लिखते हैं, 'भले ही यह रिपोर्ट एक रात की दुर्घटना के बारे में हो, पर इसका दायरा जानबूझकर इतना विस्तृत रखा गया है ताकि पूरी व्यवस्था की सच्चाई सामने आ सके।' उन्होंने अपनी रिपोर्ट के हर पन्ने पर लंदन अंडरग्राउंड की आलोचना करते हुए स्पष्ट कहा कि 'यह संगठन बुरी तरह भ्रष्ट है और अपनी जिम्मेदारियाँ सुरक्षित ढंग से निभाने में सक्षम नहीं है।'

उनकी रिपोर्ट पर जबरदस्त प्रतिक्रिया आई। यात्रियों ने लंदन अंडरग्राउंड के अलग-अलग दफ्तरों के बाहर कई बार धरने दिए। संगठन के शीर्ष नेतृत्व करनेवाले अधिकारी को फौरन बरखास्त कर दिया गया। कई नए कानून पारित किए गए और इस तरह लंदन अंडरग्राउंड की संस्कृति में ढेरों सुधार किए गए। आज संगठन के हर स्टेशन में एक मैनेजर नियुक्त होता है, जिसकी मुख्य जिम्मेदारी है यात्रियों की सुरक्षा सुनिश्चित करना। इसके अलावा हर कर्मचारी की यह जिम्मेदारी है कि वह किसी खतरे का छोटे से छोटा संकेत मिलते ही अपने वरिष्ठों को फौरन खबर करे। आज भी लंदन अंडरग्राउंड की हर ट्रेन समय पर चलती है, लेकिन अब संगठन की आदतें और कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए हुए समझौते काफी बदल गए हैं ताकि यह तय हो सके कि आग से बचाव जैसी चीज़ों की जिम्मेदारी किसकी है। अब हर कर्मचारी के पास यह अधिकार है कि वह किसी भी आपातकालीन स्थिति में बचाव के लिए ज़रूरी कदम स्वयं उठा सकता है और उसे इस बात की फिक्र नहीं करनी पड़ती कि कहीं वह किसी और के कार्यक्षेत्र में दखल तो नहीं दे रहा।

ऐसे बदलाव हर उस कंपनी में संभव हो सकते हैं, जहाँ विचारहीनता या उपेक्षा के कारण संगठनात्मक आदतों से कार्यक्षेत्र में शांति कायम रखनेवाले गलत समझौते हुए हैं। अगर किसी कंपनी की आदतें सही नहीं हैं, तो सिर्फ उसके लीडर के आदेश देने से कोई बदलाव नहीं आ सकता। बुद्धिमान अधिकारी तो संकटपूर्ण क्षणों की प्रतीक्षा में रहते हैं या फिर जानबूझकर अपने कर्मचारियो को यह महसूस करवा देते हैं कि संकटपूर्ण स्थिति आ खड़ी हुई है। इस तरह वे कर्मचारियों के मन में तब तक के लिए बदलाव का विचार बिठा देते हैं, जब तक कि हर कोई अपने रोज़मर्रा के पैटर्न्स में सुधार लाने के लिए पूरी तरह तैयार नहीं हो जाता।

सन 2008 की वैश्विक आर्थिक मंदी के दौर में हुए मुख्य कार्यकारी अधिकारियों के एक सम्मेलन में रहम इमैन्युअल ने कहा था, 'आप कभी नहीं चाहेंगे कि कोई गंभीर संकट व्यर्थ चला जाए।' उन्हें कुछ ही दिनों पहले अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा के स्टाफ का प्रमुख बनाया गया था। इस सम्मेलन में उन्होंने अपनी बात को विस्तार से रखते हुए कहा था, 'आर्थिक मंदी के इस संकटपूर्ण दौर ने हमें ऐसे कदम उठाने का मौका दिया है, जो पहले शायद हम कभी नहीं उठाते।' इस सम्मेलन के कुछ ही दिनों बाद ओबामा प्रशासन ने कांग्रेस से 787 बिलियन डॉलर का स्टिमुलस प्लान (प्रोत्साहन योजना) पारित करवा लिया। जबकि पहले कांग्रेस इसके लिए तैयार नहीं थी। इसके

साथ ही कांग्रेस ने न सिर्फ ओबामा द्वारा प्रस्तावित हेल्थ केयर रिफॉर्म लॉ (स्वास्थ्य रक्षा सुधार कानून) पारित किया बल्कि कंज्यूमर प्रोटेक्शन लॉ (उपभोक्ता संरक्षण कानून) पर पुन: काम किया और कई अन्य योजनाओं को भी हरी झंडी दे दी, जैसे बच्चों के स्वास्थ्य बीमा का दायरा बढ़ाना और महिलाओं को आय में भेदभाव के मामलों में मुकदमा दायर करने के नए मौके देना। ग्रेट सोसायटी और न्यू डील के बाद से यह अमेरिका का सबसे बड़ा नीति-सुधार कार्यक्रम था। यह सिर्फ इसीलिए संभव हुआ क्योंकि कानून बनानेवालों ने आर्थिक मंदी जैसी वित्तीय आपदा को भी एक अवसर की तरह लिया।

रॉड आइलैंड अस्पताल में भी उस 86 वर्षीय मरीज की मौत व अन्य गलतियों के कारण कुछ ऐसा ही हुआ था। सन 2009 में अस्पताल में नई सुरक्षा-प्रक्रियाएँ लागू कर दी गईं। इसके बाद से अब तक वहाँ इलाज या सर्जरी के दौरान कोई गलती होने की खबर नहीं आई है। हाल ही में अस्पताल को बीकन पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया। यह क्रिटिकल केयर नर्सिंग के क्षेत्र का सबसे प्रतिष्ठित पुरस्कार है और इसे अमेरिकन कॉलेज ऑफ सर्जन्स द्वारा कैंसर के इलाज में उच्च गुणवत्ता के लिए दिया जाता है।

और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यहाँ काम करनेवाले डॉक्टर्स और नर्सों का कहना है कि अब रोड आइलैंड अस्पताल में सब कुछ बदल गया है।

सन 2010 में एलिसन वॉर्ड नामक एक युवा नर्स एक सर्जरी के दौरान सहायक के तौर पर अपनी सेवाएँ देने के लिए ऑपरेशन रूम में पहुँची। उसने करीब एक साल पहले ही ऑपरेशन रूम में काम करना शुरू किया था। सर्जरी शुरू होने से पहले पूरी सर्जरी टीम टाइम-आउट प्रक्रिया के लिए बेहोश लेटे मरीज के चारों ओर इकट्ठी हुई। सर्जन ने चेकलिस्ट पढ़कर उसे दीवार पर चिपका दिया। इस चेकलिस्ट में ऑपरेशन के एक-एक चरण के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई थी।

मरीज के शरीर पर पहला चीरा लगाने के लिए अपनी छुरी उठाने से पहले सर्जन ने पूछा, 'ओके, अब आखिरी बात! क्या किसी को कुछ कहना है, कोई चिंता या कोई सवाल?'

जबकि वह सर्जन अब तक सैकड़ों सर्जरी कर चुका था और उसका ऑफिस विभिन्न डिग्रियों और पुरस्कारों से भरा हुआ था।

सर्जन के पूछने पर 27 वर्षीय नर्स एलिसन ने कहा, 'मैं सभी को याद दिलाना चाहती हूँ कि हमें पहली और दूसरी प्रक्रिया के बाद थोड़ा विराम लेना होगा। चूँकि आपने इसका उल्लेख नहीं किया इसलिए मैं बस सुनिश्चित कर रही हूँ कि सबको यह बात याद रहे।'

एलिसन की यह टिप्पणी कुछ ऐसी थी कि अगर उसने कुछ साल पहले किसी सर्जन से ऐसा कुछ कहा होता तो उसे बुरी तरह झिड़क दिया जाता या शायद उसका कॅरियर खत्म हो जाता। पर अब ऐसा नहीं था।

‘याद दिलाने के लिए धन्यवाद,’ सर्जन ने कहा। ‘मैं अगली बार से इसका उल्लेख करना याद रखूँगा।’

‘चलो,’ सर्जन ने आगे कहा, ‘सर्जरी शुरू करते हैं।’

‘मैं जानती हूँ कि यह अस्पताल एक बुरे दौर से गुज़र चुका है,’ एलिसन वार्ड ने मुझे बताया, ‘पर अब यहाँ सब कुछ अच्छी तरह होता है। हर कोई एक-दूसरे का सहयोग करता है। हमारा प्रशिक्षण, हमारे आदर्श, अस्पताल की संस्कृति, सब कुछ टीमवर्क पर आधारित है। मुझे लगता है कि मैं यहाँ बिना किसी डर के किसी से कुछ भी कह सकती हूँ। काम करने के लिए यह सचमुच एक शानदार जगह है।’

***

1 इस घटना के बारे में इस पुस्तक में जो भी जानकारी दी गई है, वह रॉड आइलैंड में कार्यरत विभिन्न लोगों और घटना के साक्षी रहे या उसमें शामिल रहे लोगों के इंटरव्यू में दिए गए बयानों पर आधारित है। इनमें से कई लोगों ने इस घटना का विरोधाभासी ब्यौरा दिया है।

7

आप क्या चाहते हैं यह आपसे पहले टारगेट कॉरपोरेशन को कैसे पता चल जाता है

जब कंपनियाँ आदतों का पूर्वानुमान लगाती हैं

(और चालाकी से उनमें हेरफेर करती हैं)

1

एंड्रयू पोल ने हाल ही में टारगेट कॉरपोरेशन के डाटा विशेषज्ञ के तौर पर काम शुरू किया था। एक दिन मार्केटिंग विभाग के सहकर्मी उसके पास आए और उन्होंने एंड्रयू से कुछ सवाल पूछे। एंड्रयू शायद ऐसे ही सवालों का जवाब देने के लिए इस धरती पर आया था।

'क्या तुम्हारा कंप्यूटर यह पता लगा सकता है कि हमारी कौन सी ग्राहक गर्भवती है? भले ही वह चाहती हो कि हमें इस बारे में कुछ पता न चले।'

पोल एक स्टेटिस्टिशियन यानी सांख्यिकीविद् था। उसका पूरा जीवन ही डाटा का इस्तेमाल करके लोगों को समझने के इर्द-गिर्द घूमता था। वह उत्तरी डकोटा के एक छोटे से कस्बे में पला-बढ़ा था। जब उसके दोस्त 4-एच या रॉकेट मॉडल बनाने में व्यस्त होते थे, तो वह कंप्यूटरों के साथ खेल रहा होता था। कॉलेज के बाद उसने सांख्यिकी में और फिर अर्थशास्त्र में डिग्रियाँ हासिल कीं। अर्थशास्त्र की डिग्री लेने के बाद यूनिवर्सिटी ऑफ मिज़ूरी के उसके ज़्यादातर दोस्त या तो बीमा कंपनियों में नौकरी करने लगे या सरकारी प्रशासनिक अधिकारी बन गए पर पोल एक अलग ही रास्ते पर था। उसे तो यह जानने का जुनून था कि अर्थशास्त्री कैसे पैटर्न विश्लेषण का इस्तेमाल करके इंसानी स्वभाव को समझने की कोशिश कर रहे हैं। पोल ने स्वयं भी कुछ अनौपचारिक किस्म के प्रयोगों में अपना हाथ आजमाया था। एक बार उसने एक पार्टी रखी और अपने सारे दोस्तों को बुलाया। पार्टी में उसने उनके पसंदीदा चुटकुलों पर मतदान करवाकर एक ऐसा गणितीय मॉडल तैयार किया, जिससे सर्वश्रेष्ठ वन-लाइनर (एक पंक्ति का चुटकुला) का पता लगाया जा सके। उसने तो यह पता लगाने की भी कोशिश की कि पार्टियों में बिना बेवकूफ दिखे लड़कियों से आत्मविश्वास के साथ बातचीत करने के लिए उसे कुल कितनी बीयर पीनी पड़ेगी। (यह पोल के कई अध्ययनों में से एक ऐसा अध्ययन था, जिसका परिणाम कभी सही नहीं आता था।)

ये सारे प्रयोग बचकाने थे पर एंड्रयू पोल अच्छी तरह जानता था कि कैसे कॉरपोरेट अमेरिका डाटा का इस्तेमाल करके लोगों के पूरे जीवन की जाँच-पड़ताल करता है। पोल इसी का हिस्सा बनना चाहता था। इसीलिए जब ग्रेजुएशन के बाद उसने सुना कि ग्रीटिंग कार्ड बनानेवाली कंपनी हॉलमार्क कंसास सिटी में सांख्यिकीविदों को भर्ती कर रही है, तो उसने तुरंत इस नौकरी के लिए आवेदन दे दिया। जल्द ही वह हॉलमार्क कंपनी के सेल्स डेटा की जाँच करके इस तरह की चीज़ें पता लगा रहा था कि जन्मदिन के कौन से कार्ड ज़्यादा बिकते हैं... हाथी की तस्वीरोंवाले या पांडा की तस्वीरों वाले... और 'दादी के घर जाने पर क्या होता है' के कार्ड लाल रंग में ज़्यादा मज़ेदार लगते हैं या नीले रंग में... उसके लिए यह सब करना स्वर्ग जैसा अनुभव था।

इसके छह साल बाद सन 2002 में जब पोल को यह पता चला कि टारगेट कॉरपोरेशन (अमेरिका की दूसरी सबसे बड़ी डिपार्टमेंट स्टोअर कंपनी) को ऐसे लोगों की ज़रूरत है, जो नंबरों के विशेषज्ञ हों, तो वह फौरन इस कंपनी में भर्ती हो गया। वह जानता था कि जहाँ तक डाटा इकट्ठा करने की बात है, टारगेट कॉरपोरेशन एक अलग ही स्तर की जगह है। हर साल लाखों ग्राहक टारगेट कॉरपोरेशन के 1147 स्टोअर्स में खरीदारी करने आते थे और कंपनी को अपने बारे में करोड़ों जानकारियाँ दे जाते थे। इनमें से ज़्यादातर को अंदाजा भी नहीं था कि वे ऐसा कुछ कर रहे हैं। वे अपने कस्टमर लॉयलिटी कार्ड का उपयोग करते और इससे उन्हें डाक द्वारा जो कूपन मिलते, वे खुशी-खुशी उनका इस्तेमाल करते या फिर खरीदारी के लिए अपना क्रेडिट कार्ड इस्तेमाल करते। उन्हें इस बात की भनक तक नहीं थी कि टारगेट कॉरपोरेशन उनकी हर खरीदारी को एक व्यक्तिगत जनसाँख्यिकी प्रोफाइल से लिंक कर रहा है।

एक सांख्यिकीविद् के लिए यह डाटा किसी जादुई खिड़की जैसा था, जिससे वह ग्राहकों की निजी प्राथमिकताओं में झाँक सकता था। टारगेट कॉरपोरेशन के स्टोअर्स में किराने से लेकर कपड़े, इलेक्ट्रॉनिक सामान और फर्नीचर तक सब कुछ बेचा जाता था। अपने ग्राहकों की खरीदारी की आदतों का करीब से विश्लेषण करके कंपनी के विशेषज्ञ इस बात का पूर्वानुमान लगा सकते थे कि हर ग्राहक के घर में क्या चल रहा है। जैसे अगर कोई ग्राहक नए तौलिए, चादरें, बरतन, कड़ाही और खाने की फ्रोजेन चीज़ें खरीद रहा है तो इसका अर्थ है कि शायद उसने नया घर खरीदा होगा या शायद उसका तलाक होनेवाला होगा। इसी तरह अगर कोई ग्राहक कीड़ों को मारनेवाले ढेर सारे स्प्रे, बच्चों के कपड़े, फ्लैशलाइट, ढेर सारी बैटरीज, रियल सिम्पल (सौंदर्य प्रसाधन बनानेवाली अमेरिकी कंपनी) का सामान और वाइन की बोतल खरीद रहा है, तो इसका अर्थ है कि शायद उसके बच्चे जल्द ही समर कैंप में जानेवाले हैं और वह अपनी पत्नी के साथ कुछ समय अकेले बिताने की तैयारी कर रहा है।

टारगेट कॉरपोरेशन की नौकरी में पोल को अमेरिकी ग्राहकों का उनके अपने ही घर में अध्ययन करने का मौका मिला। उसका काम था ऐसे गणितीय मॉडल बनाना, जिनकी मदद से डाटा का विश्लेषण करके यह पता लगाया जा सके कि किस ग्राहक के घर में बच्चे हैं, कौन सा ग्राहक अविवाहित है, कौन सा ग्राहक बाहर घूमने-फिरने में रुचि

रखता है और किसे आइसक्रीम या रोमांटिक उपन्यास पसंद हैं। पोल एक ऐसा गणितीय विशेषज्ञ बनना चाहता था, जो ग्राहकों के मन की बात और उनकी आदतें जान ले ताकि उन्हें खरीदारी में ज़्यादा से ज़्यादा खर्च करने के लिए मनाया जा सके।

फिर एक दिन पोल के मार्केटिंग विभाग के कुछ सहकर्मी उसके पास आए। वे अपनी महिला ग्राहकों की खरीदारी के पैटर्न की मदद से यह पता लगाना चाहते थे कि उनमें से कौन सी महिला गर्भवती है। गर्भवती महिलाएँ और नए-नए माता-पिता बने ग्राहक रीटेल बिक्री की दुनिया में सबसे महत्वपूर्ण ग्राहक माने जाते हैं। दरअसल इस समूह के ग्राहक सबसे अलग होते हैं क्योंकि वे नए-नए उत्पादों के भूखे होते हैं और इस बात की ज़रा भी परवाह नहीं करते कि उत्पाद यानी प्रोडक्ट कितना महँगा है। इसीलिए इन ग्राहकों से कंपनियाँ सबसे ज़्यादा लाभ कमाती हैं और यहाँ सिर्फ शिशुओं के पोतड़ों (डाइपर्स और वाइप्स) की बात नहीं हो रही। शिशुओं के माता-पिता अचानक जीवन में आई बच्चे की जिम्मेदारी से इतने बेहाल होते हैं कि जहाँ से वे अपने बच्चों के लिए दूध की बोतलें या स्वास्थ्यवर्धक पाउडर खरीदते हैं, वहीं से वे अपनी ज़रूरत की अन्य चीज़ें भी बिना कुछ सोचे-समझे खरीद लेते हैं, फिर चाहे वह जूस हो, मोजें हों, टॉयलेट पेपर हों या बच्चों को पालने के नुस्खे बतानेवाली पुस्तकें। हाल ही में माता-पिता बने ग्राहक अगर टारगेट कॉरपोशन के स्टोअर्स में खरीदारी करके आते थे, तो फिर वे सालों तक वहीं से सब कुछ खरीदते थे।

कौन सी महिला ग्राहक गर्भवती है, यह पता लगाने का अर्थ था, कंपनी के लिए लाखों डॉलर की अतिरिक्त कमाई सुनिश्चित करना।

पोल इस नई चुनौती से बहुत उत्साहित था। उसके जैसे किसी सांख्यिकीय भविष्यवक्ता के लिए इससे बेहतर भला और क्या होगा कि वह न सिर्फ कंपनी के ग्राहकों के मन की बात जान सकता है बल्कि यह भी पता लगा सकता है कि उनके बेडरूम में क्या चल रहा है?

इस परियोजना के पूरा होने तक पोल को लोगों की अंतरंग जिंदगी में ताकझाँक करने के खतरे से जुड़े कई महत्वपूर्ण सबक सीखने का मौका मिलनेवाला था। उदाहरण के लिए वह सीखनेवाला था कि कई बार आप जो जानते हैं, उसे छुपाना, उसे जानने जितना ही महत्वपूर्ण होता है। साथ ही सभी महिला ग्राहक इस बात को लेकर उत्साहित नहीं होंगी कि एक कंप्यूटर प्रोग्राम उनकी जिंदगी में झाँककर यह पता लगाने की कोशिश कर रहा है कि भविष्य में बच्चे पैदा करने को लेकर उनकी योजना क्या है।

जल्द ही यह स्पष्ट हो गया कि हर कोई यह नहीं मानता कि गणितीय तरीकों से उनके मन की बात पता लगाना मज़ेदार चीज़ है।

‘इसे देखकर शायद बाहरी लोगों को यही लगेगा कि यह सब कुछ-कुछ बिग ब्रदर (अपने प्रतियोगियों की जिंदगी में ताकझाँक करनेवाला एक अमेरिकी टी.वी. कार्यक्रम

जिस पर भारतीय टी.वी. कार्यक्रम बिग बॉस आधारित है) जैसा है। पोल ने मुझसे कहा, 'इससे कुछ लोग असहज महसूस करने लगते हैं।'

एक समय था जब टारगेट कॉरपोरेशन जैसी कंपनी एंड्रयू पॉल जैसे किसी भी व्यक्ति को नौकरी पर नहीं रखती थी। ज़्यादा पुरानी बात नहीं है सिर्फ 20 साल पहले तक रीटेल कंपनियाँ डाटा से संचालित होनेवाले ऐसे गंभीर विश्लेषण नहीं करती थीं। उस समय तो टारगेट कॉरपोरेशन के अलावा किराने की अन्य दुकाने, शॉपिंग मॉल, ग्रीटिंग कार्ड बेचनेवाले, कपड़ों के व्यापारी और अन्य कंपनियाँ लोगों के मन में झाँकने के सबसे पुराने तरीकों पर निर्भर थीं। वे पेशेवर मनोविश्लेषक को काम पर रखती थीं, जो आधी-अधूरी वैज्ञानिक रणनीतियाँ बताते रहते थे और दावा करते थे कि इन्हें लागू करने से ग्राहक ज़्यादा से ज़्यादा खरीदारी करेगा।

ऐसे कुछ तरीके आज भी चलन में हैं। जैसे अगर आप वॉलमार्ट या होम डिपो के किसी स्टोअर में जाएँ या फिर अपने इलाके के किसी अन्य शॉपिंग सेंटर में जाएँ और गौर करें, तो आपकी नज़र व्यापारियों की उन चालबाजियों की ओर ज़रूर जाएगी, जिन्हें वे बरसों से इस्तेमाल करते आए हैं। ये ऐसी चालबाजियाँ हैं, जिनकी मदद से आपके अवचेतन मन का फायदा उठाया जाता है ताकि आप खरीदारी पर ज़्यादा से ज़्यादा खर्च करें।

उदाहरण के लिए खाने-पीने की चीज़ों की खरीदारी।

किसी किराने की दुकान में घुसते ही आमतौर पर आपको ढेर सारे फल और सब्जियाँ एक कतार में सजे हुए नज़र आते हैं। अगर तार्किक ढंग से सोचा जाए तो किसी सामान को दुकान के सामनेवाले हिस्से में रखने का कोई मतलब नहीं है क्योंकि अगर आप शुरुआत में ही उन्हें अपनी कार्ट (पहियोंवाली टोकरी) में रख लेंगे, तो बाद में उनके ऊपर रखे गए सामान के दबाव से वे दब जाएँगे, जिससे उनके जल्दी खराब होने की संभावना बढ़ जाएगी। कायदा यह कहता है कि फल और सब्जियों को दुकान के उस हिस्से में रखना चाहिए, जहाँ आप खरीदारी के अंत में बिल चुकाते हैं ताकि आप उन्हें अंत में उठाएँ। पर मार्केटिंग विशेषज्ञों और मनोवैज्ञानिकों ने सालों पहले यह निष्कर्ष निकाला था कि अगर ग्राहक खरीदारी की शुरुआत स्वास्थ्यवर्धक चीज़ों से करता है, तो इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि बाद में जब उसकी नज़र डोरिटो, ओरियो या फ्रोजेन पिज्जा जैसे स्वादिष्ट लेकिन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक चीज़ों पर पड़ेगी तो वह उन्हें भी फौरन खरीद लेगा। स्वास्थ्यवर्धक चीज़ों को सबसे पहले खरीदने से ग्राहक के अवचेतन में यह भाव पैदा होता है कि उसने बहुत अच्छा काम किया है। जिसके कारण खरीदारी के अंत में जब वह आइसक्रीम या ऐसा ही कोई अन्य वसायुक्त खाद्य-पदार्थ खरीदता है, तो उसे ग्लानि महसूस नहीं होती।

हममें से अधिकतर लोग किसी दुकान में प्रवेश करते ही अपने दाईं ओर मुड़ जाते हैं (क्या आपको पता था कि आप दाईं ओर मुड़ते हैं? निश्चित ही आप दाईं ओर मुड़ते होंगे। ऐसे कई वीडियो टेप्स उपलब्ध हैं, जिनमें दिखाया गया है कि दुकान में प्रवेश करते ही

ग्राहक दाईं ओर मुड़ जाते हैं।) ग्राहकों की इस प्रवृत्ति की वजह से रीटेल व्यापारी अपनी दुकानों में दाईं ओर सबसे अधिक लाभ देनेवाले उत्पाद रखते हैं ताकि ग्राहक नज़र पड़ते ही उन्हें खरीद लें। सूप और सीरियल (अनाज से बना एक खाद्य पदार्थ जो अक्सर नाश्ते में खाया जाता है) का मामला भी कुछ ऐसा ही है। जब इनके डिब्बों को दुकान की अलमारी में इनके नाम के क्रम में नहीं रखा जाता, तो ग्राहक हर तरह के ब्रांड के डिब्बों पर नज़र डालता है। यानी अगर आपको चावल वाले और किशमिश वाले सीरियल के डिब्बे चाहिए, तो वे शायद ही आपको पास-पास रखे मिलें। इसीलिए आपको जिस प्रकार का या जिस ब्रांड का सीरियल चाहिए, उसे ढूँढ़ने के लिए आपको पूरी अलमारी खँगालनी पड़ती है। हो सकता है कि इस प्रक्रिया में आपको शायद किसी और ब्रांड का सीरियल भी पसंद आ जाए और आप उसे भी खरीद लें। रीटेल व्यापारी यही तो चाहते हैं।

रीटेल व्यापारियों की इस तरह की रणनीतियों के साथ समस्या ये होती है कि वे हर ग्राहक को एक ही नज़रिए से तोलती हैं। इस लिहाज से ये रणनीतियाँ बड़ी पुरानी किस्म की जान पड़ती हैं, जिसमें अलग-अलग ग्राहक की खरीदारी संबंधी आदतों को प्रभावित करने के लिए अलग-अलग तरीके इस्तेमाल करने के बजाय एक ही तरीका इस्तेमाल किया जाता है।

पिछले 20 सालों में जैसे-जैसे रीटेल बिजनेस में प्रतियोगिता बढ़ी है, वैसे-वैसे टारगेट कॉरपोरेशन जैसी कंपनियाँ समझने लगी हैं कि ग्राहकों को प्रभावित करने के लिए सिर्फ पुरानी रणनीतियों पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। कंपनियों का लाभ बढ़ाने का सिर्फ यही एक तरीका था कि ग्राहकों की आदतों के बारे में पता लगाकर उनकी प्राथमिकताओं को समझा जाए और फिर उस हिसाब से हर ग्राहक को लुभाने के लिए अलग-अलग रणनीति बनाई जाए।

रीटेल कंपनियों को इस बात का एहसास होने के पीछे एक बड़ा कारण यह भी है कि अब वे इस बात को लेकर भी जागरूक हो रही हैं कि ग्राहक की आदतें कैसे उसके खरीदारी के निर्णयों को प्रभावित करती हैं। इस क्षेत्र से जुड़े कई प्रयोगों के परिणाम देखने के बाद व्यापारियों को एहसास हो गया कि अगर वे किसी तरह हर ग्राहक की आदतों को समझने में कामयाब हो जाएँ, तो फिर वे उसे कुछ भी खरीदने के लिए मज़बूर कर सकते हैं और उसे इसका पता भी नहीं चलेगा। एक अध्ययन में तो ग्राहकों को उस समय वीडियो कैमरे से रिकार्ड किया गया, जब वे किराने के बड़े-बड़े स्टोअर्स में प्रवेश करते थे। यह अध्ययन कर रहे शोधकर्ता जानना चाहते थे कि लोग खरीदारी का निर्णय कैसे लेते हैं। उनकी नज़र खासतौर पर ऐसे खरीदारों पर थी, जो खरीदारी के लिए सामान की सूची बनाकर लाते हैं। सैद्धांतिक रूप से देखें तो ये उस श्रेणी के ग्राहक थे, जो पहले ही तय कर चुके थे कि उन्हें क्या खरीदना है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि सामान की सूची साथ लाने के बावजूद इन ग्राहकों ने खरीदारी संबंधी 50 फीसदी से भी ज़्यादा निर्णय उसी समय लिए, जब उनकी नज़र

अलमारी में रखे किसी खास प्रोडक्ट पर पड़ी। क्योंकि इन खरीदारों की आदतें सूची के हिसाब से सामान लेने के उनके इरादों से ज़्यादा सशक्त थीं। जैसे एक खरीदार स्टोअर में प्रवेश करते ही खुद से बुदबुदाया, ‘ओह, तो यहाँ आलू के चिप्स भी रखे हैं! पर मुझे इनसे बचना चाहिए। अरे ये क्या? यहाँ तो आलू के चिप्स की सेल चल रही है!’ इसके बाद उसने फौरन चिप्स का एक बड़ा पैकेट उठाकर अपनी कार्ट (पहियोंवाली टोकरी) में रख लिया। इसी तरह कुछ खरीदार बार-बार एक ही ब्रांड का सामान लेते थे, भले ही वे यह मान चुके हों कि उन्हें यह कुछ खास पसंद नहीं है। ‘मैं कोई फॉल्गार्स कॉफी की दीवानी नहीं हूँ, पर मैं हमेशा यही खरीदती हूँ। वैसे भी इसके अलावा और कुछ है ही कहाँ स्टोअर में?’ एक महिला खरीदार ने कहा, जबकि उसके बगल में रखी अलमारी में कॉफी के ढेरों ब्रांड्स रखे हुए थे। शोधकर्ताओं ने पाया कि ग्राहक जब भी खरीदारी करते हैं, हर बार खाने का सामान एक समान मात्रा में खरीदते हैं, भले ही वे अपना वजन घटाने के लिए कम खाने का प्रण लेकर बैठे हों।

इस बारे में दक्षिणी कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी के दो मनोविश्लेषकों ने सन 2009 में लिखा था, ‘ग्राहक अक्सर अपनी आदतों के गुलाम होते हैं और उसी के अनुसार खरीदारी करते हैं। यानी वे अपने नए लक्ष्यों को भूलकर हर बार स्वत: ही अपना पिछला व्यवहार दोहराने लगते हैं।’

हालाँकि इन सभी अध्ययनों का एक आश्चर्यजनक पहलू यह था कि भले ही सारे ग्राहक खरीदारी संबंधी निर्णयों के लिए अपनी आदतों पर निर्भर थे, पर हर ग्राहक की आदतें भी अलग-अलग थीं। जिस खरीददार को आलू के चिप्स पसंद थे, वह जब भी स्टोअर में आता, तो बाकी चीज़ों के साथ हर बार एक पैकेट चिप्स भी खरीद लेता था। पर फॉल्गार कॉफी खरीदनेवाली महिला ग्राहक कभी उस अलमारी के पास तक नहीं गई, जहाँ वे चिप्स रखे थे। ऐसे भी लोग थे, जो घर में पर्याप्त दूध रखा होने के बावजूद भी स्टोअर में आकर दूध ही खरीदते थे। ऐसे भी लोग थे, जो हर बार मिठाइयाँ ज़रूर खरीदते थे और साथ ही यह भी कहते रहते थे कि वे अपना वजन घटाने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन ऐसा कभी नहीं हुआ कि दूध खरीदनेवाले ने कभी मिठाई खरीदी हो या मिठाई के ग्राहक ने दूध लिया हो।

हर ग्राहक की आदतें अलग-अलग थीं। टारगेट कॉरपोरेशन लोगों की इन्हीं अलग-अलग आदतों का फायदा उठाना चाहता था। पर जब आपकी सैकड़ों दुकानों पर हर दिन लाखों ग्राहक आ रहे हों, तो उनकी प्राथमिकताओं और खरीदारी के उनके पैटर्न्स पर नज़र कैसे रखी जाए?

इस सवाल का जवाब है, ‘ग्राहकों से जुड़ा ढेर सारा डाटा इकट्ठा करके यानी इतना सारा डाटा जिसे इकट्ठा करना पहले-पहल कल्पना से परे लगे।’

करीब दस साल पहले टारगेट कॉरपोरेशन ने डाटा के ऐसे विशाल वेयर-हाउस बनाने शुरू किए, जिनमें हर ग्राहक के लिए एक अलग कोड तय कर दिया गया और उसे

जानबूझकर ‘गेस्ट आई-डी नंबर’ नाम दिया गया। इससे हर ग्राहक की खरीदारी पर नज़र रखना आसान हो गया। जब भी कोई ग्राहक टारगेट कॉरपोरेशन द्वारा जारी किया गया क्रेडिट कार्ड इस्तेमाल करता या बिल चुकाते समय नियमित खरीदार का अपना टैग दिखाता, डाक द्वारा मिले कूपन का इस्तेमाल करके खरीदारी करता, कस्टमर हेल्प लाइन पर फोन करता, कोई रिफंड मिलने पर दिए गए सर्वे का फॉर्म भरता, टारगेट कॉरपोरेशन द्वारा भेजा गया कोई ई-मेल खोलता, टारगेट डॉट कॉम वेबसाइट खोलता या कभी ऑनलाइन खरीदारी करता, तो कंपनी के कंप्यूटर में इसकी विस्तृत जानकारी रिकार्ड हो जाती। ग्राहक की हर खरीदारी का रिकॉर्ड उसके गेस्ट आई-डी नंबर के साथ लिंक कर दिया जाता। इसमें साथ ही साथ हर उस चीज़ की जानकारी भी होती, जो ग्राहक ने पहले कभी खरीदी थी।

इसके अलावा उस गेस्ट आई-डी नंबर के साथ खरीदारों की वे जनसांख्यिकीय सूचनाएँ भी लिंक कर दी जातीं, जो या तो टारगेट कॉरपोरेशन ने खुद इकट्ठा करके रखी होती थीं या फिर किसी और कंपनी से खरीदी होती थीं। इन सूचनाओं में खरीदारों की उम्र... उनकी वैवाहिक स्थिति... बच्चों की संख्या... घर का पता... घर का नंबर... मोबाइल नंबर... स्टोअर तक जाने में लगनेवाला समय... और उनकी अनुमानित आय के साथ-साथ यह जानकारी भी शामिल थी कि क्या वे हाल ही में अपने इलाके में रहने आए हैं... वे कौन सी वेबसाइट्स खोलते हैं... और कौन से क्रेडिट कार्ड रखते हैं...। टारगेट कॉरपोरेशन ऐसा डाटा भी खरीद सकता है, जिससे खरीदारों की जातीयता... उनकी पिछली और हालिया नौकरी का ब्यौरा... उनके द्वारा पढ़ी जानेवाली पत्रिकाओं के अलावा यह जानकारी भी होती है कि क्या वे कभी दिवालिया हुए हैं... उन्होंने अपना घर कब खरीदा (या गँवाया)... वे कौन से स्कूल और कॉलेज में पढ़े हैं... और वे फलाँ-फलाँ ब्रांड की कॉफी... टॉयलेट पेपर... सीरियल और ऍपल सॉस पसंद करते हैं या नहीं...।

दूसरी तरफ इन्फिनीग्राफ जैसी डाटा बेचनेवाली कंपनियाँ भी हैं, जो मैसेज बोर्ड्स और इंटरनेट फोरम्स में खरीदारों की ऑनलाइन बातें सुनकर इस बात का पता लगाती हैं कि लोग किस प्रोडक्ट के बारे में सकारात्मक बातें कर रहे हैं। रैपलीफ नामक एक फर्म खरीदारों के बारे में तरह-तरह की सूचनाएँ बेचती है, जैसे उनका राजनीतिक झुकाव किस ओर है... पढ़ने की आदत कैसी है... वे कहाँ और कितनी चैरिटी करते हैं... उनके पास कितनी कारें हैं... और वे धार्मिक समाचार सुनना पसंद करते हैं... या सिगरेट जैसी चीज़ों की खरीदारी पर छूट पाना चाहते हैं...। अन्य कंपनियाँ ग्राहकों द्वारा ऑनलाइन पर पोस्ट की गई तस्वीरों का विश्लेषण करती हैं। इस तरह वे उन ग्राहकों को अलग-अलग श्रेणी में बाँटकर उनका कैटलॉग तैयार करती हैं, जैसे कौन सा ग्राहक मोटापे से ग्रस्त है और कौन बहुत पतला है, किसकी लंबाई अच्छी है और कौन ठिगना है, सिर पर बाल हैं या गंजा है और इन सबके परिणाम स्वरूप वह किस तरह के उत्पाद खरीदना पसंद करेगा। (टारगेट कॉरपोरेशन ने अपने बयान में यह बताने से मना कर दिया कि वह किन जनसांख्यिकीय कंपनियों के साथ मिलकर ग्राहक से जुड़ी कैसी सूचनाओं का अध्ययन करता है।)

व्यावसायिक अपने फायदे के लिए डाटा और विश्लेषण का इस्तेमाल कैसे करते हैं, इस विषय के प्रमुख शोधकर्ता टॉम डेवेनपोर्ट कहते हैं, ‘पहले कंपनियों को अपने ग्राहकों के बारे में सिर्फ उतना ही पता होता था, जितना ग्राहक उन्हें बताना चाहता था, पर अब जमाना बदल गया है। आप यह देखकर हैरान रह जाएँगे कि आज बाज़ार में ग्राहकों के बारे में कितनी सारी सूचनाएँ उपलब्ध हैं। इन सूचनाओं को हर कंपनी खरीदती है क्योंकि बाज़ार में टिके रहने का यही एक तरीका है।’ जैसे अगर आप सप्ताह में एक बार शाम के 6 बजे के आसपास कुल्फी खरीदने के लिए टारगेट कॉरपोरेशन के क्रेडिट कार्ड का इस्तेमाल करते हैं या हर जुलाई और अक्टूबर के महीने में बड़े आकार की कचरेवाली पन्नियाँ खरीदते हैं, तो टारगेट कॉरपोरेशन के सांख्यिकीविद् अपने कंप्यूटर प्रोग्राम की मदद से यह जान लेंगे कि आपके घर में बच्चे भी हैं, आप किराने का सामान ऑफिस से लौटते समय लेते हैं, आपके घर में एक बगीचा भी है, जहाँ गर्मी के मौसम में घास काटनी ज़रूरी होती है और आपको ऐसे पेड़ भी लगाने हैं, जिनकी पत्तियाँ पतझड़ के मौसम में टूटकर गिर जाती हैं।

ये सांख्यिकीविद् अपने कंप्यूटर प्रोग्राम के ज़रिए आपकी खरीदारी के अन्य पैटर्न्स पर भी नज़र रखेंगे और जान लेंगे कि आप कभी-कभी सीरियल (अनाज से बना एक खाद्य-पदार्थ, जो नाश्ते में दूध के साथ खाया जाता है) तो खरीदते हैं पर दूध कभी नहीं लेते, जिसका अर्थ है कि आप कहीं और से दूध खरीदते हैं। यह पता लगने के बाद टारगेट कॉरपोरेशन आपको दूध खरीदने के लिए ऐसे कूपन भेजेगा, जिनमें आपको 2 फीसदी की छूट मिले। इसके साथ ही आपको चॉकलेट स्प्रिंकल, स्कूल के सामान, बगीचे के फर्नीचर और अलमारी के अलावा बीयर के कूपन भी भेजेगा ताकि अगर आप दिनभर काम करने के बाद शाम को कुछ देर आराम करना चाहते हैं, तो एक बीयर पीकर अपनी थकावट मिटा सकें। टारगेट कॉरपोरेशन इस बात का अनुमान लगा लेता है कि आप आदतन कौन-कौन सा सामान खरीदते हैं और फिर वह तरह-तरह के हथकंडे अपनाकर आपको इस बात के लिए मनाता है कि आप वह सब सामान टारगेट के स्टोअर से लें। कंपनी हर ग्राहक की व्यक्तिगत ज़रूरत और पसंद के हिसाब से कूपन भेजने की क्षमता रखती है, भले ही आपको इस बात का पता न लगे कि आपको डाक से जो पर्चा मिला है, वह आपके पड़ोसी को मिले पर्चे से बिलकुल अलग है।

सन 2010 में पोल ने रीटेल क्षेत्र के सांख्यिकीविदों के एक सम्मेलन में शिरकत की। जहाँ उसने स्टेज पर खड़े होकर अपने सामने बैठे दर्शकों को बताया, ‘गेस्ट आई-डी के जरिए हमें आपका नाम, पता और आपके टेंडर का पता चल जाता है। साथ ही हमें यह भी पता चल जाता है कि आपके पास टारगेट कॉरपोरेशन का वीसा और एक डेबिट कार्ड है, जिसे हम आपकी खरीदारियों से जोड़ सकते हैं। कंपनी अपने स्टोअर्स से होनेवाली करीब आधी बिक्री को- किसी एक व्यक्ति विशेष से, सारी ऑनलाइन बिक्री से और करीब एक चौथाई ऑनलाइन ब्राउजिंग से लिंक कर सकती है।’

इस सम्मेलन में पोल ने दर्शकों को स्क्रीन पर एक स्लाइड दिखाई, जिसमें उसने टारगेट कॉरपोरेशन द्वारा इकट्ठा किए गए डाटा का एक नमूना दिखाया। इसके अलावा

पोल की इस स्लाइड में एक डायग्राम भी दिखाया गया था। जिसे देखकर दर्शक इतने आश्चर्यचकित हो गए कि सीटी बजाने लगे।

इस पूरे डाटा के साथ एक ही समस्या है कि जब तक कोई सांख्यिकीविद् इसका विश्लेषण करके अपना निष्कर्ष न दे, तब तक यह पूरा डाटा बाकी हर किसी के लिए अर्थहीन होता है। एक आम आदमी के लिए दो ग्राहकों द्वारा दुकान से संतरे का रस खरीदना सामान्य बात है। उसे दोनों में कोई फर्क नज़र नहीं आएगा। क्योंकि इस फर्क को समझने के लिए एक विशेष किस्म के गणित विशेषज्ञ की ज़रूरत होती है, जो यह पता लगा सके कि इन दो खरीदारों में से एक 34 वर्षीय महिला है, जो अपने बच्चों के लिए संतरे का रस खरीद रही है (और इसी वजह से खरीदारी के साथ किसी वीडियो गेम का कूपन मिलने पर वह विक्रेता की सराहना करेगी।) जबकि दूसरा खरीदार एक 21 वर्षीय अविवाहित युवक है, जो हर रोज व्यायाम के बाद संतरे का रस पीना पसंद करता है (इसीलिए शायद वह स्नीकर जूतों पर छूट मिलने पर सकारात्मक प्रतिक्रिया देगा।) पोल और उसके अलावा टारगेट कॉर्पोरेशन के गेस्ट डाटा एंड एनालिटिकल सर्विस डिपार्टमेंट (मेहमान संबंधी तथ्य व विश्लेषण सेवा विभाग) के 50 अन्य कर्मचारी दरअसल ऐसे विशेषज्ञ थे, जो अपने खरीदारों से जुड़े तथ्यों में उनकी अदृश्य आदतों को पहचान लेते थे।

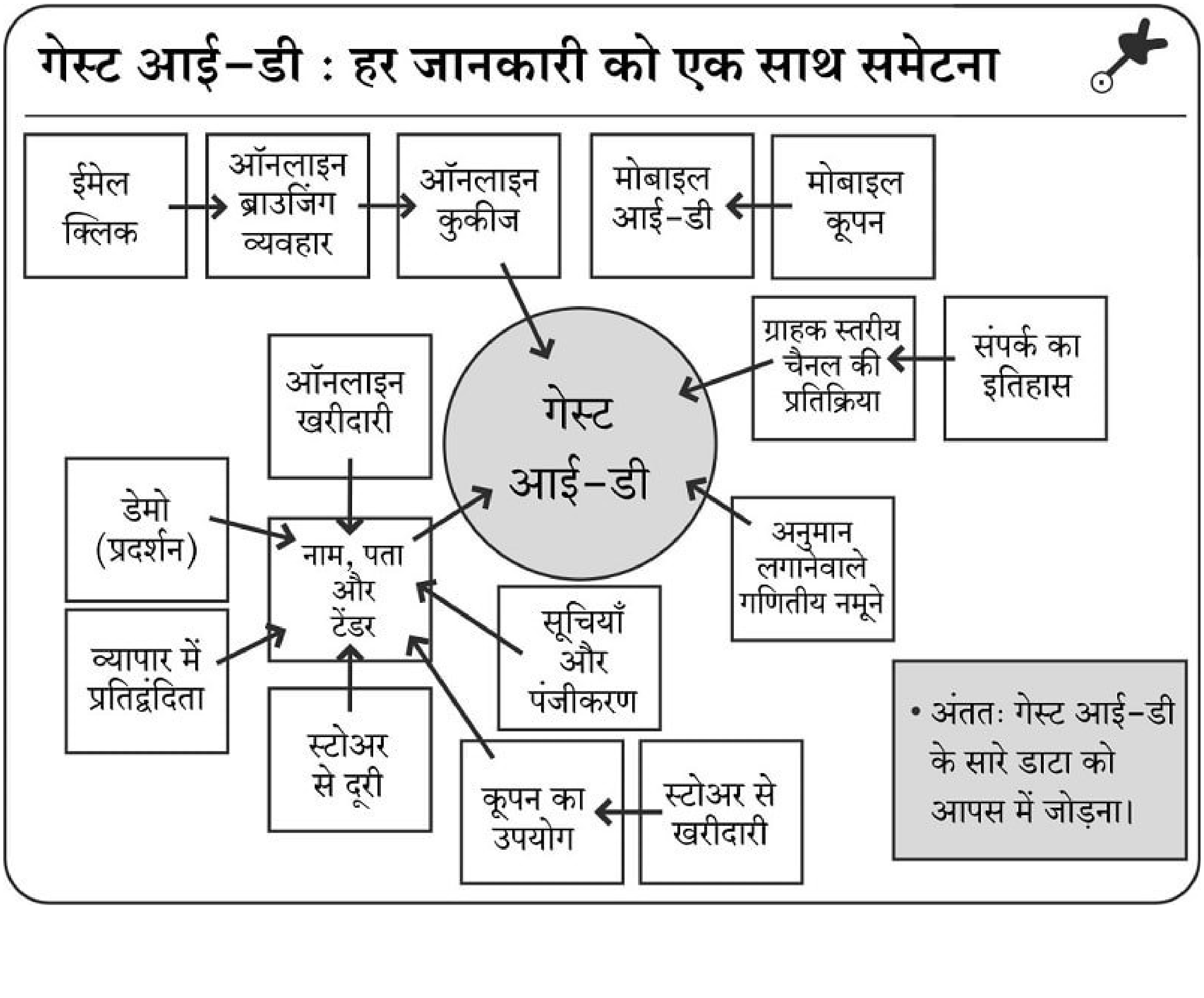

पोल ने बताया, ‘हमने इसे गेस्ट-पोट्रेट (मेहमान की तस्वीर) नाम दिया है। मुझे किसी के बारे में जितनी ज़्यादा जानकारी हो, मैं उसकी खरीदारी के पैटर्न का उतना ही सटीक अनुमान लगा सकता हूँ। हालाँकि मैं हमेशा यह अनुमान तो नहीं लगा सकता, पर इतना तय है कि आपके बारे में मेरे ज़्यादातर अनुमान सही ही निकलेंगे।

सन 2002 में जब पोल ने टारगेट कॉरपोरेशन में नौकरी शुरू की थी, उसके पहले ही कंपनी का एनालिटिक्स डिपार्टमेंट (विश्लेषण विभाग) ऐसे कंप्यूटर प्रोग्राम विकसित कर चुका था, जो ऐसे खरीदारों की पहचान कर सके, जिनके घर में बच्चे हैं। इसीलिए कंपनी हर साल नवंबर में इन बच्चों के माता-पिता को साइकिल और स्कूटर के कैटलॉग भेजती थी ताकि उनके मन में यह इच्छा जागे कि नई साइकिल या स्कूटर के साथ क्रिसमस ट्री के नीचे उनकी तस्वीर कितनी अच्छी लगेगी। इसके अलावा कंपनी उन्हें हर साल सितंबर में स्कूल में इस्तेमाल होनेवाली चीज़ों के कूपन और जून में पूल में खेले जानेवाले खिलौनों के विज्ञापन भेजा करती थी। कंप्यूटर अपने डाटा का इस्तेमाल करके उन महिला ग्राहकों की पहचान करता था, जो अप्रैल के महीने में बिकनी खरीदती हैं। फिर कंपनी उन्हें जुलाई में सनस्क्रीन लोशन के कूपन और दिसंबर में वजन घटाने के नुस्खे देनेवाली किताबें भेजा करती थी। अगर टारगेट कॉरपोरेशन चाहे, तो हर ग्राहक को एक ऐसा विशेष कूपन-बुक भेज सकता है, जिसमें ढेरों उत्पादों पर भारी छूट मिलने की जानकारी दी गई हो। कंपनी इस विशेष कूपन-बुक में उन्हीं उत्पादों पर छूट देगी, जिनके बारे में वह निश्चिंत हो कि ग्राहक उन्हें ज़रूर खरीदेंगे। क्योंकि कंपनी को पता है कि ये ग्राहक पहले भी ऐसे ही उत्पाद खरीद चुके हैं।

टारगेट कॉरपोरेशन कोई अकेली कंपनी नहीं है, जो उपभोक्ताओं की आदतों का अनुमान लगाना चाहती है। अमेजॉन डॉट कॉम, बेस्ट बाय, क्रोगर सुपरमार्केट्स, 1-800-फ्लावर्स, ऑलिव गार्डन, एन्ह्यूजर-बूश, द यूएस पोस्टल सर्विस, फिडिलिटी इनवेस्टमेन्ट्स, हेवलेट-पेकार्ड, बैंक ऑफ अमेरिका, कैपिटल वन और ऐसी सैकड़ों अन्य कंपनियों सहित करीब-करीब हर बड़ी रीटेल कंपनी में प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स डिपार्टमेंट (भविष्यसूचक विश्लेषण विभाग) होता है, जिसका काम होता है, उपभोक्ता की प्राथमिकताओं का अनुमान लगाना। प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स वर्ल्ड नामक सम्मेलन के आयोजक एरिक सीगल कहते हैं, ‘टारगेट कॉरपोरेशन इस मामले में हमेशा सबसे तेज रहा है। डाटा का अपने-आपमें कोई महत्त्व नहीं होता पर टारगेट कॉरपोरेशन बेहद चालाकी भरे सवालों का जवाब खोजने के मामले में बहुत आगे है।’

यह समझने के लिए किसी अकलमंद इंसान की ज़रूरत नहीं है कि अगर कोई ग्राहक सीरियल नामक खाद्य-पदार्थ खरीद रहा है, तो उसे शायद दूध की भी ज़रूरत पड़ेगी। पर ऐसे ही कई अन्य सवाल हैं, जो इससे कहीं ज़्यादा मुश्किल होते हैं। उनका जवाब ढूँढ़ना कंपनी के लिए अपेक्षाकृत बहुत फायदे का सौदा होता है।

इसीलिए टारगेट कॉरपोरेशन में काम शुरू करने के कुछ ही सप्ताह बाद पोल के सहकर्मी उसके पास यह पूछने आए थे कि क्या वह यह पता लगा सकता है कि इस समय

कौन सी महिला ग्राहक गर्भवती है, भले ही वह चाहती हो कि ये बात किसी को पता न चले।

***

सन 1984 में यू.सी.एल.ए. के एक अतिथि प्रोफेसर एलन एंडरसन ने एक रिसर्च पेपर प्रकाशित किया, जिसका मकसद था इस सवाल का जवाब देना कि कुछ लोग अचानक अपनी खरीदारी का रूटीन क्यों बदल लेते हैं?

इस अध्ययन के लिए एंडरसन की टीम ने करीब एक साल तक लॉज एंजलिस के ढेरों उपभोक्ताओं को फोन करके उनसे उनकी हालिया खरीदारी के बारे में सवाल पूछे। वे फोन पर लोगों से ऐसे सवाल पूछते कि वे किस ब्रांड का टूथपेस्ट और साबुन खरीदते हैं और क्या अब इन उत्पादों से जुड़ी उनकी प्राथमिकताएँ पहले के मुकाबले बदल गई है। एंडरसन की टीम के अनुसार उन्होंने करीब 300 लोगों से बातचीत की। अन्य अध्ययनकर्ताओं की तरह उन्होंने भी यही पाया कि अधिकतर लोगों ने सप्ताह-दर-सप्ताह एक ही ब्रांड का सीरियल या डिओडरेंट खरीदा। जाहिर है, उनकी खरीदारी संबंधी आदतें उन पर हावी थीं।

पर कभी-कभी ऐसा नहीं होता था।

उदाहरण के लिए एंडरसन ने जितने लोगों का अध्ययन किया, उसमें 10.5 फीसदी लोग ऐसे थे, जिन्होंने पिछले छह महीनों के दौरान अपना टूथपेस्ट ब्रांड बदल दिया था। इसी तरह 15 फीसदी लोग अब नए किस्म का डिटरजेंट खरीदने लगे थे।

एंडरसन जानना चाहते थे कि इन लोगों का खरीदारी पैटर्न क्यों बदला? अपने अध्ययन से उन्होंने जो पता लगाया, वह बाद में आधुनिक मार्केटिंग सिद्धांत का मुख्य स्तंभ बन गया। उनके अनुसार, ‘लोगों की खरीदारी संबंधी आदतें बदलने की संभावना तब सबसे ज़्यादा होती है, जब उनके जीवन में कोई बड़ी घटना घटी हो। जैसे जब किसी की शादी होती है, तो इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि अब वह किसी नए ब्रांड की कॉफी खरीदेगा। इसी तरह जब कोई घर बदलता है तो वह अक्सर नए किस्म का सीरियल खरीदने लगता है। जब किसी का तलाक होता है, तो इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि अब वह अलग-अलग ब्रांड की बीयर खरीदेगा। आमतौर पर उपभोक्ता इस बात पर गौर नहीं करते कि जीवन में कोई बड़ी घटना घटने पर उनके खरीदारी संबंधी पैटर्न बदल जाते हैं और न ही उन्हें इस बात की कोई फिक्र होती है। जबकि रीटेल कंपनियाँ न सिर्फ इस बदलाव पर बारीकी से गौर करती हैं बल्कि यह उनके लिए बहुत महत्वपूर्ण भी होता है।’

एंडरसन लिखते हैं, ‘घर बदलना, शादी करना, तलाक लेना, नौकरी बदलना या नौकरी खो देना, किसी नए सदस्य का घर आना या किसी सदस्य का घर से चले जाना... ये सब जीवन की ऐसी घटनाएँ हैं, जिनसे एक उपभोक्ता विक्रेता के लिए एक आसान निशाना

बन जाता है। फिर विक्रेता को उपभोक्ता की खरीदारी को प्रभावित करने में ज़्यादा मुश्किल नहीं होती।’

अधिकतर लोगों के लिए जीवन की सबसे बड़ी घटना क्या होती है? वह कौन सी घटना है, जो उसके जीवन में सबसे ज़्यादा उथल-पुथल लाती है और विक्रेताओं के लिए उसकी खरीदारी में हस्तक्षेप करना आसान हो जाता है? इसका जवाब है, बच्चे का जन्म। अधिकतर ग्राहकों के लिए एक बच्चे के जन्म से बड़ी घटना कोई और नहीं होती। परिणामस्वरूप उस दौरान इन नए-नवेले माता-पिता की आदतें सबसे ज़्यादा लचीली हो जाती हैं।

इसीलिए रीटेल कंपनियों के लिए गर्भवती महिला ग्राहक सोने की खान जैसी होती हैं।

नए-नवेले माता-पिता बहुत सी खरीदारी करते हैं, जैसे बच्चों के पोतड़े (डाइपर्स और वाइप्स), पालने, कपड़े, बोलतें, कंबल और ऐसी ही कई अन्य चीज़ें। टारगेट कॉरपोरेशन जैसी कंपनियाँ इस तरह का सामान भारी मुनाफे के साथ बेचती हैं। सन 2010 में हुए एक अध्ययन से पता चला था कि एक औसत माता-पिता अपने नवजात बच्चे का पहला जन्मदिन आने से पहले ही उसके सामान पर करीब 6800 डॉलर्स खर्च कर चुके होते हैं।

पर यह तो सिर्फ एक झलक है। हाल ही में माता-पिता बने लोगों की लगातार बदलती खरीदारी संबंधी आदतों का कंपनियाँ जैसा फायदा उठाती हैं, उसके सामने नवजात बच्चे के सामान पर होनेवाला यह शुरुआती खर्च कुछ भी नहीं है। अपने नवजात बच्चे को दिन-रात सँभालकर थकी हुई कोई माँ या रात को बच्चे के रोने से नींद न पूरी कर पा रहा कोई पिता टारगेट कॉरपोरेशन के किसी स्टोअर से बच्चे के डाइपर्स और स्वास्थ्यवर्धक पाउडर खरीदने लगता है। आमतौर पर उसी समय वह घर का बाकी सामान भी वहीं से खरीदने लगता है, जैसे किराना, सफाई संबंधी चीज़ें, तौलिए, जाँघिए वगैरह। माता-पिता अक्सर ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि उनके लिए एक ही जगह से सारा सामान खरीदना सुविधाजनक होता है और नए-नवेले माता-पिता के लिए सबसे ज़्यादा ज़रूरी यही होता है कि उनका काम आसान हो रहा है या नहीं।

पोल ने मुझे बताया, ‘जैसे ही हम यह स्थिति बनाने में कामयाब हो जाते हैं कि वे हमारे स्टोअर से ही अपने बच्चे के डाइपर्स खरीदें, वैसे ही वे बाकी चीज़ें भी उसी स्टोअर से खरीदने लगते हैं। जैसे अगर आप जल्दबाजी में हैं और स्टोअर की अलमारियों में बच्चे की बॉटल्स ढूँढ़ रहे हैं और तभी आपकी नज़र संतरे की रस के डिब्बे पर पड़ती है, तो आप फौरन उसे भी उठा लेंगे। इसी तरह अगर आपको अपनी मनचाही फिल्म की डीवीडी भी वहीं दिख जाती है, तो आप उसे भी छोड़ना नहीं चाहेंगे। इसके बाद जल्द ही आप सीरियल से लेकर टिशू पेपर तक सब कुछ हमारे स्टोअर से खरीदने लगते हैं और फिर बार-बार यहीं से खरीदते हैं।’

नए-नवेले माता-पिता को प्रभावित कर कमाई करना इतना आसान होता है कि रीटेल विक्रेता उन्हें ढूँढ़ने के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार रहते हैं। यहाँ तक कि वे अस्पतालों के मैटरनिटी वार्ड को भी नहीं छोड़ते, भले ही उनके उत्पादों का नवजात बच्चों से कुछ भी लेना-देना न हो। उदाहरण के लिए न्यूयॉर्क का एक अस्पताल हाल ही में माँ बनी महिलाओं को उपहारों का एक डिब्बा उपलब्ध कराता है, जिसमें हेयर जेल, फेस वॉश, शेविंग क्रीम, शैंपू, एनर्जी बार और मुलायम कॉटन टी-शर्ट जैसी चीज़ें होती हैं। इसके साथ ही इसमें ऑनलाइन फोटो सर्विस, लोकल जिम और हैंड सोप के कूपन भी होते हैं। साथ ही इसमें बच्चों के डाइपर्स और लोशन वगैरह भी होते हैं, जिन पर ढेर सारे अन्य सामान के कारण ज़्यादा ध्यान नहीं जाता। यूनाइटेड स्टेट्स के 580 अस्पतालों में नई माँओं को वॉल्ट डिज्नी कंपनी की तरफ से भी उपहार मिलते हैं। सन 2010 में वॉल्ट डिज्नी कंपनी ने विशेष रूप से एक नया विभाग शुरू किया, जिसका काम था, ऐसे उपभोक्ताओं के सामने अपनी उपस्थिति दर्ज कराना, जो हाल ही में माता-पिता बने हैं। प्रॉक्टर एंड गैंबल, फिशर-प्राइस और ऐसी ही अन्य कंपनियाँ भी उपहार देनेवाली ठीक ऐसी ही योजनाएँ चलाती हैं। डिज्नी के अनुमान अनुसार उत्तरी अमेरिका के नवजात बच्चों का यह बाजार करीब 36.3 बिलियन डॉलर का है।

पर टारगेट कॉरपोरेशन जैसी कंपनियों ने मैटरनिटी वार्ड में नई माँओं तक पहुँचने में ज़रा देर कर दी है। क्योंकि उस समय तक कई अन्य कंपनियाँ भी इन नई माँओं को संभावित ग्राहकों के रूप में देखना शुरू कर चुकी होती हैं। टारगेट कॉरपोरेशन, डिज्नी या प्रॉक्टर एंड गैंबल जैसी किसी कंपनी से प्रतिस्पर्धा नहीं करना चाहता, वह तो बस उन्हें हराना चाहता है। टारगेट कॉरपोरेशन का लक्षय था बच्चा पैदा होने से पहले ही माता-पिता को अपना लक्षय बनाना। इसीलिए एंड्रयू पोल के मार्केटिंग विभाग के सहकर्मी उसके पास यह पूछने आए थे कि कौन सी महिला ग्राहक गर्भवती है। अगर वे जल्द ही माँ बननेवाली महिला ग्राहकों की पहचान गर्भधारण के छह महीने के भीतर ही कर लेते, तो वे उन्हें किसी भी और कंपनी से पहले अपना समर्पित ग्राहक बना सकते थे।

बस समस्या यही थी कि गर्भवती महिला ग्राहकों का पता लगाना उतना आसान नहीं था, जितना नज़र आता था। टारगेट कॉरपोरेशन के पास बेबी शावर रजिस्ट्री की सुविधा भी थी, जिसकी मदद से वे कुछ गर्भवती महिला ग्राहकों की पहचान करने में कामयाब रहे। इन महिलाओं ने अपने बारे में बहुत सी महत्वपूर्ण जानकारी अपनी मर्जी से कंपनी को उपलब्ध करवा दी, जैसे डॉक्टर के अनुसार बच्चे के जन्म की संभावित तारीख। जिससे कंपनियों को यह पता चल गया कि उन्हें इन महिला ग्राहकों को डाइपर्स और विटामिन से भरपूर खाने-पीने की चीज़ों के कूपन कब भेजने हैं। पर टारगेट कॉरपोरेशन की बेबी शावर रजिस्ट्री का इस्तेमाल करनेवाली महिला ग्राहकों की संख्या बहुत ज़्यादा नहीं थी।

फिर कुछ और महिला ग्राहक भी थीं, जिनके बारे में कंपनी के अधिकारियों को संदेह था कि शायद वे गर्भवती हैं। क्योंकि उन्होंने माँ बननेवाली औरतों द्वारा पहने जानेवाले कपड़े, नर्सरी फर्नीचर और डाइपर्स के डिब्बे खरीदे थे। पर संदेह होना और ठीक-ठीक पता

होना दो अलग-अलग बातें हैं। भला यह कैसे पता लगाया जा सकता है कि जो महिला ग्राहक बच्चों के डाइपर्स खरीद रही है, वह खुद गर्भवती है या फिर अपनी किसी गर्भवती सहेली को उपहार में देने के लिए यह सब खरीद रही है। इसके अलावा समय अवधि का भी काफी महत्त्व था। जैसे अगर कोई कूपन बच्चा पैदा होने के एक महीने पहले तक ही इस्तेमाल किया जा सकता है, तो संभव है कि अगर उस कूपन पर माता-पिता की नज़र बच्चा होने के कुछ सप्ताह बाद जाए, तो पूरी संभावना है कि वे उसे बेकार मानकर कचरे के डिब्बे में फेंक देंगे।

पोल ने इस समस्या का समाधान निकालने के लिए सबसे पहले कंपनी की बेबी शावर रजिस्ट्री से मिलनेवाली जानकारी का बारीकी से अध्ययन किया। जिससे उसे यह पता चला कि एक औसत गर्भवती महिला की खरीदारी संबंधी आदतें बच्चा पैदा होने के पहले क्रमश: कैसे बदलती हैं। पोल के लिए यह रजिस्ट्री विज्ञान की किसी प्रयोगशाला जैसी थी, जहाँ वह अपने मनचाहे प्रयोग करके महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाल सकता था। बेबी शावर रजिस्ट्री की हर गर्भवती महिला ने अपना नाम, अपने पति का नाम और डॉक्टर के अनुसार बच्चे के जन्म की संभावित तारीख के बारे में कंपनी को बता दिया था। टारगेट का डाटा वेयरहाउस इस जानकारी को ग्राहकों के मेहमानों की आई-डी से लिंक करने में सक्षम था। जिसके परिणामस्वरूप जब भी इनमें से कोई महिला ग्राहक ऑनलाइन खरीदारी करती या फिर कंपनी के स्टोअर से कुछ खरीदती तो महिला द्वारा उपलब्ध कराई गई बच्चे के जन्म की संभावित तारीख का इस्तेमाल करके पोल उस तिमाही की पहचान कर सकता था, जिसमें वह खरीदारी की गई थी। इस तरह जल्द ही वह इसके पैटर्न पहचानने में कामयाब हो गया।

पोल ने पाया कि गर्भवती महिलाओं ने जो भी खरीदारी की, उसका अनुमान लगाना मुश्किल नहीं था। उदाहरण के लिए लोशन एक ऐसी चीज़ है, जिसे बहुत से लोग खरीदते हैं पर टारगेट कॉरपोरेशन के डाटा विश्लेषक ने पाया कि बेबी शावर रजिस्ट्रीवाली महिला ग्राहक अपने गर्भधारण की दूसरी तिमाही में बिना खुशबूवाला लोशन अत्यधिक मात्रा में खरीद रही थीं। एक अन्य विश्लेषक ने पाया कि कभी-कभी गर्भधारण के पहले 20 सप्ताह में गर्भवती महिलाओं ने विटामिन, कैल्शियम, मैग्नीशियम और जिंकवाले ढेरों उत्पाद खरीदे। इसी तरह अधिकतर खरीदार हर महीने साबुन और कॉटन बॉल्स खरीदते हैं पर जब कोई ग्राहक लोशन, मैग्नीशियम और जिंक की चीज़ें खरीदने के बाद अचानक ढेर सारे बिना खुशबूवाले साबुन और कॉटन बॉल्स खरीदने लगे और साथ ही ढेर सारी मात्रा में हैंड सैनिटाइजर और वॉशक्लोथ्स वगैरह भी खरीदे तो इसका यही अर्थ है कि उनके होनेवाले बच्चे की जन्म की तारीख नज़दीक ही है।

जब पोल ने अपने कंप्यूटर प्रोग्राम की मदद से कंपनी के पूरे डाटा को फिर से देखा, तो वह ऐसे 25 उत्पादों की पहचान करने में कामयाब रहा, जिनकी मदद से वह एक तरह से गर्भवती महिला ग्राहक के गर्भ में झाँक सकता था। सबसे महत्वपूर्ण बात थी कि इसकी मदद से वह यह अनुमान भी लगा सकता था कि कोई महिला ग्राहक अपने गर्भधारण की किस तिमाही में है। इस तरह वह उसके बच्चे के जन्म की संभावित तारीख

का अनुमान भी लगा सकता था। यह पता लगने के बाद टारगेट कॉरपोरेशन उस महिला ग्राहक को ठीक उसी समय कूपन उपलब्ध करवा सकता था, जब वह खरीदारी करने का मन बना रही हो। अपना काम खत्म करते-करते पोल ने इन ग्राहकों के बारे में इतनी सारी जानकारी इकट्ठी कर ली थी और इतने पैटर्न्स व खरीदारी संबंधी इतनी आदतों की पहचान कर ली थी कि अब वह कंपनी के किसी सामान्य ग्राहक के गर्भधारण से जुड़ी जानकारियों का अनुमान भी असानी से लगा सकता था।

जेनी वार्ड नामक एक 23 वर्षीय महिला ने अटलांटा के टारगेट स्टोअर से कोकोआ लोशन, जिंक और मैग्नीशियमवाली खाद्य-सामग्री, नीले रंग के कालीन और एक पर्स खरीदा, जो इतना बड़ा था कि उसमें बच्चों के डाइपर भी रखे जा सकते थे। उसके द्वारा खरीदे गए इस सामान के आधार पर 87 फीसदी संभावना है कि वह महिला गर्भवती है और उसका बच्चा संभवत: अगस्त के आखिरी दिनों में पैदा होगा। इसी तरह बुरकलिन में रहनेवाली 35 वर्षीया लिज अल्टर ने पाँच पैकेट वॉशक्लोथ्स, संवेदनशील त्वचा के लिए उपयुक्त एक बोतल डिटरजेंट, बैगी जींस, विटामिनवाला डीएचए और मॉइश्चराइजर्स के कई डिब्बे खरीदे। उसके द्वारा खरीदे गए इस सामान के आधार पर 96 फीसदी संभावना है कि वह गर्भवती है और उसका बच्चा संभवत: मई के शुरुआती दिनों में पैदा होगा। इसी तरह सैन फ्रांसिस्को की 39 वर्षीया महिला कैटलिट पाइक ने 250 डॉलर का सिर्फ एक स्ट्रालर (नवजात बच्चों को घुमाने के लिए पहियावाली गाड़ी) खरीदा। पर उसने इसके अलावा और कुछ भी नहीं लिया। हो सकता है कि उसने यह स्ट्रालर अपनी किसी सहेली के बच्चे के बेबी शावर के लिए खरीदा हो। इसके अलावा उसके जनसांख्यिकीय डाटा के अनुसार करीब दो साल पहले ही उसका तलाक भी हो चुका है।

पोल ने टारगेट कॉरपोरेशन के डाटाबेस में उल्लेखित हर खरीदार पर अपना यह प्रोग्राम लागू करके देखा। काम खत्म होने तक उसके पास ऐसी लाखों महिलाओं की सूची थी, जो संभवत: गर्भवती होंगी। जाहिर है टारगेट कॉरपोरेशन उन्हें डाइपर्स, लोशंस, बच्चे का पालना, वाइप्स और माँ बननेवाली महिलाओं द्वारा पहने जानेवाले विशेष कपड़ों के विज्ञापनों से घेर लेगा। क्योंकि इस समय उनकी खरीदारी संबंधी आदतें सबसे ज्यादा लचीली होंगी। अगर उन महिलाओं या उनके पतियों में से कुछेक ने भी टारगेट के स्टोअर्स से खरीदारी शुरू कर दी तो इसका अर्थ है कि कंपनी को करोड़ों का फायदा होनेवाला है।

इन विज्ञापनों की बाढ़ आने ही वाली थी कि मार्केटिंग विभाग के किसी कर्मचारी ने एक सवाल पूछा, ‘जब इन महिलाओं को पता चलेगा कि टारगेट कॉरपोरेशन उनके बारे में कितना कुछ जानता है, तो उनकी प्रतिक्रिया क्या होगी?’

पोल ने मुझसे कहा, ‘अगर हम महिला ग्राहकों को एक कैटलॉग भेजें और साथ ही यह संदेश भी भेजें कि आपको पहले बच्चे के जन्म की बधाई! जबकि उन्होंने हमें कभी भी अपने गर्भवती होने के बारे में न बताया हो, तो निश्चित ही वे असहज हो जाएँगी। दरअसल प्राइवेसी संबंधी कानूनों के पालन को लेकर हमारा नज़रिया ज़रा रूढ़िवादी है।

पर भले ही आप इन कानूनों का कितना भी कड़ाई से पालन कर रहे हों, फिर भी आपके हाथों ऐसा कुछ होने की पूरी संभावना होती है, जिससे लोग परेशान हो जाएँ।'

पोल की ये चिंता जायज है और इसका कारण भी स्पष्ट है। जब पोल ने महिला ग्राहकों के गर्भवती होने का अनुमान लगानेवाला मॉडल तैयार किया, उसके करीब एक साल बाद एक व्यक्ति मिनेसोटा के एक टारगेट स्टोअर में आया और उसने सीधे स्टोअर के मैनेजर से मिलने की माँग की। उसके हाथ में किसी विज्ञापन का पर्चा था और वह गुस्से से काँप रहा था।

'मेरी बेटी को ये पर्चा डाक से मिला,' उसने चीखते हुए कहा। 'वह अभी हाई स्कूल में है और तुम लोग उसे नवजात बच्चों का पालना और कपड़े खरीदने के लिए ये कूपन भेज रहे हो? क्या चाहते हो तुम कि वह इसी उम्र में गर्भवती होने की सोचने लगे?'

स्टोअर के मैनेजर को कोई अंदाजा नहीं था कि वह व्यक्ति किस बारे में बात कर रहा है। उसने स्टोअर की डाक का रिकार्ड खंगाला तो पता चला कि वह व्यक्ति सच बोल रहा था। वह कूपन डाक से उसकी बेटी को ही भेजा गया था, जिसमें नई माँओं द्वारा पहने जानेवाले कपड़ों से लेकर नर्सरी फर्नीचर तक के विज्ञापन थे और ढेरों शिशुओं के चित्र बने थे, जो अपनी माँ की आँखों में दुलार से देख रहे थे।

मैनेजर ने उस व्यक्ति से कई बार माफी माँगी। यहाँ तक कि कुछ दिनों बाद उसने उस व्यक्ति को फोन करके एक बार फिर माफी माँगी।

हैरानी की बात थी कि इस बार वह व्यक्ति बहुत नर्मी से पेश आया।

'मुझे अपनी बेटी से खुलकर बात करनी होगी। मुझे खबर ही नहीं थी कि मेरे घर में क्या चल रहा है,' उसने गहरी साँस लेते हुए फोन पर मैनेजर से कहा। 'मेरी बेटी सचमुच गर्भवती है और अगस्त में उसे बच्चा होनेवाला है। माफी तुम्हें नहीं, मुझे माँगनी चाहिए।'

टारगेट कॉरपोरेशन ऐसी अकेली कंपनी नहीं है, जिसने उपभोक्ताओं की चिंता बढ़ा दी है। अन्य कंपनियों को भी डाटा का इस्तेमाल करके लोगों के निजी जीवन में दखल देने के लिए आलोचनाओं का सामना करना पड़ा है। उदाहरण के लिए सन 2011 में न्यूयॉर्क के एक व्यक्ति ने मैकडॉनल्ड्स, सीबीएस, माज़दा और माइक्रोसॉफ्ट्स पर कोर्ट में मानहानि का दावा ठोक दिया। उसका आरोप था कि इन कंपनियों की विज्ञापन एजेंसियाँ अवैध रूप से लोगों के इंटरनेट इस्तेमाल की निगरानी करती हैं ताकि वे उनकी खरीदारी की आदतों का पता लगा सकें। टारगेट कॉरपोरेशन, वॉलमार्ट, विक्टोरियाज़ सीक्रेट और अन्य रीटेल कंपनियों के खिलाफ कैलीफोर्निया की अदालत में ऐसे कई मुकदमें चल रहे हैं। कंपनियों पर ये मुकदमें इसलिए किए गए क्योंकि इन्होंने अपने ग्राहकों से क्रेडिट कार्ड के इस्तेमाल के दौरान उनका ज़िप-कोड माँगा और बाद में इस जानकारी का इस्तेमाल करके उनका डाक का पता हासिल कर लिया।

पोल और उसके सहकर्मी जानते थे कि डाटा का इस्तेमाल करके महिला ग्राहकों के गर्भवती होने के बारे में पता करना, कंपनी के जनसंपर्क के लिए एक त्रासदी साबित हो सकता है। तो फिर ऐसा क्या किया जाए कि गर्भवती महिला ग्राहकों के हाथों तक कंपनी के विज्ञापन भी पहुँच जाएँ और उन्हें इस बात की भनक भी न लगे कि उनकी जासूसी की जा रही है? ऐसा कैसे संभव हो कि किसी की आदतों का फायदा भी उठा लिया जाए और उसे पता भी न चलने दिया जाए कि उसके जीवन के एक-एक पहलू का गुप्त रूप से गहन अध्ययन किया जा रहा है?’[1]

2

सन 2003 की गर्मियों में अरिस्टा रिकॉर्ड्स नामक एक म्यूजिक रिकॉर्ड कंपनी के प्रचार-अधिकारी स्टीव बार्टेल ने विभिन्न रेडियो डीजे से संपर्क किया। स्टीव उन्हें बताना चाहते थे कि उनकी कंपनी का नया गाना उन सभी को बहुत पसंद आएगा। गाने के बोल थे, ‘हे या!’ और इसे आउटकास्ट नामक हिप-हॉप ग्रुप ने बनाया था। ‘हे या!’ गाना दरअसल फंक, रॉक और हिप-हॉप म्यूजिक का जोशीला फ्यूजन (संलयन या मिश्रण) था और साथ ही इसमें दुनिया के सबसे मशहूर बैंड्स में से एक बिग बैंड का तड़का भी लगा हुआ था। रेडियो पर ऐसा कोई गाना पहले नहीं आया था। बार्टेल ने मुझे बताया, ‘यह इतना जोशीला गाना है कि जब मैंने इसे पहली बार सुना, तो मेरे रोंगटे खड़े हो गए। पहली बार सुनते ही मुझे ऐसा लगा कि इस गाने को हिट होने से कोई नहीं रोक सकता। यह उस किस्म का गाना था, जो सालों तक बार और पार्टी वगैरह में बजाया जाता है।’ अरिस्टा रिकॉर्ड्स के अलग-अलग दफ्तरों के अधिकारियों के बीच भी यह गाना खूब लोकप्रिय हो गया था। हालात ये थे कि हर दफ्तर के अधिकारी कभी-कभी गलियारों से गुज़रते समय एक-दूसरे के साथ कोरस में इस गाने के बोल ‘शेक इट लाइक पोलराइड पिक्चर...’ गुनगुनाने लगते थे। वे सब इस बात से सहमत थे कि ये गाना बहुत बड़ा हिट होनेवाला है।

निश्चित ही उनका यह अनुमान उनके अंतर्ज्ञान पर आधारित नहीं था। उस समय म्यूज़िक रिकॉर्ड बिजनेस बदलाव के दौर से गुज़र रहा था। इस बिजनेस में भी टारगेट कॉरपोरेशन और अन्य कंपनियों की तरह ही डाटा आधारित चीज़ें जोर पकड़ रही थीं। जिस तरह रीटेल विक्रेता अपने ग्राहकों की आदतों का अनुमान लगाने के लिए कंप्यूटर एल्गोरिदम (गणना संबंधी प्रश्नों को हल करनेवाली प्रणाली) का इस्तेमाल कर रहे थे, ठीक उसी तरह म्यूज़िक और रेडियो कंपनियों के अधिकारी भी अपने श्रोताओं की आदतों का अनुमान लगाने के लिए कंप्यूटर प्रोग्राम्स की मदद ले रहे थे। पॉलिफोनिक एस.एम.आई. नामक एक कंपनी, जो स्पेन के कुछ आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस विशेषज्ञों और सांख्यिकीविदों का एक समूह थी, ने एक विशेष कंप्यूटर प्रोग्राम विकसित किया था। इस प्रोग्राम का नाम था ‘हिट सॉन्ग साइंस’, जो किसी भी धुन की गणितीय विशेषताओं का विश्लेषण करके यह अनुमान लगाता था कि वह धुन कितनी मशहूर होगी। यह प्रोग्राम किसी भी नए गाने की पिच, मेलोडी, कॉर्ड प्रोग्रेशन और ऐसे ही अन्य कारकों की तुलना पॉलिफोनिक एच.एम.आई. के डाटाबेस में रखे हज़ारों अन्य हिट

गानों से करके उसका एक स्कोअर निकालता था, जिससे यह अनुमान लगाया जाता था कि कोई धुन कितनी सफल होगी।

अमेरिकी गायिका नोरा जोन्स के एक गाने ‘कम अवे विद मी’ को म्यूज़िक इंडस्ट्री के ज़्यादातर लोगों ने यह कहकर खारिज कर दिया था कि इसे कोई नहीं सुनेगा। पर पॉलिफोनिक एच.एम.आई. के हिट सॉन्ग साइंस प्रोग्राम का अनुमान था कि यह गाना ज़रूर हिट होगा। आखिरकार जब यह गाना रिलीज हुआ तो फौरन सुपरहिट हो गया। इसके न सिर्फ 80 लाख रिकॉर्ड्स बिके बल्कि इसे आठ ग्रैमी अवॉर्ड्स भी मिले। इसी तरह सैंटेना नामक बैंड के गाने ‘व्हाई डोंट यू एंड आई’ की सफलता को लेकर ज़्यादातर डीजे को संदेह था, पर हिट सॉन्ग साइंस प्रोग्राम का अनुमान था कि यह गाना ज़रूर सफल होगा और आखिरकार ऐसा ही हुआ। यह गाना बिलबोर्ड टॉप 40 की सूची में तीसरे नंबर तक पहुँचा था।

जब रेडियो स्टेशनों के अधिकारियों ने ‘हे या!’ गाने की सफलता का अनुमान लगाने के लिए हिट सॉन्ग साइंस प्रोग्राम का इस्तेमाल किया, तो पता चला कि यह गाना बेहद सफल होगा। हिट सॉन्ग साइंस प्रोग्राम में इस गाने ने जितना स्कोअर हासिल किया था, उतना स्कोअर आज तक किसी भी गाने को नहीं मिला था।

कंप्यूटर एल्गोरिदम के अनुमान के मुताबिक ‘हे या!’ गाना बहुत बड़ा हिट होनेवाला था।

4 सितंबर 2003 को फिलाडेल्फिया के टॉप 40 स्टेशन डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. ने रेडियो के शाम 7:15 के मुख्य स्लॉट में इस गाने को बजाना शुरू किया। उस सप्ताह इस गाने को डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. ने 7 बार बजाया और उस महीने यह गाना कुल 37 बार बजाया गया।

उस समय आर्बिट्रॉन नामक एक नई कंपनी अपनी नई तकनीक का परीक्षण कर रही थी। इस तकनीक से यह पता लगाना संभव हो गया था कि किसी एक क्षण में किसी रेडियो स्टेशन को कुल कितने श्रोता सुन रहे हैं और उनमें से कितने श्रोता किसी गाने के दौरान चैनल बदलकर कोई और रेडियो स्टेशन सुनने लगते हैं। इस परीक्षण में डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. स्टेशन को भी शामिल किया गया था। स्टेशन के अधिकारियों को पूरा विश्वास था कि ‘हे या!’ गाने के दौरान श्रोता चैनल बदलने के बजाय इसी रेडियो स्टेशन से चिपके रहेंगे।

परीक्षण के बाद इसका डाटा सामने आया।

श्रोताओं ने न सिर्फ ‘हे या’ गाने को नापसंद किया बल्कि यह उन्हें इतना बुरा लगा कि उन्होंने इसे सिरे से खारिज कर दिया। डाटा इस बात की गवाही दे रहा था कि श्रोताओं को यह गाना इतना बुरा लगा कि करीब एक तिहाई श्रोता तो यह गाना शुरू होने के तीस सेकंड के भीतर ही चैनल बदलकर कोई और रेडियो स्टेशन सुनने लगे। और

ऐसा नहीं था कि यह सिर्फ डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. स्टेशन पर ही हुआ हो। पूरे देश में शिकागो से लेकर लॉस एंजिलिस तक और फीनिक्स से लेकर सिएटल तक 'हे या!' गाना जिस भी रेडियो स्टेशन पर बजा, श्रोताओं ने उसका चैनल बदलकर किसी और रेडियो स्टेशन को सुनना बेहतर समझा।

एक सिंडिकेटेड टॉप 40 रेडियो शो - जिसे हर सप्ताहांत में करीब 20 लाख श्रोता सुनते हैं - के होस्ट जॉन गैराबिडियन बताते हैं, 'जब मैंने पहली बार यह गाना सुना था, तो मुझे यह बहुत पसंद आया था। यह आम गानों जैसा नहीं था।' इसीलिए जब यह रिलीज हुआ, तो कुछ लोगों को यह सुनने में बहुत वाहियात लगा। एक व्यक्ति ने तो मुझसे यहाँ तक कहा कि उसने इससे बुरा गाना जिंदगी में कभी नहीं सुना।

'लोग टॉप 40 को इसलिए सुनते हैं क्योंकि या तो वे इसमें अपना पसंदीदा गाना सुनना चाहते हैं या फिर ऐसे गाने सुनना चाहते हैं, जो उनके पसंदीदा गाने जैसे हों। जब भी कोई अलग किस्म का गाना आता है, तो लोग नाराज़ हो जाते हैं। उन्हें कोई भी ऐसा गाना पसंद नहीं आता, जो उन्हें बहुत अलग सा लगे।'

अरिस्टा म्यूज़िक रिकॉर्ड्स कंपनी ने 'हे या!' गाने के प्रचार में बहुत सा धन खर्च किया था। इस गाने का हिट होना म्यूज़िक और रेडियो इंडस्ट्री के लिए ज़रूरी था। हिट गाने किसी खज़ाने की तरह होते हैं पर सिर्फ इसलिए नहीं कि लोग गाने के रिकॉर्ड्स खरीदते हैं बल्कि इसलिए भी कि एक हिट गाना आते ही लोग वीडियो गेम और इंटरनेट छोड़कर रेडियो सुनने लगते हैं। एक हिट गाना बहुत कुछ कर सकता है। जैसे अगर टी.वी. पर किसी स्पोर्ट्स कार के विज्ञापन का गाना हिट हो जाए, तो उस कार की बिक्री बढ़ जाती है या अगर नए चलनवाले कपड़ों पर किसी स्टोअर में कोई हिट गाना चल रहा हो, तो वहाँ ज़्यादा ग्राहक आते हैं। हिट गाने ग्राहकों की खरीदारी से जुड़ी ऐसी दर्जनों आदतों की जड़ होते हैं, जिन पर विज्ञापनकर्ता, टी.वी. स्टेशन, बार, डांस क्लब और यहाँ तक कि ऍप्पल जैसी प्रौद्योगिकी कंपनियाँ तक निर्भर होती हैं।

जिस गाने के बारे में कंप्यूटर एल्गोरिदम का अनुमान था कि वह 'सॉन्ग ऑफ द इयर,' बन जाएगा, जो साल का सबसे बहुप्रतीक्षित गाना था, वह असफल हो रहा था। रेडियो स्टेशनों के अधिकारी कुछ ऐसा ढूँढ़ने के लिए बेताब थे, जो किसी तरह 'हे या!' गाने को हिट बना दे।

***

'किसी गाने को हिट कैसे बनाया जाता है?' म्यूजिक इंडस्ट्री को यह सवाल तब से सता रहा है, जब यह इंडस्ट्री शुरू हुई थी। पिछले कुछ दशकों से हालात ऐसे हो चुके हैं कि लोग अब इस सवाल का विज्ञान आधारित जवाब ढूँढ़ने की कोशिश कर रहे हैं। इस मामले में सबसे आगे रहनेवालों में से एक थे रिच मेयर, जो एक रेडियो स्टेशन के मैनेजर थे। सन 1985 में उन्होंने अपनी पत्नी नैन्सी के साथ मिलकर शिकागो स्थित अपने घर के

बेसमेंट में मीडियाबेस नामक एक कंपनी शुरू की थी। वे दोनों हर सुबह उठकर अलग-अलग शहरों के रेडियो स्टेशनों में एक दिन पहले रिकॉर्ड किए गए टेप्स लेते थे और हर उस गाने का विश्लेषण करते थे, जो रेडियो स्टेशनों में बजाया जाता था। फिर मेयर हर सप्ताह एक न्यूजलेटर प्रकाशित करते थे, जिसमें यह जानकारी होती थी कि किस धुन की लोकप्रियता बढ़ या घट रही है।

पहले पाँच सालों में इस न्यूजलेटर के लगभग 100 सबस्क्राइबर थे। मेयर और उनकी पत्नी को कंपनी चलाने के लिए खासा संघर्ष करना पड़ रहा था। पर धीरे-धीरे कई रेडियो स्टेशन अपने श्रोताओं की संख्या बढ़ाने के लिए मेयर की अंतर्दृष्टि की मदद लेने लगे। वे खासतौर पर मेयर के उन फार्मूलों का अध्ययन करने लगे, जो मेयर ने श्रोताओं के बीच मशहूर चलन को समझने के लिए बनाए थे। इससे उनके न्यूजलेटर की बिक्री बढ़ने लगी। दरअसल अपने न्यूजलेटर के जरिए मेयर रेडियो स्टेशनों को श्रोताओं का वह डाटा बेच रहे थे, जो उन्होंने खुद निकाला था। धीरे-धीरे डाटा का विश्लेषण करनेवाले सलाहकारों की एक पूरी इंडस्ट्री खड़ी हो गई, जो कंपनियों को ठीक वही सेवा देने लगे, जो मेयर देते थे। यही वो बदलाव था, जिसने रेडियो स्टेशनों के काम करने के तरीके को भी पूरी तरह बदलकर रख दिया।

मेयर को सबसे ज़्यादा पसंद था, यह पता लगाना कि कुछ गानों के दौरान श्रोता कभी चैनल बदलकर दूसरे रेडियो स्टेशन पर क्यों नहीं जाते। विभिन्न डीजे के बीच इस तरह के गानों को 'स्टिकी' यानी चिपकनेवाला गाना कहा जाता था। गानों को कौन सा दिव्य नियम लोकप्रिय बनाता है? इस सवाल का जवाब ढूँढ़ते-ढूँढ़ते मेयर ने पिछले कुछ सालों में सैकड़ों 'स्टिकी' गाने ढूँढ़ लिए थे। उनका ऑफिस ऐसे चार्ट और ग्राफ से भरा पड़ा था, जिनमें 'स्टिकी' गानों की विषेशताएँ तलाशी जा रही थीं। गानों की 'स्टिकी' विशेषता को मापने के लिए मेयर नित नए रास्तों की तलाश में रहते थे। जब 'हे या!' गाना रिलीज हुआ, उस समय आर्बिट्रॉन म्यूज़िक कंपनी किसी नई अंतर्दृष्टि का पता लगाने के उद्देश्य से कुछ नए परीक्षण कर रही थी। मेयर ने इन परीक्षणों से प्राप्त डाटा के साथ स्वयं कुछ परीक्षण करने शुरू कर दिए।

उस दौर के कुछ सबसे ज़्यादा 'स्टिकी' गानों के पीछे का कारण बिलकुल स्पष्ट था। जैसे अमेरिकी गायिका बेयॉन्से नोएल्स का गाना 'क्रेजी इन लव' और अमेरिकी गायक जस्टिन टिम्बरलेक का 'सेनोरीटा' इसी समय रिलीज हुए थे और बेहद लोकप्रिय हो चुके थे। पर ये दोनों स्थापित सितारों के गाने थे इसलिए इनका 'स्टिकी' होना समझ में आता है। पर अन्य कुछ गाने ऐसे कारणों से 'स्टिकी' थे, जिन्हें कोई समझ नहीं पा रहा था। उदाहरण के लिए जब सन 2003 की गर्मियों में रेडियो स्टेशनों पर अमेरिकी गायिका ब्लू कान्ट्रेल का गाना 'ब्रीद' बजाया जाता था, तो कोई भी श्रोता चैनल बदलकर किसी और रेडियो स्टेशन पर नहीं जाता था। जबकि यह गाना एक भुला देने लायक बीट-आधारित धुन पर बना था, जो हर डीजे को बेहद साधारण लगती थी। ऐसे कई डीजे ने म्यूज़िक इंडस्ट्री से जुड़ी खबरें प्रकाशित करनेवाली पत्रिकाओं को बताया कि अगर कभी उन्हें यह गाना बजाना पड़ता है, तो उन्हें बड़ी झिझक होती है। पर जब भी यह

गाना रेडियो पर आता था तो लोग इसे ज़रूर सुनते थे और जैसा कि इस बारे में मतदान करानेवालों को बाद में पता चला, इसके श्रोता भी वही लोग थे, जो पहले ही कह चुके थे कि उन्हें यह गाना ज़्यादा पसंद नहीं है। अमेरिकी रॉक बैंड 3 डोर्स डाउन का गाना 'हियर विदआउट यू' और मरून 5 ग्रुप के हर गाने की कहानी भी कुछ इसी किस्म की है। ये बैंड्स इतने साधारण थे कि म्यूज़िक क्रिटिक्स और श्रोताओं ने मिलकर इनके उत्साहहीन गानों के लिए एक नई श्रेणी ही बना डाली, जिसे 'बाथ रॉक' का नाम दिया गया। इसके बावजूद जब भी इनके गाने रेडियो पर आते थे, तो कोई भी श्रोता चैनल बदलकर किसी और रेडियो स्टेशन पर नहीं जाता था।

दूसरी ओर ऐसे गाने भी थे, जिनके बारे में श्रोताओं का साफ कहना था कि वे उन्हें बहुत नापसंद करते हैं। इसके बावजूद वे गाने 'स्टिकी' थे। उदाहरण के लिए अमेरिकी गायिका क्रिस्टीना एग्युलेरा या सेलीन डियॉन के गाने। इस मसले पर हुए कई शोधों में पुरुष श्रोताओं ने बताया कि उन्हें सेलीन डियॉन से नफरत है और वे किसी भी हाल में उसके गाने नहीं सुन सकते। पर जब भी सेलीन डियॉन का कोई गाना किसी रेडियो स्टेशन पर आता था, तो पुरुष श्रोता अपने रेडियो से चिपके रहते थे। लॉस एंजिलिस के म्यूज़िक मार्केट में ही कई रेडियो स्टेशन हर घंटे के अंत में नियमित रूप से सेलीन डियॉन का कोई गाना बजाते थे। यह वही समय होता था, जब श्रोताओं की संख्या परखी जा रही होती थी। उस समय सेलीन डियॉन के ये गाने श्रोताओं की संख्या में 3 फीसदी बढ़ोत्तरी कर रहे थे, जो रेडियो की दुनिया का एक बहुत बड़ा आँकड़ा है। पुरुष श्रोताओं को भले ही ऐसा लगता हो कि उन्हें सेलीन डियॉन पसंद नहीं है, लेकिन जब उसके गाने बजते थे तो वे अपने रेडियो से चिपके रहते थे।

एक रात मेयर ने बैठकर लगातार कई 'स्टिकी' गाने सुने। अगली रात उन्होंने फिर से यही किया और फिर कई रातों तक ऐसा करते रहे। धीरे-धीरे उन्हें इन सभी गानों में एक समानता नज़र आने लगी। ऐसा नहीं था कि सारे गाने एक जैसे थे, इनमें से कुछ गाने बलाड्स (एक कहानी का संक्षिप्त में वर्णन करनेवाला गीत) थे तो कुछ पॉप। पर इन सभी गानों में एक समानता थी कि ये बिलकुल वैसे थे, जैसा मेयर उस श्रेणी-विशेष के गानों से उम्मीद करते थे। इन सभी गानों को सुनकर ऐसा लगता था जैसे आप उन्हें पहले से जानते हों। रेडियो सुनकर भी हमें ऐसा ही लगता है। बस ये गाने थोड़े ज़्यादा परिष्कृत थे। इन्हें सुनकर लगता था, मानों ये संसार के सबसे बढ़िया, सबसे संपूर्ण गाने के आसपास ही हैं।

मेयर बताते हैं, 'कई बार रेडियो स्टेशन अपने श्रोताओं को फोन करके किसी गाने का एक छोटा सा हिस्सा सुनाकर शोध किया करते थे और श्रोता उसे सुनकर कहते थे कि ऐसा गाना तो मैं हज़ारों बार सुन चुका हूँ और सच कहूँ तो मैं इसे सुन-सुनकर थक चुका हूँ।' पर जब ऐसा कोई गाना रेडियो पर आता है तो आप अपने अवचेतन में कहते हैं, 'मैं जानता हूँ कि यह कौन सा गाना है! मैं इसे हज़ारों बार सुन चुका हूँ! चलो अब रेडियो के साथ-साथ मैं भी इसे गुनगुनाऊँगा।' 'स्टिकी' गाने दरअसल वैसे गाने होते हैं, जैसे आप रेडियो में सुनने की उम्मीद करते हैं। आपका मन गुप्त रूप से वह गाना सुनना चाहता है

क्योंकि वह गाना कुछ-कुछ वैसा ही होता है, जैसे गाने आपने अब तक सुने और पसंद किए हैं। इसीलिए इस गाने को सुनना सबसे सही लगता है।'

इस बात के वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध हैं कि परिचित चीज़ों को प्राथमिकता बनाना न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका-विज्ञान से संबंधित) होता है। वैज्ञानिकों ने ऐसे कई प्रयोग किए हैं, जिसमें उन्होंने म्यूज़िक सुनते समय लोगों के मस्तिष्क का परीक्षण किया और उन न्यूरल रीजन्स (तंत्रिका क्षेत्रों) के बारे में पता लगाया, जो सुनने से संबंधित उत्तेजना को समझने में शामिल थे। म्यूज़िक सुनने से मस्तिष्क के कई क्षेत्र सक्रिय हो जाते हैं, जिसमें ऑडिटरी कॉरटेक्स, द थैलेमस और सुपीरियर पैरिएटल कॉरटेक्स जैसे क्षेत्र शामिल हैं। ये सभी क्षेत्र पैटर्न की पहचान करने से भी जुड़े होते हैं। इसके साथ ही ये क्षेत्र यह निर्णय लेने में मस्तिष्क की सहायता करते हैं कि किस चीज़ पर ध्यान देना है और किस चीज़ को अनदेखा करना है। मस्तिष्क के जो क्षेत्र म्यूज़िक को प्रॉसेस (संसाधित) करते हैं, वे दरअसल पैटर्न्स ढूँढ़ने और परिचित चीज़ों को पहचानने के लिए ही बने होते हैं। यह बात अर्थपूर्ण भी लगती है क्योंकि म्यूज़िक बहुत जटिल होता है। हर गाने में ढेरों टोन, पिचें, एक-दूसरे पर हावी होती कई मेलोडी और आपस में प्रतिस्पर्धा सी करती कई आवाज़ें होती हैं। शोरगुल के बीच बातें करते किसी व्यक्ति के मामले में भी कुछ-कुछ ऐसा ही होता है। ये इतना जबरदस्त है कि किसी एक आवाज़ पर ध्यान केंद्रित करने और बाकी आवाज़ों को अनदेखा करने की मस्तिष्क की क्षमता के बिना किसी भी इंसान को यह सिर्फ शोरगुल जैसा ही लगेगा।

बात जब म्यूज़िक की हो, तो हमारा मस्तिष्क हमेशा जानी-पहचानी ध्वनियाँ ही सुनना चाहता है। इन जानी-पहचानी ध्वनियों के कारण ही म्यूज़िक सुनते समय हमारा ध्यान किसी और आवाज की ओर नहीं भटकता। जैसा कि एम.आई.टी. के वैज्ञानिकों ने पाया कि हमें अपने जीवन में हर पल कोई न कोई निर्णय लेना पड़ता है और हम ऐसा इसीलिए कर पाते हैं क्योंकि व्यवहार संबंधी आदतें इसमें हमारी मदद करती हैं। इसी तरह सुनने से संबंधित आदतों का अस्तित्व भी इसीलिए होता है क्योंकि उनके बिना हमारे लिए यह तय करना कठिन हो जाएगा कि हमें अपने आसपास से आनेवाली किस आवाज पर ध्यान केंद्रित करना है। जैसे एक माँ अपने रोते हुए बच्चे की आवाज को इसीलिए तुरंत सुन लेती है क्योंकि सुनने से जुड़ी आदतें इसमें उसकी मदद करती हैं। इसी तरह खेल के मैदान पर खिलाड़ी दर्शकों के शोर के बजाय अपने कोच की सीटी की आवाज पर इसीलिए ध्यान केंद्रित कर पाते हैं क्योंकि सुनने से संबंधित आदतें उनकी मदद कर रही होती हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो सुनने से संबंधित आदतें महत्वपूर्ण आवाजों और फालतू आवाजों के बीच फर्क करने में हमारी मदद करती हैं और यह सब पूरी तरह अवचेतन रूप से होता है।

इसीलिए आपको जो गाने सुनने में जाने-पहचाने से लगते हैं - भले ही आपने उन्हें पहले कभी न सुना हो - वे 'स्टिकी' गाने कहलाते हैं। हमारे दिमाग की बनावट ही ऐसी है कि यह हमेशा सुनने से संबंधित उन्हीं पैटर्न्स को प्राथमिकता देता है, जो जाने-पहचाने या सुने-सुने से लगते हैं। जैसे जब सेलीन डियॉन का कोई गाना रिलीज होता है, तो वह

न सिर्फ उनके पिछले गानों जैसा लगता है बल्कि उन गानों जैसा भी लगता है, जो अक्सर रेडियो पर बजते रहते हैं। हमारा मस्तिष्क अवचेतन रूप से इनके बीच समानता ढूँढ़ना चाहता है और इस तरह गाना 'स्टिकी' बन जाता है। आप भले ही कभी सेलीन डियॉन का कोई कार्यक्रम देखने न जाएँ पर आप रेडियो पर उनके गाने सुन लेंगे क्योंकि जब आप अपनी गाड़ी में ऑफिस जाते समय रेडियो चलाते हैं, तो दरअसल आप वैसे ही गानों की उम्मीद कर रहे होते हैं। इन गानों की ध्वनियाँ ऐसी होती हैं, जिन्हें सुनने की आदत आपके अंदर पहले से ही होती है।

इस अंतर्दृष्टि से यह समझने में मदद मिली कि 'हे या!' जैसा गाना रेडियो पर नाकाम क्यों रहा, जबकि हिट सॉन्ग साइंस और म्यूजिक कंपनी के अधिकारियों को पूरा यकीन था कि यह गाना बहुत बड़ा हिट होगा। दरअसल समस्या यह नहीं थी कि 'हे या!' एक बुरा गाना था। समस्या तो यह थी कि 'हे या!' श्रोताओं को जाना-पहचाना गाना नहीं लगा। रेडियो के श्रोता कोई भी नया गाना आने पर उसे सुनने का चेतन निर्णय नहीं लेना चाहते थे। उनका मस्तिष्क तो बस आदतों के अनुरूप निर्णय लेना चाहता था। हमें कोई गाना पसंद आएगा या नहीं, यह आमतौर पर हमारा चुनाव नहीं होता। क्योंकि ऐसा करने के लिए हमें बहुत मानसिक प्रयास करना होगा। इसके बजाय हम बस इशारों (फलाँ गाना सुनने में मेरे पसंदीदा गानों जैसा ही लगता है) और इनाम (इसे सुनते हुए साथ-साथ गुनगुनाने में मज़ा आता है!) पर प्रतिक्रिया देते हैं और बिना सोचे-समझे या बिना कोई प्रयास किए हम या तो खुद वह गाना गुनगुनाने लगते हैं या फिर चैनल बदलकर कोई और रेडियो स्टेशन लगा लेते हैं।

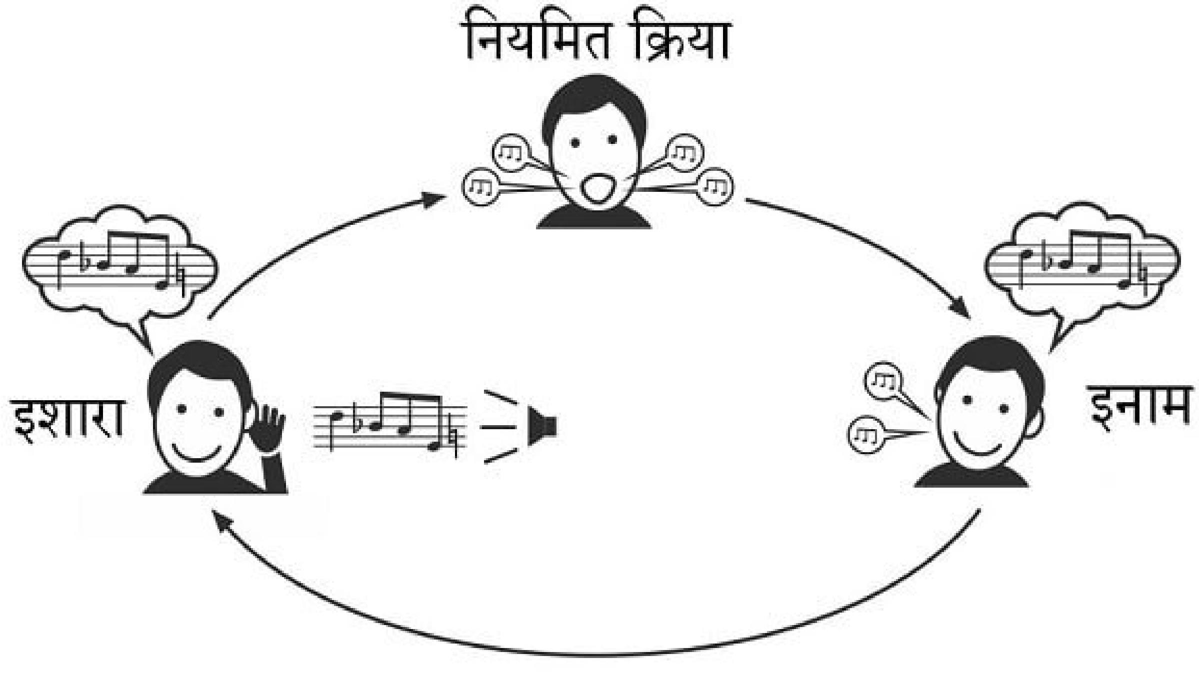

जानी-पहचानी चीज़ों का फंदा

एक तरह से देखा जाए तो एरिस्टा म्यूजिक कंपनी और रेडियो के विभिन्न डीजे को लगभग वैसी ही समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था, जिनसे टारगेट कॉरपोरेशन में काम करनेवाला एंड्रयू पोल जूझ रहा था। श्रोता जिस गाने को नापसंद करते हैं, उसे भी खुशी-खुशी सुन लेते हैं, बस शर्त यह है कि वह गाना उन्हें सुना-सुना सा लगना चाहिए। गर्भवती औरतें डाक से मिले कूपनों को तब तक खुशी-खुशी इस्तेमाल करती रहती हैं, जब तक उनके सामने यह स्पष्ट नहीं हो जाता कि कूपनों के बहाने टारगेट कॉरपोरेशन उनके गर्भ की जासूसी कर रहा है, जो उनके लिए न सिर्फ एक अनजान हरकत है बल्कि डरावनी भी है। दरअसल किसी ग्राहक को ऐसा कोई भी कूपन मिले, जिससे साफ हो जाए कि टारगेट कॉरपोरेशन उस ग्राहक के गर्भधारण के बारे में जानता है, यह ग्राहक की उम्मीद के विपरीत होगा। यह कुछ-कुछ ऐसा है, मानो किसी 42 वर्षीय इनवेस्टमेंट बैंकर से सेलीन डियॉन का गाना गुनगुनाने को कहा जा रहा हो। यह खयाल ही गलत है।

तो फिर डीजे अपने श्रोताओं को 'हे या!' जैसा गाना सुनने के लिए कैसे मनाते हैं या टारगेट कॉरपोरेशन महिला ग्राहकों को डराए बिना उन्हें डाइपर कूपन का इस्तेमाल करने के लिए कैसे मनाता है?

इसका जवाब है, किसी नई चीज़ को पुराने अवतार में पेश करके और अनजान चीज़ को जानी-पहचानी चीज़ बनाकर।

3

1940 के दशक के शुरुआती दौर में अमेरिकी सरकार ने देश की घरेलू मांस आपूर्ति का ज़्यादातर हिस्सा यूरोप और पैसिफिक थिएटर में भेजना शुरू किया था ताकि द्वितीय विश्वयुद्ध में लड़ रहे उनके सैनिकों को खाने-पीने की कमी न पड़े। इसके चलते देश में स्टीक और पोर्क चॉप जैसी मांस से बननेवाली चीज़ों की कमी पड़ने लगी। सन 1941 के आखिर में जब अमेरिका विश्वयुद्ध में शामिल हुआ, तब तक न्यूयॉर्क के रेस्त्राँ हैम्बर्गर बनाने के लिए घोड़े के मांस का उपयोग करने लगे थे और पोल्ट्री (कुक्कुट या मुर्गी) का काला बाजार शुरू हो गया था। सरकारी अधिकारियों को चिंता सताने लगी थी कि अगर विश्वयुद्ध जल्द ही समाप्त नहीं हुआ, तो देशवासियों को प्रोटीन की कमी पड़ जाएगी, जो उनके स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करने जैसा होगा। इस स्थिति को देखते हुए देश के राष्ट्रपति हर्बर्ट हूवर ने सन 1943 में देशवासियों के नाम एक पर्चा जारी किया, जिसमें उन्होंने लिखा, 'विश्वयुद्ध जितने लंबे समय तक चलेगा, यह समस्या उतनी ही विकराल होती जाएगी। देश के खेतों में पशुओं की देखभाल के लिए लोगों की कमी पड़ने लगी है और ऊपर से हमें ब्रिटिश और रशियन लोगों को लगातार आपूर्ति भी करनी पड़ती है। इस युद्ध में मांस और वसा भी उतने ही महत्वपूर्ण हो गए हैं, जितना कि लड़ाकू टैंक और हवाई जहाज।'

अमेरिका के रक्षा विभाग ने अपनी इस चिंता का निवारण करने के लिए देश के शीर्ष समाजशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों और मानवविज्ञानियों को आमंत्रित किया। इसमें मार्गरेट मेड और कर्ट लेविन जैसे विशेषज्ञ भी शामिल थे, जो बाद में इतने मशहूर हुए कि उन्हें अकादमिक क्षेत्र की सेलिब्रिटी के तौर पर देखा जाने लगा। रक्षा विभाग ने इन सभी विशेषज्ञों को यह पता लगाने की जिम्मेदारी सौंपी कि अमेरिकी जनता को ऑर्गन मीट (जानवर के मस्तिष्क, लीवर और जीभ जैसे अंगों का मांस) खाने के लिए कैसे मनाया जाए? ऐसा क्या किया जाए कि अमेरिकी गृहणियाँ अपने पति और बच्चों की प्लेट में प्रोटीन से भरपूर मस्तिष्क, लीवर, जीभ और किडनी परोसने को राज़ी हो जाएँ? क्योंकि ज़्यादातर मांस विदेशों में भेजने के बाद देश में मांस के रूप में बस यही चीज़ें बचती थीं।

उस दौर में अमेरिका में ऑर्गन मीट खाने का चलन नहीं था। 1940 के दशक में एक औसत अमेरिकी महिला अपनी खाने की टेबल पर जानवरों की जीभ या किडनी परोसने के बजाय भूखी रहना ज़्यादा पसंद करती। इसीलिए देश के लोगों की खान-पान संबंधी आदतों को बदलने के लिए एक समीति बनाई गई। इस समीति में नियुक्त किए गए वैज्ञानिक जब सन 1941 में पहली बार एक-दूसरे से मिले, तो उन्होंने अपने सामने उन सांस्कृतिक बाधाओं को पहचानने का लक्षय रखा, जो अमेरिकी लोगों को ऑर्गन मीट खाने के प्रति हतोत्साहित करती थीं। अंतत: इस विषय पर करीब 200 अध्ययन-पत्र प्रकाशित हुए और उन सभी का निष्कर्ष यही था कि लोगों का खान-पान बदलने के लिए ऑर्गन मीट जैसी अनजानी चीज़ को एक जानी-पहचानी चीज़ बनाना होगा। जिसके लिए इसे हर रोज़ इस्तेमाल की जा सकनेवाली चीज़ के तौर पर पेश करना होगा।

वैज्ञानिकों ने निष्कर्ष निकाला कि अगर अमेरिकी जनता को लीवर और किडनी खाने के लिए मनाना है, तो सबसे पहले ये पता लगाना होगा कि एक औसत अमेरिकी व्यक्ति अपने डिनर में जिस तरह के खाने की उम्मीद करता है, लीवर और किडनी से बने खाने को स्वाद, गंध और दिखने में उसके जैसा कैसे बनाया जाए। उदाहरण के लिए सैनिकों को खाना खिलाने के प्रभारी क्वार्टरमास्टर कॉर्प्स के सबसिस्टेंस डिवीजन ने सन 1943 में सैनिकों को खाने में ताजी गोभी परोसना शुरू किया। पर सैनिकों ने इसे तुरंत अस्वीकार कर दिया। इसलिए खाना पकानेवालों ने गोभी के छोटे-छोटे टुकड़े काटकर और फिर उन्हें उबालकर दिखने में बाकी सब्जियों जैसा बना दिया। इसके बाद किसी भी सैनिक ने गोभी खाने से इंकार नहीं किया। एक वर्तमान शोधकर्ता ने उस दौर में हुए अध्ययनों का मूल्यांकन करने के बाद कहा, 'खाना चाहे अनजाना हो या जाना-पहचाना, पर सैनिक उन्हीं चीज़ों को खुशी-खुशी खाते थे, जिन्हें उनके नियमित खाने की तरह ही पकाया गया हो और फिर जाने-पहचाने ढंग से परोसा भी गया हो।'

खानपान संबंधी आदतों को बदलने के लिए बनाई गई समिति का निष्कर्ष था कि अमेरिकी जनता की खाने की आदत बदलने का एक ही रहस्य है कि खाना जाना-पहचाना हो। जल्द ही अमेरिकी गृहणियों को सरकार द्वारा पत्र भेजे जाने लगे, जिनमें कहा जाता था कि 'आपके पति को किडनी से बनी पाई और स्टीक ज़रूर पसंद आएँगे।' कसाईखानों

में मांस खरीदने आनेवाले ग्राहकों को नई-नई रेसिपी दी जाने लगी ताकि वे सीख सकें कि लीवर को कैसे पकाना है।

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के कुछ ही सालों बाद खानपान संबंधी आदतों को बदलने के लिए बनी समिति को भंग कर दिया गया। तब तक ऑर्गन मीट अमेरिकी जनता के खाने का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका था। एक अध्ययन के अनुसार, विश्वयुद्ध के दौरान अमेरिका में ऑर्गन मीट की खपत में करीब 33 फीसदी की बढ़ोत्तरी हुई थी। सन 1955 आते-आते यह आँकड़ा 50 फीसदी से भी ऊपर पहुँच गया। अब डिनर में किडनी पकाना आम बात हो गई थी और खास मौकों पर लीवर पकाना ज़रूरी माना जाने लगा था। अब अमेरिकी जनता का खानपान इतना बदल चुका था कि ऑर्गन मीट को सुकून देनेवाला खाना माना जाने लगा था।

तब से लेकर आज तक सरकार ने अमेरिकी जनता की खानपान की आदतों में सुधार के लिए कई कार्यक्रम चलाए। उदाहरण के लिए 'फाइव अ डे' नामक कार्यक्रम, जिसका मकसद था लोगों को पाँच अलग-अलग फल और सब्जियाँ खाने के लिए प्रोत्साहित करना, यूएसडीए के फूड पिरामिड को अपनाने के लिए मनाना और कम वसावाले दूध और चीज़ को लोगों के बीच मशहूर बनाना। पर इनमें से कोई भी सरकारी कार्यक्रम समिति के निष्कर्षों के प्रति दृढ़ नहीं था और न ही किसी भी कार्यक्रम ने जनता की मौजूदा आदतों के बहाने अपनी सिफारिशों को लागू किया, जिसका परिणाम इन कार्यक्रमों की नाकामी के रूप में सामने आया। अगर अमेरिकी सरकार का कोई कार्यक्रम आज तक स्थाई परिवर्तन लाने में सफल रहा है, तो वह है 1940 का ऑर्गन मीट के सेवन को प्रोत्साहित करनेवाला कार्यक्रम।

हालाँकि टारगेट कॉरपोरेशन जैसी बड़ी कंपनियाँ और विभिन्न रेडियो स्टेशन इस मामले में अमेरिकी सरकार से ज्यादा समझदार निकले।

***

विभिन्न डीजे को एहसास हो गया कि 'हे या!' गाने को हिट बनाने के लिए उन्हें इसे ऐसा बनाना होगा कि यह श्रोताओं को जाना-पहचाना गाना लगे और इसके लिए विशेष प्रयासों की ज़रूरत थी।

समस्या यह थी कि हिट सॉन्ग साइंस जैसे कंप्यूटर प्रोग्राम लोगों की आदतों का अनुमान लगाने के मामले में बहुत अच्छे थे। पर कभी-कभी ये प्रोग्राम ऐसी आदतों का भी पता लगा लेते थे, जो अभी तक लोगों के अंदर विकसित ही नहीं हुई थीं। जब कंपनियाँ ऐसी आदतों के सहारे प्रचार और बिक्री का प्रयास करती हैं, जिन्हें हमने अभी तक अपनाया ही नहीं है या जिन आदतों को हम स्वयं के सामने स्वीकार नहीं करते - जैसे बेवकूफाना बैलेड म्यूजिक के प्रति हमारा गुप्त स्नेह - तो यह उन कंपनियों के लिए खतरनाक साबित हो सकता है। जैसे अगर कोई किराने की दुकान यह दावा करे कि

‘हमारे यहाँ मीठे सीरियल और आइस्क्रीम का सबसे बड़ा भंडार उपलब्ध है’ तो खरीदार उससे दूर ही रहेंगे। इसी तरह अगर कोई कसाई 1940 के दौर की किसी अमेरिकी गृहणी से कहता कि ‘ये लीजिए, आज डिनर में जानवर की आँत पकाइएगा,’ तो वह महिला भले ही डिनर में टूना मछली का कैसरोल बनाकर काम चला लेती, पर जानवर की आँत स्वीकार नहीं करती। अगर कोई रेडियो स्टेशन यह दावा करे कि ‘हम हर आधे घंटे में सेलीन डियॉन का गाना बजाएँगे,’ तो कोई भी श्रोता अपने रेडियो पर वह स्टेशन नहीं लगाएगा। इसीलिए सुपरमार्केटवाले अब सेब और टमाटर जैसी स्वास्थ्यवर्धक चीज़ों के डिब्बे स्टोअर के सामनेवाले हिस्से में रखते हैं और साथ ही यह भी सुनिश्चित कर देते हैं कि इसके बाद आप स्टोअर के उस हिस्से से ज़रूर गुज़रें, जहाँ एम एंड एम्स की रंगीन चॉकलेट और हेजेन-डाज़ की आइस्क्रीम रखी हो। 1940 के दौर का कसाई लीवर को ‘नए जमाने का स्टीक’ कहकर बेचता था और आजकल के विभिन्न डीजे जाने-पहचाने गानों के बीच में चुपचाप टाइटैनिक का थीम साँन्ग बजा देते हैं।

‘हे या!’ को हिट कराने के लिए ज़रूरी था कि वह श्रोताओं की सुनने से जुड़ी स्थापित आदतों का हिस्सा बने। इसके लिए इस गाने को सबसे पहले अन्य हिट गानों के बहाने बजाना होगा, ठीक वैसे ही जैसे अमेरिकी गृहणियाँ खाने में मांस के साथ-साथ चुपचाप किडनी भी परोस दिया करती थीं। इसीलिए फिलाडेल्फिया के डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. सहित देश के अन्य रेडियो स्टेशनों में विभिन्न डीजे यह सुनिश्चित करने लगे कि जब भी ‘हे या!’ गाने को बजाया जाए, तो हमेशा किन्हीं दो लोकप्रिय गानों के बीच ही बजाया जाए। एक रेडियो परामर्शदाता टॉम वेबस्टर बताते हैं, ‘आजकल जब रेडियो के लिए गानों की प्ले-लिस्ट (बजाए जानेवाले गानों की सूची) बनाई जाती है, तो उसे तैयार करने का सबसे मुख्य नियम यही होता है कि जो गाने पसंद नहीं किए जा रहे हैं, उन्हें दो लोकप्रिय गानों के बीच बजाया जाए।’

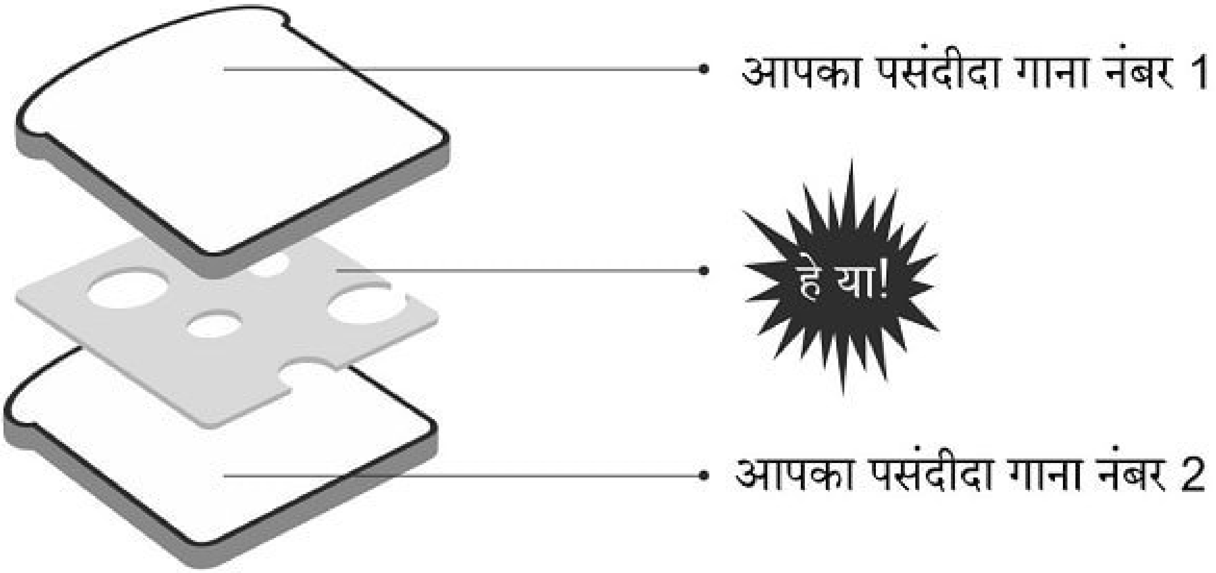

हालाँकि रेडियो स्टेशनों के डीजे ने 'हे या!' को किन्हीं ऐसे-वैसे हिट गानों के बीच नहीं चलाया। उन्होंने तो इसे ऐसे हिट गानों के बीच में चलाया, जो रिच मेयर के अनुसार अनूठे ढंग से 'स्टिकी' थे। इसमें ब्लू कान्ट्रल, 3 डोर्स डाउन, मैरून 5 और क्रिस्टीना एग्युलेरा के गाने शामिल थे। कुछ रेडियो स्टेशन तो इसे लेकर इतने उत्सुक थे कि उन्होंने एक ही गाने का इस्तेमाल कई-कई बार किया।

उदाहरण के लिए डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. की 19 सितंबर 2003 के गानों की प्ले-लिस्ट कुछ इस प्रकार थी :

11:43 बजे 3 डोर्स डाउन का गाना 'हियर विदआउट यू'

11:54 बजे ब्लू कान्ट्रेल का गाना 'ब्रीद'

11:58 बजे आउटकास्ट का गाना 'हे या!'

12:01 बजे ब्लू कान्ट्रेल का गाना 'ब्रीद'

या 16 अक्टूबर के गानों की प्ले-लिस्ट कुछ ऐसी थी :

09:41 बजे मैरून 5 का गाना 'हार्डर टू ब्रीद'

09:45 बजे आउटकास्ट का गाना 'हे या!'

09:49 बजे क्रिस्टीना एग्युलेरा का गाना 'कान्ट होल्ड अस डाएन'

10:00 बजे फैरेल का गाना 'फ्रॉन्टिन'

12 नवंबर के गानों की प्ले-लिस्ट :

09:58 बजे 3 डोर्स डाउन का गाना 'हियर विदआउट यू'

10:01 बजे आउटकास्ट का गाना 'हे या!'

10:05 बजे जस्टिन टिंबरलेक का गाना 'लाइक आई लव यू'

10:09 बियॉन्से का 'बेबी बॉय'

वेबस्टर बताते हैं, 'गानों की प्ले-लिस्ट तैयार करने के पीछे मुख्य विचार होता है, जोखिम कम करना। रेडियो स्टेशनों को नए गानों के साथ थोड़ा जोखिम उठाना पड़ता है वरना श्रोता जल्द ही वह स्टेशन सुनना बंद कर देंगे। पर श्रोता दरअसल उसी श्रेणी के गाने सुनना चाहते हैं, जिस श्रेणी के गाने उन्हें पहले से पसंद होते हैं। इसीलिए नए

गानों को इस तरह बजाया जाता है कि वे जानी-पहचानी श्रेणी के गानों जैसे लगें।'

दो लोकप्रिय गानों के बीच में एक ऐसा गाना बजाना, जो श्रोताओं को पसंद न हो, यह चलन शुरू होने से पहले ही सितंबर महीने के शुरुआती दिनों में जब डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. ने पहली बार 'हे या!' गाना बजाना शुरू किया। तो 26.6 फीसदी श्रोता इसे सुनते ही रेडियो का चैनल बदलकर किसी और स्टेशन पर चले जाते थे। दो 'स्टिकी' यानी लोकप्रिय गानों के बीच 'हे या!' बजाए जाने के कुछ दिनों बाद अक्टूबर के महीने में यह आँकड़ा घटकर 13.7 फीसदी हो गया। दिसंबर महीने तक यह मात्र 5.7 फीसदी रह गया। देश के अन्य प्रमुख रेडियो स्टेशनों ने भी समान तरीका अपनाया और दो लोकप्रिय गानों के बीच में एक ऐसा गाना बजाने लगे, जो श्रोताओं को पसंद न आ रहा हो। वहाँ भी यह गाना बजने पर श्रोताओं द्वारा चैनल बदलकर किसी और रेडियो स्टेशन पर जाने का आँकड़ा लगातार इसी ढंग से घटता रहा।

डब्ल्यू.आई.ओ.क्यू. 'हे या!' गाने को हर रोज़ कम से कम पंद्रह बार बजाता था। जैसे-जैसे श्रोता 'हे या!' को बार-बार सुनते रहे, वैसे-वैसे यह लोकप्रिय होता गया और आखिरकार श्रोताओं को यह एक जाना-पहचाना गाना लगने लगा। लोगों के अंदर इसे सुनने की आदत विकसित होने लगी। पहले-पहल वे रेडियो चलाते ही इसे सुनने की उम्मीद करते थे, फिर यह उम्मीद लालसा में बदल गई और जल्द ही 'हे या!' को सुनना उनकी आदत में तब्दील हो गया। गाने की लोकप्रियता इतनी बढ़ी कि रेडियो स्टेशनों ने इसे बजा-बजाकर कई मिलियन डॉलर्स कमाए, इसके 5.5 मिलियन एल्बम बिके और आखिरकार इसने एक एमी अवॉर्ड भी जीता। इस एल्बम ने आउटकास्ट बैंड को सुपरस्टार्स की श्रेणी में ला खड़ा किया। प्रचार अधिकारी बार्टेल्स बताते हैं, 'इस एल्बम से आउटकास्ट बैंड को हिप-हॉप म्यूजिक से अलग श्रोताओं का एक नया वर्ग मिला। आज जब कोई नया गायक आकर मुझे अपना गाना सुनाता है और यह दावा करता है कि उसका गाना एक दिन 'हे या!' की तरह ही हिट होगा, तो मुझे बहुत संतुष्टि का अनुभव होता है।'

***

एंड्रयू पोल ने महिला ग्राहकों के गर्भवती होने का अनुमान लगाने की मशीन बनाई और संभावित रूप से गर्भवती हो चुकी हज़ारों महिला ग्राहकों की पहचान की। इसके बाद कंपनी को किसी ने चेताया कि जब महिला ग्राहकों को टारगेट कॉरपोरेशन की ओर से ऐसे विज्ञापन मिलेंगे, जिनसे साफ जाहिर होगा कि टारगेट कॉरपोरेशन उनके गर्भवती होने के बारे में सब कुछ जानता है, तो हो सकता है कि उनमें से कुछ महिलाएँ परेशान हो जाएँ। यह भी संभव है कि निजी जिंदगी में ताकझाँक करने की यह हरकत हर किसी को पसंद न आए। यह बात समझ में आते ही टारगेट कॉरपोरेशन ने फैसला किया कि कंपनी इस मामले में अपने कदम पीछे खींचकर अन्य विकल्पों पर विचार करेगी।

कंपनी के मार्केटिंग विभाग का मानना था कि राष्ट्रीय स्तर पर अभियान शुरू करने से

पहले बेहतर होगा कि कंपनी इस मसले पर कुछ छोटे-छोटे प्रयोग करे। चूँकि कंपनी अपने ग्राहकों के एक छोटे से समूह को खासतौर पर बनाए गए मेल भेजने में सक्षम थी इसलिए अधिकारियों ने पोल की गर्भवती महिला ग्राहकों की सूची में से कुछ महिलाओं को चुना और अपने विज्ञापनों का परीक्षण शुरू कर दिया। वे इन महिलाओं को अलग-अलग तरह के कुछ विज्ञापन एक साथ भेजकर उनकी प्रतिक्रिया समझने में लग गए।

महिला ग्राहकों के गर्भवती होने का अनुमान लगानेवाली पोल की प्रणाली के जानकार टारगेट कॉरपोरेशन के एक अधिकारी ने बताया, 'हम अपने हर ग्राहकों को विज्ञापनों की एक पूरी पुस्तिका भेजने में सक्षम हैं। यह पुस्तिका उनके लिए खासतौर पर तैयार की जाती है, जिसमें लिखा होता है कि आपने पिछले सप्ताह जो कुछ भी खरीदा था, हम आपको उसकी एक सूची भेज रहे हैं और साथ ही उसके आधार पर आपके लिए एक विशेष कूपन ऑफर भी भेज रहे हैं, उम्मीद है यह आपको पसंद आएगा।' उस अधिकारी ने स्पष्ट कहा, 'किराने के सामान के मामले में तो हम हमेशा यही तरीका अपनाते हैं।

'पर गर्भधारण से जुड़े उत्पादों के मामले में हमें समझ में आया कि कुछ महिलाएँ ये विज्ञापन पाकर नाखुश हो जाती हैं। इसीलिए हमने इन विज्ञापनों के साथ-साथ ऐसी चीज़ों के विज्ञापन भी भेजने शुरू कर दिए, जिनके बारे में हमें पहले से पता होता है कि गर्भवती महिलाएँ उन्हें कभी नहीं खरीदेंगी। इसका फायदा यह होता है कि इन महिलाओं को इस बात का शक नहीं होता कि हम उनके गर्भवती होने के बारे में जानते हैं। हम डाइपर के विज्ञापनों के साथ-साथ बगीचे की घास काटनेवाली मशीन का विज्ञापन जोड़ देते हैं और नवजात बच्चों के कपड़ों के विज्ञापनों के साथ वाइन के गिलासों का विज्ञापन लगा देते हैं। जिससे ऐसा लगता है कि ये सारे उत्पाद यूँ ही चुने गए हैं और इनके पीछे कोई विशेष कारण नहीं है।

'हमें पता चला कि जब तक महिला ग्राहकों को यह पता नहीं चलता कि उनके पीठ पीछे उनकी जासूसी की जा रही है, तब तक वे हमारे कूपनों का इस्तेमाल करती रहती हैं। वे खुद ही यह अनुमान लगा लेती हैं कि उनके मोहल्ले की बाकी महिलाओं को भी बच्चों के पालने और डाइपर्स के विज्ञापनोंवाले मेल ही भेजे गए होंगे। जब तक इन महिला ग्राहकों को हमारी किसी हरकत से घबराहट नहीं होती, तब तक सब चलता रहता है।'

'ऐसा क्या किया जाए कि हम गर्भवती महिलाओं को अपने उत्पादों के विज्ञापन भी भेज दें और उन्हें इस बात का पता भी न लगे कि हमें उनके गर्भवती होने की जानकारी है?' टारगेट कॉरपोरेशन और पोल के इस सवाल का वही जवाब है, जिसकी मदद से विभिन्न डीजे ने श्रोताओं के बीच 'हे या!' गाने को लोकप्रिय बनाया। जिस तरह वे दो लोकप्रिय गानों के बीच 'हे या!' को बजा रहे थे, उसी तरह टारगेट कॉरपोरेशन भी डाइपर और नवजात शिशुओं के उत्पादों के विज्ञापनों और कूपनों को अन्य विज्ञापनों के बीच लगाकर अपनी महिला ग्राहकों को भेज रहा था। इससे महिला ग्राहकों को ज़रा

भी शक नहीं होता था कि कंपनी उनके गर्भवती होने के बारे में जानती है क्योंकि ढेर सारे अलग-अलग उत्पादों के विज्ञापन और कूपनों का जत्था पाकर वह उन्हें जाना-पहचाना और सहज लगता था।

जल्द ही नवजात बच्चों और नई-नवेली माँओं से जुड़े उत्पादों की बिक्री आसमान छूने लगी। हालाँकि टारगेट कॉरपोरेशन अपने उत्पादों की बिक्री के आँकड़ों को श्रेणीबद्ध तो नहीं करता, पर सन 2002 में पोल को नौकरी पर रखने से लेकर सन 2009 के बीच टारगेट कॉरपोरेशन का राजस्व 44 बिलियन डॉलर से बढ़कर 65 बिलियन डॉलर तक पहुँच गया। सन 2005 में कंपनी के अध्यक्ष स्टेनहेफेल ने अपने ढेरों निवेशकों के सामने खड़े होकर दावा किया था कि 'कंपनी का सबसे ज़्यादा ध्यान उन उत्पादों को बेचने पर है, जो नवजात बच्चों और नई-नवेली माँओं से जुड़े हैं।'

उन्होंने कहा, 'जैसे-जैसे हमारी डाटाबेस संबंधी प्रणालियाँ और परिष्कृत हुई हैं, वैसे-वैसे टारगेट कॉरपोरेशन द्वारा ग्राहकों को भेजे जानेवाले मेल नए मूल्यों को बढ़ावा देने का ज़रिया बन गए हैं। इससे नवजात बच्चों व नई-नवेली माँओं की श्रेणीवाले ग्राहकों को खरीदारी के लिए राजी करना आसान हो गया है। उदाहरण के लिए कंपनी में बच्चों के उत्पादों की श्रेणी ग्राहकों के जीवन के हर चरण का हिस्सा बन रही है और प्रसवपूर्व देखभाल से लेकर कार की विशेष सीटों की खरीदारी तक फैली हुई है। सन 2004 में टारगेट बेबी डायरेक्ट मेल प्रोग्राम की मदद से कंपनी की बिक्री में खासा इज़ाफा हुआ था।'

बात चाहे नया गाना बेचने की हो, नया खाद्य-पदार्थ बेचने की हो या बच्चों का नया पालना बेचने की हो, इन सभी मामलों से एक ही बात सामने आती है कि अगर आप किसी नई चीज़ को ग्राहक की पुरानी आदतों के अनुसार बेचते हैं, तो लोगों के लिए उसे स्वीकार करना ज़्यादा सहज होता है।

4

इस सबक की उपयोगिता सिर्फ बड़े व्यापारिक संगठनों, सरकारी एजेंसियों और रेडियो कंपनियों द्वारा हमारी पसंद-नापसंद में हेरफेर करने तक ही सीमित नहीं है। इन अंतर्दृष्टियों को हम अपने जीवन में बदलाव लाने के लिए भी प्रयोग कर सकते हैं।

उदाहरण के लिए सन 2000 में देश के सबसे बड़े गैर-लाभकारी संगठनों में से एक वाइ.एम.सी.ए. ने दो सांख्यिकीविदों को काम पर रखा। इसका मकसद था स्वास्थ्य के मामले में संसार को एक बेहतर जगह बनाने के लिए डेटा से संचालित अनुमान-प्रणाली की शक्तियों का उपयोग करना। अमेरिका में वाइ.एम.सी.ए. की 2600 से भी ज़्यादा शाखाएँ हैं, जिनमें से ज़्यादातर जिम या सामुदायिक केंद्रों के रूप में कार्यरत हैं। करीब एक दशक पहले इस संगठन के शीर्ष अधिकारियों को यह चिंता सताने लगी कि बाजार में स्वयं को प्रतिस्पर्धी बनाकर कैसे रखा जाए। इसके लिए उन्होंने सामाजिक-विज्ञानी बिल

लेजॉरस और गणितज्ञ डीन अबॉट की मदद ली।

इन दोनों विशेषज्ञों ने वाई.एम.सी.ए. के 1 लाख 50 हज़ार से भी ज़्यादा 'सदस्य संतुष्टि सर्वेक्षणों' की मदद से डाटा इकट्ठा किया। ये सारे सर्वेक्षण पिछले कई सालों में किए गए थे। बिल लेजॉरस और डीन अबॉट ने इस डाटा में पैटर्न ढूँढ़ने शुरू कर दिए। उस समय वाई.एम.सी.ए. के अधिकारियों का मानना था कि लोग विशेष प्रकार के व्यायाम उपकरण और आधुनिक सुविधाएँ चाहते हैं। इसीलिए वाई.एम.सी.ए. अब तक वजन उठानेवाला व्यायाम करने के लिए शानदार कमरों और योगा स्टूडियो के निर्माण में लाखों डॉलर्स खर्च कर चुकी थी। पर जब सर्वेक्षणों के डाटा का विश्लेषण किया गया, तो पता चला कि भले ही विशेष प्रकार के व्यायाम उपकरणों और आधुनिक सुविधाओं के कारण लोग शुरू-शुरू में संगठन के सदस्य बनने की ओर आकर्षित हुए हों, पर उन्हें लंबे समय तक इस संगठन में बनाए रखने के लिए किसी और ही चीज़ की ज़रूरत थी।

डाटा से पता चला कि लोगों की धारणाएँ भावनात्मक कारकों से संचालित होती हैं, जैसे क्या संगठन के कर्मचारी सदस्यों को उनके नाम से जानते हैं और क्या वे उनके आने पर उनका अभिवादन करते हैं। विश्लेषण से सामने आया कि लोग जिम में व्यायाम के उपकरणों से नहीं बल्कि लोगों से जुड़ने के लिए आते हैं। जैसे जब वाई.एम.सी.ए. के किसी सदस्य की जिम में किसी अन्य व्यक्ति से दोस्ती हो जाती है, तो उनके व्यायाम सत्र में हिस्सा लेने की संभावना बढ़ जाती है। दूसरे शब्दों में कहें कि वाइ.एम.सी.ए. में शामिल होनेवाले लोगों की अपनी कुछ विशेष सामाजिक ज़रूरतें होती हैं। अगर वाइ.एम.सी.ए. अपने सदस्यों को संतुष्टि महसूस कराए तो वे खुश रहते हैं। अतः लोगों को व्यायाम के लिए प्रोत्साहित करने के लिए ज़रूरी था कि वाइ.एम.सी.ए. लोगों के पुराने पैटर्न्स का फायदा उठाए और साथ ही अपने कर्मचारियों को सदस्यों का नाम याद रखना भी सिखाए। वाइ.एम.सी.ए. के मामले से भी वही बात सामने आती है, जो टारगेट कॉरपोरेशन और विभिन्न डीजे के मामले में सामने आई थी कि लोगों में एक नई आदत विकसित करने के लिए यह ज़रूरी है कि उसे ऐसी जानी-पहचानी चीज़ों के साथ परोसा जाए, जिन्हें लोग पहले से पसंद करते हैं। वाई.एम.सी.ए. के मामले में यह आदत थी, व्यायाम की आदत और लोगों को जो चीज़ पहले से पसंद थी, वह थी, ऐसी जगहों पर जाने की स्वाभाविक इंसानी प्रवृत्ति, जहाँ नए दोस्त बनाए जा सकें।

बिल लेजॉरस कहते हैं, 'अब हमें समझ में आने लगा है कि लोगों को जिम का सदस्य बनाए रखने के लिए क्या करना ज़रूरी है। लोग ऐसी जगहों पर जाना चाहते हैं, जहाँ उनकी सामाजिक ज़रूरतें पूरी हो सकें। जब लोग समूह में व्यायाम करते हैं, तो इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि वे व्यायाम करना बंद नहीं करेंगे। यह तरीका इतना कारगर है कि आप इसे अपनाकर पूरे देश का स्वास्थ्य सुधार सकते हैं।'

अनुमान-आधारित विश्लेषण के विशेषज्ञों का मानना है कि वह दिन जल्द ही आएगा, जब कंपनियाँ हमारी पसंद और आदतों का अनुमान हमसे भी बेहतर ढंग से लगा सकेंगी। हालाँकि कोई व्यक्ति एक खास ब्रांड का पीनट बटर पसंद करता है, यह बात पता होने

भर से आप ऐसा कुछ नहीं कर सकते कि वह उस पीनट बटर को जाकर खरीद ही ले। बात चाहे किराने का सामान खरीदने की हो या जिम जाकर व्यायाम करने की, किसी भी नई आदत को बाजार में लोकप्रिय बनाने के लिए यह समझ होना ज़रूरी है कि एक नई चीज़ को भी किसी जानी-पहचानी चीज़ की तरह कैसे प्रस्तुत किया जा सकता है।

आखिरी बार जब एंड्रयू पोल से मेरी बातचीत हुई, तो मैंने उसे बताया कि मेरी पत्नी दूसरी बार गर्भवती है और उसका सातवाँ महीना चल रहा है। पोल के भी बच्चे हैं इसलिए हमने कुछ देर तक बच्चों के बारे में बातचीत की। मैंने उससे कहा कि 'मेरी पत्नी और मैं कभी-कभी टारगेट कॉरपोरेशन के स्टोअर्स से खरीदारी करते हैं और चूँकि मैंने कंपनी को अपने घर का पता भी दे रखा है, तो शायद जल्द ही हमें भी मेल के जरिए कंपनी के कूपन मिलना शुरू हो जाएँगे। हाल ही मैंने गौर किया कि जैसे-जैसे मेरे बच्चे के जन्म का समय नज़दीक आया, वैसे-वैसे कंपनी द्वारा हमारे घर भेजे जानेवाले विज्ञापनों में डाइपर्स, लोशन और नवजात बच्चों के कपड़ों के विज्ञापनों की संख्या बढ़ गई।

मैं सोच रहा हूँ कि जैसे ही मुझे कुछ कूपन मिलेंगे, मैं उसी सप्ताह उनका इस्तेमाल शुरू कर दूँगा। मैं अपने बच्चे के लिए एक पालना, कुछ खिलौने और नर्सरी के कुछ पर्दे खरीदने की सोच रहा था। चूँकि टारगेट मुझे ठीक उन्हीं चीज़ों के कूपन भेज रहा था, जिन्हें मैं खरीदने की सोच रहा था इसलिए मुझे इससे काफी मदद मिली।'

पोल ने मुझसे कहा, 'बस बच्चे की पैदाइश का इंतजार है, फिर देखना, हम तुम्हें ऐसी चीज़ों के कूपन भी भेजेंगे, जिनके बारे में तुम्हें पता भी नहीं होगा कि तुम उन्हें खरीदना चाहते हो।'

***

1 इस अध्याय में उल्लेखित बातें टारगेट कॉरपोरेशन के एक दर्जन से भी अधिक वर्तमान और पूर्व कर्मचारियों से हुई बातचीत पर आधारित हैं। इनमें से कई कर्मचारी नाम और पहचान उजागर न करने की शर्त पर बात करने को राज़ी हुए क्योंकि उन्हें डर था कि इसके लिए या तो उन्हें नौकरी से बरखास्त किया जा सकता है या अन्य तरीकों से दंडित किया जा सकता है। टारगेट कॉरपोरेशन को इस अध्याय में उल्लेखित चीज़ों पर प्रतिक्रिया देने का मौका भी दिया गया था और कहा गया था कि कंपनी ऑन-रिकॉर्ड इंटरव्यू के लिए गेस्ट एनालिटिक्स डिपार्टमेंट (मेहमान विश्लेषण विभाग) के अधिकारियों को भेजे, पर कंपनी ने ऐसा करने से साफ इंकार कर दिया। लेखक की ओर से तथ्यों की जाँच के संबंध में कंपनी से कई बार संपर्क किया गया। कंपनी ने सिर्फ दो बार ई-मेल का जवाब देने के अलावा बाकी हर बार सवालों का जवाब देने से इंकार कर दिया। अपने पहले ई-मेल में कंपनी ने कहा : 'टारगेट कॉरपोरेशन में हमारा मिशन है कि हम अपने मेहमानों के लिए खरीदारी का सबसे पसंदीदा स्थान बनें। हम अपने मेहमानों को उत्कृष्ट मूल्य, निरंतर नयापन और खरीदारी का असाधारण अनुभव उपलब्ध कराते हैं। मेहमानों को सर्वश्रेष्ठ सेवा देने के लिए हमारा एक ही सिद्धांत है, 'कम दाम में ऊँची उम्मीदें पूरी करना।' चूँकि हमारा सारा ध्यान अपना यह मिशन पूरा करने की ओर केंद्रित है इसलिए हमने अपने मेहमानों की प्राथमिकताओं को समझने के लिए काफी निवेश किया है। अपने इस प्रयास में हमने विभिन्न रिसर्च-टूल्स की भी मदद ली ताकि हम ताजा चलन और विभिन्न इलाकों में रहनेवाले हमारे अलग-अलग प्रकार के मेहमानों की प्राथमिकताओं को समझ सकें। शोध से प्राप्त डाटा का इस्तेमाल करके हम मेहमानों के लिए अपने स्टोअर की स्थिति, उत्पाद के चयन और कूपनों को बेहतर बनाते हैं। इस विश्लेषण से टारगेट कॉरपोरेशन अपने मेहमानों को खरीदारी का सर्वश्रेष्ठ अनुभव उपलब्ध कराने में सक्षम बनता है। उदाहरण के लिए स्टोअर के अंदर हुई खरीदारी के दौरान हमारा रिसर्च-टूल मेहमान द्वारा की गई खरीदारी के आधार पर यह अनुमान लगा सकता है कि उसके लिए कौन सा ऑफर सबसे बेहतर होगा, जिसका वितरण हम उनके भुगतान की रसीद के साथ ही कर देते हैं। इसके अलावा हमारे पास ऐसे कार्यक्रम भी हैं, जिनमें कोई भी ग्राहक अपनी मर्जी से शामिल हो सकता है। इन्हीं में से एक है, बेबी रजिस्ट्री कार्यक्रम, जिसके माध्यम से टारगेट कॉरपोरेशन को यह समझने में मदद मिलती है कि कैसे मेहमानों की ज़रूरतें समय के साथ बदल जाती हैं। इससे हम नई माँओं को खरीदारी में बचत करनेवाले कूपन उपलब्ध कराते हैं। हमारा गहरा विश्वास है कि हमारे इन प्रयासों से हमारे मेहमानों को सीधा फायदा होता है क्योंकि उन्हें अपनी ज़रूरत की हर चीज़ टारगेट स्टोअर्स में ही मिल जाती है। इन प्रयासों से टारगेट कॉरपोरेशन को भी फायदा होता है क्योंकि हमारी सर्वश्रेष्ठ सेवाओं के चलते मेहमान हमारे वफादार रहते हैं और अक्सर हमारे स्टोअर से ही खरीदारी करते हैं, जिससे हमारी बिक्री बढ़ती है।' कंपनी ने अपने दूसरे ई-मेल में कहा : 'हमारे बारे में आपके करीब-करीब सारे दावे गलत सूचनाओं पर आधारित हैं और इनका प्रकाशन करना जनता को भ्रमित करने के बराबर होगा। आपके हर दावे का एक-एक करके जवाब देने का हमारा कोई इरादा नहीं है। हम अपनी कानूनी जिम्मेदारियों को बहुत अच्छी तरह समझते हैं और संरक्षित स्वास्थ्य

सूचना संबंधी कानूनसहित हर कानून का गंभीरता से पालन करते हैं।’

भाग

तीन

समाज की आदतें

8

सैडलबैक चर्च और मॉन्टगोमेरी बसों का बहिष्कार

आंदोलन कैसे शुरू होते हैं

शाम 6 बजे चलनेवाली क्लीवलैंड एवेन्यू बस फुटपाथ के किनारे रुकी और एक दुबली-पतली अफ्रीकन-अमेरिकन महिला उसमें चढ़ी। उसने पतले फ्रेम का चश्मा और एक साधारण सी भूरे रंग की जैकेट पहन रखी थी। बस के अंदर पहुँचते ही उसने अपने पर्स से दस सेंट निकालकर किराएवाली पेटी में डाल दिए।

यह अल्बामा राज्य के मॉन्टगोमेरी शहर की बात है। उस दिन गुरूवार था और तारीख थी 1 दिसंबर सन 1955 । वह महिला मॉन्टगोमेरी स्टोअर्स नामक एक डिपार्टमेंट स्टोअर में दर्जी के तौर पर काम करती थी और दिनभर अपना काम निपटाने के बाद बस से घर लौट रही थी। बस में काफी भीड़ थी और उस दौर के कानून के अनुसार आगे की चार सीटें श्वेत (गोरे) यात्रियों के लिए आरक्षित थीं। पीछे के जिस हिस्से में अश्वेत (काले) यात्रियों को बैठने की इज़ाज़त थी, वह पहले ही भर चुका था। इसलिए रोजा पार्क्स नामक वह महिला श्वेत यात्रियों के ठीक पीछे स्थित बीचवाली पंक्ति की एक सीट पर बैठ गई। उस पंक्ति में हर किसी को बैठने की इज़ाज़त थी।

जैसे-जैसे बस अपने मार्ग से आगे बढ़ी, कुछ और यात्री बस में चढ़े। जल्द ही सभी सीटें भर गईं, जिसके चलते कुछ यात्रियों को खड़े-खड़े सफर करना पड़ रहा था। इनमें एक श्वेत यात्री भी था, जो बस की छत पर लगी रॉड पकड़े खड़ा हुआ था। जब बस के ड्राइवर जेम्स एफ. ब्लेक ने देखा कि एक श्वेत यात्री खड़ा हुआ है, तो उसने बीचवाली पंक्ति की सीटों पर बैठे अश्वेत यात्रियों को चिल्लाते हुए उठने को कहा। इन अश्वेत यात्रियों में एक रोजा पार्क्स भी थीं। ड्राइवर के चिल्लाने के बावजूद किसी भी अश्वेत यात्री ने अपनी सीट नहीं छोड़ी। भीड़ के कारण बस में काफी शोर भी था इसलिए शायद अश्वेत यात्रियों को ड्राइवर की आवाज़ सुनाई नहीं दी थी। अचानक ड्राइवर ने मॉन्टगोमेरी मार्ग पर एम्पायर थिएटर के सामने के बस स्टॉप पर बस को रोका और उठकर बस के पिछले हिस्से की ओर चल पड़ा।

‘तुम लोगों को शर्म नहीं आती? उठो यहाँ से। दिखाई नहीं देता, वह व्यक्ति खड़ा हुआ है?’ उसने कहा। इतना सुनते ही तीन अश्वेत यात्रियों ने फौरन अपनी सीट छोड़ दी और उठकर खड़े हो गए, लेकिन रोजा पार्क्स अपनी सीट पर बैठी रहीं। उन्होंने ड्राइवर से स्पष्ट शब्दों में कहा कि इस पंक्ति की सीटों पर कोई भी बैठ सकता है क्योंकि ये श्वेत यात्रियों के लिए आरक्षित नहीं हैं और वैसे भी सिर्फ एक ही श्वेत यात्री खड़ा हुआ है।

‘चुपचाप उठती हो या पुलिस को बुलाऊँ!’ ड्राइवर ने कहा।

‘जो करना है करो’ पार्क्स ने शांति से कहा।

ड्राइवर बस से नीचे उतरा और दो पुलिसवालों को बुला लाया।

‘क्या बात है? उठ क्यों नहीं जाती तुम?’ एक पुलिसवाले ने रोजा पार्क्स से पूछा।

‘तुम लोग हमारे साथ जबरदस्ती क्यों कर रहे हो?’ रोजा ने कहा।

‘बकवास मत करो। कानून है तो है! और अब मैं तुम्हें कानून तोड़ने के आरोप में गिरफ्तार करता हूँ,’ पुलिसवाले ने जवाब दिया।

उस समय किसी को अंदाजा भी नहीं था कि यह क्षण सिविल राइट्स मूवमेंट (नागरिक अधिकार आंदोलन) की शुरुआत है। रोजा पार्क्स ने अपनी सीट छोड़ने से इनकार करके अंजाने में ही क्रांति का बिगुल बजा दिया था। इसके बाद धीरे-धीरे कई अश्वेत लोगों ने अपने-अपने तरीके से अलग-अलग क्षेत्रों में अश्वेतों के साथ होनेवाले भेदभाव के खिलाफ आवाज उठानी शुरू कर दी। अभी तक यह लड़ाई सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा अदालतों में लड़ी जा रही थी पर अब यह ऐसी प्रतियोगिता के रूप में सामने आने लगी थी, जिसे पूरे समुदाय से और बड़े पैमाने पर होनेवाले विरोधों से शक्ति मिल रही थी। अगले एक साल में मॉन्टगोमेरी में अश्वेतों (काले लोगों) की आबादी भारी मात्रा में बढ़ रही थी और यह आबादी शहर में चलनेवाली इन बसों का बहिष्कार करके अपना विरोध जतानेवाली थी। यह बहिष्कार तब तक जारी रहा, जब तक सार्वजनिक परिवहन में भेदभाव करनेवाले कानून को खत्म नहीं कर दिया गया। बहिष्कार के कारण हुए आर्थिक नुकसान से इन बसों का संचालन करनेवाले परिवहन विभाग की कमर टूट गई। धीरे-धीरे हज़ारों प्रदर्शनकारियों ने भेदभाव के खिलाफ रैलियाँ निकालना शुरू कर दिया। इसी राजनीतिक भूचाल ने देश को मार्टिन लूथर किंग जूनियर जैसा करिश्माई नेता भी दिया। जल्द ही यह आंदोलन लिटिल रॉक, ग्रीन्सबोरो, रालेघ और बर्मिंघम जैसे इलाकों में भी फैल गया और आखिरकार काँग्रेस भी इसका हिस्सा बन गई। रोजा पार्क्स लोगों के बीच नायक बन गईं और उन्हें आज़ादी के राष्ट्रपति पदक से सम्मानित किया गया। वे इस बात का प्रतीक बन गईं कि कैसे विरोध का एक अकेला स्वर भी दुनिया में बड़ा बदलाव ला सकता है।

पर यह कहानी सिर्फ यहीं तक सीमित नहीं है। रोजा पार्क्स और मॉन्टगोमेरी बसों का बहिष्कार सिविल राइट्स कैंपेन (नागरिक अधिकार अभियान) का केंद्र सिर्फ इसलिए नहीं बना क्योंकि अभियान की शुरुआत में ये विरोध का अकेला स्वर था बल्कि इसके पीछे सामाजिक पैटर्न्स भी जिम्मेदार थे। पार्क्स के अनुभव से पता चलता है कि सामाजिक आदतों में कितनी शक्ति होती है। सामाजिक आदतें दरअसल ऐसे कई व्यवहारों का एक समूह होती हैं, जो सैकड़ों-हज़ारों लोग हर रोज बिना सोचे-समझे करते हैं। इन पर आसानी से ध्यान नहीं जाता पर इनमें संसार को बदलने की शक्ति होती है।

सामाजिक आदतों के कारण ही ऐसे मौकों पर सड़कों पर प्रदर्शनकारियों की भीड़ लगती है। हो सकता है कि ये प्रदर्शनकारी एक-दूसरे से परिचित न हों और अलग-अलग कारणों से प्रदर्शन कर रहे हों पर उन सबका लक्षय एक ही होता है। सामाजिक आदतों के कारण ही एक छोटी सी पहल भी ऐसे आंदोलन में तब्दील हो जाती है, जिससे दुनिया में महत्वपूर्ण बदलाव आते हैं और इन्हीं सामाजिक आदतों के कारण ही जो प्रस्ताव आंदोलन के पहले चरण जैसे नज़र आते हैं, वे कभी आंदोलन नहीं बन पाते। सामाजिक आदतों का इतना गहरा प्रभाव इसलिए होता है क्योंकि आंदोलन बड़ा हो या छोटा, उसके जन्म की प्रक्रिया तीन चरणों में पूरी होती है। इतिहासकारों और समाजशास्त्रियों का मानना है कि अधिकतर आंदोलनों में यही तीन चरण नज़र आते हैं, वे इस प्रकार हैं :

- कोई भी आंदोलन करीबी परिचितों के बीच दोस्ती होने और मजबूत संबंध बनाने जैसी सामाजिक आदतों के कारण ही विकसित होता है।

- हर आंदोलन का विकास समुदाय की आदतों और उन कमज़ोर संबंधों के कारण होता है, जो पड़ोसियों से लेकर पूरे पंथ तक को आपस में जोड़कर रखते हैं।

- आंदोलन इसलिए टिक पाते हैं क्योंकि हर आंदोलन के लीडर्स इसमें शामिल होनेवाले आंदोलनकारियों में नई आदतें विकसित करते हैं, जिनसे उनके अंदर अपनी पहचान को लेकर एक नई भावना पैदा होती है और उनके अंदर मालकियत का भाव आता है।

आमतौर पर जब इस प्रक्रिया के तीनों चरण पूरे हो जाते हैं, तभी कोई आंदोलन इतना सशक्त बन पाता है कि उसे बढ़ावा हासिल करने के लिए किसी की मदद की ज़रूरत नहीं पड़ती और तभी वह बड़ी संख्या में लोगों तक पहुँचता है। हालाँकि एक सफल सामाजिक बदलाव लाने के और भी तरीके होते हैं और अलग-अलग दौर व संघर्षों में ढेरों फर्क भी होते हैं। पर सामाजिक आदतें कैसे काम करती हैं, यह समझने से आपको पता चलता है कि मॉन्टगोमेरी और रोजा पार्क्स नागरिक अधिकार की लड़ाई के मुख्य स्रोत कैसे बने।

यह लाजिमी नहीं था कि उस दिन पार्क्स द्वारा अपनी सीट न छोड़ने का निर्णय उनकी गिरफ्तारी का कारण बन जाएगा। पर तभी आदतों ने हस्तक्षेप किया और फिर जो हुआ वह अद्भुत था।

रोजा पार्क्स ऐसी पहली इंसान नहीं थीं, जिसे नस्लीय भेदभाव को बढ़ावा देनेवाले मॉन्टगोमेरी बसों के नियमों को तोड़ने के कारण गिरफ्तार किया गया हो। यहाँ तक कि उसी साल उनसे पहले कई लोगों को इसके लिए गिरफ्तार किया जा चुका था। सन 1946 में जेनेवा जॉनसन को सिर्फ इसलिए गिरफ्तार किया गया था क्योंकि उसने सीटों के मामले में बहस करनेवाले मॉन्टगोमेरी बस के एक ड्राइवर को उसी लहजे में जवाब दे दिया था। सन 1949 में वोइला व्हाइट, केटी विंगफील्ड और दो अश्वेत बच्चों को

इसलिए गिरफ्तार किया गया था क्योंकि वे श्वेत यात्रियों के लिए आरक्षित सीटों पर बैठे थे और उन्होंने वहाँ से उठने से इनकार कर दिया था। उसी साल न्यूजर्सी से आए दो अश्वेत किशोरों को इसलिए गिरफ्तार कर लिया गया क्योंकि उन्होंने एक श्वेत व्यक्ति और उसके बच्चे के बगल में बैठने की हिम्मत की। सन 1952 में मॉन्टगोमेरी के एक पुलिसवाले ने एक अश्वेत व्यक्ति पर सिर्फ इसलिए गोली चला दी क्योंकि वह एक बस ड्राइवर से बहस कर रहा था। वह अश्वेत व्यक्ति गोली लगने के बाद मौके पर ही मारा गया। सन 1955 में रोजा पार्क्स की गिरफ्तारी के कुछ ही महीनों पहले क्लाउडेट कॉल्विन और मैरी लूसी स्मिथ को अलग-अलग घटनाओं में इसलिए गिरफ्तार कर लिया गया क्योंकि उन्होंने श्वेत यात्रियों को अपनी सीट देने से इंकार कर दिया था।

इनमें से किसी भी गिरफ्तारी का परिणाम बहिष्कार या प्रदर्शन के रूप में सामने नहीं आया। हालाँकि पुलित्जर पुरस्कार जीत चुके नागरिक अधिकारों के इतिहासकार टेलर ब्रांच कहते हैं कि 'उस दौर में मॉन्टगोमेरी में वास्तविक सामाजिक कार्यकर्ता न के बराबर थे। आम लोग न तो कभी विरोध प्रदर्शन करते थे और न कभी मोर्चा वगैरह निकालते थे। सामाजिक कार्यों के लिए लड़ाई सिर्फ अदालतों में होती थी। यह ऐसी चीज़ नहीं थी, जिसमें आम आदमी हिस्सा लेता हो।'

उदाहरण के लिए रोजा पार्क्स की गिरफ्तारी के करीब एक साल पहले सन 1954 में जब युवा मार्टिन लूथर किंग जूनियर मॉन्टगोमेरी आए, तो उन्होंने पाया कि शहर के अधिकतर अश्वेत नागरिक अपने साथ होनेवाले भेदभाव को चुपचाप सह लेते थे और कभी कोई विरोध प्रदर्शन नहीं करते थे। ये अश्वेत नागरिक न सिर्फ भेदभाव के खिलाफ चुप रहते थे बल्कि अपने साथ होनेवाले दुर्व्यवहार और उकसानेवाली हरकतों को भी बिना कुछ बोले स्वीकार कर लेते थे।

तो क्या रोजा पार्क्स की गिरफ्तारी से वहाँ के हालात बदले?

इसका एक स्पष्टीकरण यह है कि उस दौर में वहाँ का राजनीतिक माहौल भी तेजी से बदल रहा था। इसके पिछले साल ही अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट ने ब्राउन वी. बोर्ड ऑफ एजुकेशन के मामले में यह फैसला सुनाया था कि सार्वजनिक स्कूलों में किसी भी तरह का भेदभाव गैरकानूनी होगा। रोजा पार्क्स के गिरफ्तार होने के छह महीने पहले ही अदालत ने यह फैसला सुना दिया था, जिसे 'ब्राउन - 2' नाम से जाना गया। सुप्रीम कोर्ट ने आदेश दिया था कि स्कूलों में भेदभाव खत्म करने के लिए तेजी से कदम उठाए जाएँ। उस समय देश में चारों ओर बदलाव की लहर थी और हर अमेरिकी नागरिक इसे महसूस कर सकता था।

पर नागरिक अधिकार संघर्ष की शुरुआती जमीन मॉन्टगोमेरी में ही क्यों तैयार हुई, इसका जवाब देने के लिए सिर्फ इतनी जानकारी देना काफी नहीं है। क्लाउडेट कॉल्विन और मैरी लूसी स्मिथ को ब्राउन वी. बोर्ड फैसले के माहौल में ही गिरफ्तार किया गया था, पर तब कोई विरोध प्रदर्शन शुरू नहीं हुआ। वहाँ के अधिकतर निवासियों के लिए

'ब्राउन' दूर-दराज की अदालत में हुई एक घटना भर भी थी और यह कह पाना मुश्किल है कि इसका प्रभाव स्थानीय रूप से महसूस किया गया होगा या नहीं। मॉन्टगोमेरी शहर दरअसल अटलांटा या ऑस्टिन जैसे अन्य शहरों जैसा नहीं था, जहाँ विकास संभव नज़र आता हो। ब्रांच बताते हैं, 'मॉन्टगोमेरी एक बहुत ही वाहियात जगह थी। यहाँ नस्लभेद अपनी जड़ें जमा चुका था।'

रोजा पार्क्स की गिरफ्तारी से शहर में जो हुआ, वह यहाँ के लिए सामान्य बात नहीं थी। भेदभाव बढ़ानेवाले कानून तोड़ने के लिए जो लोग जेल गए थे, रोजा पार्क्स उनसे अलग थीं। वे अपने समुदाय में एक बेहद सम्मानित महिला थीं और लोग उन्हें पसंद करते थे। इसलिए जब उन्हें गिरफ्तार किया गया, तो इससे सामाजिक आदतों - दोस्ती की आदतों - की एक श्रृंखला शुरू हो गई, जिसके कारण विरोध प्रदर्शन शुरू हुआ। पार्क्स मॉन्टगोमेरी की दर्जनों सामाजिक मंडलियों का हिस्सा थीं। जिसके चलते उनकी गिरफ्तारी के बाद इन मंडलियों के उनके दोस्तों ने मामले के प्रति समाज की सामान्य उदासीनता बढ़ने से पहले ही प्रतिक्रिया करना शुरू कर दिया।

उस दौर में मॉन्टगोमेरी के सामान्य जीवन पर ऐसे सैकड़ों छोटे-छोटे समूहों का प्रभुत्व था, जिनसे शहर का सामाजिक ताना-बाना बनता था। शहर में सक्रिय नागरिक और सामाजिक संगठनों की निर्देशिका शहर की फोनबुक जितनी ही मोटी थी। ऐसा लगता था कि हर वयस्क व्यक्ति - खासतौर पर हर अश्वेत वयस्क व्यक्ति - किसी न किसी क्लब, चर्च, सामाजिक समूह, सामुदायिक केंद्र या पड़ोस के किसी संगठन से जुड़ा था। अधिकतर लोग एक से ज्यादा संगठनों के सदस्य थे। इन सामाजिक मंडलियों में रोजा पार्क्स को सब जानते और पसंद करते थे। ब्रांच ने नागरिक अधिकार आंदोलनों के इतिहास की जानकारी देनेवाली अपनी किताब 'पार्टिंग द वॉटर्स' में लिखा है, 'रोजा पार्क्स उन चुनिंदा लोगों में से थीं, जिनके बारे में हर कोई यह मानता था कि वे समाज से जितनी मदद लेती हैं, उससे कहीं ज्यादा योगदान स्वयं देती हैं। वे इंसानी स्वभाव की उस उच्चतम खूबी का प्रतिनिधित्व करती थीं, जो मनोरोगी किस्म के असामाजिक तत्वों को मंजूर नहीं होती। वे हर नस्ल और आर्थिक पृष्ठभूमिवाले लोगों के साथ दोस्ती रखती थीं। वे स्थानीय एन.ए.ए.सी.पी. चैप्टर की सचिव थीं, मेथडिस्ट चर्च जाती थीं और अपने घर के नज़दीक स्थित लूथरन चर्च में एक युवा संगठन का काम भी देखती थीं। वे कई बार अपना सप्ताहांत बेघर लोगों को आश्रय देनेवाले शरण स्थलों और बॉटेनिकल क्लब में बिताती थीं। साथ ही गुरूवार की रात को अक्सर औरतों के उस समूह के साथ काम करती थीं, जो एक स्थानीय अस्पताल के गरीब मरीजों के लिए कंबल बुनने का काम करता था। वे गरीब परिवारों के लिए कपड़े बनानेवाले उपक्रम में स्वत: ही योगदान देती थीं। इसके साथ ही वे ऐन मौकों पर अमीर श्वेत परिवारों की महिलाओं के गाउन का नाप भी सुधारती थीं। वे अपने समुदाय का एक अभिन्न हिस्सा थीं। उनकी इस व्यस्तता को देखकर कभी-कभी उनके पति शिकायती लहजे में कहा करते थे कि वे परिवार के साथ कम और बाहरी लोगों के साथ ज्यादा समय बिताती हैं।

समाजशास्त्रियों का कहना है कि आमतौर पर हमारे अधिकतर दोस्त हमारे जैसे ही

होते हैं। हो सकता है कि हमारे कुछ परिचित लोग काफी अमीर हों और कुछ काफी गरीब। वे किसी भी नस्ल के हो सकते हैं और संपूर्णता से देखें, तो हमारे सबसे गहरे रिश्ते अक्सर उन्हीं लोगों से बनते हैं, जो हमारे जैसे दिखते हैं, लगभर हमारे बराबर ही कमाते हैं और समान पृष्ठभूमि से आते हैं।

इसके विपरीत पार्क्स के दोस्त मॉन्टगोमेरी की हर तरह की सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमिवाले थे और अलग-अलग स्तर के पदों पर कार्यरत थे। समाजशास्त्री ऐसे रिश्तों को 'मजबूत संबंध' - फर्स्टहैंड रिलेशनशिप (प्रत्यक्ष रिश्ते) - कहते हैं। पार्क्स के ऐसे रिश्ते पूरे मॉन्टगोमेरी के कई लोगों से थे और ऐसा भी नहीं था कि वे उनसे नियमित रूप से मिलती-जुलती हों। ब्रांच कहते हैं, 'यही तो सबसे खास बात थी कि रोजा पार्क्स ने अश्वेत समुदाय और मॉन्टगोमेरी के अन्य लोगों का सामाजिक स्तर ऊँचा उठाया। वे मज़दूरों की भी दोस्त थीं और कॉलेज के प्रोफेसरों की भी।'

और जैसे ही रोजा पार्क्स को जेल में डाला गया, वैसे ही यह स्पष्ट हो गया कि अपने दोस्तों से उनके रिश्ते कितने मजबूत हैं।

***

गिरफ्तारी के बाद रोजा पार्क्स ने पुलिस स्टेशन से अपने माता-पिता को फोन लगाया। उस समय रोजा घबराई हुई थीं। उनकी माँ को भी समझ में नहीं आया कि इस समय उन्हें क्या करना चाहिए। वे रोजा के ऐसे दोस्तों के बारे में सोचने लगीं, जो इस स्थिति में उनकी मदद कर सकते थे। उन्होंने मॉन्टगोमेरी एन.ए.ए.सी.पी. की प्रमुख रह चुके ई.डी. निक्सन की पत्नी से संपर्क किया। खबर पाते ही निक्सन की पत्नी ने निक्सन को फोन लगाया और कहा कि रोजा को जेल से जमानत पर बाहर लाना होगा। निक्सन फौरन मान गया और उसने क्लिफर्ड डॉर नामक एक श्वेत नस्ल के वकील से संपर्क किया। यह वकील रोजा पार्क्स को जानता था क्योंकि उन्होंने उसकी तीन बेटियों के कपड़ों पर झालर और गोटे लगाए थे।

निक्सन और डॉर ने रोजा की जमानत भरी और उन्हें घर ले आए। वे किसी ऐसे ही मामले की तलाश में थे ताकि मॉन्टगोमेरी बसों में नस्लीय भेदभाव को बढ़ावा देनेवाले कानून को अदालत में चुनौती दे सकें। जैसे ही उन्हें यह मौका हाथ आता नज़र आया, उन्होंने फौरन रोजा पार्क्स से पूछा कि क्या वे उन्हें अदालत में अपनी ओर से केस लड़ने की इजाज़त देंगी? हालाँकि रोजा के पति इसके पक्ष में नहीं थे, उन्होंने तो रोजा से कह दिया था कि 'ये श्वेत लोग तुम्हारा जीना हराम कर देंगे रोजा।'

पर रोजा ने निक्सन के साथ एन.ए.ए.सी.पी. में सालों काम किया था। वे डॉर की बेटियों की डांस की तैयारी करने में मदद भी कर चुकी थीं। अब उनके दोस्त उनसे मदद माँग रहे थे।

रोजा ने उन लोगों से कहा, 'अगर तुम लोगों को लगता है कि इससे मॉन्टगोमेरी का

कुछ भला होगा तो मैं तैयार हूँ।'

उस रात रोजा की गिरफ्तारी से सिर्फ कुछ ही घंटे बाद यह खबर अश्वेत समुदाय में आग की तरह फैल गई। राजनीति में दखल रखनेवाले स्कूल टीचर्स के एक सशक्त समूह के प्रमुख जो. एन. रॉबिन्सन, रोजा पार्क्स के मित्र थे। वे भी उन्हीं संगठनों के सदस्य थे, जिनमें रोजा सक्रिय थीं। उन्हें और उनके समूह के स्कूल टीचर्स को भी रोजा की गिरफ्तारी के बारे में पता चला। साथ ही उनके स्कूलों में पढ़नेवाले बच्चों के माता-पिता को भी यह खबर मिली। करीब आधी रात के समय रॉबिन्सन ने एक आकस्मिक सभा बुलाई और सभी को यह सलाह दी कि सोमवार को हर कोई मॉन्टगोमेरी बसों का बहिष्कार करे क्योंकि इसी दिन रोजा पार्क्स को अदालत में पेश होना था।

इसके फौरन बाद रॉबिन्सन ने अपने ऑफिस के एक कमरे में बैठकर इस बहिष्कार से संबंधित पर्चा तैयार किया और उसकी ढेर सारी प्रतिलिपियाँ बना लीं।

इस पर्चे में लिखा था, 'एक और नीग्रो महिला को सिर्फ इसलिए गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया गया क्योंकि उसने एक श्वेत यात्री के लिए अपनी सीट छोड़ने से इनकार कर दिया। इस महिला के मामले की अदालती सुनवाई सोमवार को होगी। इसीलिए हमारा हर नीग्रो व्यक्ति से आवाहन है कि इस महिला की गिरफ्तारी और उस पर होनेवाली अदालती कार्रवाई के विरोध में सोमवार को मॉन्टगोमेरी बसों का बहिष्कार करें।'

अगली सुबह रॉबिन्सन ने इन पर्चों का एक-एक डिब्बा स्कूल टीचर्स को दिया और कहा कि इन्हें अपने सभी सहकर्मियों व सभी छात्रों के माता-पिता तक पहुँचा दें। पार्क्स की गिरफ्तारी के मात्र चौबीस घंटे के अंदर उन्हें जेल में डालने और अश्वेत समुदाय द्वारा बसों का बहिष्कार करने की जानकारी शहर के सबसे प्रभावशाली समुदायों तक पहुँच गई। इनमें एक प्रभावशाली राजनीतिक समूह एन.ए.ए.सी.पी., ढेरों अश्वेत स्कूल टीचर्स और उनके छात्रों के माता-पिता शामिल थे। जिन लोगों को भी बसों के बहिष्कार के आवाहनवाला पर्चा मिला था, उनमें से अधिकतर लोग रोजा पार्क्स से निजी तौर पर परिचित थे। ये वे लोग थे, जो चर्च में या स्वयंसेवकों की किसी सभा में उनके साथ बैठते थे और उन्हें अपना दोस्त समझते थे। दोस्ती में एक प्राकृतिक वृत्ति होती है, जो हमारे अंदर वह सहानुभूति लाती है, जिसके चलते हम किसी दोस्त के साथ बुरा व्यवहार होने पर उसके लिए दूसरों से लड़ने तक को तैयार हो जाते हैं। अध्ययनों से पता चला है कि लोग अंजान लोगों की तकलीफों को बड़े आराम से नज़रअंदाज कर देते हैं, पर जब किसी दोस्त का अपमान होता है, तो हमारे अंदर इसका विरोध करने का भाव पैदा होता है। यह भाव ही हमें हमारी उस जड़ता से निकालने के लिए काफी होता है, जो हमारे लिए विरोध करना मुश्किल बना देती है। जब रोजा पार्क्स के दोस्तों को उनकी गिरफ्तारी और उसके विरोध में बसों का बहिष्कार करने की जानकारी मिली, तो उनकी दोस्ती की सामाजिक आदत - हम जिसकी इज्जत करते हैं, उसकी मदद करने की नैसर्गिक प्रवृत्ति फौरन उभरकर आ गई।

नागरिक अधिकारों के आधुनिक युग का यह पहला जन-आंदोलन था, जो पार्क्स के पहले हुई अश्वेतों की किसी भी गिरफ्तारी से शुरू हो सकता था। पर यह रोजा पार्क्स के मामले से इसलिए शुरू हुआ क्योंकि उनके दोस्तों का समूह बहुत बड़ा, विविध और आपस में गहरा मेल-जोल रखता था। इन सभी ने पार्क्स की गिरफ्तारी पर एक दोस्त के रूप में स्वाभाविक प्रतिक्रिया दी और यह प्रतिक्रिया इसलिए हुई क्योंकि उनके दोस्त जो भी कर रहे थे, आपसी दोस्ती और सहयोग जताने की सामाजिक आदत के अनुसार कर रहे थे।

इसके बावजूद बहुत से लोगों को ऐसा भी लगा था कि यह विरोध प्रदर्शन एक दिन से ज़्यादा नहीं चलेगा। दुनिया के हर हिस्से में ऐसे छोटे-मोटे विरोध प्रदर्शन होते रहते हैं और इनमें से ज़्यादातर जल्द ही ठंडे भी पड़ जाते हैं। किसी भी इंसान के दोस्तों की संख्या इतनी ज़्यादा नहीं होती कि वह उनके विरोध प्रदर्शन के बलबूते दुनिया में बदलाव ला सके।

इसीलिए आंदोलनों की सामाजिक आदतों का दूसरा पहलू भी बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। मॉन्टगोमेरी बसों का बहिष्कार जल्द ही पूरे समाज में फैल गया। अश्वेत समुदाय को एक-दूसरे के प्रति अपनी जिम्मेदारी पूरी करने के भाव ने आपस में जोड़ रखा था और जब पार्क्स के दोस्तों ने बहिष्कार का आवाहन किया, तो अश्वेत समुदाय ने रोजा पार्क्स की मदद करने को अपनी जिम्मेदारी की तरह देखा। यहाँ तक कि समुदाय के जो लोग रोजा पार्क्स से परिचित नहीं थे, वे भी सामाजिक दबाव - ऐसी शक्ति, जिसे ‘कमजोर संबंधों की शक्ति’ के रूप में जाना जाता है - के चलते इसमें शामिल होने को नज़रअंदाज नहीं कर सके।

2

पलभर के लिए ज़रा यह कल्पना कीजिए कि आप एक समृद्ध कंपनी में मध्य स्तर के स्थापित अधिकारी है। आप सफल हैं और लोग आपको पसंद करते हैं। आपने इस कंपनी में सालों की मेहनत के बाद अपनी प्रतिष्ठा बनाई है और ऐसे दास्तों का एक समूह बनाया है, जिनकी मदद से आप क्लाइंट हासिल कर सकते हैं, उनसे सलाह ले सकते हैं और अपने कार्यक्षेत्र के बारे में गपशप भी कर सकते हैं। आप एक चर्च, एक जिम, एक कंट्री क्लब और अपने कॉलेज की एलुमनी एसोसिएशन के स्थानीय समूह के सदस्य हैं। आपकी काफी इज्जत है और आपको अक्सर किसी न किसी समिति का सदस्य बनने का आमंत्रण मिलता रहता है। जब आपके समुदाय के किसी व्यक्ति को किसी बढ़िया व्यापारिक अवसर के बारे में पता चलता है, तो वह आपको ज़रूर बताता है।

अब कल्पना करें कि आपके पास एक फोन आता है। फोन करनेवाला एक अन्य कंपनी का मध्य स्तर का अधिकारी है और वह नई नौकरी की तलाश में है। वह आपसे पूछता है कि क्या आप अपने बॉस से मेरी सिफारिश कर सकते हैं?

अगर आप इस व्यक्ति से पूरी तरह अपरिचित हैं, तो आपके लिए इस बारे में निर्णय लेना बहुत आसान होगा। भला आप कंपनी में अपनी प्रतिष्ठा दाँव पर लगातार किसी ऐसे व्यक्ति की मदद क्यों करेंगे, जिससे आप पूरी तरह अपरिचित हों?

अगर फोन करनेवाला यह व्यक्ति आपका करीबी दोस्त होगा तो यह भी आपके लिए एक आसान निर्णय होगा। आप उसकी मदद ज़रूर करेंगे। आखिर दोस्त होते किसलिए हैं!

पर तब तक क्या, जब यह व्यक्ति न तो आपका अच्छा दोस्त हो और न पूरी तरह परिचित हो? अगर वह आपके दोस्तों से परिचित हो, पर आप उसे ठीक से न जानते हों, तब आप क्या करेंगे? जब आपका बॉस आपसे उसके बारे में पूछेगा, तो क्या आप उसकी गारंटी लेंगे? दूसरे शब्दों में कहें तो आप अपने दोस्त के दोस्त को नौकरी दिलाने के लिए कितनी ऊर्जा खर्च करेंगे और किस हद तक अपनी प्रतिष्ठा दाँव पर लगाएँगे?

1960 के दशक के आखिर में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के पी.एच.डी. छात्र मार्क ग्रैलोवेटर ने इसी सवाल का जवाब खोजने के मकसद से 282 पुरुषों का अध्ययन किया और देखा कि उन्होंने अपनी मौजूदा नौकरी कैसे हासिल की। मार्क ने पता लगाया कि इन पुरुषों को यह कैसे पता चला कि उनकी कंपनी को नए कर्मचारी की ज़रूरत है। उसने यह भी पता लगाया कि इन पुरुषों ने अपनी सिफारिश कराने के लिए किसे फोन किया, वे चयन प्रक्रिया में इंटरव्यू तक कैसे पहुँचे और सबसे महत्वपूर्ण, इन सब चीज़ों में उनकी मदद किसने की। जैसी कि उम्मीद थी, मार्क को पता चला कि जब इन पुरुषों ने किसी अंजान व्यक्ति की मदद लेने की कोशिश की, तो उन्हें खारिज कर दिया गया। पर जब उन्होंने अपने दोस्तों से संपर्क किया, तो उन्हें मदद ज़रूर मिली।

हालाँकि आश्चर्य की बात तो यह थी कि नौकरी ढूँढ़नेवालों को उन लोगों से कितनी बार मदद मिल रही थी, जिनसे उनका सिर्फ सामान्य परिचय था, जैसे दोस्तों के दोस्त वगैरह। ये ऐसे लोग थे, जो न तो पूरी तरह अजनबी थे और न ही करीबी दोस्त थे। ग्रैनोवेटर इस तरह के रिश्तों को 'कमजोर संबंध' कहते हैं। क्योंकि ये ऐसे लोगों के बीच के संबंधों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिनके परिचित समान लोग हैं, जो एक ही सामाजिक ताने-बाने का हिस्सा हैं पर सीधे तौर पर एक-दूसरे से करीबी दोस्त के रूप में जुड़े हुए नहीं हैं।

ग्रैनोवेटर ने पाया कि असल में नौकरी हासिल करने के मामले में 'कमजोर संबंध' करीबी दोस्तों से ज़्यादा काम आते हैं। क्योंकि ये 'कमजोर संबंध' उन लोगों के सामाजिक ताने-बाने में हमारी पहुँच बना देते हैं, जो हमारे काम के तो हैं, पर हमसे परिचित नहीं हैं। ग्रैनोवेटर ने जिन लोगों का अध्ययन किया, उनमें से कईयों को नई नौकरी के बारे में उन्हीं लोगों से पता चला, जिनसे उनके 'कमजोर संबंध' थे, न कि करीबी दोस्तों से। यह बात समझ में भी आती है क्योंकि हम अपने करीबी दोस्तों से तो नियमित रूप से बातचीत करते हैं या फिर उनके साथ ही काम करते हैं या वैसी चीज़ें पढ़ते हैं। जब तक

उन्हें किसी नए मौके के बारे में पता लगता है, तब तक हमें भी उसका पता लग चुका होता है। जबकि दूसरी ओर जिन लोगों से हमारे 'कमजोर संबंध' होते हैं, उनसे हम दो-चार महीने में एकाध बार ही मिलते हैं। इन लोगों से हमें ऐसी नौकरियों के मौकों के बारे में भी पता चलता है, जिनके बारे में हमें किसी और से कुछ पता नहीं चलनेवाला।

जब समाजशास्त्रियों ने यह जाँच की कि कोई मत या राय किसी एक समुदाय से दूसरे समुदाय में कैसे फैलता है, गपशप अफवाह बनकर कैसे फैलती है और राजनीतिक आंदोलन कैसे शुरू होते हैं, तो उन्हें हर मामले में एक समान पैटर्न नज़र आया : ऐसे लोग जिनसे हमारे 'कमजोर-संबंध' होते हैं, वे भले ही हमारे करीबी जानकारों और दोस्तों से ज़्यादा प्रभावशाली न हों, पर उनके बराबर प्रभावशाली ज़रूर होते हैं। जैसा कि ग्रैनोवेटर लिखते हैं, 'जिनके बहुत कम लोगों से 'कमजोर-संबंध' होते हैं, उन्हें दूर-दराज के सामाजिक ताने-बाने की जानकारी आसानी से नहीं मिल पाती और वे अपने करीबी दोस्तों से मिलनेवाली सीमित जानकारियों और मतों में ही अटके रहते हैं। नई जानकारी से वंचित रहने पर न सिर्फ वे नए विचारों और फैशन से वंचित रह जाएँगे बल्कि श्रम-बाजार में उनकी स्थिति भी कमज़ोर हो सकती है। क्योंकि वहाँ किसी की प्रगति आमतौर पर इस पर निर्भर होती है कि उसे सही समय पर नई नौकरी का मौका मिले।

'इसके अलावा ऐसे लोगों को किसी भी तरह के राजनीतिक आंदोलन में एकीकृत करना मुश्किल हो सकता है... जबकि संभव है कि किसी समूह के लोगों को आसानी से भर्ती किया जा सके। बस समस्या यह है कि कमजोर-संबंधों के बिना समूह से आगे किसी भी चीज़ का प्रसार नहीं हो पाता और बाकी आबादी उससे पूरी तरह बेखबर ही रहती है।'

कमजोर संबंधों की शक्ति यह समझाने में मददगार है कि कुछ दोस्तों के एक समूह द्वारा शुरू किया गया एक छोटा सा आंदोलन एक बड़े सामाजिक आंदोलन में कैसे तब्दील हो जाता है? हज़ारों अलग-अलग लोगों को एक ही उद्देश्य पूरा करने के लिए मनाना बहुत मुश्किल होता है, खासकर तब जब इसमें हिस्सा लेने पर असली कठिनाइयों का सामना करना हो। जैसे बस के बजाय पैदल चलकर काम पर जाना या जेल जाना या रोज सुबह कॉफी पीना बंद कर देना क्योंकि कॉफी बेचनेवाली कंपनी ऑर्गेनिक (जैविक) खेती का समर्थन नहीं करतीं वगैरह। ज़्यादातर लोग ऐसे किसी आंदोलन का समर्थन करने की अपीलों को महत्त्व नहीं देते, जिसमें उन्हें बस की सवारी या कॉफी का सेवन बंद करना पड़े। वे तभी ऐसा करते हैं, जब इस मामले में उनके किसी करीबी दोस्त का अपमान हुआ हो या फिर वह जेल गया हो। इसीलिए किसी भी आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए कार्यकर्ता एक विशिष्ट तरीके पर निर्भर रहते हैं, भले ही लोग उस आंदोलन में हिस्सा लेना न चाहते हों। यह लोगों को मनाने का एक तरीका है, जो पिछले कई सौ सालों से कारगर साबित हो रहा है। यह कुछ और नहीं बल्कि अपने समुदाय या अपने पड़ोसियों के प्रति अपने फर्ज को पूरा करने की विवशता है।

दूसरे शब्दों में आप इसे सामाजिक दबाव भी कह सकते हैं।

सामाजिक दबाव - और किसी समूह की अपेक्षाओं के अनुरूप काम करने के लिए उत्साहित करनेवाली सामाजिक आदतों को परिभाषित करना मुश्किल है क्योंकि हर व्यक्ति इनकी अभिव्यक्ति अलग-अलग ढंग से करता है। इन सामाजिक आदतों का कोई सुसंगत पैटर्न नहीं होता क्योंकि आखिरकार हर किसी को एक ही दिशा में आगे ले जाने में दर्जनों व्यक्तिगत आदतों का हाथ होता है।

हालाँकि अपने सामाजिक समूह के लोगों द्वारा डाले जानेवाले इस दबाव की आदतों में कुछ समान होता है। ये आदतें कमजोर संबंधों के ज़रिए फैलती हैं और लोगों की सामुदायिक भावना के कारण महत्वपूर्ण बन जाती हैं। अगर आप अपने पड़ोस या समुदाय की सामाजिक जिम्मेदारियों को अनदेखा करेंगे, अगर आप अपने समुदाय की अपेक्षाओं पर ध्यान नहीं देंगे, तो समाज में आपकी छवि बिगड़ेगी। इस तरह आप उन तमाम सामाजिक लाभों से वंचित हो सकते हैं, जो किसी सामुदायिक केंद्र, छात्र संघ का या फिर किसी चर्च का सदस्य बनने पर मिलते हैं।

दूसरे शब्दों में अगर कोई नौकरी ढूँढ़ने में मदद की उम्मीद से आपको फोन करता है और आप उसकी मदद नहीं करते हैं, तो हो सकता है कि वह अपने साथ टेनिस खेलनेवाले दोस्त को शिकायती लहजे में आपके बारे में बताए। फिर संभव है कि वह टेनिसवाला दोस्त किसी ऐसे समूह के लोगों को इस बारे में बता दे, जिन्हें आप अपने संभावित ग्राहकों के तौर पर देख रहे थे। इसके बाद हो सकता है वे संभावित ग्राहक आपका फोन न उठाएँ क्योंकि उन्हें लगा हो कि चूँकि आपने नौकरी ढूँढ़ने में उस व्यक्ति की मदद नहीं की इसलिए आपके अंदर टीम भावना नहीं है। खेल के मैदान में तो यह दबाव खतरनाक बन जाता है। वयस्क जीवन में सारे काम इसी तरह होते हैं और सारे समुदाय इसी तरह स्व-व्यवस्थित हो जाते हैं।

सामाजिक समूहों का यह दबाव अपने आपमें किसी आंदोलन को चलाने के लिए काफी नहीं है। पर जब दोस्ती के मज़बूत रिश्ते और आपसी दबाव के कमजोर संबंध आपस में जुड़ जाते हैं, तो इससे एक अविश्वसनीय गति पैदा होती है। तभी कोई व्यापक सामाजिक परिवर्तन शुरू हो सकता है।

***

कमजोर संबंध और मज़बूत रिश्तों का संयोजन कैसे किसी आंदोलन को प्रेरित करता है, यह समझने के लिए आपको रोजा पार्क्स के गिरफ्तार होने के नौ साल बाद हुई एक घटना पर गौर करना होगा, जब सैकड़ों युवाओं ने बड़ा खतरा मोल लेते हुए खुद को नागरिक अधिकारों की लड़ाई में झोंक दिया था।

सन 1964 में पूरे देश के छात्रों ने मिसीसिपी समर प्रोजेक्ट के लिए आवेदन दिया। इनमें से अधिकतर हार्वर्ड, येल और अन्य उत्तरी यूनिवर्सिटीज के श्वेत छात्र थे। यह दक्षिण में अश्वेत वोटरों को पंजीकृत करने का दस सप्ताह लंबा कार्यक्रम था। इस

प्रोजेक्ट को ‘फ्रीडम समर’ के नाम से जाना जाने लगा और इसमें शामिल होने के लिए आवेदन देनेवाले अधिकतर छात्र जानते थे कि यह उनके लिए खतरनाक साबित हो सकता है। इसके शुरू होने से पहले कई महीनों तक अखबार और पत्रिकाएँ हिंसा की आशंका जतानेवाले लेखों से भरी पड़ी थीं। (दुर्भाग्य से यह आशंका सही साबित हुई और इस कार्यक्रम के शुरू होने के एक सप्ताह बाद ही मिसीसिपी के लॉन्गडेल में श्वेत विजलांटे यानी अनधिकृत निगरानी समूहों के सदस्यों ने तीन स्वयंसेवक छात्रों की हत्या कर दी।) इसी डर से आवेदन देने के बाद भी कई छात्रों ने मिसीसिपी समर प्रोजेक्ट में हिस्सा नहीं लिया था। फ्रीडम समर के लिए एक हज़ार से भी ज़्यादा छात्रों के आवेदन स्वीकार किए गए थे, पर जब जून के महीने में दक्षिण की ओर जाने की बात आई, तो पता चला कि करीब तीन सौ से ज़्यादा छात्रों ने वहाँ जाने के बजाय अपने घर पर रहना ही उचित समझा।

यूनिवर्सिटी ऑफ एरिजोना के समाजशास्त्री डग मैकएडम्स को सन 1980 में यह पता लगाने का विचार आया कि क्यों कुछ छात्रों ने इस कार्यक्रम में हिस्सा लिया जबकि बाकी ने इससे दूर रहना उचित समझा? उन्होंने इसकी शुरुआत की 720 आवेदकों के आवेदन पत्र पढ़कर, जो सालों पहले जमा किए गए थे। हर आवेदन पत्र पाँच पेज का था। इसमें आवेदकों से उनकी पृष्ठभूमि के बारे में पूछे जाने के साथ-साथ यह भी पूछा गया था कि वे मिसीसिपी क्यों जाना चाहते हैं और वोटरों के पंजीकरण का उनका क्या अनुभव है। उन्हें ऐसे लोगों की सूची देने को भी कहा गया, जिनसे उनके गिरफ्तार होने की स्थिति में संपर्क किया जा सके। इनमें निबंध, संदर्भ और कुछ के इंटरव्यू भी थे। इन चीज़ों से स्पष्ट हुआ कि इस कार्यक्रम के लिए आवेदन देना कोई मज़ाक नहीं था।

शुरुआती दौर में मैकएडम्स को लग रहा था कि जो छात्र मिसीसिपी गए थे, उनकी प्रेरणा वहाँ न जानेवाले छात्रों से अलग रही होगी। अपनी इस धारणा को परखने के लिए उन्होंने आवेदकों को दो समूहों में बाँट दिया। पहले समूह में उन छात्रों के आवेदनों को रखा गया, जिनका कहना था कि वे अपने फायदे की उम्मीद से प्रेरित होकर वहाँ जा रहे हैं, जैसे ‘खुद को परखने का मौका’ या ‘दक्षिणी जीवनशैली को समझने का मौका’ वगैरह। दूसरे समूह में उन छात्रों के आवेदनों को रखा गया, जो ‘दूसरों के लिए कुछ करने’ के विचार से प्रेरित थे, जैसे ‘अश्वेत लोगों की हालातों को सुधारना’ और ‘संपूर्ण लोकतंत्र हासिल करने में योगदान देना’ या ‘सामाजिक बदलाव के वाहक के रूप में अहिंसा की शक्ति का प्रदर्शन करना’ वगैरह।

मैकएडम्स की परिकल्पना के अनुसार फ्रीडम समर के खतरों का अंदेशा होने के बाद उन्हीं छात्रों ने वहाँ जाने से इंकार किया होगा, जो आत्मकेंद्रित थे। जबकि वहाँ जानेवाले छात्र संभवत: वे रहे होंगे, जो दूसरों के लिए कुछ करने के विचार से प्रेरित थे।

पर मैकएडम्स की यह परिकल्पना गलत थी।

मैकएडम्स लिखते हैं, 'डाटा के अनुसार स्वार्थी छात्र और निःस्वार्थ छात्र बराबर संख्या में दक्षिण की ओर गए थे। कार्यक्रम के छात्र भले ही अलग-अलग कारणों से प्रेरित रहे हों, पर इससे कार्यक्रम में हिस्सा लेनेवाले और घर पर रुकने का फैसला लेनेवाले छात्रों के बीच कोई विशेष फर्क सामने नहीं आया।'

इसके बाद मैकएडम्स ने आवेदकों को मिले इस अवसर के कीमत की तुलना की। हो सकता है कि जिन छात्रों ने घर पर रुकने का फैसला लिया, उनके पति या गर्लफ्रेंड ने उन्हें मिसीसिपी जाने से रोका हो। यह भी हो सकता है कि उनमें से कईयों को उसी समय नौकरी मिल गई हो और वे दो महीने तक मिसीसिपी में बिना वेतन लिए कार्य करना न चाहते हों।

मैकएडम्स का यह अनुमान भी गलत था।

मैकएडम्स का निष्कर्ष था, 'शादीशुदा होने या एक पूर्णकालिक नौकरी होने से आवेदकों की दक्षिण जाने की संभावनाएँ घटने के बजाय बढ़ी थीं।'

अब उनके पास इससे जुड़ी बस एक ही परिकल्पना बची थी। हर आवेदक से उन छात्रों और राजनीतिक संगठनों की सूची माँगी गई थी, जिनके वे सदस्य थे। साथ ही कम से कम ऐसे दस लोगों के नाम भी माँगे गए थे, जिन्हें वे इस कार्यक्रम के दौरान अपनी सारी गतिविधियों की जानकारी देना चाहते थे। मैकएडम्स ने ये सभी सूचियाँ लीं और उनका इस्तेमाल करके उन्होंने हर छात्र के सामाजिक समूह का एक चार्ट बनाया। क्लबों में छात्रों की सदस्यता की तुलना करके मैकएडम्स यह निर्धारित करने में कामयाब रहे कि किस आवेदक के मित्रों ने भी फ्रीडम समर के लिए आवेदन दिया है।

अब उनके पास इस बात का जवाब था कि क्यों कुछ छात्र मिसीसिपी गए, पर कुछ ने घर पर रुकना ही उचित समझा। छात्रों के इन निर्णयों का कारण था उनकी सामाजिक आदतें या अगर और स्पष्ट ढंग से कहें तो ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उनके मजबूत सामाजिक रिश्ते और कमजोर संबंध एक साथ सक्रिय थे। जिन छात्रों ने फ्रीडम समर में हिस्सा लिया था, वे उस किस्म के समुदायों में से थे, जहाँ उनके करीबी लोग और थोड़ी-बहुत जान-पहचान वाले लोग, दोनों ही उनसे उम्मीद कर रहे थे कि वे फ्रीडम समर में जाएँगे। जबकि जिन छात्रों ने घर पर रुकने का फैसला लिया, वे अलग किस्म के समुदायों का हिस्सा थे, जहाँ उन पर न तो मिसीसिपी जाने का सामाजिक दबाव और न ही उनकी सामाजिक आदतें उन्हें वहाँ जाने के लिए विवश कर रही थीं।

'कल्पना करें कि आप उन छात्रों में से एक हैं, जिन्होंने इस कार्यक्रम के लिए आवेदन दिया था,' मैकएडम्स ने मुझसे कहा। 'जिस दिन आपने फ्रीडम समर के लिए आवेदन भरा, उसी दिन आपके साथ आपके पाँच दोस्तों ने भी यही आवेदन भरा और आप सब बहुत प्रेरित महसूस कर रहे थे।'

'अब इस बात को छह महीने बीत चुके हैं और मिसीसिपी जाने का दिन आने ही वाला

है। हर अखबार और पत्रिका में मिसीसिपी में हिंसा होने की आशंका जताई जा रही है। आप अपने माता-पिता को फोन करते हैं और वे आपसे स्पष्ट कहते हैं कि कहीं मत जाओ, घर पर रुको। इस स्थिति में आपका अपने फैसले को लेकर दुविधा में आना स्वाभाविक है।’

फिर एक दिन जब आप अपने परिसर में घूम रहे होते हैं, तो आपको अपने चर्च के समूह के कुछ लोग नज़र आते हैं। वे आपसे पूछते हैं, ‘हम मिसीसिपी जाने के लिए गाड़ी का इंतजाम कर रहे हैं। तुम्हें लेने के लिए गाड़ी कितने बजे भेजें? ये लोग आपके करीबी दोस्त नहीं हैं पर आप उनसे क्लब की मीटिंग में और छात्रावास में अक्सर मिलते रहते हैं और वे आपके सामाजिक समुदाय के महत्वपूर्ण लोग हैं। वे सब जानते हैं कि फ्रीडम समर के लिए आपका आवेदन स्वीकार हो गया है। उन्हें यह भी मालूम है कि आपने कहा था कि आप वहाँ जाना चाहते हैं। इसलिए अब अगर आपने वहाँ जाने के बजाय घर में रुकने का फैसला लिया, तो निश्चित ही समाज में आपकी छवि को नुकसान पहुँचेगा। भले ही आप अपने फैसले को लेकर अब भी दुविधा में हों, पर आपको इसके परिणाम ज़रूर भुगतने पड़ेंगे। आप उन लोगों का सम्मान खो देंगे, जिनके मत को आप महत्त्व देते हैं।

जब मैकएडम्स ने आवेदकों को धार्मिक झुकाव के साथ देखा, तो स्पष्ट हुआ कि जिन छात्रों ने आवेदन देने के पीछे अपनी प्रेरणा के रूप में ‘ज़रूरतमंदों की मदद करना एक सच्चे ईसाई का धर्म है,’ जैसे वाक्यों का हवाला दिया था, उनके बीच मैकएडम्स को मिश्रित भागीदारी नज़र आई। मैकएडम्स ने पाया कि जिन छात्रों ने अपने धार्मिक झुकाव का उल्लेख करते हुए यह बताया कि वे किस धार्मिक संगठन से जुड़े हैं, वे सब मिसीसिपी ज़रूर गए थे। जैसे ही उनके समुदाय को यह पता चला कि फ्रीडम समर के लिए उनका आवेदन स्वीकार कर लिया गया है, तो उनके लिए मिसीसिपी न जाना असंभव हो गया।

अब ज़रा उन आवेदकों के सामाजिक समूह पर गौर करें, जिनका आवेदन स्वीकार तो हुआ पर उन्होंने मिसीसिपी जाने के बजाय घर पर रुकना ही बेहतर समझा। वे भी कैंपस के संगठनों से जुड़े थे। वे भी क्लबों के सदस्य थे और उन्हें भी इन समुदायों में अपनी छवि की चिंता थी। पर वे जिन संगठनों से जुड़े थे, जैसे अखबार, छात्र-सरकार, अकादमिक समूह और बिरादरी, उनकी अपेक्षाएँ बिलकुल अलग थीं। फ्रीडम समर प्रोग्राम से नाम वापस लेने के बावजूद इन समुदायों में सदस्यों को अपनी छवि बिगड़ने का खतरा न के बराबर था।

जब छात्रों को यह पता चला कि उन्हें मिसीसिपी में गिरफ्तार (या इससे भी बुरा कुछ और) किया जा सकता है तो उनमें अधिकतर लोग इस कार्यक्रम में शामिल होने को लेकर दुविधा में पड़ गए। हालाँकि इन छात्रों में से कुछ ऐसे समुदायों से जुड़े थे, जहाँ सामाजिक दबाव था और दोस्तों की अपेक्षाओं पर खरा उतरना सामाजिक आदतों में से एक था इसलिए इस कार्यक्रम में शामिल होना उनकी मजबूरी थी। इसीलिए अपनी

दुविधा के बावजूद उन्होंने मिसीसिपी जाने का बस टिकट खरीद लिया। जबकि अन्य छात्र ऐसे समुदायों से जुड़े थे, जहाँ सामाजिक आदतों को अलग नज़रिए से देखा जाता था, इसीलिए उन्होंने मिसीसिपी जाने के बजाय घर पर रुकने का फैसला लिया। हालाँकि इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्हें नागरिक अधिकारों की कोई चिंता नहीं थी।

***

जिस दिन ई.डी. निक्सन ने रोजा पार्क्स को जमानत पर रिहा कराया, उसी दिन उन्होंने डेक्सटर एवेन्यू बाप्टिस्ट चर्च के नए मंत्री मार्टिन लूथर किंग जूनियर को फोन किया। उस समय सुबह के करीब 5 बजे होंगे, पर जैसे ही किंग ने फोन उठाया, निक्सन ने न तो उन्हें हैलो बोला और न ही यह पूछा कि इतनी सुबह फोन की घंटी बजने से कहीं उनकी दो सप्ताह की बच्ची की नींद तो नहीं टूट गई। उन्होंने तो बस सीधे पार्क्स को जेल भेजे जाने, अदालत में उनका केस लड़ने और सोमवार को सिटी बसों के बहिष्कार के बारे में बताना शुरू कर दिया। उस समय किंग मात्र 26 साल के थे। उन्हें मॉन्टगोमेरी में आए सिर्फ एक साल हुआ था और वे अब भी यह समझने में लगे हुए थे कि समुदाय में उनकी अपनी भूमिका क्या है। निक्सन मार्टिन लूथर किंग से उनके समर्थन के साथ-साथ उस रात बहिष्कार के बारे में होनेवाली मीटिंग के लिए उनका चर्च इस्तेमाल करने की अनुमति भी माँग रहे थे। किंग इस मामले में शामिल होने से बच रहे थे। उन्होंने निक्सन से कहा, 'निक्सन मेरे भाई, मुझे इस बारे में विचार करने के लिए थोड़ा समय दो और फिर मुझे फोन करो।'

पर निक्सन यहीं नहीं रुके। उन्होंने किंग के सबसे करीबी मित्रों में से एक से संपर्क किया, जो किंग के मज़बूत रिश्तों में से एक था। इस मित्र का नाम राल्फ डी एबरनेथी था। निक्सन ने राल्फ से विनती की कि वे किंग को बहिष्कार का समर्थन करने के लिए मनाएँ। इसके कुछ ही घंटों बाद निक्सन ने किंग को फिर से फोन किया।

इस बार किंग ने कहा, 'मैं इसका समर्थन करने को राज़ी हूँ।'

'मुझे खुशी है कि तुमने सही फैसला किया किंग,' निक्सन ने कहा। 'क्योंकि मैंने तुम्हारे हाँ कहने के पहले ही 18 लोगों को फोन करके आज रात मीटिंग के लिए तुम्हारे चर्च में आने को कह दिया है। अगर तुम राजी नहीं होते, तो मीटिंग में हम सबको अच्छा नहीं लगता।' जल्द ही किंग को उस संगठन का अध्यक्ष बना दिया गया, जो इस बहिष्कार का समन्वय कर रहा था।

पार्क्स की गिरफ्तारी के तीन दिन बाद रविवार को शहर के अश्वेत मंत्रियों ने किंग और नए संगठन के अन्य सदस्यों से बातचीत करने के बाद अपने समूह को बताया कि शहर का हर अश्वेत चर्च इस एक दिवसीय विरोध-प्रदर्शन के लिए तैयार हो गया है। संदेश स्पष्ट था : अब किसी भी पार्शद के लिए इस विरोध-प्रदर्शन से खुद को दूर रखना शर्मनाक होता। उसी दिन शहर के अखबार एडवर्टाइजर में एक लेख प्रकाशित हुआ,

जिसमें मॉन्टगोमेरी के नीग्रो लोगों की एक 'गुप्त' मीटिंग का जिक्र था, जिसमें सोमवार को शहर की बसों का बहिष्कार करने का निर्णय लिया गया है। अखबार के रिपोर्टर को एक श्वेत महिला से इस बारे में एक पर्चा मिला था, जो उस श्वेत महिला ने अपने घर में काम करनेवाली नौकरानियों से हासिल किया था। लेख में बताया गया था कि शहर के अश्वेत इलाके इन पर्चों की हज़ारों प्रतियों से भरे पड़े हैं और अनुमान लगाया जा रहा है कि बहिष्कार में हर अश्वेत नागरिक हिस्सा लेगा। जिस समय यह लेख लिखा जा रहा था, तब तक पार्क्स के दोस्तों, मंत्रियों और बहिष्कार करनेवाले संगठन के लोगों ने सार्वजनिक रूप से तय किया था कि वे इस विरोध में हिस्सा लेंगे। पर जैसे ही शहर के अश्वेत लोगों ने अखबार पढ़ा, श्वेत पाठकों की तरह ही उन्हें भी यही लगा कि हर कोई इस बहिष्कार का समर्थन कर रहा है।

अखबार पढ़नेवाले बहुत से लोग रोजा पार्क्स को निजी तौर पर जानते थे और उनसे दोस्ती होने के कारण वे खुद भी शहर की बसों का बहिष्कार करने को तैयार थे। अन्य लोग, जो पार्क्स को नहीं जानते थे, वे महसूस कर सकते थे कि उनका समुदाय पार्क्स से जुड़े इस नेक काम में हिस्सा ले रहा है। वे जानते थे कि अगर वे सोमवार को बस की सवारी करते हुए देखे गए, तो यह ठीक नहीं लगेगा। चर्च में दिए गए एक पर्चे में लिखा था, 'अगर आप नौकरी करते हैं या कोई व्यवसाय करते हैं, तो ऑफिस जाने के लिए बस में बैठने के बजाय टैक्सी लें या किसी मित्र के साथ उसकी गाड़ी में चले जाएँ या फिर पैदल जाएँ।' इससे बाद सुनने में आया कि बहिष्कार आयोजित करनेवाले प्रमुख लोगों ने शहर के सभी अश्वेत टैक्सी ड्राइवरों को इस बात के लिए मना लिया है - या उन पर दबाव डालकर उन्हें राजी किया है कि वे सोमवार को बसों के बहिष्कार के दिन अश्वेत यात्रियों से किराए के तौर पर मात्र दस-दस सेंट ही लें, जो बसों के किराए के बराबर है। इस तरह समुदाय के कमजोर संबंध हर किसी को एक-साथ लेकर आ रहे थे। यह ऐसा मौका था कि अगर आप इस बहिष्कार का समर्थन नहीं कर रहे हैं, तो इसका अर्थ है कि आप इसका विरोध कर रहे हैं यानी तटस्थ रहना संभव नहीं था।

बहिष्कार के दिन सोमवार को मार्टिन लूथर किंग जूनियर पौ फटने के पहले ही जाग गए। उन्होंने कॉफी पी और उनकी पत्नी कोरेटा सामने की खिड़की पर बैठकर पहली बस के गुज़रने का इंतजार करने लगीं। जैसे ही उन्हें साउथ जैक्सन लाइन से आ रही बस की हेडलाइट्स नज़र आई, वे चिल्ला पड़ीं। आमतौर पर यह बस उन यात्रियों से भरी रहती थी, जो लोगों के घरों में नौकरानी का काम करती थीं। पर आज यह बस एकदम खाली थी। इसके बाद वहाँ से गुज़री दूसरी बस में भी कोई यात्री नहीं था। तीसरी बस भी खाली ही थी। किंग ने अपनी कार गैराज से बाहर निकाली और उसमें बैठकर आसपास के इलाकों की ओर निकल गए ताकि अन्य रूट्स पर जाकर हालात का जायजा ले सकें। अगले एक घंटे में उन्हें कुल आठ अश्वेत यात्री ही नज़र आए। अगर वे एक सप्ताह पहले आए होते, तो उन्हें यहाँ सैकड़ों यात्री नज़र आते।

'मैं बहुत उत्साहित था,' उन्होंने बाद में लिखा। 'यह सचमुच किसी चमत्कार से कम नहीं था... मैंने लोगों को घुड़सवारी करते हुए ऑफिस जाते देखा। मॉन्टगोमेरी की

सड़कों पर मुझे घोड़े की बग्गियों में सवारी करते लोग भी नज़र आए... बहुत से लोग बस स्टॉप पर यह देखने के लिए जमा हो गए थे कि आगे क्या होता है। पहले-पहले तो वे लोग शांति से वहाँ खड़े रहे पर जैसे-जैसे दिन गुज़रा, वे खाली बसों को देखकर खुशी से चिल्लाते, खुश होते और एक-दूसरे को चुटकुले सुनाते। 'आज किसी बस को कोई सवार नहीं मिलेगा' युवाओं को चिल्लाते हुए सुना जा सकता था।

उसी दिन दोपहर में चर्च स्ट्रीट की एक अदालत में रोजा पार्क्स को राज्य के भेदभाव कानूनों का उल्लंघन करने का दोषी करार दे दिया गया। पाँच सौ से भी अधिक अश्वेत नागरिक अदालत के गलियारे और इमारत के सामने जमा थे और अदालत के फैसले का इंतजार कर रहे थे। मॉन्टगोमेरी के इतिहास में यह बहिष्कार और अदालत के परिसर में अचानक आई यह रैली अश्वेतों द्वारा उठाया गया सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक कदम था और इसके लिए सारे लोगों को एक साथ आने में मात्र पाँच दिन का समय लगा था। यह पार्क्स के करीबी दोस्तों से शुरू हुआ था, पर जैसा कि मार्टिन लूथर किंग जूनियर और अन्य लोगों ने बाद में कहा कि यह राजनीतिक कदम सशक्त तो तब हुआ, जब लोगों को यह महसूस हुआ कि इसमें शामिल होना अपने समुदाय के प्रति अपना फर्ज़ निभाने के बराबर है। इसी को कमजोर संबंधों की सामाजिक आदतें कहते हैं। समुदाय के लोगों पर एक दूसरे का साथ देने का दबाव था कि जो कोई भी इसमें हिस्सा नहीं लेगा, तो वह एक ऐसा व्यक्ति मान लिया जाएगा, जिससे समुदाय का कोई भी सदस्य दोस्ती नहीं करना चाहेगा।

ऐसे कई लोग थे, जो इस तरह के प्रोत्साहन के बिना भी इस बहिष्कार का हिस्सा बन सकते थे। किंग, अश्वेत टैक्सीवाले और समाज के अन्य सदस्य ऐसे लोग थे, जो कमजोर संबंधों और मजबूत रिश्तों के बिना भी यही करते, जो उन्होंने उस समय किया। पर पूरे शहर में फैले हज़ारों लोग सामाजिक आदतों से मिले प्रोत्साहन के बिना बसों का बहिष्कार नहीं कर पाते। इस बारे में बाद में किंग ने लिखा, 'एक समय निष्क्रिय और सुप्त रहनेवाला अश्वेत समुदाय अब पूरी तरह जाग चुका था।'

हालाँकि ये सामाजिक आदतें अपने आपमें इतनी सशक्त नहीं थीं कि एक दिन के विरोध को सालभर तक चलनेवाले विरोध में बदल सकें। कुछ ही सप्ताह में किंग इस बात पर खुले तौर पर चिंतित दिखे कि लोगों का संकल्प कमज़ोर पड़ रहा है और इस संघर्ष को जारी रखने की नीग्रो समुदाय की क्षमता संदेह के घेरे में है।

फिर ये चिंताएँ खत्म हो गईं। अन्य हज़ारों आंदोलनों के नेताओं की तरह ही किंग ने भी संघर्ष का मार्गदर्शन करने का जिम्मा अपने कंधों से हटाकर अपने समर्थकों के कंधों पर रख दिया और इसके लिए उन्होंने मुख्य रूप से अपने समर्थकों को नई आदतें सिखाईं। उन्होंने आंदोलन के फार्मुले के तीसरे हिस्से को सक्रिय कर दिया और जल्द ही यह बहिष्कार आत्मनिर्भर आंदोलन में तब्दील हो गया।

सन 1979 की गर्मियों में एक युवा श्वेत छात्र, जो रोजा पार्क्स की गिरफ्तारी के समय मात्र एक वर्ष का था, उसका सारा ध्यान फिलहाल इस बात पर केंद्रित था कि वह अपना बढ़ता परिवार कैसे चलाएगा। वह अपने टेक्सास स्थित घर की दीवार पर एक मानचित्र लगाकर सिएटल से लेकर मियामी तक अमेरिका के सारे बड़े शहरों के नामों के चारों ओर गोले बनाकर उन्हें चिन्हित कर रहा था।

रिक वॉरेन पेशे से एक बपटिस्ट पादरी था। उसकी पत्नी गर्भपती थी और उसके बैंक खाते में दो हज़ार डॉलर से भी कम की राशि थी। जो लोग चर्च नहीं जाते थे, वह उनका एक समूह बनाना चाहता था पर वह नहीं जानता था कि यह सब किस इलाके में करेगा। उसने मुझे बताया, 'मैंने तय किया कि मैं वहाँ जाऊँगा, जहाँ इसी पेशे से जुड़ा मेरा कोई दोस्त जाना नहीं चाहता।' उसने गर्मियों का पूरा समय पुस्तकालयों में जनगणना रिकॉर्ड का, फोन बुक्स का, अखबारों के लेखों का और मानचित्रों का अध्ययन करते हुए बिताया। उसकी पत्नी का नौवाँ महीना चल रहा था और वॉरेन कुछ-कुछ घंटों के अंतर पर कई बार फोन-बूथ जाकर अपनी पत्नी को कॉल करके पूछता था कि कहीं उसका प्रसव का दर्द तो शुरू नहीं हो गया? इसके बाद वह वापस पुस्तकालय में आकर अपना अध्ययन फिर से शुरू कर देता।

एक दिन वॉरेन को पुस्तकालय में एक किताब मिली, जिसमें कैलीफोर्निया की ऑरेंज काउंटी (ज़िला) की सेडलबैक घाटी के बारे में बताया गया था। इस किताब में लिखा था कि यह अमेरिका के सबसे तेजी से बढ़ते राज्य की, सबसे तेजी से बढ़ते ज़िले का, सबसे तेजी से बढ़ता क्षेत्र था। वैसे तो इस इलाके में कई चर्च थे, पर उनमें से कोई भी चर्च इतना बड़ा नहीं था, जो यहाँ की तेजी से बढ़ रही आबादी के लिए काफी हो। इस जानकारी से उत्साहित होकर वॉरेन ने दक्षिणी कैलीफोर्निया के धार्मिक नेताओं से संपर्क किया। इन लोगों ने वॉरेन को बताया कि कई स्थानीय लोग स्वयं को ईसाई तो मानते हैं, लेकिन चर्च की गतिविधियों में हिस्सा नहीं लेते। वॉरेन ने बाद में इसके बारे में लिखा, 'यूनीवर्सिटी के धूल खाते बेसमेंट में बने पुस्तकालय की मंद रोशनी में मैंने ईश्वर को कहते सुना : मैं चाहता हूँ कि तुम वहाँ जाकर एक चर्च बनाओ! बस उसी क्षण मैंने तय कर लिया कि मेरी मंजिल कहाँ है।'

चर्च से संबंध न रखनेवाले लोगों के लिए एक सामुदायिक समूह तैयार करने के प्रति वॉरेन का ध्यान पाँच साल पहले आकर्षित हुआ। यह तब की बात है, जब जापान में मिशनरी के तौर पर काम करते हुए एक पुरानी ईसाई पत्रिका उसके हाथ लगी। इस पत्रिका में 'यह आदमी खतरनाक क्यों है?' शीर्षक से एक लेख छपा था। यह लेख डोनाल्ड मैकगैवरन नामक एक विवादास्पद लेखक के बारे में था, जिसका पूरा ध्यान देशभर के उन इलाकों में चर्च बनाने पर केंद्रित था, जहाँ के लोगों ने अभी तक ईसा मसीह को स्वीकार नहीं किया है। मैकगैवरन के दर्शन का केंद्रीय विचार था कि मिशनरियों को अन्य सफल आंदोलनों की नकल करनी चाहिए - इसमें अमेरिका का नागरिक अधिकार आंदोलन भी शामिल था यानी उनकी सामाजिक आदतों के अनुसार काम करना चाहिए। मैकगैवरन ने अपनी एक किताब में लिखा था कि 'हमारा निरंतर यह

उद्देश्य होना चाहिए कि पूरे सामाजिक तानेबाने को ईसाईयत की ओर कैसे झुकाएँ। इसके लिए हमें यह ध्यान रखना होगा कि समाज में ईसाईयत के भरपूर प्रसार के बावजूद भी किसी इंसान का सामाजिक जीवन नष्ट नहीं होना चाहिए। ईसाई मत के प्रचारक, जो लोगों को उनके सामान्य सामाजिक संबंधों के बीच ईसा मसीह का अनुयायी बनने में मदद करते हैं, केवल वे ही लोगों को बड़ी संख्या में आज़ाद कर सकते हैं।'

वह लेख और बाद में मैकगैवरन की किताबें पढ़ना रिक वॉरेन के लिए किसी बड़े खुलासे से कम नहीं था। उसे लगा कि कम से कम एक व्यक्ति तो ऐसे विषय पर तर्क के साथ काम करने को कह रहा है, जिसके बारे में हमेशा चमत्कार की भाषा में बात की जाती है। पहली बार कोई व्यक्ति स्पष्ट शब्दों में कह रहा था कि धर्म का प्रसार करने के लिए भी मार्केटिंग की ज़रूरत है।

मैकगैवरन ने एक रणनीति तैयार की थी, जिसके तहत चर्च बनानेवाले सभी लोगों को ये निर्देष दिए गए थे कि वे लोगों से सामान्य भाषा में बातचीत करें। उनसे यह भी कहा गया कि वे ऐसे पूजा स्थल बनाएँ, जहाँ समाज के लोग अपने दोस्तों से मिल सकें, अपना पसंदीदा संगीत सुन सकें और समझ में आनेवाले प्रतीकों के ज़रिए बाइबिल के सबक सुन सकें। मैकगैवरन ने सबसे महत्वपूर्ण बात यह कही थी कि चर्च के मिनिस्टरों को एक-एक व्यक्ति का धर्म परिवर्तन कराने के बजाय पूरे समूह का धर्म परिवर्तन करना चाहिए ताकि अपने समुदाय की सामाजिक आदतें उन्हें धर्म और समाज से दूर करने के बजाय धार्मिक कार्यक्रमों में हिस्सा लेने के लिए प्रोत्साहित करें।

दिसंबर के महीने में वॉरेन की पत्नी ने एक बच्चे को जन्म दिया और इसी महीने में वे सेमिनरी से ग्रेजुएट भी हो गए। इसके बाद वे बोरिया-बिस्तर समेटकर परिवार सहित ऑरेंज काउंटी आ गए। यहाँ उन्होंने एक छोटा सा घर किराए पर लिया और अपनी पहली प्रार्थना का आयोजन अपने घर के एक छोटे से कमरे में ही किया। इस प्रार्थना में सिर्फ सात लोगों ने हिस्सा लिया था।

आज तीस साल बाद सैडलबैक चर्च दुनिया की सबसे बड़ी मिनिस्ट्रियों में से एक है। आज इसके 120 एकड़ में फैले मुख्य परिसर और आठ सैटेलाइट परिसरों में हर सप्ताह बीस हज़ार से भी ज़्यादा श्रद्धालु आते हैं। वॉरेन की किताब 'द परपज-ड्रिवेन लाइफ' (उद्देश्यपूर्ण जीवन) की तीन करोड़ से भी ज़्यादा प्रतियाँ बिक चुकी हैं और यह संसार की सबसे ज़्यादा बिकनेवाली किताबों में से एक बन चुकी है। आज हज़ारों ऐसे चर्च बन चुके हैं, जो सैडलबैक चर्च से प्रेरित हैं और उसी के तरीकों को इस्तेमाल करके संचालित किए जाते हैं। राष्ट्रपति बराक ओबामा के उद्घाटन समारोह में प्रार्थना करने के लिए वॉरेन को ही चुना गया था। आज वॉरेन को संसार के सबसे प्रभावशाली धार्मिक नेताओं में से एक माना जाता है।

उनकी सफलता और उनके चर्च के विकास का मुख्य आधार लोगों की सामाजिक आदतों की शक्ति पर विश्वास करना ही है।

वॉरेन बताते हैं, 'हमने बहुत गंभीरता पूर्वक विचार करके विश्वास को लोगों की आदत बनाया है। अगर आप लोगों को ईसा मसीह के साथ हुए अत्याचार का उदाहरण देकर उन्हें ईसाइयत से जोड़ने की कोशिश करेंगे, तो यह लंबे समय तक कारगर साबित नहीं होगा। लोगों को आध्यात्मिक परिपक्वता हासिल करने की जिम्मेदारी देने का एक ही तरीका है कि उनके अंदर विश्वास करने की आदत विकसित की जाए।

जब ऐसा होता है, तो लोग इस मामले में आत्मनिर्भर बन जाते हैं। लोग ईसा मसीह के अनुयायी इसलिए नहीं बनते क्योंकि आपने उन्हें धर्म के रास्ते पर लाया है। वे स्वयं जिस किस्म के इंसान हैं, उसी के चलते वे ईश्वर की शरण में जाते हैं।'

***

जब वॉरेन पहली बार सैडलबैक घाटी में आए थे, तो वे 12 सप्ताह तक लोगों के घर-घर जाकर अपना परिचय देते और उनसे पूछते कि वे चर्च क्यों नहीं जाते। इसके जवाब में लोग बड़े सशक्त तर्क देते थे, जैसे चर्च जाना बड़ा ही उबाऊ होता है... चर्च में बजनेवाला संगीत वाहियात होता है... चर्च के उपदेशों को व्यावहारिक जीवन में लागू करना उपयोगी नहीं लगता... चर्च में जाने के दौरान बच्चों को कौन सँभालेगा... चर्च जाने के लिए तैयार होना और वैसे कपड़े पहनना पसंद नहीं आता... वहाँ जाना बड़ा ही असहज अनुभव होता है... वगैरह।

वॉरेन के चर्च ने लोगों की इन सभी शिकायतों का निवारण किया। उन्होंने लोगों को मनचाहे कपड़े पहनकर चर्च आने को कहा और संगीत के लिए चर्च में एक इलेक्ट्रिक गिटार लाया गया। वॉरेन के उपदेश शुरू से ही व्यावहारिक विषयों पर केंद्रित होते थे, जैसे 'निराशा से कैसे निपटें,' 'अपने बारे में अच्छा महसूस कैसे करें,' 'परिवार को स्वस्थ कैसे रखें,' 'तनाव से कैसे निपटें' वगैरह। उनके उपदेश समझने में आसान थे, रोज़मर्रा के जीवन की आम समस्याओं पर केंद्रित थे और इतने व्यावहारिक थे कि उन्हें अपने जीवन में लागू करना बहुत आसान था।

जल्द ही लोगों पर इसका सकारात्मक प्रभाव नज़र आने लगा। उनके उपदेश कारगर साबित हो रहे थे। वॉरेन चर्च की गतिविधियों के लिए स्कूलों के ऑडिटोरियम और प्रार्थना सभा के लिए ऑफिसों की इमारतें किराए पर ले लेते थे। जल्द ही उनके इस सामाजिक समूह के सदस्यों की संख्या पचास तक पहुँच गई और एक साल से भी कम समय में यह संख्या बढ़कर दो सौ हो गई। वॉरेन सप्ताह के सातों दिन हर रोज़ अठारह घंटे काम करते थे। वे समूह में आनेवाले फोन कॉल्स का जवाब देते, कक्षाएँ लेते, लोगों के घर-घर जाकर उनकी वैवाहिक समस्याओं को सुलझाने के लिए परामर्श देते और इन सब गतिविधियों के बाद उनके पास जो खाली समय बचता, उसमें वे अपने तेजी से बढ़ते चर्च की गतिविधियों के आयोजन के लिए नई और बेहतर जगहों की तलाश में लगे रहते।

यह दिसंबर महीने के मध्य की बात है, जब एक दिन वॉरेन सुबह 11 बजे चर्च में उपदेश

देने के लिए खड़े हुए। अचानक उनके सिर में दर्द उठा और उन्हें चक्कर आने लगे। वे पोडियम के सहारे टिक गए और बोलना शुरू किया पर उनके सामने कागज़ पर जो उपदेश लिख रखे थे, वे उन्हें धुँधले नज़र आने लगे। उन्हें लगा, जैसे वे गिर पड़ेंगे। वे धीरे से अपने स्टाफ के इकलौते सदस्य सहायक पादरी की ओर मुड़े और खुद की जगह उन्हें व्याख्यान देने का इशारा किया।

उन्होंने अपने सामने बैठे दर्शकों से कहा, 'माफ कीजिएगा, मेरी तबीयत ठीक नहीं लग रही है, मुझे नहीं लगता कि मैं और खड़ा रह पाऊँगा।'

वॉरेन सालों से एंग्जाइटी अटैक्स झेल रहे थे। इसके अलावा कभी-कभी वे बहुत उदास हो जाते थे, जिसे देखकर उनके दोस्त कहा करते थे कि वे हल्के अवसाद से ग्रस्त लगते हैं। पर इन सब समस्याओं के बावजूद उनकी स्थिति पहले कभी इतनी गंभीर नहीं हुई थी। अगले दिन वॉरेन और उनका परिवार एरिजोना के लिए निकल गया, जहाँ उनकी पत्नी के परिवारवालों का एक घर था। वे वहाँ स्वास्थ्य लाभ लेने लगे। कभी-कभी तो वे बारह घंटे तक सोते रहते और फिर रेगिस्तान में टहलने निकल जाते। वे प्रार्थना करके यह समझने की कोशिश करते कि आखिर ये पैनिक अटैक्स उनकी पूरी मेहनत पर पानी फेरने में क्यों तुले हुए हैं। इस तरह चर्च से दूर करीब एक महीना बीत गया। उनकी कभी-कभार की उदासी गहरे अवसाद में बदल गई। उन्हें इतना अंधकारपूर्ण अनुभव पहले कभी नहीं हुआ था। वे नहीं जानते थे कि वे दोबारा कभी इतने स्वस्थ हो पाएँगे कि चर्च की ओर लौट सकें।

एक पादरी के रूप में वॉरेन को ईश्वर की ओर से आकाशवाणी का अनुभव भी मिला। उन्हें यह अनुभव एक बार टेक्सास के एक पुस्तकालय में हुआ और दूसरी बार मैकगैवरन का लेख मिलने पर हुआ। ऐसा ही तीसरा अनुभव उन्हें तब हुआ, जब एक दिन वे रेगिस्तान में टहल रहे थे।

ईश्वर ने उनसे कहा, 'तुम लोगों का जीवन सुधारने पर ध्यान केंद्रित करो और चर्च की फिक्र मुझ पर छोड़ दो।'

पिछली आकाशवाणियों की तरह इस बार ईश्वर ने उनका मार्ग स्पष्ट नहीं किया था। अगले कई महीनों तक वॉरेन अवसाद से संघर्ष करते रहे। इसके बाद भी उनके जीवन में ऐसे कई मौके आए, जब वे अचानक अवसाद से ग्रस्त हो गए। पर उस दिन उन्होंने दो निर्णय लिए कि वे वापस सैडलबैक जाएँगे और यह पता लगाएँगे कि कम सक्रिय रहकर भी चर्च कैसे चलाया जाए।

***

जब वॉरेन सैडलबैक वापस आए, तो उन्होंने अपने एक ऐसे प्रयोग का विस्तार करने की ठानी, जो उन्होंने चर्च का संचालन आसान बनाने के इरादे से कुछ ही महीने पहले शुरू किया था। उन्हें नहीं पता था कि बाइबिल का अध्ययन करने आनेवालों के लिए वे

पर्याप्त कक्षाओं का इंतजाम कर पाएँगे या नहीं। इसलिए उन्होंने चर्च के कुछ सदस्यों से इन कक्षाओं का आयोजन अपने-अपने घरों में करने को कह दिया। हालाँकि उन्हें इस बात का डर था कि लोगों को चर्च की कक्षा के बजाय किसी और के घर में चल रही बाइबिल की कक्षा में जाना पसंद नहीं आएगा और वे शिकायत करेंगे। पर उनके सामाजिक समूह को यह इंतजाम बहुत पसंद आया। छोटे-छोटे समूहों की कक्षा में जाने से लोगों को अपने पड़ोसियों से मुलाकात का मौका भी मिल जाता था। अवकाश से लौटने के बाद वॉरेन ने सैडलबैक चर्च के हर सदस्य से लेकर, हर सप्ताह मिलनेवाले छोटे-मोटे समूहों तक, सभी को यह कार्य दे दिया। यह उनके द्वारा लिए गए निर्णयों में से सबसे महत्वपूर्ण निर्णय साबित हुआ। क्योंकि इसने चर्च की गतिविधियों में हिस्सा लेने को एक साप्ताहिक निर्णय से बदलकर एक ऐसी आदत बना दिया, जो पहले से मौजूद सामाजिक आग्रहों और पैटर्न्स पर आधारित थी।

वॉरेन बताते हैं, ‘अब जब लोग सैडलबैक चर्च आते हैं और सप्ताहांत में श्रद्धालुओं का ताँता लगते हुए देखते हैं, तो यह उन्हें अपनी कामयाबी जैसा लगता है। पर यह तो बस एक झलक है। इस चर्च की महत्ता का 95 प्रतिशत हिस्सा छोटे-छोटे समूहों में सप्ताह भर होनेवाली गतिविधियों से बनता है।

‘चर्च का सामाजिक समूह और बाकी छोटे-छोटे समूह आपको दोतरफा लाभ देते हैं। लोगों की भारी भीड़ देखकर आपको एहसास होता है कि आप यह सब क्यों कर रहे हैं और आपके दोस्तों से बना छोटा समूह आपका विश्वास कायम रखने में आपकी मदद करता है। ये दोनों एक साथ बहुत सकारात्मक प्रभाव डालते हैं। अब हमारे पास ऐसे पाँच हज़ार से भी ज़्यादा छोटे-छोटे समूह हैं। इतने बड़े चर्च का संचालन सुचारू रूप से करने का श्रेय इन्हीं समूहों को जाता है। इतना सारा काम मेरे अकेले के लिए सँभालना असंभव है और अगर मैंने अकेले यह सब करने की कोशिश की, तो मैं चर्च में आनेवाले 95 प्रतिशत लोगों पर ध्यान नहीं दे पाऊँगा।’

दरअसल वॉरेन ने अंजाने में ही अपने चर्च का विस्तार करने के लिए वे तरीके अपनाए, जिन्होंने मॉन्टगोमेरी बस बहिष्कार को प्रेरित किया था। फर्क बस इतना है कि उन्होंने इन तरीकों को उल्टे ढंग से इस्तेमाल किया। मॉन्टगोमेरी बस बहिष्कार उन लोगों के बीच शुरू हुआ था, जो रोजा पार्क्स से परिचित थे। छोटे स्तर पर शुरू हुआ यह बहिष्कार एक बड़े आंदोलन में तब बदला, जब ‘कमजोर संबंधों’ ने उनके समुदाय को इस आंदोलन में भागीदारी करने के लिए मज़बूर कर दिया। जबकि सैडलबैक चर्च में इसका ठीक उल्टा हुआ। लोग सामूहिक ‘कमजोर संबंधों’ और सामुदायिक अनुभव पाने के लिए इस चर्च की ओर आकर्षित हुए। चर्च का हिस्सा बनने के बाद निकटतम संबंधों को बढ़ावा देने के लिए उन्हें उनके पड़ोसियों के छोटे-छोटे समूहों का हिस्सा बना दिया गया। इन समूहों में ईश्वर के प्रति उनका विश्वास उनके रोज़मर्रा के जीवन और उनके सामाजिक अनुभव का एक महत्वपूर्ण पहलू बन गया।

हालाँकि सिर्फ छोटे-छोटे समूह तैयार करना ही काफी नहीं होता। जब वॉरेन ने लोगों

से पूछा कि एक-दूसरे के घर पर उन्होंने किस विषय पर चर्चा की, तो उन्हें पता चला कि लोग बाइबिल के बारे में बातें कर रहे थे और साथ ही दस मिनट तक सामूहिक प्रार्थना भी की गई और इसके बाद बाकी का समय बच्चों के बारे में चर्चा करके और यूँ ही गपशप करके बिताया गया। हालाँकि वॉरेन का उद्देश्य सिर्फ नए लोगों को एक-दूसरे से दोस्ती करने का मौका देना नहीं था। उनका उद्देश्य तो यह था कि ईश्वर पर विश्वास करनेवाले लोगों का समुदाय बनाकर उन्हें ईसा मसीह की शिक्षाएँ अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाए और विश्वास को उनके जीवन का केंद्र बनाया जाए। उनके द्वारा बनाए गए छोटे-छोटे समूहों के सदस्यों के आपसी रिश्ते मज़बूत हो रहे थे पर बिना किसी नेतृत्व के ये समूह एक साथ कॉफी पीनेवालों के साधारण समूहों से ज़्यादा कुछ नहीं थे। ये समूह वॉरेन की धार्मिक अपेक्षाएँ पूरी नहीं कर पा रहे थे।

वॉरेन ने एक बार फिर लेखक मैकगैवरन के बारे में विचार किया। मैकगैवरन का दर्शन था कि अगर आप लोगों को ईसाई आदतों के साथ जीना सिखाएँगे, तो फिर उन्हें एक ईसाई जैसा जीवन जीने के लिए न तो निरंतर मार्गदर्शन की ज़रूरत पड़ेगी और न ही इसके लिए लगातार उनकी निगरानी करनी होगी। वॉरेन के लिए हर समूह का नेतृत्व खुद करना संभव नहीं था। वे अकेले यह सुनिश्चित नहीं कर सकते थे कि लोगों के बीच होनेवाली चर्चाएँ अन्य विषयों के बजाय ईसा मसीह पर केंद्रित हों। उन्हें एहसास हुआ कि अगर वे लोगों के अंदर नई आदतें विकसित कर दें तो फिर उन्हें फिक्र करने की कोई ज़रूरत नहीं पड़ेगी। क्योंकि फिर जब लोग एक साथ इकट्ठा होंगे, तो बाइबिल पर चर्चा करना, सामूहिक प्रार्थना करना और आपसी विश्वास बढ़ाना उनकी आदत बन चुकी होगी।

सैडलबैक चर्च के एक कोर्स मैनुअल के अनुसार, 'अगर आप ईसा मसीह जैसा चरित्र पाना चाहते हैं, तो आपको बस अपने अंदर वे आदतें विकसित करने की ज़रूरत है, जो ईसा मसीह के अंदर थीं। हम सब, कुछ और नहीं बल्कि ढेर सारी आदतों का एक बंडल हैं... हमारा उद्देश्य है, आपकी कुछ बुरी आदतों को हटाकर उनकी जगह ऐसी अच्छी आदतें विकसित कराना, जो ईसा मसीह जैसा बनने में आपकी मदद कर सकें।' सैडलबैक चर्च में हर सदस्य को एक 'परिपक्वता कार्ड' पर हस्ताक्षर करने को कहा जाता है, जिनमें तीन प्रमुख आदतें विकसित करने का वादा किया जाता है : प्रार्थना और आत्ममंथन के लिए हर रोज खाली समय निकालना, अपनी कमाई का दस प्रतिशत दान करना और एक छोटे समूह का सदस्य बनना। अब इस चर्च का ध्यान इस बात पर केंद्रित रहता है कि हर किसी के अंदर नई आदतें विकसित की जा सकें।

वॉरेन बताते हैं, 'एक बार ऐसा होने के बाद आपका आध्यात्मिक विकास करना मेरे बजाय आपकी अपनी जिम्मेदारी बन जाती है। हम आपको आध्यात्मिक विकास का तरीका सिखा देते हैं, उसके बाद जो करना है आपको ही करना है। फिर हमें आपका मार्गदर्शन करने की ज़रूरत नहीं पड़ती क्योंकि आप स्वयं ही अपना मार्ग ढूँढ़ लेते हैं। ये आदतें एक नई आत्म-पहचान बन जाती हैं और तब हम यह सुनिश्चित करने में आपकी मदद करते हैं कि आप अपने ही रास्ते का रोड़ा न बन जाएँ।'

वॉरेन यह अच्छी तरह से जानते थे कि उन्हें अपने चर्च का विकास ठीक वैसे ही करना है, जैसे मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने बसों के बहिष्कार का विस्तार करते हुए उसे एक बड़े आंदोलन में तबदील किया था, जो दरअसल कमज़ोर संबंधों और मज़बूत रिश्तों के संयोग पर निर्भर रहकर संभव हुआ था। हालाँकि बीस हज़ार अनुयायियों और हज़ारों अन्य पादरियों के रूप में चर्च का विस्तार करके उसे एक आंदोलन में तबदील करने के लिए आत्मनिर्भर बनाने के अलावा और भी कई चीज़ों की ज़रूरत थी। इसके लिए ज़रूरी था कि वॉरेन लोगों को नई आदतें सिखाएँ, जिनकी मदद से लोग अपने संबंधों के भरोसे नहीं बल्कि वे स्वयं जो भी हैं, उस पर निर्भर होकर विश्वास से भरपूर जीवन जी सकें।

सामाजिक आदतें कैसे किसी आंदोलन को आगे बढ़ाती हैं, उसका तीसरा पहलू है : किसी विचार को एक समुदाय के दायरे से आगे ले जाने के लिए ज़रूरी होता है कि वह विचार अपने प्रसार के लिए आत्मनिर्भर हो। इसका सबसे कारगर तरीका है लोगों के अंदर ऐसी आदतें विकसित करना, जिनकी मदद से वे स्वयं ही यह पता लगा सकें कि उन्हें किस मार्ग पर आगे बढ़ना है।

***

जैसे-जैसे बसों के बहिष्कार की अवधि एक दिन से बढ़ते-बढ़ते कुछ हफ्तों और फिर दो महीने हो गई, वैसे-वैसे इसके प्रति मॉन्टगोमेरी समुदाय का झुकाव कमज़ोर पड़ने लगा।

पुलिस कमिश्नर ने उन टैक्सी ड्राइवरों को गिरफ्तारी की धमकी देना शुरू कर दिया, जो अश्वेत लोगों को किराए में छूट दे रहे थे। इसके लिए पुलिस कमिश्नर ने उन्हें उस अध्यादेश का हवाला दिया, जिसमें हर यात्री से कम से कम एक निश्चित न्यूनतम किराया लेना हर टैक्सी ड्राइवर के लिए अनिवार्य था। इसकी प्रतिक्रिया के रूप में बहिष्कार के लीडरों ने ऐसे 200 स्वयंसेवकों के हस्ताक्षर लिए, जो कारपूलिंग में भागीदारी करने को तैयार थे। इससे निपटने के लिए पुलिस लोगों को जबरदस्ती टिकट देने लगी और कारपूलिंग के लिए होनेवाली मुलाकातों की जगह पर लोगों को परेशान करने लगी। जिसके कारण ड्राइवरों ने गाड़ी चलाने से बचना शुरू कर दिया। बाद में किंग ने इस बारे में लिखा, 'धीरे-धीरे कहीं भी आने-जाने के लिए गाड़ियाँ मिलना मुश्किल हो गया था। लोगों की शिकायतें बढ़ने लगीं। मेरा फोन तड़के सुबह से बजना शुरू हो जाता और यह सिलसिला आधी रात के बाद भी जारी रहता पर मेरे दरवाजे पर आनेवालों की संख्या न के बराबर थी। इस संघर्ष को जारी रखने की नीग्रो समुदाय की क्षमता पर मुझे शक होने लगा था।'

एक रात जब किंग अपने चर्च में उपदेश दे रहे थे, तब अचानक उनके सहायक ने एक अकस्मात संदेश लाया। दरअसल किंग के घर में बम विस्फोट हुआ था और उस समय उनकी पत्नी व नवजात बच्ची घर पर ही थे। किंग भागे-भागे घर पहुँचे। उनके घर के बाहर सैकड़ों अश्वेत लोगों की भीड़ लगी हुई थी। शहर के मेयर और पुलिस चीफ भी

मौके पर मौजूद थे। राहत की बात थी कि उनका परिवार सुरक्षित था। बस घर की सामनेवाली खिड़की टूटकर चकनाचूर हो गई थी और उनके बरामदे में मलबा फैला हुआ था। बम विस्फोट के समय अगर कोई घर के सामनेवाले कमरे में होता, तो उसकी मौत हो जाती।

किंग आगे बढ़कर अपने क्षतिग्रस्त घर का मुआयना करने लगे। धीरे-धीरे वहाँ अश्वेत लोगों की भीड़ इतनी ज़्यादा बढ़ गई कि उसे काबू में करने के लिए पुलिस के जवानों को सख्ती से काम लेना पड़ा। भीड़ में से किसी ने एक पुलिसवाले के साथ धक्का-मुक्की कर दी और एक अन्य व्यक्ति ने दूर से बोतल फेंककर मार दी। गुस्से में आकर एक पुलिसवाले ने किसी पर डंडा चला दिया। पुलिस चीफ, जिसने कुछ महीनों पहले नस्लभेदी संस्था व्हाइट सिटीजन्स काउंसिल को समर्थन देने की घोषणा की थी, वह किंग को एक तरफ ले गया और बोला कि अगर उन्होंने इस भीड़ को काबू में करने के लिए कुछ नहीं किया, तो यहाँ दंगा-फसाद शुरू होते देर नहीं लगेगी।

किंग अपने घर के बरामदे की ओर बढ़े और फिर भीड़ की ओर मुड़ गए।

'आवेश में आकर कुछ मत कीजिए,' उन्होंने भीड़ की ओर देखते हुए तेज आवाज़ में कहा। 'और न ही अपने हथियार निकालिए क्योंकि जो तलवार के बल पर जीता है, उसका खात्मा भी तलवार से ही होता है।'

जैसे ही उन्होंने ये शब्द कहे, भीड़ शांत हो गई।

'हमें अपने श्वेत भाइयों के प्रति प्रेम का भाव रखना होगा, भले ही वे हमारे साथ जो भी करें,' किंग ने कहा। 'हमें उन्हें बताना होगा कि हमारे मन में उनके लिए सिर्फ प्रेम है। जीज़स के ये शब्द आज शताब्दियों बाद भी प्रासंगिक हैं : **जो तुम्हारे प्रति नफरत का भाव रखते हुए तुम्हारा इस्तेमाल करते हैं, उनके लिए भी प्रार्थना करो**।'

किंग कई सप्ताहों से अपने उपदेशों में अहिंसा का पाठ पढ़ा रहे थे। इन उपदेशों की थीम गांधी और ईसा मसीह के उपदेशों पर आधारित थी। किंग के ये सबक दरअसल एक किस्म का सवाल-जवाब थे, जो इनके श्रोताओं ने इस संदर्भ में पहले कभी नहीं सुने थे। इन सभी सबक में अहिंसा की अपील की गई थी, इनमें प्रेम का और खुद पर हमला करनेवाले को माफ करने का संदेश था, साथ ही यह वादा था कि विजय इसी तरह हासिल होगी। नागरिक अधिकार आंदोलन सालों से इसीलिए जिंदा था क्योंकि इसकी भाषा हमेशा संघर्ष की रही है। एक ओर जहाँ इस आंदोलन से जुड़े लोगों को कई बार प्रतिद्वंदिता और हार का सामना करना पड़ा, वहीं कई मौकों पर उन्हें जीत भी हासिल हुई और इससे हमेशा संघर्ष करने की उनकी शक्ति बढ़ती रही।

किंग ने लोगों को एक नया दृष्टिकोण दिया। उन्होंने कहा कि यह कोई युद्ध नहीं है। उनका संदेश तो यह था कि हर कोई एक-दूसरे को गले लगाकर उसे जस का तस स्वीकार करे।

किंग ने इस बहिष्कार को एक नया और अलग रास्ता दिखाया, जो बहुत ही महत्वपूर्ण साबित हुआ। किंग ने कहा, 'यह मामला सिर्फ सिटी बसों में यात्रियों के बीच समानता लाने का नहीं था। यह तो ईश्वर की उसी योजना का हिस्सा था, जिसने भारत में अंग्रेजों का शासन और अमेरिका में गुलाम-प्रथा का खात्मा कर दिया था। यह वही योजना थी, जिसके चलते ईसा मसीह इस संसार को छोड़कर गए ताकि वे हम सबके पापों का प्रायश्चित कर सकें। यह इस आंदोलन का सबसे नया चरण था, जो शताब्दियों पहले शुरू हुआ था और इसके लिए नई प्रतिक्रियाओं, अलग किस्म के तरीकों और व्यवहारों की ज़रूरत थी। ज़रूरत इस बात की थी कि जब इस आंदोलन के लोगों के एक गाल पर थप्पड़ पड़े तो वे अपना दूसरा गाल आगे कर दें। किंग जिन आदतों की वकालत कर रहे थे, उन्हें अपनाकर कोई भी इस आंदोलन को अपना समर्थन दे सकता था।

जिस दिन किंग के घर पर बम विस्फोट हुआ, उसी रात उन्होंने लोगों से कहा, 'हमें नफरत का सामना प्रेम से करना होगा। मैं भले ही किसी कारण से रुक जाऊँ, पर यह आंदोलन नहीं रुकेगा क्योंकि हम जो भी कर रहे हैं, सही कर रहे हैं और ईश्वर हमारे साथ है।'

किंग ने अपनी बात खत्म की और इसके बाद धीरे-धीरे वहाँ की सारी भीड़ छँट गई।

बाद में एक श्वेत पुलिस वाले ने कहा, 'अगर उस निगर (अश्वेतों के लिए इस्तेमाल किया जानेवाला एक अपमानजनक शब्द) ने भीड़ को उपदेश देकर रोका नहीं होता, तो हम सब भीड़ के हाथों मारे जाते।'

अगले सप्ताह दो दर्जन नए ड्राइवरों ने कारपूलिंग के लिए करार किया। किंग के घर में दिनभर आनेवाले फोन कॉल भी कम हो गए। लोग अपने आप ही एकजुट होकर बहिष्कार की अगुआई करने लगे और आंदोलन को आगे बढ़ाने लगे। जब इस बहिष्कार का आयोजन करनेवाले अन्य लीडरों के घरों में बम फटे, तब भी ठीक यही हुआ। मॉन्टगोमेरी के अश्वेत लोगों के जत्थे सड़कों पर इकट्ठे होते पर वहाँ कोई हिंसा नहीं होती, वे बस अपना विरोध जताते और चुपचाप अपने-अपने घरों की ओर लौट जाते।

ऐसा नहीं था कि स्वत: पैदा हुई यह एकता सिर्फ हिंसा की प्रतिक्रिया थी। चर्चों में भी हर सप्ताह मीटिंग होने लगी थीं, कभी-कभी तो रात में मीटिंग होती थी। टेलर ब्रांच ने मुझे बताया, 'ये मीटिंग किंग के उस भाषण जैसी होती थीं, जो उस रात उन्होंने अपने घर में विस्फोट के बाद दिया। इनमें ईसाई शिक्षाएँ दी जाती थीं, पर उनका संदर्भ राजनीतिक होता था। आंदोलन कोई भी हो, हमेशा व्यापक ही होता है। अगर वाकई किसी आंदोलन को सफल बनाना हो, तो उसमें हिस्सा लेनेवालों को अपनी पूरी पहचान, पूरा अस्तित्व रूपांतरित करना होता है। मॉन्टगोमेरी के लोगों को भी नए तरीके अपनाने पड़े।'

जिस तरह एल्कोअल एनॉनमस अपनी उन मीटिंग के कारण सशक्त बना, जहाँ शराब

के लती नई आदतें सीखते थे और स्वयं पर इसलिए विश्वास करने लगते थे क्योंकि अन्य लोग उन पर अपना विश्वास दिखाते थे, उसी तरह मॉन्टगोमरी के लोगों ने भी ऐसी ही मीटिंग में नए ढंग से व्यवहार करना सीखा, जिससे आंदोलन को आगे बढ़ाने में बहुत मदद मिली। ब्रांच कहते हैं, 'लोग यह देखने जाते थे कि बाकी लोग आंदोलन में किस ढंग से हिस्सा ले रहे हैं। इस तरह की चीज़ों से लोग स्वयं को एक बड़े सामाजिक कार्य के महत्वपूर्ण हिस्से के रूप में देखने लगते हैं और जल्द ही वे इस पर विश्वास भी करने लगते हैं।'

***

बहिष्कार शुरू होने के तीन महीने बाद जब पुलिस ने हज़ारों लोगों को गिरफ्तार कर इस पर अंकुश लगाने की कोशिश की, तो पूरे समुदाय ने इस प्रताड़ना को एक तरह से स्वीकार कर लिया। जब अदालत ने 90 लोगों को दोषी ठहराया, तो ये सारे लोग गिरफ्तार होने के लिए खुद अदालत पहुँच गए। कुछ लोग तो पुलिस के शेरिफ ऑफिस में यह देखने गए कि क्या उनका नाम भी इस सूची में है और जब उन्हें अपना नाम नज़र नहीं आया, तो उन्हें 'निराशा' महसूस हुई। किंग ने बाद में लिखा, 'वे लोग, जो एक दौर में डर के साये में जीते थे, अब वे पूरी तरह बदल चुके थे।'

आनेवाले सालों में जैसे-जैसे यह आंदोलन बढ़ा, वैसे-वैसे अश्वेतों पर हमले बढ़े, जिनमें कई लोग मारे गए। पुलिस भी उन्हें जब-तब गिरफ्तार करके प्रताड़ित करने का कोई मौका नहीं छोड़ती थी। पर आंदोलन करनेवाले लोगों ने स्वयं कभी बदले के रूप में कोई हिंसा नहीं की और न ही किसी श्वेत व्यक्ति को प्रताड़ित करने का कोई और तरीका अपनाया। वे तो बस अपनी बात पर अड़े रहे और उन्हें प्रताड़ित करनेवाले श्वेत लोगों से कहते रहे कि वे भले ही कितनी भी नफ़रत कर लें, अश्वेत लोग उन्हें माफ करते रहेंगे।

किंग ने लिखा, 'इस आंदोलन के विरोधियों ने जो भी तरीका अपनाया, उससे यह आंदोलन कमज़ोर पड़ने के बजाय और मुखर व मज़बूत होता चला गया। इसके कारण अश्वेत समुदाय के लोग एक-दूसरे के और करीब आ गए। यह मान लिया गया था कि उनका सामना करनेवाले लोग दरअसल ताकतवर लोगों द्वारा इस्तेमाल किए जा रहे हैं। उन्हें नहीं पता था कि उनका सामना ऐसे नीग्रो लोगों के साथ हो रहा है, जो डर से मुक्त हो चुके हैं।'

मॉन्टगोमेरी बहिष्कार के सफल होने के पीछे और पूरे दक्षिणी इलाके में आंदोलन शुरू होने के अलावा भी इसके कई कारण थे, जो कहीं ज़्यादा बारीक थे। पर सामाजिक आदतों का यह तीसरा पहलू भी इसका एक मुख्य कारण था। किंग के दर्शन में ऐसे नए व्यवहारों का समावेश था, जिन्होंने इस आंदोलन में हिस्सा लेनेवालों को अनुयायियों के बजाय स्वयं निर्णय लेनेवाले लीडरों में बदल दिया था। यह वे सामान्य आदतें नहीं हैं, जिन्हें हम रोज़मर्रा के जीवन में देखते हैं। जब किंग ने विरोधियों को एक नई पहचान देकर

मॉन्टगोमेरी संघर्ष को नई दिशा दी, तो इस आंदोलन के लोग इस ऐतिहासिक कार्य के साझेदार बन रहे थे। यह सामाजिक पैटर्न समय के साथ स्वत: आगे बढ़ने लगा और कई अलग-अलग इलाकों में फैल गया। यहाँ तक कि इसमें वे छात्र भी हिस्सा लेने लगे, जिनसे किंग कभी मिले तक नहीं थे। ये छात्र आंदोलन में हिस्सा लेनेवालों को देख-देखकर सीखते रहे और उनके तरीकों को आत्मसात करते हुए स्वयं लीडर्स की तरह काम करने लगे।

5 जून 1956 को जजों की एक समिति ने निर्णय दिया कि बसों में अश्वेतों के साथ भेदभाव करनेवाला नियम संविधान के खिलाफ है। शहर के अधिकारियों ने इसके खिलाफ 17 दिसंबर को सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की, जिसे कोर्ट ने खारिज कर दिया। तब तक पार्क्स को गिरफ्तार हुए एक साल बीत चुका था। तीन दिन बाद शहर के अधिकारियों को इसका आधिकारिक आदेश भी मिल गया। अब शहर की बसों में हर नागरिक के पास समान अधिकार थे। अब श्वेत-अश्वेत का कोई भेदभाव नहीं रह गया था।

अगली सुबह 5 बजकर 55 मिनट पर किंग, ईडी निक्सन, राल्फ एबरनैथी और अन्य लोग बारह महीनों के बहिष्कार के बाद सिटी बस में चढ़े और सबसे आगे की सीटों पर बैठे।

बस के श्वेत ड्राइवर ने पूछा, ‘आप शायद आंदोलन के नेता मार्टिन लूथर किंग जूनियर हैं?’

‘जी हाँ।’

‘आपका स्वागत है। हमें आपको यहाँ देखकर अच्छा लगा,’ उसने कहा।

बाद में एन.ए.ए.सी.पी. के अटॉर्नी और सुप्रीम कोर्ट के भविष्य के जज थॉरगुड मार्शल ने कहा कि ‘बसों में होनेवाले नस्लीय भेदभाव के कानून को खत्म करने से इस बहिष्कार का संबंध न के बराबर था। वह तो सुप्रीम कोर्ट था, जो किसी भी एक पक्ष के दबाव में नहीं आया और आखिरकार इस भेदभावपूर्ण कानून को खत्म कर दिया।’

‘सड़कों पर रैलियाँ निकालने से कुछ नहीं होता। अश्वेत लोग चाहते तो घर पर आराम से बैठ सकते थे और कोर्ट में यह केस चलता रहता। तब न तो बहिष्कार की कोई चिंता रहती, न कोई और समस्या होती।’

हालाँकि मार्शल की यह बात गलत थी क्योंकि वे इसका एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू नहीं देख पा रहे थे। मॉन्टगोमेरी बसों के बहिष्कार ने कुछ नई सामाजिक आदतों को जन्म दिया, जो जल्द ही नॉर्थ कैरोलिना के ग्रीन्सबोरो से लेकर अल्बामा के सेल्मा और अरकंसास के लिटिल रॉक तक फैल गईं। यह आंदोलन लोगों के मिलने और शांतिपूर्वक अपना विरोध जताने का एक ज़रिया बन गया था। इसमें हिस्सा लेनेवालों को प्रताड़ित किया गया, पीटा गया, पर फिर भी वे डटे रहे। 1960 शुरू होते-होते यह आंदोलन

फ्लोरिडा, कैलीफोर्निया, वॉशिंग्टन डी.सी. में फैलने के अलावा काँग्रेस की नज़र में भी आ गया। राष्ट्रपति लिंडन जॉन्सन ने 1964 के नागरिक अधिकार एक्ट पर हस्ताक्षर किए, जिससे अल्पसंख्यकों और महिलाओं के खिलाफ होनेवाला हर तरह का भेदभाव खत्म हो गया। राष्ट्रपति ने आंदोलन के कार्यकताओं की तुलना देश के पितामहों से की। जबकि अगर यही तुलना एक दशक पहले की जाती, तो यह राष्ट्रपति के लिए राजनीतिक आत्महत्या के बराबर होता। उन्होंने कैमरों के सामने आकर कहा, 'एक सौ अठ्ठासी साल पहले कुछ लोगों के एक छोटे से समूह ने आज़ादी का लंबा संघर्ष शुरू किया था। अब नई पीढ़ी के अमेरिकी नागरिकों को देश में न्याय की खोज का सिलसिला जारी रखने का जिम्मा दिया गया है।'

कोई भी आंदोलन इसलिए शुरू नहीं होता क्योंकि कुछ लोगों ने मिलकर तय कर लिया होता है कि अब उन्हें एक दिशा में आगे बढ़ना है। आंदोलन तो सामाजिक पैटर्न्स पर आधारित होते हैं, जो दोस्ती की आदत से शुरू होते हैं और सामुदायिक भावना के कारण आगे बढ़ते हैं और नई आदतों व उनमें हिस्सा लेनेवालों की आत्म-पहचान के विकसित होने से चलते हैं।

किंग ने मॉन्टगोमरी में इन आदतों की शक्ति को पहले ही पहचान लिया था। लोगों से भरे चर्च में बहिष्कार समाप्ति की घोषणा करते समय उन्होंने कहा, 'मैं लोगों को सिर्फ सावधानी बरतने का निर्देष देकर चुप नहीं बैठ सकता था।' इसके बाद भी यह आंदोलन दस साल और चला, पर उस समय यह नज़र आने लगा था कि इसका अंत कब होगा और इसका प्रभाव सकारात्मक होगा। किंग ने लोगों से कहा, 'इतने महीनों के बहिष्कार के बाद जब हम शहर की बसों में कदम रखेंगे, उस वक्त हमें इस विरोध को खत्म कर लोगों को गले लगाना होगा... हमें इसके प्रति अपना समर्पण दिखाना होगा। तभी हम इंसानों द्वारा इंसानों के साथ किए गए अमानवीय व्यवहार के काले साये से मुक्त हो सकेंगे और आज़ादी व न्याय के उज़ाले की ओर बढ़ सकेंगे।'

9

मुक्त इच्छा का तंत्रिका विज्ञान

क्या अपनी आदतों के लिए हम खुद जिम्मेदार हैं?

1

एक दिन सुबह-सुबह उसकी परेशानी शुरू हुई - पहली बार इस परेशानी का एहसास होने से सालों पहले - एंजी बैचमैन घर पर यूँ ही बैठी थी और टी.वी. की ओर घूर रही थी। उसे इतनी उकताहट हो रही थी कि वह समय बिताने के लिए बर्तनों के दराज की फिर से साफ-सफाई करने की सोच रही थी।

उसकी सबसे छोटी बेटी ने कुछ सप्ताह पहले ही स्कूल जाना शुरू किया था। उसकी दो बड़ी बेटियाँ मिडिल स्कूल में पढ़ती थीं। बच्चे स्कूल के बाद दोस्तों के साथ खेलने-कूदने और गपशप करने में व्यस्त रहते थे। बच्चों की गपशप माँ को कभी समझ में ही नहीं आती थी। एंजी के पति एक भूमि सर्वेक्षक (land surveyor) के तौर पर कार्यरत थे। वे आमतौर पर सुबह आठ बजे काम पर निकल जाते और शाम छह बजे के बाद ही वापस घर आ पाते। एंजी ने 19 साल की छोटी उम्र में शादी कर ली थी और 20 की होते-होते वह गर्भवती भी हो गई थी। बच्चे होने के बाद उसका समय बच्चों का लंच तैयार करने, सबको खुश रखने और घर चलाने में बीत रहा था। पति के ऑफिस जाने और बच्चों के स्कूल जाने के बाद एंजी पूरा दिन घर पर अकेले रहकर उकता जाती थी, पर शादी के इतने सालों बाद आज पहली बार उसे इतना अकेलापन महसूस हो रहा था। जब वह हाई स्कूल में पढ़ती थी, तो उसकी सहेलियाँ उसकी तारीफ करते हुए कहा करती थीं कि वह इतनी सुंदर है कि भविष्य में एक सफल मॉडल बन सकती है। पर स्कूल के फौरन बाद उसने एक गिटार वादक से शादी कर ली। बाद में जब उसके पति ने गिटार का शौक छोड़कर एक ढंग की नौकरी शुरू की, तो एंजी एक गृहणी और फिर एक माँ बनकर रह गई व मॉडल बनने की बात आई-गई हो गई। अब सुबह के साढ़े दस बज चुके थे। उसकी तीनों बेटियाँ स्कूल के लिए निकल चुकी थीं, पति पहले ही ऑफिस जा चुके थे और अब एंजी रसोई की दीवार पर टंगी घड़ी को एक कागज़ से ढकने में लगी हुई थी ताकि वह हर तीन मिनट में घड़ी की ओर देखने की अपनी आदत से बच सके। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि इसके बाद समय बिताने के लिए उसे क्या करना चाहिए।

उस दिन उसने खुद से एक वादा किया। अगर वह दोपहर होने तक पागल नहीं हुई या फ्रिज में रखा केक खाने से खुद को रोकने में सफल रही, तो वह घर से कहीं निकल जाएगी और कुछ ऐसा करेगी, जिसमें उसे आनंद आए। अगले 90 मिनट उसने यह सोचते

हुए बिताए कि उसे क्या करने में सबसे ज़्यादा आनंद आएगा। दोपहर के 12 बजते ही उसने एक अच्छी पोशाक पहनी और हल्का मेकअप करके घर से 20 मिनट की दूरी पर स्थित रिवरबोट कैसिनो के लिए निकल गई। उस दिन गुरुवार था और दोपहर 12 बजे भी कैसीनो में ऐसे लोगों की अच्छी खासी भीड़ थी, जो घर पर टी.वी. देखने और कपड़े धोने जैसे कामों को छोड़कर यहाँ आकर विभिन्न आनंदकारी गतिविधियों में लगे हुए थे। कैसीनो के प्रवेश द्वार के पास एक बैंड म्यूज़िक बजा रहा था और एक महिला सभी को मुफ्त में कॉकटेल बाँट रही थी। एंजी ने कैसीनो के बुफे में पूरे चाव से झींगा मछली का स्वाद लिया। यह पूरा अनुभव बहुत ही शानदार रहा, मानों वह हूकी (स्कूल या ऑफिस छोड़कर घूमने निकल जाने और मज़ेदार समय बिताना) खेल रही हो। एंजी ब्लैकजैक (एक प्रकार का जुए का खेल) की टेबल की ओर मुड़ गई, जहाँ उस टेबल के डीलर ने बड़े धैर्य के साथ सभी को खेल के नियम समझाए। एंजी ने जब जुए में 40 डॉलर गवाँ दिए, तो उसने अपनी कलाई पर बँधी घड़ी की ओर देखा। दो घंटे कैसे बीत गए, उसे पता भी नहीं चला। उसे याद आया कि छोटी बेटी को स्कूल से वापस लाने का समय हो गया है और उसे फौरन निकलना होगा। उस रात खाने के दौरान करीब महीनेभर बाद ऐसा मौका आया था, जब एंजी के पास अपने परिवार को बताने के लिए कुछ था। वरना वह हर रोज़ खाना खाते समय टी.वी. पर 'द प्राइस इज राइट' कार्यक्रम देख रही होती थी। वह इस कोशिश में रहती थी कि इस कार्यक्रम में हिस्सा लेनेवाले प्रतियोगी पहले ही उसमें दिखाए गए सामान की सही कीमत का अनुमान लगा ले।

एंजी बैचमैन के पिता पेशे से एक ट्रक ड्राइवर थे। अधेड़ अवस्था तक आते-आते वे एक गीतकार बन गए और थोड़े-बहुत मशहूर भी हो गए थे। एंजी का भाई भी गीतकार बन गया था और अपने गीतों के लिए उसने कुछ पुरस्कार भी जीते थे। दूसरी ओर एंजी बैचमैन के माता-पिता उसका परिचय यह कहकर देते कि उनकी बेटी एक गृहणी है और तीन बच्चों की माँ है।

एंजी ने मुझे बताया, 'मुझे हमेशा ऐसा महसूस होता था, जैसे पूरे परिवार में एक मैं ही हूँ, जिसमें कोई प्रतिभा नहीं है। हालाँकि मेरा मानना है कि मैं न सिर्फ स्मार्ट हूँ बल्कि एक अच्छी माँ भी हूँ। पर मेरे पास ऐसा कुछ खास नहीं है, जिसे मैं अपनी खासियत की तरह दूसरों के सामने पेश कर सकूँ।'

सिर्फ एक बार कैसीनो का अनुभव लेने से ही एंजी को वहाँ जाना अच्छा लगने लगा और वह सप्ताह में एक बार हर शुक्रवार को दोपहर के वक्त वहाँ जाने लगी। यह उसके लिए मज़बूरन पूरा दिन घर पर अकेले बिताने और घर की सफाई से लेकर खाना बनाने जैसे तमाम घरेलू काम निपटाने के लिए मिलनेवाले पुरस्कार जैसा था। एंजी को अच्छी तरह पता था कि जुआ खेलना उसकी लत भी बन सकता है, इसीलिए उसने खुद पर नियंत्रण रखने के लिए कुछ सख्त नियम बनाए थे, जैसे हर सप्ताह कैसीनो की ब्लैकजैक की टेबल पर एक घंटे से ज़्यादा समय न बिताना और सिर्फ उतने ही पैसे के दाँव लगाना, जितने उसके पर्स में हैं। एंजी ने मुझे बताया, 'मैं इसे किसी नौकरी की तरह देखती थी। मैं दोपहर के पहले ही कैसीनो के लिए निकलती थी और बेटी को स्कूल से लाने का समय

होने तक वापस भी आ जाती थी। मैं यह सब बहुत अनुशासित ढंग से करती थी।'

और वह धीरे-धीरे इसमें पारंगत होने लगीं। पहले-पहले वह एक घंटा पूरा होने से पहले ही अपने पर्स के सारे पैसे जुए में हार जाती थीं। पर सिर्फ छह महीने में ही एंजी इतनी चालें चलना सीख गईं कि अब वह एक घंटे की समयसीमावाले अपने नियम को ताक पर रखकर दो-तीन घंटों तक जुआ खेलती रहती और जब कैसीनो से निकलतीं, तब भी उसके पर्स में कुछ पैसे बचे रहते। एक दिन दोपहर के वक्त वह ब्लैकजैक की टेबल पर 80 डॉलर्स लेकर बैठी और जब वहाँ से लौटी तो उसके पास कुल 530 डॉलर्स थे, जो घर के लिए किराने का सामान खरीदने, फोन का बिल भरने और आखिर में कुछ पैसे गुल्लक में डालने के लिए काफी थे। अब तो कैसीनो का मालिकाना हक रखनेवाली कंपनी हर्राज़ एंटरटेनमेंट एंजी को मुफ्त में बुफे का भोजन करने के कूपन भी भेजने लगी थी। अब वे शनिवार को अपने परिवार के साथ एक शानदार डिनर का आनंद उठा सकती थीं और वह भी बिलकुल मुफ्त।

एंजी बैचमैन लोवा राज्य में जुआ खेलती थीं, जहाँ कुछ साल पहले ही जुए को वैध करार दिया गया था। सन 1989 से पहले तक राज्य के कानून निर्माताओं को इस बात का डर रहा करता था कि अगर जुए को वैध किया गया, तो शायद लोग इसके प्रलोभन से खुद को बचा नहीं पाएँगे और जुए के लती बन जाएँगे। उनकी यह चिंता उतनी ही पुरानी थी, जितना पुराना हमारा देश अमेरिका है। जॉर्ज वॉशिंगटन ने सन 1783 में लिखा था कि 'जुआ लालच का बेटा, पाप का भाई और संकट का पिता होता है। यह चरित्र का ऐसा दोष है, जो हर संभव विपदा ला सकता है.... संक्षेप में कहें तो इसका फायदा बहुत कम लोगों को होता है, जबकि इसके कारण नुकसान झेलनेवालों की संख्या हज़ारों में है।' लोगों को बुरी आदतों से बचाने यानी एक तरह से यह तय करने कि कौन सी आदत को बुरा माना जाए, कानून निर्माता अपने इस विशेष अधिकार का इस्तेमाल करने को हमेशा उतावले रहते थे। वेश्यावृत्ति, जुआ, विशेष अवसरों पर शराब की बिक्री, पोर्नोग्राफी, अत्याधिक ॠण, विवाहेत्तर सेक्सुअल संबंध (या अगर आपकी पसंद जरा हटकर है, तो विवाह के दायरे में रहकर ही बाहरी लोगों से सेक्सुअल संबंध) वगैरह ऐसी आदतें हैं, जिन्हें विभिन्न विधायिकाओं ने हमेशा से ही नियंत्रित करके रखा या अवैध करार दे दिया या फिर सख्त (पर अक्सर अप्रभावी) कानून बनाकर हतोत्साहित करने का प्रयास किया है।

जब लोवा राज्य में कैसीनो को वैध करार दे दिया गया, तो कानून निर्माता इतने चिंतित थे कि उन्होंने इससे जुड़ी सभी गतिविधियों को रिवरबोट्स तक ही सीमित कर दिया था और यह नियम बना दिया कि कोई भी व्यक्ति एक दाँव में 5 डॉलर से ज़्यादा की रकम नहीं लगा सकता और एक क्रूज में एक व्यक्ति को 200 डॉलर्स से ज़्यादा का नुकसान नहीं होना चाहिए। इन प्रतिबंधों के चलते कुछ ही सालों में लोवा राज्य के कई कैसीनो अपना व्यापार समेटकर मिसीसिपी राज्य चले गए, जहाँ ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं था और जुए में असीमित पैसा खर्च किया जा सकता था। इस स्थिति को देखते हुए राज्य की विधायिका ने जल्द ही कैसीनो से जुड़े सभी प्रतिबंधों को हटा दिया। सन 2010 में जुए

से मिलनेवाले करों के रूप में 269 मिलियन डॉलर्स की कमाई से राज्य का खज़ाना भर गया।

***

लंबे समय से धूम्रपान के लती एंजी बैचमैन के माता-पिता को सन 2000 में फेफड़ों की बीमारी के लक्षण नज़र आने लगे। इसके बाद एंजी हर सप्ताह हवाई जहाज से टेनेसी जाने लगीं ताकि खाना बनाने व बाज़ार से सामान खरीदने जैसे कामों में माता-पिता की मदद कर सकें। जब एंजी माता-पिता से मिलकर वापस अपने पति और बच्चों के पास आती, तो उसे और ज़्यादा अकेलापन महसूस होने लगता था। कभी-कभी उसका घर पूरा दिन खाली ही रहता। यह कुछ ऐसा था, मानो उसकी अनुपस्थिति में उनके दोस्त उसे अपने घर के कार्यक्रमों में आमंत्रित करना पूरी तरह भूल चुके हों और उसके परिवार ने उसके बिना जीना सीख लिया हो।

एंजी बैचमैन अपने माता-पिता को लेकर चिंतित रहती थीं और इस बात से नाराज़ रहती थीं कि उसके पति को उसकी परेशानियों से ज़्यादा दिलचस्पी अपने काम में है। वे अपने बच्चों से इस बात को लेकर चिढ़ी हुई थीं कि उन्हें ये अंदाजा भी नहीं था कि उन्हें अच्छी तरह पालने-पोसने के लिए कई समझौते करनेवाली उनकी माँ को इस वक्त उनकी कितनी ज़रूरत है। पर जब भी एंजी कैसीनो जाती, उसकी ये सारी चिंताएँ एक पल में हवा हो जातीं। जिस सप्ताह एंजी अपने माता-पिता से मिलने नहीं जाती थी, उस सप्ताह वह कुछेक बार कैसीनो ज़रूर जाती थी। इसके बाद वह हर सोमवार, बुधवार और शुक्रवार को कैसीनो जाने लगीं। हालाँकि उसने खुद को नियंत्रण में रखने के लिए अब भी कुछ नियम बना रखे थे। पर अब उसे जुआ खेलते हुए सालों हो चुके थे और अब वह उन स्वयंसिद्ध सिद्धांतों से अच्छी तरह परिचित हो चुकी थी, जिनके आधार पर बड़े जुआरी अपना जीवन जीते थे। एंजी कभी भी जुए के एक दाँव में 25 डॉलर से कम नहीं लगाती थी और हमेशा एक बार में दो दाँव खेलती थीं। उसने मुझे बताया, 'छोटी रकम के मुकाबले बड़ी रकमवाली टेबल पर खेलने से जीतने की संभावना बढ़ जाती है। जब तक भाग्य आपका साथ नहीं देता, तब तक आपमें हार बरदाश्त करने की क्षमता होनी ज़रूरी है। मैंने ऐसे लोग भी देखे हैं, जो 150 डॉलर्स लेकर कैसीनो आते हैं और लौटते समय उनके पास 10 हज़ार डॉलर्स होते हैं। मैं जानती थी कि अगर मैं अपने नियमों का पालन करती रहूँ, तो मैं भी इसी तरह ढेर सारे पैसे जीत सकती हूँ। मैंने खुद को काबू में रखा हुआ था।'[1] अब वह इसमें इतनी पारंगत हो चुकी थी कि उसे यह सोचने की ज़रूरत नहीं पड़ती थी कि उसे ताश का एक और पत्ता उठाकर देखना चाहिए या अपने दाँव की रकम बढ़ाकर दोगुनी कर देनी चाहिए। अब एंजी स्वत: ही सब कुछ करती थी, ठीक वैसे ही जैसे एमनीशिया के रोगी यूजीन पॉली ने आखिरकार सही गत्तेवाला आयत उठाना सीख लिया था।

यह सन 2000 की बात है, जब एक दिन एंजी बैचमैन कैसीनो से घर लौटी, तो उसके पर्स में 6000 डॉलर्स थे, जो उसने जुए में जीते थे। ये पैसे दो महीने तक घर का किराया

देने और सारे क्रेडिट कार्ड बिलों का भुगतान करने के लिए काफी थे। इसी तरह एक दिन वह 2000 डॉलर्स जीतकर घर लौटी। हालाँकि कभी-कभी एंजी को जुए में हार का सामना भी करना पड़ता था, पर खेल में हार-जीत तो लगी ही रहती है। अकलमंद जुआरियों को अच्छी तरह पता होता है कि ऊपर उठने के लिए कभी-कभी नीचे भी गिरना पड़ता है। आखिरकार हर्राज एंटरटेनमेंट ने एंजी को क्रेडिट की सुविधा भी दे दी ताकि जुआ खेलने के लिए उन्हें ढेर सारा कैश खुद लेकर न आना पड़े। अन्य जुआरी एंजी के साथ खेलने के मौके तलाश करते रहते थे और अपनी टेबल छोड़कर उस टेबल पर आ जाते थे, जहाँ एंजी खेल रही होती थीं। क्योंकि एंजी इस खेल के हर पहलू को गहराई से समझती थीं और उसके खेल में आत्मविश्वास साफ झलकता था। जब एंजी लंच के लिए बुफे की ओर जाती, तो बुफे का होस्ट उसे लाइन में सबसे आगे बुला लेता। एंजी ने मुझे बताया, 'मुझे इस खेल की हर बारीकी पता थी। हो सकता है कि मेरी बात सुनकर आपको ऐसा लगे कि मुझे अपनी जुए की लत का अंदाजा भी नहीं है। पर मेरी सिर्फ एक ही समस्या थी कि मैंने जुआ खेलना बंद नहीं किया, पर मेरे खेलने के तरीके में कोई कमी नहीं थी।'

जैसे-जैसे एंजी बैचमैन ज़्यादा रकम जीतने या हारने लगी, स्वयं को नियंत्रण में रखने के लिए बनाए गए उसके निजी नियम लचीले होते गए। एक दिन एंजी मात्र एक घंटे में 800 डॉलर्स हार गई और फिर अगले 40 मिनटों में उसने 1200 डॉलर्स जीत भी लिए। इसके बाद एक बार फिर उसके भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया और कुछ ही देर में वह 4000 डॉलर्स हार गई। एक अन्य मौके पर एंजी सुबह-सुबह 3500 डॉलर्स हारी पर दोपहर के एक बजते-बजते उसने 5000 डॉलर्स जीत लिए और दोपहर खत्म होते-होते एक बार फिर 3000 डॉलर्स हार गई। कैसीनो के पास इस बात का पूरा रिकॉर्ड होता था कि एंजी ने कब कितने पैसे जीते या हारे। एंजी ने खुद इसका हिसाब रखना छोड़ दिया था। फिर एक बार ऐसा मौका आया, जब एंजी के बैंक अकाउंट में बिजली का बिल भरने के भी पैसे नहीं थे। उस समय उसने अपने माता-पिता से कुछ पैसे उधार लेकर काम चला लिया। कुछ दिनों बाद एंजी ने एक बार फिर उनसे कुछ पैसे उधार लिए। पहले महीने उसने 2000 डॉलर्स उधार लिए थे और दूसरे महीने 2500 डॉलर्स, पर यह एंजी के लिए कोई बड़ी बात नहीं थी क्योंकि उसके माता-पिता पैसेवाले लोग थे।

एंजी को कभी भी शराब पीने, ड्रग्स लेने या ज़रूरत से ज़्यादा खाने जैसी कोई लत नहीं थी। वह एक सामान्य महिला और एक सामान्य माँ थी। उसकी जिंदगी की तकलीफें और खुशियाँ भी दूसरों के जैसी ही थीं। इसीलिए धीरे-धीरे जुआ खेलने का उसका निजी आग्रह बहुत सशक्त हो गया था। जिस दिन वह कैसीनो में जाकर जुआ नहीं खेलती थी, उस दिन उसे चिड़चिड़ापन महसूस होता रहता था और किसी भी काम में उसका मन नहीं लगता था। वह हर समय कैसीनो में जाने के बारे में सोचती रहती थी। जब भी वह जुए में पैसे जीतती तो उसे अपने बारे में अच्छा महसूस होता था। ये सभी चीज़ें उसे लगातार जुए की ओर खींचती रहती थीं। एंजी बैचमैन के लिए जुआ खेलना एक नए किस्म की सनसनी महसूस करने जैसा था और उसके लिए यह इतना अप्रत्याशित था कि उसे समझ में ही नहीं आया कि यह सनसनी कब एक गंभीर लत में तबदील हो गई। जब यह समस्या उसकी जिंदगी के हर पहलू पर हावी होने लगी, तब जाकर उसे एहसास हुआ कि

उसे जुए की लत लग गई है। अब जब वह पीछे मुड़कर इसके बारे में सोचती है, तो उसे लगता है कि जुआ खेलने के उसके अलग-अलग अनुभवों में आपस में कोई फर्क नहीं था। कभी-कभी उसे इसमें बहुत मज़ा आता था और कभी-कभी यह लत उसके नियंत्रण से बाहर हो जाती थी।

सन 2001 आते-आते एंजी बैचमैन हर रोज़ कैसीनो जाने लगी। जब भी पति से उसकी अनबन हो जाती या जब भी उसे लगता कि उसके बच्चों को उसकी फिक्र नहीं है, तो वह कैसीनो चली जाती। जुआ खेलते समय उसे एक ही समय में शून्यता और उत्साह दोनों ही चीज़ें महसूस होती थीं। अब उसे अपनी चिंताओं की भी फिक्र नहीं रहती थी। जब भी वह जुए में जीतती तो कुछ देर के लिए उसे बड़ा अच्छा महसूस होता और जब हारती तो उसे बस कुछ ही क्षणों तक हार का दुःख होता। इसके बाद वह अगले दाँव में व्यस्त हो जाती।

एक दिन जब एंजी ने अपनी माँ से एक बार फिर कुछ पैसे उधार माँगे, तो उसकी माँ ने दो-टूक लहजे में कहा, ‘तुम जुए के भरोसे जिंदगी में कुछ कर दिखाना चाहती हो। तुम हमेशा जुआ इसलिए खेलती रहती हो क्योंकि तुम लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहती हो।’

‘ऐसा कुछ नहीं था। मैं तो बस अपने बारे में अच्छा महसूस करना चाहती थी,’ एंजी ने मुझसे कहा। ‘मेरी जिंदगी में यही एक ऐसी चीज़ थी, जिसे करके मुझे लगता था कि मेरे अंदर भी कोई प्रतिभा है।’

सन 2001 की गर्मियाँ आते-आते एंजी बैचमैन पर हर्राज एंटरटेनमेंट का बीस हज़ार डॉलर्स का कर्जा हो गया। उसने अपने पति से कर्ज की बात छुपाकर रखी थी। पर जब उसकी माँ ने उसे बार-बार उधार देने से मना कर दिया, तो एंजी टूट गई और उसने अपने पति के सामने सब कुछ कबूल कर लिया। उन्होंने फौरन एक वकील नियुक्त किया ताकि खुद को दिवालिया घोषित कर सकें। इसके साथ ही एंजी के सभी क्रेडिट कार्ड निरस्त करवा दिए गए और फिर दोनों पति-पत्नी एक कागज़ पेन लेकर बैठ गए ताकि भविष्य में एक जिम्मेदारी भरा जीवन जीने के तरीकों पर चर्चा कर सकें। इसी सिलसिले में एक दिन एंजी अपनी सारी पोशाकें लेकर पुराने कपड़े खरीदनेवाली एक दुकान पर पहुँची, पर वहाँ एंजी को अपमानित होना पड़ा क्योंकि उस दुकान की 19 साल की मालकिन ने एंजी की सारी पोशाकों को चलन से बाहर हो चुकी पोशाकें कहकर खरीदने से मना कर दिया।

ऐसे ही कई अन्य नकारात्मक अनुभवों के बाद आखिरकार एंजी को लगने लगा कि उसके जीवन का सबसे बुरा दौर खत्म होनेवाला है। उसे लगने लगा कि उसने अपनी जुए की लत पर काबू पा लिया है।

पर असलियत कुछ और ही थी। इस लत के चक्कर में सब कुछ गँवाकर एंजी ने अपनी व अपने पति की जिंदगी बरबाद कर ली थी। उसे वकील की फीस भरने में हज़ारों डॉलर खर्च करने पड़े। उसके वकील ने कोर्ट में एंजी के पक्ष में दलील दी कि 'जुआ खेलना एंजी का अपना चुनाव नहीं था। उसे जुआ खेलने की लत या आदत थी, जिस पर उसका कोई नियंत्रण नहीं था। इसीलिए उसने जुए में जितने पैसे हारे थे, उन्हें चुकाने के लिए उसे मज़बूर नहीं किया जाना चाहिए।' इसी दौरान एंजी का मामला इंटरनेट पर मशहूर हो गया और जल्द ही वह लोगों के लिए घृणा की पात्र बन गई। लोग एंजी की तुलना अपने बच्चों से दुर्व्यवहार करनेवाले माता-पिता से करने लगे। कुछ लोगों ने तो उसकी तुलना कुख्यात नरभक्षी सीरियल किलर जेफ्री डेह्मर तक से कर डाली। वह हैरान थी कि उसे कब तक दोषी ठहराया जाता रहेगा। एंजी ने मुझसे कहा, 'मेरा तो यह मानना है कि अगर मेरी जगह कोई और होता, तो ठीक वही करता, जो मैंने किया।'

2

पश्चिमी तट पर छुट्टियाँ मना रहे एक व्यक्ति ने जुलाई 2008 को एक दिन सुबह-सुबह इमरजेंसी ऑपरेटर को मदद के लिए फोन किया। वह व्यक्ति बुरी तरह घबराया हुआ था।

'मेरे हाथों से मेरी पत्नी की हत्या हो गई है। हे भगवान, मुझे लगा कि कोई चोर अंदर घुस आ गया है, जब मैंने उस पर वार किया, तब मुझे एहसास हुआ कि वह कोई चोर नहीं, मेरी पत्नी क्रिस्टीन है। मैं जरूर कोई सपना देख रहा था। ओह, ये क्या हो गया? मैंने क्या कर डाला?'

सिर्फ दस मिनट बाद पुलिस ब्रायन थॉमस के पास पहुँच गई। उस समय वह अपनी

वैन के बगल में बैठा आँसू बहा रहा था। उसने स्पष्टीकरण देते हुए कहा कि पिछली रात उसकी पत्नी और वह वैन में सो रहे थे। उनकी वैन जिस पार्किंग लॉट पर खड़ी थी, उसके आसपास अचानक कुछ युवा बाइक रेसिंग करने लगे और उनके शोर से ब्रायन और उसकी पत्नी की नींद टूट गई। उन युवाओं के शोर से बचने के लिए ब्रायन और उसकी पत्नी ने अपनी वैन को पार्किंग लॉट के आखिरी छोर पर ले जाकर खड़ा कर दिया और फिर से सो गए। फिर कुछ घंटों बाद जब ब्रायन की नींद खुली तो उसकी नज़र जींस और काले रंग के ऊनी कपड़े पहने एक व्यक्ति पर पड़ी। ब्रायन को लगा कि यह उन्हीं युवाओं में से एक होगा, जो रेसिंग कर रहे थे। ब्रायन उस पर चीखा, गला पकड़कर उसे दबोचा और तेजी से खींचने लगा। उसने पुलिस को बताया कि वह ये सब अनायास ही कर बैठा। उस व्यक्ति ने खुद को ब्रायन की पकड़ से छुड़ाने की जितनी कोशिश की, ब्रायन उतनी ही तेजी से उसका गला दबाता रहा। उस व्यक्ति ने ब्रायन के बाजुओं को खरोंचकर खुद को बचाने की कोशिश की, पर ब्रायन उसका गला और तेजी से दबाता चला गया और आखिरकार उस व्यक्ति का शरीर शिथिल पड़ गया। तब जाकर ब्रायन को एहसास हुआ कि वह अब तक जिस व्यक्ति का गला दबा रहा था, वह कोई और नहीं बल्कि उसकी अपनी पत्नी क्रिस्टीन है। यह एहसास होते ही ब्रायन ने उसे छोड़ दिया और उससे पूछने लगा कि वह ठीक तो है। ब्रायन ने उसके कंधे झिंझोड़ते हुए उसे उठाने की कोशिश की पर तब तक बहुत देर हो चुकी थी।

ब्रायन थॉमस ने पुलिस को रोते-रोते बताया, 'मुझे लगा कि कोई चोर अंदर घुस आया है और इसीलिए मैंने उसका गला दबोचा। मुझे एहसास ही नहीं हुआ कि वह मेरी पत्नी है। क्रिस्टीन ही मेरी दुनिया थी। अब मेरा क्या होगा!'

अगले दस महीनों तक ब्रायन थॉमस जेल में रहकर अपनी सुनवाई का इंतजार कर रहा था। इन्हीं दस महीनों के दौरान ब्रायन के बारे में ऐसी कई बातें सामने आईं, जो उसे एक कातिल साबित कर रही थीं। उसे बचपन से ही नींद में चलने की आदत थी। कभी-कभी तो वह एक ही रात में कई-कई बार नींद में उठकर चलने लगता था। हर रात वह बिस्तर छोड़ता, पूरे घर में घूमता, खिलौनों से खेलता और अपने लिए कुछ खाने को भी पका डालता। यह सब करते समय वह नींद में होता था और अगली सुबह वह सब कुछ भूल जाता। उसके परिवार के सदस्य उसकी इस आदत को लेकर मज़ाक उड़ाया करते थे। सप्ताह में कम से कम एक बार ब्रायन नींद में उठता और बरामदे से लेकर बगीचे तक टहल आता या परिवार के किसी सदस्य के कमरे का चक्कर काट आता। जब पड़ोसी आकर उसकी माँ से पूछते कि ब्रायन आधी रात को नंगे पैर पायजामा पहने बगीचे में क्यों घूम रहा था, तो उसकी माँ पड़ोसियों को बताती कि ब्रायन को नींद में चलने की आदत है। जैसे-जैसे वह बड़ा हुआ, उसने गौर किया कि कभी-कभी जब वह सुबह सोकर उठता है, तो उसके पैरों पर कटने के निशान होते, जबकि उसे ज़रा भी याद नहीं होता था कि रात को नींद में उठकर वह कहाँ गया था। एक बार तो हद ही हो गई, जब ब्रायन आधी रात को एक नहर (तालाब) में तैरकर वापस आ गया। यह सब उसने नींद में रहते हुए ही किया था। शादी के बाद उसकी पत्नी उसकी इस आदत को लेकर चिंतित रहने लगी थी। उसे डर था कि किसी दिन ब्रायन नींद में उठकर घर से बाहर निकलकर सड़क

पर चला जाएगा और किसी गाड़ी के नीचे आ जाएगा। इसीलिए वह हर रात घर के मुख्य दरवाजे पर ताला लगाकर चाबी को अपने तकिए के नीचे रख लेती थी। ब्रायन ने पुलिस को बताया कि वह और उसकी पत्नी हर रात बिस्तर पर जाते, एक-दूसरे को किस करके गले लगाते और कुछ देर बातें करने के बाद ब्रायन दूसरे कमरे में जाकर सो जाता। क्योंकि वह रात में कई बार बेचैनी में करवटें बदलता था, कभी-कभी चीख पड़ता था और यदा-कदा उठकर नींद में चलने लगता था, जिसके कारण उसकी पत्नी की नींद खराब होती थी।

यूनीवर्सिटी ऑफ मिनेसोटा में तंत्रिका विज्ञान के प्रोफेसर और नींद में चलने की आदत के विशेषज्ञ मार्क मेहोवाल्ड बताते हैं, 'नींद में चलने की आदत से यह पता चलता है कि सोना और जागना पारस्परिक रूप से अलग-अलग चीज़ें नहीं हैं। आपके मस्तिष्क का वह हिस्सा, जो आपके व्यवहार पर नज़र रखता है, वह सो रहा होता है पर वे हिस्से जाग रहे होते हैं, जो जटिल शारीरिक गतिविधियाँ करने में सक्षम हैं। समस्या यह है कि आपके मस्तिष्क को आपके बुनियादी पैटर्न्स यानी आपकी सबसे बुनियादी आदतों के अलावा कहीं और से कोई मार्गदर्शन नहीं मिलता है। आप उन्हीं चीज़ों का अनुसरण कर रहे होते हैं, जो आपके दिमाग में पहले से अंकित हैं क्योंकि आपके अंदर स्वयं चुनाव करने की क्षमता नहीं होती है।

कानून के अनुसार पुलिस को हत्या के लिए ब्रायन थॉमस पर मुकदमा चलाना चाहिए था, पर सारे सबूत यही संकेत दे रहे थे कि उस दुर्भाग्यपूर्ण रात के पहले अपनी पत्नी के साथ उसका वैवाहिक जीवन हँसी-खुशी बीत रहा था। उनके बीच झगड़े होने या पत्नी को प्रताड़ित करने जैसी कोई घटना नहीं घटी थी। उनकी दो किशोर बेटियाँ भी थीं। जल्द ही उनकी शादी की चौदहवीं सालगिरह आनेवाली थी, जिसे मनाने के लिए उन्होंने हाल ही में भूमध्य सागर की यात्रा के लिए एक पानी का जहाज बुक किया था। सरकारी वकीलों ने नींद के विशेषज्ञ एडिनबर्ग स्लीप सेंटर के डॉ. क्रिस इडजिकोव्स्की से ब्रायन थॉमस की जाँच करके इस बात का मूल्यांकन करने को कहा कि जब उसने अपनी पत्नी को मारा, क्या उस समय वह वास्तव में अचेत अवस्था था? शोधकर्ताओं ने दो अलग-अलग मौकों पर - एक बार इडजिकोव्स्की की प्रयोगशाला में और दूसरी बार जेल के अंदर - ब्रायन थॉमस के शरीर के हर हिस्से में सेंसर लगाए। उस सेंसर द्वारा उसके मस्तिष्क की तरंगों, आँखों की गतिविधियों, ठोढ़ी, पैर की माँसपेशियों, नाक में वायु के प्रवाह, साँस लेने के लिए किए गए प्रयास और नींद के दौरान शरीर के ऑक्सीजन स्तर की जाँच की जा सकती है।

ब्रायन थॉमस ऐसा पहला आरोपी नहीं था, जिसने यह तर्क दिया था कि उसने जो अपराध किया, वह नींद में रहते हुए किया और इसीलिए उसे इसका दोषी नहीं ठहराया जाना चाहिए। ऐसे अपराधियों का एक लंबा इतिहास रहा है, जो स्वयं को ऑटोमैटिज्म (नींद में चलने की बीमारी और अचेतन में की गई अन्य क्रियाओं) से ग्रस्त बताकर सजा से बचने की कोशिश करते रहे हैं। पिछले कुछ दशकों में जैसे-जैसे आदतों का तंत्रिका विज्ञान और मुक्त इच्छा अधिक जटिल हुई है, वैसे-वैसे आरोपियों द्वारा अपने

बचाव में दी गई ऐसी दलीलें भी सामनेवाले को पथभ्रष्ट करती हैं। जिसमें हमारी अदालतें और न्यायपीठ भी आती हैं, ऐसे समाज ने इस बात से सहमति जताई है कि कुछ आदतें इतनी सशक्त होती हैं कि हमारी चुनाव करने की क्षमता पर हावी हो जाती हैं और ऐसी स्थिति में हम जो भी करते हैं, उसके लिए हमें जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता।

***

नींद में चलना दरअसल सोते समय भी हमारे मस्तिष्क के सक्रिय रहने का एक अलग पहलू है। ज्यादातर समय, जब हमारा शरीर विश्राम के अलग-अलग चरणों में आता-जाता रहता है, तो हमारी सबसे प्राचीन तंत्रिका-विज्ञान संरचना यानी ब्रेन स्टेम (मस्तिष्क नलिका) हमारे अंगों और नर्वस सिस्टम को लकवाग्रस्त कर देती है और इसीलिए सोते समय बिना शरीर हिलाए हमारा मस्तिष्क सपने देखने लगता है। आमतौर पर लोग हर रात कई बार इस लकवाग्रस्त अवस्था में आते-जाते हैं। तंत्रिका विज्ञान के क्षेत्र में इस प्रक्रिया को 'स्विच' के नाम से जाना जाता है।

हालाँकि कुछ लोगों का मस्तिष्क स्विचिंग प्रक्रिया में त्रुटियों का अनुभव भी करता है। ऐसे लोग सोते वक्त बिलकुल ऐसे होते हैं, मानों उन्हें लकवा मार गया हो पर उनका शरीर सपने देखते समय या विश्राम के अलग-अलग चरणों में आते-जाते समय भी सक्रिय रहता है। नींद में चलने की जड़ यही है और इस आदत से ग्रस्त अधिकतर लोगों के लिए यह एक छोटी पर परेशान करनेवाली समस्या है। उदाहरण के लिए कोई सपने में देखता है कि वह केक खा रहा है और सुबह उसे रसोई में डोनट्स का एक खुला हुआ डिब्बा मिलता है। इसी तरह कोई सपने में देखता है कि वह बाथरूम जा रहा है और अगली सुबह उसे कमरे का एक कोना गीला मिलता है। नींद में चलनेवाले लोग जटिल ढंग से व्यवहार करते हैं, जैसे वे अपनी आँखें खुली रखते हैं, देखते हैं, इधर-उधर घूमते हैं, कार चलाते हैं और अपने लिए खाना तक पका लेते हैं और यह सब वे अचेतन यानी नींद में रहते हुए करते हैं। क्योंकि उनके मस्तिष्क के वे हिस्से जो देखने, चलने, कार चलाने या खाना पकाने जैसे कार्यों के लिए जिम्मेदार होते हैं, वे तब भी सक्रिय रहते हैं, जब वह इंसान सो रहा होता है। उस समय उन्हें प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स जैसे मस्तिष्क के उन्नत क्षेत्रों से कोई निर्देश नहीं मिलता है। नींद में चलनेवाले अधिकतर लोग पानी उबालकर चाय बनाने के लिए मशहूर होते हैं। एक व्यक्ति ने तो नींद में मोटरबोट तक चला डाली। एक अन्य व्यक्ति ने नींद में ही बिजली से चलनेवाला आरा चालू करके ढेर सारी लकड़ी काट डाली और इसके बाद दोबारा बिस्तर पर जाकर लेट गया। हालाँकि इन सबके बावजूद नींद में चलनेवाले अपनी अचेतन अवस्था में अमूमन ऐसा कुछ नहीं करते, जिससे उन्हें या दूसरों को कोई हानि पहुँचे। नींद में होने के बावजूद उनके अंदर जोखिम से बचने की इंसानी प्रवृत्ति सक्रिय रहती है।

हालाँकि जब वैज्ञानिकों ने नींद में चलनेवालों के मस्तिष्क की जाँच की, तो उन्होंने नींद में चलने और स्लीप टेरर यानी नींद में घबराने में, स्पष्ट फर्क पाया। नींद में चलते समय लोग बिस्तर छोड़कर वह करने लगते हैं, जो सपने में देख रहे हैं। जब कोई व्यक्ति

नींद में घबराता है, तो उसके मस्तिष्क की गतिविधियाँ जागने, अधजगे होने और नींद में चलने के दौरान होनेवाली मस्तिष्क की गतिविधियों से बिलकुल अलग होती हैं। नींद में घबराहट का अनुभव करते समय लोग भयानक चिंताओं के जाल में फँसे होते हैं पर सामान्य अर्थों में देखें, तो उस समय भी वे सपना नहीं देख रहे होते हैं। इस स्थिति में 'सेंट्रल पैटर्न जनरेटर्स' जैसे मस्तिष्क के सबसे आदिम न्यूरोलॉजिकल (तंत्रिका विज्ञानी) क्षेत्रों को छोड़कर बाकी पूरा मस्तिष्क बंद पड़ जाता है। आदतों के फंदे की न्यूरोलॉजिकल मशीनरी की खोज करनेवाले डॉक्टर लैरी स्क्वायर और एम.आई.टी. के वैज्ञानिकों ने मस्तिष्क के इन्हीं क्षेत्रों का अध्ययन किया था। जबकि एक न्यूरोलॉजिस्ट को नींद में घबराहट महसूस करनेवाले का मस्तिष्क बिलकुल उस व्यक्ति के मस्तिष्क जैसा दिखता है, जो किसी आदत का गुलाम है।

नींद में घबरानेवालों का व्यवहार सबसे आरंभिक आदतों पर आधारित होता है। नींद में घबराहट के दौरान भी सक्रिय सेंट्रल पैटर्न जनरेटर्स ही वे क्षेत्र हैं, जहाँ चलने, साँस लेने, अचानक जोर का शोर होने पर चौंकने और किसी आक्रमण का सामना करने जैसे व्यवहार संबंधी पैटर्न आते हैं। आमतौर पर हम अपने इन व्यवहारों को आदतों की तरह नहीं देखते, जबकि असल में वे आदतें ही हैं : हमारी न्यूरोलॉजी में स्वचालित व्यवहार इतनी गहराई तक समाया हुआ है कि अध्ययनों से पता चला है कि ये व्यवहार मस्तिष्क के उच्चतम क्षेत्रों से बिना कोई निर्देष पाए ही सामने आता रहता है।

हालाँकि जब ये आदतें नींद में घबराहट के दौरान सामने आती हैं, तो एक लिहाज से बिलकुल अलग होती हैं : चूँकि नींद प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स व ऐसे ही अन्य उच्च-बोध संबंधी क्षेत्रों को निष्क्रिय कर देती है, इसीलिए जब स्लीप टेरर यानी नींद में घबराहट की आदत सक्रिय होती है, तो किसी सचेत हस्तक्षेप की कोई संभावना ही नहीं बचती। अगर संकट की घड़ी में उससे भागने या उसका सामना करने की इंसानी प्रवृत्ति (फ्लाइट ऑर फाइट रिसपॉन्स) की आदत नींद में घबराहट के कारण समाप्त हो जाती है, तो फिर इस बात की संभावना नहीं बचती कि कोई व्यक्ति तर्क या कारण देकर इससे पार पा सके।

तंत्रिका विज्ञानी मैहोवाल्ड कहते हैं, 'स्लीप टेरर यानी नींद में घबराहट अनुभव कर रहे लोग असली अर्थों में सपना नहीं देख रहे होते। लोग अपने दु:स्वप्नों को याद करके जो कहानियाँ बुनते हैं, वैसा कुछ वास्तव में कहीं नहीं होता। अगर नींद टूटने के बाद उन्हें कुछ याद भी रहता है, तो या तो वह कोई तस्वीर होती है या कोई तीव्र भावना, जैसे कयामत की संभावना, भयानक डर और स्वयं को या फिर किसी और को बचाने की ज़रूरत महसूस होना।

'हालाँकि ये भावनाएँ बहुत सशक्त होती हैं। हमने अपने जीवन में जितने भी व्यवहार सीखे होते हैं, ये भावनाएँ उन व्यवहारों का सबसे बुनियादी संकेत होती हैं। कोई संकट सामने आने पर स्वयं को बचाने के लिए भागने या उस संकट का सामना करने जैसी चीज़ों का हम सभी को बचपन से ही भरपूर अभ्यास होता है। जब ये भावनाएँ उठती हैं

और जब उच्चतम मस्तिष्क द्वारा चीज़ों को सही संदर्भ में देखने की कोई संभावना नहीं बचती, तब हम वही प्रतिक्रिया देते हैं, जो हमारी सबसे गहरी आदतों पर आधारित होती हैं। संकट की स्थिति में हमारे मस्तिष्क के लिए व्यवहार के जिस पैटर्न का पालन करना सबसे आसान होता है, वह फौरन उसी को अपना लेता है। फिर चाहे वो संकट देखकर भागना हो, उसका सामना करना हो या फिर उससे पार पाने के लिए किसी का अनुसरण करना हो।'

नींद में घबराहट होने पर लोगों को दो सबसे आम चीज़ें महसूस होती हैं, एक खतरा और दूसरी यौन उत्तेजना। जब ऐसा होता है, तो लोगों की प्रतिक्रिया इन दोनों उत्तेजनाओं से जुड़ी आदतों का अनुसरण करने की होती है। नींद में घबराहट महसूस होने पर कई लोग तो छत से कूद चुके हैं क्योंकि उन्हें लगा कि कोई उन पर हमला करने के लिए उनका पीछा कर रहा था और वे उनसे बचकर भाग रहे थे। ऐसे भी मामले सामने आए हैं, जहाँ नींद में घबराहट होने पर लोगों ने अपने बच्चों को जान से मार दिया क्योंकि उन्हें लगा कि वे उनके बच्चे नहीं बल्कि जंगली जानवर थे, जिनसे उनका सामना हो रहा था। कुछ मामलों में तो नींद में घबराहट होने पर लोगों ने अपने जीवन-साथी का बलात्कार तक कर डाला, भले ही पीड़ित व्यक्ति उनसे दया की भीख माँग रहा हो क्योंकि एक बार जैसे ही उन्हें नींद में घबराहट के दौरान पैदा होनेवाली उत्तेजना महसूस हुई, तो वे अपने आग्रह को संतुष्ट करने के लिए अपने अंदर जड़े जमाए बैठी आदतों के अनुसार क्रिया करने लगे। जबकि नींद में चलने की आदत से ग्रस्त लोगों के मामले देखकर ऐसा लगता है, जैसे वे अपने उच्चतम मस्तिष्क को थोड़ा-बहुत दखल देने की अनुमति दे देते हैं, जो उन्हें छत के किनारों से दूर रहने का आदेश देकर उन्हें नीचे गिरने से बचा लेता है यानी खतरनाक स्थितियों से दूर रखकर उनका बचाव कर लेता है। पर जिस इंसान को नींद में घबराहट जकड़ लेती है, वे सिर्फ अपनी आदतों के फंदे के अनुसार ही क्रिया करते हैं, फिर भले ही इसमें उनकी या किसी और की जान ही क्यों न चली जाए।

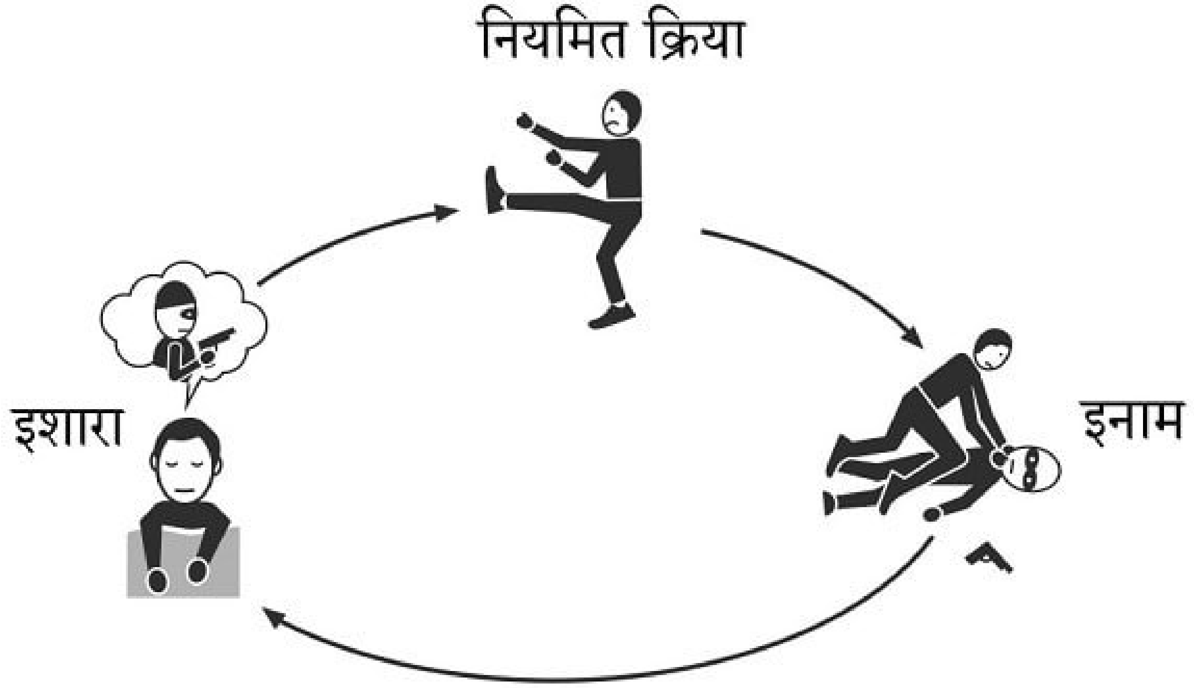

कुछ वैज्ञानिकों को संदेह है कि स्लीप टेरर यानी नींद में घबराना अनुवांशिक हो सकता है। जबकि अन्य वैज्ञानिक कहते हैं कि पार्किंसन जैसे रोगों से नींद में घबराने की संभावना बढ़ जाती है। नींद में घबराने के पीछे असली कारण क्या है, यह वैज्ञानिक समुदाय के लिए आज भी एक रहस्य ही है। पर अधिकतर लोगों के मामले में नींद में घबराने के अनुभव हिंसात्मक आवेगों से भरे रहे हैं। सन 2009 में स्विट्ज़रलैंड के कुछ शोधकर्ताओं के एक समूह ने इसके बारे में लिखा था, 'नींद में घबराहट से जुड़ी हिंसा उस ठोस और भयानक छवि के प्रति, उस व्यक्ति की प्रतिक्रिया जैसी लगती है, जिसका वर्णन वह नींद टूटने के बाद करता है।' आँकड़े बताते हैं कि नींद की इस बीमारी से पीड़ित लोगों के बीच 64 फीसदी मामलों में साथ सोनेवालों पर हमला करने और 3 फीसदी मामलों में उन्हें चोट लगने की घटनाएँ सामने आई हैं।

अमेरिका और यूनाइटेड किंगडम, दोनों ही जगहों पर ऐसे कई मामले सामने आए हैं, जहाँ हत्यारों ने अपने बचाव में तर्क देते हुए कहा कि उन्होंने जो अपराध किए हैं, वे स्लीप टेरर यानी नींद में घबराहट के कारण किए और अगर वे सचेत अवस्था में होते तो ऐसा अपराध कभी न करते। उदाहरण के लिए ब्रायन थॉमस की गिरफ्तारी के चार साल पहले जूल्स लोव नामक एक व्यक्ति को सिर्फ इसलिए अपने 83 वर्षीय पिता की हत्या का दोषी नहीं माना गया क्योंकि उसका तर्क था कि उसने नींद में घबराहट के दौरान अपने पिता पर हमला किया था। हालाँकि सरकारी वकीलों ने तर्क दिया कि जूल्स लोव की बात पर विश्वास करना 'दूर की कौड़ी' लगता है क्योंकि उसने अपने बूढ़े पिता पर 20 मिनट तक मुक्के बरसाए थे और उन्हें लातों से पीटा था। इतनी देर तक पीटने के कारण उसके

पिता के शरीर पर 90 से भी ज़्यादा चोटे आई थीं। पर जजों ने सरकारी वकीलों के इस तर्क को खारिज करते हुए जूल्स लोव को रिहा कर दिया। इसी तरह सितंबर 2008 में 33 वर्षीय डोना शेफर्ड-सॉन्डर्स ने अपनी माँ के मुँह पर 30 सेकंड तक तकिया रखकर करीब-करीब उनका दम ही घोंट डाला था। पर बाद में डोना को हत्या की कोशिश के आरोप से इसलिए बरी कर दिया गया क्योंकि उसका तर्क था कि ऐसा करते समय वह नींद में थी। सन 2009 में एक ब्रिटिश सैनिक ने एक किशोर लड़की के साथ बलात्कार करने की बात स्वीकार की थी, पर साथ ही यह भी कहा था कि जब उसने लड़की का बलात्कार करने के लिए अपने कपड़े उतारे और लड़की का पैंट उतारकर उसके साथ जबर्दस्ती सेक्स करने लगा, तब वह नींद में था और कुछ देर बाद जब सेक्स के दौरान ही उसकी नींद खुली, तो उसने न सिर्फ फौरन उस लड़की से माफी माँगी बल्कि पुलिस को फोन करके कहा कि 'मैंने अभी-अभी एक अपराध किया है। मैं सच कहता हूँ, मुझे नहीं पता कि क्या हुआ, पर जब मेरी नींद खुली, तो मैं उस लड़की के ऊपर चढ़ा हुआ था।' वह व्यक्ति पहले भी स्लीप टेरर यानी नींद में घबराहट से पीड़ित रह चुका था इसलिए उसे दोषी करार नहीं दिया गया। पिछले सौ सालों में करीब 150 हत्यारे और बलात्कारी अपराध के दौरान नींद में होने का तर्क देकर सजा से बचने में कामयाब रहे हैं। इन मामलों में निर्णय सुनानेवाले जजों ने जनता का प्रतिनिधित्व करते हुए कहा है कि 'चूँकि इन मामलों में अपराध करना अपराधी का निजी चुनाव नहीं था और चूँकि हिंसा करते समय वे होश में नहीं थे, सचेत नहीं थे इसलिए उन्हें अपराध का दोषी नहीं ठहराया जा सकता।'

ब्रायन थॉमस के मामले में भी ऐसा ही लगा था कि उसके अपराध के पीछे का कारण नींद की बीमारी है, न कि उसके अंदर की हिंसा। उसने एक सरकारी वकील से कहा था, 'मैं अपने आपको कभी माफ नहीं कर पाऊँगा। आखिर मैंने ऐसा क्यों किया?'

***

नींद के विशेषज्ञ डॉक्टर इडजिकोव्स्की ने अपनी प्रयोगशाला में ब्रायन थॉमस का निरीक्षण करने के बाद निष्कर्ष दिया था कि जब उसने अपनी पत्नी की हत्या की, उस समय वह नींद में था और उसने यह अपराध जानबूझकर नहीं किया है।

जब कोर्ट में ब्रायन थॉमस का मुकदमा शुरू हुआ तो सरकारी वकील ने जजों के सामने अपने साक्षय प्रस्तुत किए। उन्होंने जजों को बताया कि ब्रायन अपनी पत्नी की हत्या का अपराध पहले ही स्वीकार कर चुका है। उसे पता था कि वह नींद में चलने की बीमारी से पीड़ित है। सरकारी वकील का तर्क था कि अपनी बीमारी की जानकारी होने के बाद भी छुट्टियाँ बिताने के दौरान ब्रायन ने कोई सावधानी नहीं बरती, इसीलिए अपने अपराध का जिम्मेदार भी वह खुद ही है।

जैसे-जैसे दोनों पक्षों के बीच तर्क-वितर्क आगे बढ़ा, यह स्पष्ट हो गया कि वकील एक ऐसी बात साबित करने की कोशिश कर रहे हैं, जो असंभव है। ब्रायन थॉमस के वकील ने तर्क दिया कि उनका मुवक्किल अपनी पत्नी को मारना नहीं चाहता था, और तो और, उस

दुर्भाग्यपूर्ण रात के समय में उसका खुद पर कोई बस ही नहीं था। उसे किसी कथित खतरे का अंदेशा हो रहा था इसलिए उसने स्वचालित ढंग से प्रतिक्रिया की। वह तो बस एक ऐसी इंसानी आदत के अनुसार प्रतिक्रिया दे रहा था, जो इंसानी प्रजाति जितनी ही पुरानी है। वह आदत है- खतरे का अंदेशा पाते ही हमलावर का सामना करना और अपने प्रियजनों को बचाने की स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार क्रिया करना। उस रात उसके मस्तिष्क के सबसे आरंभिक हिस्सों में से एक में उसे यह महसूस हुआ कि कोई उसकी पत्नी का गला घोंट रहा है। यह विचार आते ही उसकी आदत उसकी तर्क शक्ति पर हावी हो गई और वह उस अंजान हमलावर का सामना करने लगा। तब तक उसके मस्तिष्क के हायर कॉग्नीशन (उच्च संज्ञान) के पास हस्तक्षेप करने का कोई मौका नहीं बचा। वकील ने तर्क दिया कि ब्रायन थॉमस की गलती बस यही है कि वह एक इंसान है और उसने वैसी ही प्रतिक्रिया दी, जैसी प्रतिक्रिया देने के लिए उसकी न्यूरोलॉजी और सबसे आरंभिक इंसानी आदतों ने उसे मज़बूर किया।

इस मुकदमे के दौरान अदालत के सामने हालात ऐसे थे कि सरकारी वकील के गवाह भी बचाव पक्ष को मज़बूत करने में लगे थे। हालाँकि ब्रायन थॉमस को मालूम था कि उसे नींद में चलने की आदत है, इसके बावजूद सरकारी वकीलों के मनोचिकित्सकों ने कहा कि उन्हें ऐसा कोई कारण नज़र नहीं आता, जिसके आधार पर कहा जा सके कि ब्रायन थॉमस अपनी पत्नी को जान से मार सकता है। क्योंकि इस घटना के पहले उसने नींद में कभी किसी पर हमला नहीं किया था और न ही कभी अपनी पत्नी को किसी भी तरह से नुकसान पहुँचाया था।

जब सरकारी वकील की मुख्य मनोचिकित्सक गवाही देने आईं, तो ब्रायन थॉमस के वकील ने उसकी पूछताछ (Cross examination) शुरू की।

‘क्या आपको लगता है कि ब्रायन थॉमस को एक ऐसी हरकत के लिए सजा देना उचित होगा, जिसके बारे में उसे खुद पता नहीं था कि उससे वह हरकत होनेवाली है?’

मनोचिकित्सक डॉ. कैरोलिन जैकब ने वकील के सवाल का जवाब देते हुए कहा, ‘मेरा विचार है कि ब्रायन थॉमस से जो अपराध हुआ, उसे उसका कोई अनुमान नहीं था और अगर उसे अपनी पत्नी की हत्या का दोषी ठहराते हुए ब्रॉडमूर अस्पताल भेजा जाता है, जहाँ ब्रिटेन के सबसे खतरनाक और मानसिक रूप से बीमार अपराधियों को रखा जाता है, तो यह उचित नहीं होगा क्योंकि वह जगह ब्रायन थॉमस जैसे व्यक्ति के लिए नहीं है।’

अगले दिन मुख्य वकील ने ज्यूरी को संबोधित किया।

‘हत्या के समय ब्रायन थॉमस नींद में था और उसके शरीर पर उसके मस्तिष्क का कोई नियंत्रण नहीं था। हम इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि अब इस मामले में एक विशेष निर्णय हासिल करने की कोशिश करना जनता के हित में नहीं होगा। इसलिए अब हम अपनी

ओर से कोई साक्षय पेश नहीं करेंगे। हमारी गुजारिश है कि आप ब्रायन थॉमस को निर्दोष करार देने के अपने निर्णय पर कायम रहें।' ज्यूरी ने ऐसा ही किया।

ब्रायन थॉमस को बरी करने से पहले जज ने उससे कहा, 'आप एक सभ्य पुरुष और एक समर्पित पति हैं। मेरा अंदेशा है कि आप अपराध-बोध से ग्रस्त होंगे पर कानून की नज़र में आप दोषी नहीं हैं। आपको बाइज्जत बरी किया जाता है।'

यह निर्णय उचित ही था। आखिरकार ब्रायन थॉमस से जो अपराध हुआ था, उसने उसका जीवन भी तबाह कर दिया था। उसे नहीं पता था कि वह क्या कर रहा है। उसने तो बस वही किया, जो करने के लिए उसकी आदत ने उसे मज़बूर किया। उस समय उसमें निर्णय लेने की शक्ति ही नहीं थी। इस मामले की एक खास बात यह भी है कि जितनी सहानुभूति ब्रायन थॉमस को मिली, उतनी शायद ही किसी और हत्यारे को मिली हो। वह खुद करीब-करीब एक पीड़ित जैसा ही था और इसीलिए सुनवाई खत्म होने के बाद जब उसे बरी किया जा रहा था तो खुद जज ने उसे सांत्वना देने की कोशिश की।

जुए की लत से ग्रस्त एंजी बैचमैन के मामले में भी ऐसे ही कई बहाने बनाए जा सकते हैं। वह भी अपनी हरकतों से तबाह हो चुकी थी। उसने भी बाद में कहा था कि वह गहरे अपराध-बोध से जूझ रही है और जैसा कि स्पष्ट था, वह जो भी कर रही थी, अपने अंदर गहरे बसी आदतों के चलते ही कर रही थी। यही कारण था कि उसके लिए अपने निर्णयों के बारे में तार्किक ढंग से सोचना मुश्किल हो गया था।

पर कानून की नज़र में अपनी आदतों के लिए बैचमैन खुद जिम्मेदार थी, जबकि ब्रायन थॉमस के मामले में कानून का रूख बिलकुल विपरीत था। क्या एंजी बैचमैन जैसी जुआरी को ब्रायन थॉमस जैसे हत्यारे की तुलना में अधिक दोषी माना जाना उचित है? इससे हमें अपनी आदतों और अपने चुनावों की नैतिकता के बारे में क्या पता चलता है?

3

एंजी बैचमैन ने स्वयं को दिवालिया घोषित किए तीन साल ही हुए थे कि उसके पिता की मृत्यु हो गई। इसके पहले उसके जीवन के करीब पाँच साल नियमित रूप से अपने माता-पिता के घर आने-जाने में बीते थे। जैसे-जैसे उसके माता-पिता की उम्र बढ़ी, उनकी बीमारियाँ बढ़ीं। एंजी ने एक बेटी होने का फर्ज निभाते हुए उन्हें पूरा सहारा दिया और उनका खयाल रखा। इसीलिए पिता की मृत्यु एंजी के लिए एक बहुत बड़ा झटका थी। इसके सिर्फ दो महीने बाद ही एंजी की माँ भी चल बसीं।

'मेरी तो जैसे पूरी दुनिया ही बिखर गई,' एंजी ने कहा। 'हर सुबह जब मेरी नींद खुलती थी, तो पलभर के लिए मैं भूल जाती थी कि मेरे माता-पिता मुझे छोड़कर इस दुनिया से चले गए हैं। फिर अगले ही पल जैसे ही मुझे सच्चाई याद आती, तो मुझे अपने सीने पर असहनीय भार महसूस होने लगता। ऐसा लगता, मानो कोई आकर सीधे मेरे सीने पर खड़ा हो गया हो। मैं किसी और चीज़ के बारे में सोच ही नहीं पा रही थी। मुझे

समझ में नहीं आता था कि बिस्तर से उठने के बाद मुझे क्या करना है।

जब उसके स्वर्गवासी माता-पिता की वसीयत पढ़ी गई तो पता चला कि उसे विरासत में करीब दस लाख डॉलर्स की संपत्ति मिली है।

इन पैसों में से दो लाख पचहत्तर हज़ार डॉलर्स खर्च करके एंजी ने अपने परिवार के लिए टेनेसी में एक नया घर खरीद लिया। उसने यह घर इसलिए चुना क्योंकि कुछ ही दूरी पर एंजी के माता-पिता का घर था और मरने से पहले कई सालों तक वे उसी घर में रहे थे। फिर जब एंजी की बड़ी हो रही बेटियों को पढ़ाई के लिए दूसरे शहर भेजने की बात आई, तो एंजी ने उन्हें पास के एक ही शहर भेजा ताकि पूरा परिवार आसपास ही रहे। इसके लिए भी उसने अपनी संपत्ति से कुछ पैसे खर्च किए। टेनेसी में कैसीनो में जुआ खेलना अवैध था। 'मैं फिर से उस चक्कर में नहीं पड़ना चाहती थी,' एंजी ने मुझे बताया। 'मैं ऐसी हर चीज़ से दूर रहना चाहती थी, जो मुझे महसूस कराए कि मेरा खुद पर कोई नियंत्रण नहीं है।' उसने अपना फोन नंबर भी बदल लिया था और अपने पुराने कैसीनो को इसके बारे में कुछ नहीं बताया था। इस तरह वह खुद को सुरक्षित महसूस कर रही थी।

फिर एक रात वह अपने पति के साथ अपने पुराने शहर जा रही थी ताकि अपने पिछले घर में रखे फर्नीचर को नए घर में ला सके। रास्ते में गाड़ी चलाते हुए वह अपने माता-पिता के बारे में सोचने लगी। उसे लगा कि उनके बिना वह कैसे जी पाएगी? आखिर वह एक बेहतर बेटी क्यों नहीं बन सकी? वह अपने इन खयालों में बुरी तरह गुम हो गई और उसे लगा जैसे उसे पैनिक अटैक आनेवाला है। उसे जुआ छोड़े सालों बीत चुके थे, पर उस पल उसे ऐसा लगा, जैसे उसे अपने इस भावनात्मक दर्द से छुटकारा पाने के लिए किसी और चीज़ में मन लगाना होगा। उसने अपने पति की ओर देखा। वह बहुत हताश थी। वह बस एक बार जुआ खेलना चाहती थी।

'चलो, कैसीनो चलते हैं,' उसने कहा।

जब वे दोनों कैसीनो पहुँचे, तो वहाँ के एक मैनेजर ने उसे फौरन पहचान लिया। उसने उन दोनों को खिलाड़ियों के लाउंज में आमंत्रित किया। उसने एंजी से उसके हालचाल पूछे और एंजी ने पलभर में उसे सब कुछ बता डाला कि कैसे उसके माता-पिता की मौत हुई, कैसे उनका इस दुनिया से जाना एंजी के एक बहुत बड़ा झटका था, कैसे वह हर समय थकी हुई और हताश महसूस करती है और कैसे उसे लगने लगा है कि वह बस टूटने की कगार पर खड़ी है। वह मैनेजर अच्छा श्रोता था, उसने पूरे धैर्य से एंजी की एक-एक बात सुनी। एंजी इतने दिनों से जिस हताशा के विचारों से जूझ रही थी, उन्हें जाहिर करके उसे बड़ी राहत महसूस हुई। खासतौर पर उसे सबसे अच्छा यह लगा कि उसकी हताशा भरी बातें सुनने के बावजूद यहाँ किसी ने उसे आँकने की कोशिश नहीं की बल्कि यही कहा कि यह सब महसूस करना सामान्य बात है।

इसके बाद वह ब्लैकजैक की टेबल पर बैठ गई और अगले तीन घंटे तक जुआ खेलती रही।

आज महीनों बाद उसे लग रहा था, मानों कैसीनो के शोरगुल में उसकी सारी चिंताएँ खत्म हो गई हों। उसे इस खेल में महारथ हासिल थी, उसे पता था कि उसे क्या करना है। इसके बावजूद उस रात जब वह कैसीनो से वापस लौटी, तो कुछ हज़ार डॉलर हार चुकी थी।

इस कैसीनो को चलानेवाली कंपनी हरॉज एंटरटेनमेंट गेमिंग इंडस्ट्री में अपने आधुनिक ग्राहक ट्रैकिंग सिस्टम के लिए मशहूर थी। इस सिस्टम के मूल में ठीक वैसे ही कंप्यूटर प्रोग्राम थे, जैसे एन्ड्रयू पोल ने टारगेट कॉरपोरेशन के लिए बनाए थे यानी अनुमान लगानेवाली कंप्यूटर एल्गोरिद्म, जो जुआरियों की आदतों का अध्ययन करके यह समझने का प्रयास करती थी कि उनसे ज्यादा से ज्यादा पैसे कैसे खर्च कराए जाएँ। कंपनी ने खिलाड़ियों को 'अनुमान आधारित आजीवन मूल्य' दे रखा था और कंप्यूटर सॉफ्टवेयर यह अनुमान लगानेवाले कैलेंडर तैयार करता था कि खिलाड़ी कितनी बार कैसीनो में आएँगे और कितना पैसा खर्च करेंगे। कंपनी अपने ग्राहकों को 'लॉयल्टी कार्ड' के जरिए ट्रैक करती थी और उन्हें फ्री लंच-डिनर के कूपन और कैश वाउचर्स मेल करती रहती थी। टेलीमार्केटिंग करनेवाले, लोगों के घरों में फोन करके पूछते थे कि वे कहाँ-कहाँ गए। कैसीनो के कर्मचारियों को यह प्रशिक्षण दिया गया था कि वे अपने ग्राहकों को अपने जीवन के बारे में बातें करने के लिए प्रोत्साहित करें। कंपनी को उम्मीद रहती थी कि अपने जीवन के बारे में बातें करते हुए ग्राहक कुछ ऐसे खुलासे भी कर देगा, जिनकी मदद से कंपनी अनुमान लगा सकेगी कि उसके पास कितना पैसा है ताकि वह पैसा जुए में खर्च कराया जा सके। हर्राज एंटरटेनमेंट के एक अधिकारी ने इसे 'पावलोवियन मार्केटिंग' का नाम दिया था। कंपनी अपनी इस अनुमान प्रणाली को ज्यादा से ज्यादा सटीक बनाने के लिए हर साल लाखों परीक्षण करती थी। कस्टमर ट्रैकिंग के कारण कंपनी का मुनाफा करोड़ों डॉलर बढ़ गया था। उनका यह सिस्टम इतना सटीक परिणाम देता था कि इससे यह तक पता लगाया जा सकता था कि ग्राहक एक मिनट में औसतन कुल कितने सेंट खर्च कर रहा है।'[2]

निश्चित ही हर्राज एंटरटेनमेंट को पता था कि एंजी बैचमैन ने कुछ ही साल पहले खुद को दिवालिया घोषित किया था, जिसके चलते उसे 20 हजार डॉलर का कर्ज नहीं चुकाना पड़ा था। पर उस मैनेजर से बातचीत होने के कुछ ही समय बाद उसे कैसीनो की ओर से फोन आने लगे। उसे घर से मिसीसिपी के कैसीनो लाने के लिए फ्री लिमोजीन कार की सुविधा का प्रस्ताव दिया जाता। इसके अलावा उसे अपने पति के साथ ताहो झील की हवाई यात्रा का प्रस्ताव भी दिया गया, जहाँ उसे एक बड़े होटल के सुईट में ठहराया जाता और साथ ही ईगल के कंसर्ट के टिकट भी दिए जाते। बैचमैन ने बताया कि जब उन्हें यह प्रस्ताव दिया गया, तो उन्होंने जवाब में कहा, 'मेरे और मेरे पति के साथ हमारी बेटी भी होगी और वह अपने एक दोस्त को भी साथ ले जाना चाहती है।' एंजी की इस माँग को कंपनी ने फौरन मान लिया। कंपनी ने सभी का हवाई किराया और होटल में

ठहरने का खर्च वहन किया। ईगल के कंसर्ट में एंजी बैचमैन और उसके परिवार को सबसे आगे की सीट दी गई। इसके अलावा कंपनी की ओर से उसे 10 हज़ार डॉलर भी दिए गए ताकि वह जब चाहे जुआ खेल सके।

एंजी बैचमैन के पास ऐसे प्रस्ताव आते रहते थे। हर सप्ताह किसी न किसी कैसीनो की ओर से फोन आता और एंजी से पूछा जाता कि क्या वह लिमोजीन कार की सवारी करना, संगीत कार्यक्रमों में जाना या कैसीनो के खर्चे पर हवाई यात्रा करना पसंद करेगी। शुरुआत में एंजी ने इन सब चीज़ों से बचने की कोशिश की, लेकिन कुछ दिनों बाद उसने इन सभी प्रस्तावों को स्वीकार करना शुरू कर दिया। एक बार एंजी की एक सहेली ने उससे कहा कि उसका सपना है कि वह अपनी शादी का कार्यक्रम किसी ऐसी वैसी जगह के बजाय लॉस वेगास में आयोजित करे। एंजी ने फौरन फोन लगाया और अगले ही सप्ताहांत वे सब लॉस वेगास के सबसे लग्जरी होटलों में से एक 'पलाजो' नामक होटल में थे। एंजी ने मुझे बताया, 'ऐसा नहीं था कि कैसीनों इंडस्ट्री के लोगों से मेरी कोई जान-पहचान थी। मैंने तो जब फोन करके इसके बारे में पता लगाने की कोशिश की तो टेलीफोन ऑपरेटर ने मुझसे कह दिया था कि लोग फोन पर होटल के बारे में विस्तृत जानकारी नहीं देते। इस होटल के सुईट्स बिलकुल वैसे ही थे, जैसे फिल्मों में दिखाए जाते हैं। मेरे सुईट में छह बेडरूम और एक डेक था। इसके अलावा हर कमरे में रहनेवाले इंसान के निजी उपयोग के लिए हॉट टब भी था और तो और मेरे लिए एक अलग बावर्ची की सुविधा भी उपलब्ध थी।

कैसीनो पहुँचते ही एंजी की जुआ खेलने की आदत फिर से हावी हो गई। वह घंटों तक लगातार जुआ खेलती रहती। शुरुआत में उसने छोटे दाँव लगाए और सिर्फ उसी पैसे से जुआ खेला, जो कैसीनो ने उसे दिया था। फिर धीरे-धीरे एंजी ने बड़े दाँव लगाने शुरू कर दिए और ए.टी.एम. से अपना निजी पैसा निकालकर जुआ खेलने लगी। उसे एक बार भी यह एहसास नहीं हुआ कि वह फिर से पहले जैसी गलती कर रही है। अंतत: वह हर दाँव पर 200 से 300 डॉलर्स लगाने लगी। कभी-कभी तो वह एक दिन में 12 घंटों तक लगातार जुआ खेलती रहती थी। एक दिन उसने घंटों जुआ खेलने के बाद 60 हजार डॉलर्स जीत लिए। दो अन्य मौकों पर उसने 40-40 हजार डॉलर्स जीते। एक बार तो वह एक लाख डॉलर्स लेकर लॉस वेगास गई और सब हार गई पर इससे उसकी जीवनशैली पर ज़रा भी फर्क नहीं पड़ा। उसके बैंक अकाउंट में अब भी इतने पैसे थे कि उसे फिक्र करने की कोई ज़रूरत नहीं थी। वैसे भी उसके माता-पिता विरासत में इतनी सारी संपत्ति इसीलिए छोड़कर गए थे ताकि उनकी बेटी जीवन का आनंद उठा सके।

एंजी बैचमैन कभी-कभी अपनी ओर से कोशिश करती कि जितना हो सके, उतना कम जुआ खेले पर कैसीनो की ओर से बार-बार कुछ न कुछ ऐसा किया जाता कि वह चाहकर भी जुए से दूर नहीं रह पाती। एंजी बताती है, 'एक बार तो कैसीनो के एक होस्ट ने मुझसे कहा कि अगर मैं अगले सप्ताह जुआ खेलने नहीं आई, तो उसे नौकरी से निकाल दिया जाएगा। वे लोग तो यह तक कह देते थे कि हमने आपको इतने बड़े संगीत कार्यक्रम में भेजा, इतने अच्छे होटल में ठहराया पर फिर भी आप आजकल पर्याप्त जुआ नहीं खेल

रही हैं। हालाँकि इसमें कोई दोराय नहीं कि वे लोग मेरे लिए ऐसे कई शानदार इंतजाम करते रहते थे।'

सन 2005 में उसके पति के दादी की मृत्यु हो गई। उनके अंतिम संस्कार के लिए एंजी अपने परिवार सहित अपने पुराने शहर आ गई। अंतिम संस्कार के एक रात पहले एंजी इसके लिए खुद को मानसिक रूप से तैयार करने के मकसद से कैसीनो पहुँच गई। वहाँ उसने करीब 12 घंटों तक लगातार जुआ खेला और दुर्भाग्यवश ढाई लाख डॉलर्स हार गई। उस रात मानों उसे एहसास भी नहीं हुआ कि कुछ ही घंटों में उसका कितना बड़ा नुकसान हो गया है। बाद में जब उसने इस पर विचार किया, तो उसे एहसास हुआ कि उसने एक मिलियन डॉलर्स की अपनी विरासत में मिली संपत्ति में से एक चौथाई हिस्सा जुए में गवाँ दिया है। पलभर के लिए उसे लगा, जैसे यह सब झूठ है। वह लंबे समय से खुद से तरह-तरह के झूठ बोल रही थी, जैसे कि उसकी शादी अच्छी चल रही है, भले ही उसके और उसके पति के बीच कई-कई दिनों तक बोलचाल बंद रहे... उसके दोस्त उसके सबसे करीब हैं, भले ही उन्होंने एंजी के साथ लॉस वेगास घूमने के बाद कभी अपनी शक्ल तक न दिखाई हो... वह एक अच्छी माँ है, भले ही उसकी बेटियाँ भी उसी की तरह कम उम्र में गर्भवती होने की गलती कर रही हों... अगर उसके माता-पिता जिंदा होते, तो उसे विरासत में मिली संपत्ति को इस तरह बर्बाद करते देखकर भी उन्हें बुरा नहीं लगता...। उसे ऐसा लगता था, मानो उसके पास बस दो ही विकल्प बचे हैं, पहला कि वह खुद से झूठ बोलती रहे और दूसरा कि वह इस बात को स्वीकार करे कि उसने हर उस चीज़ का गलत फायदा उठाया है, जिसके लिए उसके माता-पिता ने जिंदगीभर कड़ी मेहनत की थी।

उसने अपने पति से यह बात छुपा ली कि वह एक मिलियन डॉलर्स का एक चौथाई हिस्सा जुए में गँवा बैठी है। एंजी बताती है, 'जब भी कभी मेरे साथ कोई बड़ी गड़बड़ होती, तो मैं उससे अपना ध्यान हटाकर किसी नई चीज़ पर ध्यान केंद्रित कर लेती।'

हर्राज एंटरटेनमेंट की ओर से उसे अभी भी लगातार फोन आते रहते थे।

एंजी बताती है, 'यह हताशा तब शुरू होती है, जब आपको एहसास होता है कि आपने बहुत कुछ खो दिया है। तब आपको लगता है कि आप फिलहाल रुक नहीं सकते क्योंकि आपने जो भी हारा है, उसे आपको दोबारा जुआ खेलकर वापस जीतना है। कभी-कभी मैं बड़ा अजीब सा महसूस करती और किसी भी चीज़ पर ढंग से सोच-विचार न कर पाती। तब भी मुझे पता होता था कि अगर मैं सब कुछ भूलकर एक बार फिर कैसीनो जाकर जुआ खेल लूँ, तो मेरा मन शांत हो जाएगा। फिर उनकी ओर से फोन आ जाता और मैं एक बार फिर कैसीनो जाने के लिए हाँ कर देती क्योंकि अपनी आदतों से हार मानना सबसे आसान होता है। मुझे वाकई विश्वास था कि मैंने जुए में जितने पैसे हारे हैं, मैं उन्हें दोबारा जीत सकती हूँ। क्योंकि अगर जीतना संभव नहीं होता, तो भला जुआ खेलना वैध क्यों होता? आखिर यह खेल इसी तरह तो चलता है, है ना?'

***

रेज़ा हबीब नामक एक कॉग्नीटिव न्यूरोलॉजिस्ट (संज्ञात्मक तंत्रिका विज्ञानी) ने सन 2010 ने एक प्रयोग किया। उन्होंने बाईस लोगों को एम.आर.आई. मशीन के अंदर लिटाकर गोल-गोल घूमती एक स्लॉट मशीन को लगातार देखने को कहा। इनमें से आधे लोग जुआ खेलने की लत से ग्रस्त थे। ये लोग जुआ खेलने के चक्कर में जीवन के हर क्षेत्र में गलतियाँ कर चुके थे। वे अपने परिवार से झूठ बोलते थे, उनके चेक कैसीनो में बाउंस होते रहते थे और वे कई बार घर से निकलकर ऑफिस जाने के बजाय जुआ खेलने चले जाते थे। जबकि बाकी आधे ऐसे लोग थे, जो किसी विशेष अवसर पर दोस्तों के साथ कभी-कभी ही जुआ खेला करते थे पर वे जुए के लती नहीं थे। इन सभी लोगों को एक सँकरी ट्यूब नुमा मशीन में पीठ के बल लिटा दिया गया और सामने लगी एक वीडियो स्क्रीन पर दिखाए जा रहे एक चक्र को देखने को कहा गया। उस चित्र में सुनहरी सलाखें व सेब बने हुए थे और 7 नंबर की लॉटरी का चिन्ह अंकित था। यह स्लॉट मशीन एक बार में तीन परिणाम देती थी। एक परिणाम जीत का होता था, दूसरा हार का और तीसरा जीत के करीब पहुँचकर बाजी हाथ से निकलने का। ये तीनों परिणाम स्लॉट मशीन में एक-दूसरे की बराबरी पर आते-आते रह जाते थे। इसमें कोई भी न तो एक भी डॉलर जीत सका और न कुछ हारा। उन्हें बस वीडियो स्क्रीन को लगातार देखना था और एम.आर.आई. मशीन उनकी तंत्रिका संबंधी गतिविधियों को रिकॉर्ड करती जा रही थी।

हबीब बताती हैं, 'हमारी रुचि विशेष रूप से मस्तिष्क के उन हिस्सों को देखने में थी, जो आदतों और लतों से संबंधित होते हैं। तंत्रिका विज्ञान के नज़रिए से बात करें तो हमने पाया कि जिन लोगों को जुए की लत होती है, वे जुए में जीत को लेकर अधिक उत्साहित होते हैं। जब भी स्लॉट मशीन के तीनों परिणाम एक साथ सामने आते, तो भले ही वे एक भी डॉलर न जीत रहे हों, पर अगर उन्हें जीत मिलती थी, तो उनके मस्तिष्क के भावना और इनाम संबंधी हिस्से बाकी सहभागियों के मुकाबले कहीं ज़्यादा सक्रिय हो जाते थे।

पर सबसे दिलचस्प थे जीत के करीब पहुँचकर बाजी हाथ से निकलनेवाले परिणाम। जुए के लती लोग इसे अपनी जीत की तरह ही देखते थे। उनका मस्तिष्क इन परिणामों पर भी जीत जैसी प्रतिक्रिया देता था। पर जिन लोगों को जुए की लत नहीं थी, वे इन परिणामों को अपनी हार की तरह देखते थे। उन्हें जुए की लत नहीं थी इसलिए उनके लिए यह समझना ज़्यादा आसान था कि जीत के करीब पहुँचकर बाजी हाथ से निकलने का मतलब सिर्फ हार होता है, जीत नहीं।

इसमें सहभागी लोगों के दो अलग-अलग समूह समान घटना के साक्षी बने, पर तंत्रिका विज्ञान के नज़रिए से उस घटना को देखने का उनका तरीका एक-दूसरे से बिलकुल अलग था। जिस समूह के सहभागियों को जुए की लत नहीं थी, उन्हें जीत के करीब पहुँचकर बाजी हाथ से निकलने के बावजूद एक मानसिक सनसनी का एहसास होता था। हबीब का मानना था कि इसी के चलते जुए के लती लोग बाकी लोगों के मुकाबले

कहीं ज़्यादा देर तक लगातार जुआ खेलते रहते थे। क्योंकि जीत के करीब पहुँचकर बाजी हाथ से निकलनेवाले परिणाम उनकी उन आदतों को सक्रिय कर देते थे, जो उन्हें अगला दाँव खेलने को उकसाती थीं। जबकि जिन्हें जुए की लत नहीं थी और जो कभी-कभी जुआ खेलते थे, इन परिणामों से उनकी वे आदतें सक्रिय हो जाती थीं, जो उन्हें यह विचार करने पर मज़बूर करती थीं कि 'इस जुए के चक्कर में मेरा और नुकसान हो, उससे बेहतर है कि मैं खेलना बंद कर दूँ।'

हालाँकि यह स्पष्ट नहीं हो सका कि जुए के लती लोगों का मस्तिष्क अलग क्यों होता है? क्या इसलिए क्योंकि वे पैदाइशी ही ऐसे थे या फिर स्लॉट मशीन, ऑनलाइन पोकर और कैसीनो जाने जैसी जुआ खेलने की विभिन्न गतिविधियों में शामिल होने पर उनके मस्तिष्क के काम करने का तरीका ही बदल जाता है। हालाँकि इस प्रयोग से एक बात साफ हो चुकी थी कि जुए के लती लोग जिस ढंग से किसी भी सूचना या जानकारी को ग्रहण करते थे, उस पर तंत्रिका संबंधी अंतरों का काफी प्रभाव पड़ता था। इससे स्पष्ट हो जाता है कि कैसीनो में कदम रखते ही एंजी बैचमैन आत्म-नियंत्रण क्यों खो देती थी। गेमिंग कंपनियाँ जुआरियों की इस प्रवृत्ति से अच्छी तरह परिचित होती हैं। इसीलिए पिछले कुछ दशकों में स्लॉट मशीनों को दोबारा इस ढंग से प्रोग्राम किया गया है ताकि वे जीत के करीब पहुँचकर बाजी हाथ से निकलनेवाले परिणाम ज़्यादा से ज़्यादा दें।[3] इन परिणामों के बावजूद भी जो जुआरी दाँव लगाना जारी रखते हैं, उन्हीं के कारण कैसीनो से लेकर रेस ट्रैक्स और स्टेट लॉटरी जैसे अलग-अलग जुए संचालकों के लिए इतने लाभप्रद होते हैं। अपनी पहचान छुपाने की शर्त पर बातचीत को तैयार हुए एक स्टेट लॉटरी सलाहकर्ता का कहना है कि 'जीत के करीब पहुँचकर बाजी हाथ से निकलनेवाले परिणाम को लॉटरी से जोड़ना आग में घी डालने जैसा होता है। आप जानना चाहते हैं कि लॉटरी की बिक्री में इतना उछाल क्यों आया है? क्योंकि हर टिकट को इस तरह से डिज़ाइन किया जाता है, जिस पर अपना लकी नंबर खरोंचने पर आपको लगे कि आप बस करीब-करीब जीत ही गए हैं।'

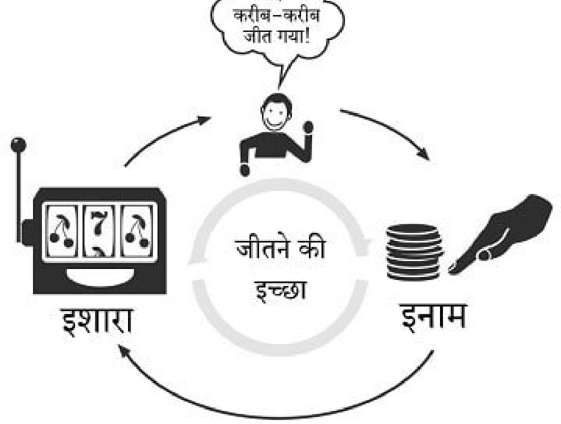

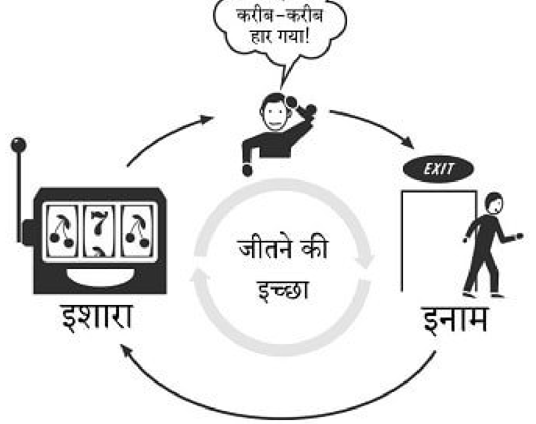

हबीब ने अपने प्रयोग में इंसानी मस्तिष्क के जिन हिस्सों को जाँचा-परखा था, वे थे बेसिल गैंग्लिया और ब्रेन स्टेम। ये वही हिस्से हैं, जहाँ से इंसान की आदतें (साथ ही नींद में घबराहट से जुड़ा इंसानी व्यवहार) तय होती हैं। पिछले एक दशक में जैसे-जैसे मस्तिष्क के इस हिस्से पर प्रभाव डालनेवाली दवाइयों की एक नई श्रेणी सामने आई है - जैसे पार्किंसन नामक रोग की दवा - वैसे-वैसे हमें इस बारे में काफी कुछ पता चला है कि कुछ आदतें बाहरी उत्तेजकों के प्रति कितनी संवेदनशील होती हैं। अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे देशों में दवा निर्माताओं पर मुकदमे ठोंककर ये आरोप लगाए गए हैं कि उन्होंने अपनी दवाओं से मरीजों के आदतरूपी फंदे को निशाना बनाकर उन्हें ज़्यादा से ज़्यादा जुआ खेलने, खाने, खरीदारी करने और हस्तमैथुन करने के लिए बाध्य किया। सन 2008 में मिनेसोटा की फेडरल ज्यूरी ने एक दवा निर्माता कंपनी को 8.2 मिलियन डॉलर्स का हर्ज़ाना एक मरीज को देने का आदेश दिया। उस मरीज का आरोप था कि कंपनी की दवा के सेवन से उसके मस्तिष्क पर ऐसा असर हुआ कि वह लगातार जुआ खेलने को बाध्य हो गया और ढाई लाख डॉलर्स हार गया। अदालतों में ऐसे सैकड़ों मामले चल रहे हैं।

हबीब कहती हैं, 'इन मामलों में निश्चित तौर पर यह कहा जा सकता है कि मरीजों का अपने आप पर कोई नियंत्रण नहीं होता। क्योंकि ऐसी दवाएँ उपलब्ध हैं, जो मरीजों की न्यूरोकैमेस्ट्री को प्रभावित कर सकती हैं। पर जब हम जुए के लती लोगों के मस्तिष्क पर नज़र डालते हैं, तो उनमें काफी समानता नज़र आती है - बस फर्क ये है कि अपने मामले में वे किसी दवा को दोष नहीं दे सकते। जुए के लती कई लोगों ने विभिन्न प्रयोगों के दौरान शोधकर्ताओं को बताया कि वास्तव में वे जुआ खेलना नहीं चाहते, लेकिन जब भी जुए की तलब लगती है, तो वे खुद को रोक नहीं पाते। तो फिर हम यह क्यों कहते हैं कि इन जुआरियों का खुद पर पूरा नियंत्रण होता है, जबकि पार्किंसन के रोगियों का खुद पर कोई नियंत्रण नहीं होता?'

***

18 मार्च 2006 को एंजी बैचमैन हर्राज के निमंत्रण पर हवाई यात्रा करके कंपनी के एक कैसीनो में पहुँची। तब तक उसका बैंक अकाउंट करीब-करीब खाली हो चुका था। जब एंजी ने हिसाब लगाया कि अब तक वह अपने जीवन में जुए में कितना पैसा हार चुकी है, तो यह आँकड़ा 9 लाख डॉलर तक पहुँच चुका था। उसने हर्राज के अधिकारियों को स्पष्ट बता दिया था कि वह करीब-करीब कंगाल हो चुकी है। इसके बावजूद हर्राज के कर्मचारी ने उसे फोन पर कैसीनो आने का निमंत्रण दिया और कहा कि उसे फिक्र करने की कोई ज़रूरत नहीं है क्योंकि वे उसे जुआ खेलने के लिए उधार देने को तैयार हैं।

'मैं चाहकर भी ना नहीं कह सकी। जब भी वे मेरे सामने ऐसा कोई प्रस्ताव रखते, तो मेरा दिमाग काम करना बंद कर देता और मैं सही-गलत का फर्क भूल जाती। मैं जानती हूँ कि मेरी बात सुनकर आपको ऐसा लग रहा होगा कि मैं बहाना बना रही हूँ, पर वे लोग हमेशा यह वादा करते थे कि इस बार आप ज़रूर जीतेंगी। मैं जानती थी कि मैं भले ही

अपनी जुए की लत से कितना भी संघर्ष कर लूँ, पर आखिरकार मैं हार मानकर इसके सामने नतमस्तक हो जाऊँगी।’

इस बार एंजी अपने साथ जो थोड़े से पैसे लेकर कैसीनो आई थी, वह उसके खाते की आखिरी रकम थी। उसने हर दाँव पर 400 डॉलर्स लगाने शुरू किए और हर बार दो-दो दाँव लगाए। वह खुद को समझा रही थी कि अगर आज उसने 10 हज़ार डॉलर्स जितनी छोटी सी रकम भी जीत ली, तो वह आगे जुआ नहीं खेलेगी और उन पैसों से अपने बच्चों के लिए कोई अच्छा सा उपहार खरीदेगी। कुछ देर के लिए एंजी का पति भी उसके साथ कैसीनो में जुए की टेबल पर बैठा, पर आधी रात होने के बाद वह अपने सुईट में सोने चला गया। रात के करीब दो बजे तक एंजी वे सारे पैसे हार चुकी थी, जो वह अपने साथ लेकर आई थी। हर्राज के कर्मचारी ने उससे एक वचन-पत्र हस्ताक्षर करवाए और उसे जुआ खेलने के लिए कुछ पैसे उधार दे दिए। उस रात उसने अलग-अलग वचन-पत्रों पर हस्ताक्षर करके कुल छह बार पैसे उधार लिए। सुबह होते-होते वह कैसीनो से 1 लाख 25 हजार डॉलर्स का कर्ज ले चुकी थी।

सुबह के करीब छह बजे भाग्य ने उसका साथ देना शुरू किया और वह जीतने लगी। उसका खेल देखकर उसकी टेबल के चारों ओर कई लोग इकट्ठा हो गए। उसने फटाफट हिसाब लगाया। वह अब भी इतने पैसे नहीं जीती थी कि आज रात भर में लिया 1 लाख 25 हजार डॉलर्स का कर्ज चुका सके। उसे एहसास हुआ कि अगर वह कुछ देर और इसी तरह समझदारी से खेलती रही, तो टेबल पर बैठे अन्य सभी जुआरियों से ज़्यादा रकम जीत सकती है। वह लगातार पाँच बार जीती। अब उसे कैसीनो का कर्ज चुकाने के लिए सिर्फ 20 हज़ार डॉलर्स और जीतने थे, पर भाग्य ने एक बार फिर पलटा खाया। वह अगला दाँव हार गई। इसके बाद एक-एक करके वह सारे दाँव हार गई और सुबह दस बजते-बजते उसने जितनी भी रकम जीती थी, वह सब हार गई। उसने कैसीनो से और पैसे उधार माँगे, पर इस बार उन्होंने उधार देने से साफ इंकार कर दिया।

एंजी बैचमैन मन में घबराहट लिए जुए की टेबल से उठी और अपने सुईट की ओर चल पड़ी। उसे लग रहा था, मानो उसके पैरों तले जमीन खिसक गई हो। उसने सहारे के लिए अपना हाथ दीवार पर टिका दिया ताकि अगर वह चक्कर आकर गिरने लगे, तो खुद को सँभाल सके। जब वह कमरे में पहुँची, तो उसका पति पहले से ही उसका इंतजार कर रहा था।

‘सब खत्म हो गया,’ एंजी ने अपने पति से कहा।

‘कोई बात नहीं। तुम पहली बार नहीं हारी हो। जाकर नहा लो और कुछ देर आराम करो।’

‘तुम समझ नहीं रहे हो। सब कुछ खत्म हो गया। कुछ भी नहीं बचा,’ एंजी ने अपने शब्दों पर जोर देते हुए कहा।

‘मतलब? तुम कहना क्या चाहती हो?’

‘मैं जितने पैसे लाई थी, सब हार गई।’

‘कोई बात नहीं। कम से कम हमारे पास अपना घर तो है,’ उसके पति ने कहा।

एंजी ने अपने पति को यह नहीं बताया था कि वह कुछ महीनों पहले घर गिरवी रखकर कर्ज ले चुकी है और वे सारे पैसे वह पहले ही हार चुकी है।

4

ब्रायन थॉमस ने अपनी पत्नी की हत्या कर दी। एंजी बैचमैन ने अपनी विरासत में मिली संपत्ति को जुए में उड़ा दिया। इन दोनों के मामले में समाज को किस हद तक जिम्मेदार मानना चाहिए? क्या समाज को इन दोनों मामलों को अलग-अलग नज़रिए से देखना चाहिए?

ब्रायन थॉमस के वकील का तर्क था कि उसका मुवक्किल अपनी पत्नी की हत्या का दोषी इसलिए नहीं है क्योंकि उसने जो भी किया, अपने होशो-हवास में नहीं किया। उसने अपनी पत्नी की हत्या की नहीं बल्कि उसके हाथों हत्या हो गई और उसकी इस प्रतिक्रिया के पीछे उसका यह भ्रम था कि कोई चोर अंदर घुस आया है। पत्नी की हत्या उसका निजी चुनाव नहीं था। इसीलिए ब्रायन थॉमस को हत्यारा नहीं ठहराया जा सकता। अब अगर इसी तर्क को एंजी बैचमैन के मामले में लागू करके देखें - रेज़ा हबीब के शोध अनुसार, एंजी बैचमैन की हरकतों के पीछे उसकी सशक्त क्रेविंग (तृष्णा) जिम्मेदार थी। जब वह पहली बार कैसीनो गई थी, तो यह उसका अपना चुनाव था, इसके बाद अगले कुछ सप्ताहों तक और फिर अगले कुछ महीनों तक नियमित रूप से कैसीनो जाना भी उसका अपना चुनाव था, पर सालों बाद जब वह एक रात में ढाई लाख डॉलर्स हारी, उसके ठीक पहले वह अपनी इस लत से संघर्ष करने की कोशिश कर रही थी और इससे पीछा छुड़ाने के लिए एक ऐसे राज्य में जाकर बस गई थी, जहाँ जुआ खेलना कानूनी रूप से वैध नहीं था। ढाई लाख डॉलर्स की रकम हारते समय वह जो भी निर्णय ले रही थी, वे उसके काबू में नहीं थे। हबीब कहती हैं, ‘ऐतिहासिक रूप से तंत्रिका विज्ञान के क्षेत्र में कहा जाता है कि मस्तिष्क क्षति से ग्रस्त लोग कुछ हद तक अपनी मुक्त इच्छा भी खो देते हैं। पर जब कोई जुए का लती व्यक्ति कैसीनो देखता है, तो उसे जुए के अपने पिछले अनुभव जैसा ही महसूस होता है। फिर वह जो भी करता है, वह उसका अपना चुनाव नहीं होता।’

ब्रायन थॉमस के वकील ने अदालत में ऐसी दलीलें दी कि हर किसी ने यह मान लिया कि उसके मुवक्किल से जो हुआ, वह गलती से हुआ और वह जीवनभर अपराधबोध से ग्रस्त रहेगा। एंजी का मामला भी कुछ अलग नहीं था। वह भी अपने किए पर जीवनभर पछताती रहेगी। उसने मुझे बताया, ‘मैंने जो भी किया, मैं उसके लिए बेहद शर्मिंदा हूँ। मैं खुद को कभी माफ नहीं कर सकूँगी। मैंने सभी को निराश किया है और मैं जानती हूँ कि मैं

चाहे जो कर लूँ, पर मैं जीवनभर इसकी भरपाई नहीं कर पाऊँगी।'

इसके बावजूद इन दोनों मामलों में एक महत्वपूर्ण फर्क है कि ब्रायन थॉमस ने एक निर्दोष इंसान की जान ली थी।

ब्रायन थॉमस ने जो किया था, वह सबसे बड़ी गलती थी। जबकि एंजी बैचमैन ने तो सिर्फ पैसे गँवाए थे। एंजी के मामले में सिर्फ वह, उसका परिवार और 27 बिलियन डॉलरवाली वह कंपनी शिकार हुई थी, जिसने उसे 1 लाख 25 हज़ार डॉलर कर्ज दिया था।

ब्रायन थॉमस को समाज ने आज़ाद कर दिया पर एंजी बैचमैन को उसके कर्मों का दोषी करार दे दिया गया।

एंजी बैचमैन अपना सब कुछ गँवा चुकी थी। इसके दस महीने बाद हर्राज ने उसके बैंक से अपना पैसा वसूलने की कोशिश की। कर्ज लेते समय एंजी ने जिन वचन-पत्रों पर हस्ताक्षर किए थे, वे बैंक में बाउंस हो गए। जिसके कारण हर्राज ने एंजी बैचमैन के खिलाफ मुकदमा दायर करके न सिर्फ उससे कर्ज चुकाने की माँग की बल्कि उस पर 3 लाख 75 हज़ार डॉलर्स का जुर्माना भी ठोंक दिया। यह जुर्माना अपराध करने पर नागरिक दंड के रूप में लगाया जाता है। एंजी ने दावा किया कि कैसीनो और उसकी मालिकाना कंपनी हर्राज ने उसे लगातार कर्ज दिया, महँगे होटलों में मुफ्त ठहराया, मुफ्त हवाई यात्रा करवाईं और महँगी शराब उपलब्ध कराई क्योंकि कंपनी जानबूझकर उसे अपना शिकार बना रही थी और उन्हें अच्छी तरह पता था कि वह जुए की लत से संघर्ष कर रही है और उसकी आदतें उसके नियंत्रण में नहीं हैं। उसका मामला सीधे राज्य के सुप्रीम कोर्ट में पहुँच गया। एंजी बैचमैन के वकील ने अदालत में ठीक वही दलीलें दीं, जो ब्रायन थॉमस के वकील ने दी थीं। उसने कहा कि एंजी को दोषी नहीं ठहराया जाना चाहिए क्योंकि हर्राज ने जानबूझकर उसके सामने ऐसे प्रलोभन रखे, जिन्हें वह स्वचालित ढंग से स्वीकार करती रही क्योंकि उसके अपने निर्णय उसके काबू में नहीं थे। जब वह कैसीनों का प्रलोभन स्वीकार करके कैसीनों में कदम रखती, तो उसकी आदतें उस पर हावी हो जातीं और फिर उसके लिए खुद को नियंत्रण में रखना नामुमकिन हो जाता।

पर समाज के प्रतिनिधि बनकर बैठे जज ने इस दलील को स्वीकार नहीं किया और एंजी बैचमैन को दोषी करार दे दिया। अदालत ने अपने फैसले में लिखा, 'ऐसा कोई कानून नहीं है, जो किसी कैसीनो को जुए के लती लोगों से संपर्क करने या उन्हें लुभाने से रोकता हो।' जस्टिस रॉबर्ट रकर ने अपने फैसले में आगे लिखा, 'राज्य की ओर से एक 'स्वैच्छिक बहिष्कार कार्यक्रम' भी चलाया जाता है, जिसकी सूची में अपना नाम लिखवाकर कोई भी व्यक्ति कैसीनो में जुआ खेलने से स्वयं को बहिष्कृत करवा सकता है। इस कार्यक्रम का अस्तित्व यह इशारा करता है कि विधायिका जुए के लती लोगों को इस बात की निजी जिम्मेदारी उठाने को कहती है कि वे स्वयं को जुए की लत से दूर रखें।'

ब्रायन थॉमस और एंजी बैचमैन के मामलों का परिणाम एक-दूसरे से बिलकुल अलग

था, जो शायद न्याय संगत भी है। क्योंकि अपने हाथों सब कुछ लुटा देनेवाली गृहणी के बजाय, एक ऐसे व्यक्ति के साथ सहानुभूति रखना कहीं ज़्यादा आसान होता है, जिसने अपनी पत्नी को खो दिया हो।

पर ऐसा क्यों है कि पत्नी को खोनेवाले व्यक्ति को हालात का शिकार मान लिया जाता है, जबकि एक दिवालिया जुआरी से किसी को सहानुभूति नहीं होती? यह मान्यता क्यों है कि कुछ आदतों को नियंत्रण में रखना आसान होता है, जबकि कुछ आदतें ऐसी होती हैं, जिन पर हमारा कोई वश नहीं होता?

इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण यह सवाल है कि क्या दो अलग-अलग आदतों के बीच फर्क करना सही है?

निकोमाचियन एथिक्स में अरस्तू लिखते हैं, 'कुछ विचारकों का मानना है कि लोगों का अच्छा या बुरा होना प्राकृतिक होता है। जबकि कुछ विचारक मानते हैं कि लोगों को अच्छा या बुरा बनाने के पीछे उनकी आदतें जिम्मेदार होती हैं। वहीं कुछ विचार ऐसे भी हैं, जो मानते हैं कि लोगों को निर्देषों के अनुसार अच्छा या बुरा बनाया जा सकता है।' अरस्तू के लिए आदतें ही सब कुछ थीं। उनक कहना था कि हम बिना सोच-विचार किए जो कुछ भी करते हैं, वही हमारी असलियत होती है। अरस्तू के अनुसार, 'जिस तरह बीज को पोषण देने के लिए पहले जमीन को तैयार करना ज़रूरी होता है, उसी तरह अपने शागिर्दों के मस्तिष्क को भी आदतों द्वारा तैयार करना पड़ता है ताकि वे सही चीज़ों को पसंद और गलत चीज़ों को नापसंद करें।'

आदतें जितनी सहज नज़र आती हैं, उतनी ही सहज होती भी हैं। अपनी इस किताब में भी मैंने कई जगह यह दर्शाया है कि भले ही आदतों ने आपके मस्तिष्क में अपनी जड़ें जमा ली हों, पर इसके बावजूद आदतें आपकी नियति नहीं हैं। हम स्वयं अपनी आदतों का चुनाव कर सकते हैं, बस हमें इसका तरीका सीखना होता है। तंत्रिका विज्ञानियों द्वारा एमेन्सिया के मरीजों के शोध से लेकर, संगठनात्मक विशेषज्ञों द्वारा कंपनियों का कायापलट करने तक, हमें आदतों के बारे में अब तक जो भी पता चला सका है, उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि किसी भी आदत को बदलना संभव है। बस इसके लिए आपको यह समझना होगा कि वे कैसे संचालित होती हैं।

हमारे दिन-प्रतिदिन के जीवन को हमारी हज़ारों आदतें निरंतर प्रभावित करती रहती हैं। आदतों से ही तय होता है कि हम हर रोज सुबह कैसे तैयार होंगे, अपने बच्चों से कैसे बातचीत करेंगे और रात में कैसे सोएँगे। आदतें ही यह निश्चित करती हैं कि हम कैसे काम करेंगे, कब आराम करेंगे, क्या खाएँगे, क्या पहनेंगे और काम निपटाने के बाद कसरत करेंगे या फिर बीयर पीएँगे। हर आदत का अपना एक अलग इशारा और एक अलग इनाम होता है। कुछ आदतें बहुत सरल होती हैं और कुछ बहुत जटिल, आदतें भावनात्मक आवेगों से सक्रिय होकर आपको तंत्रिका संबंधी छोटे-छोटे पुरस्कार देती रहती हैं, पर भले ही कोई आदत कितनी भी जटिल हो, उसे बदलना संभव है। आदतों में

बदलाव लाकर शराब के भारी लती लोगों से शराब छुड़वाई जा सकती है, सबसे बदहाल कंपनियों को भी सफल बनाया जा सकता है और हाईस्कूल में पढ़ाई छोड़नेवाला भी एक सफल प्रबंधक बन सकता है।

हालाँकि किसी भी आदत को बदलने के लिए ज़रूरी है कि पहले आप उसे बदलने का निर्णय लें। किसी भी आदत को बदलने और उसे सक्रिय करनेवाले उन इशारों एवं इनामों का पता लगाने के लिए आपको सचेत रूप से मेहतन करनी होगी। फिर आपको उनका विकल्प ढूँढ़ने का प्रयास भी करना होगा। आपको याद रखना होगा कि आपका सारा नियंत्रण आपके ही पास है। इस नियंत्रण का सही इस्तेमाल करने लिए आपको स्वयं सचेत रहना होगा। मेरी इस किताब का हर अध्याय नियंत्रण के अलग-अलग पहलुओं का ही चित्रण करता है।

भले ही एंजी बैचमैन और ब्रायन थॉमस ने अपने बचाव में एक जैसे तर्क दिए हों कि उन्होंने जो किया, वह उनकी आदतों का परिणाम था और अपने व्यवहार पर उनका कोई नियंत्रण नहीं था। क्योंकि उनका वह व्यवहार स्वचालित था - इसके बावजूद दोनों मामलों में अलग-अलग निर्णय सुनाया गया, जो न्यायसंगत ही लगता है क्योंकि एक तरह से देखा जाए, तो ये दोनों मामले एक-दूसरे से अलग हैं। क्योंकि ब्रायन थॉमस को इस बात का कोई अंदाजा नहीं था कि अपनी नींद में चलने और घबराने की आदत के कारण वह एक दिन किसी की हत्या कर देगा। इसलिए यह सवाल ही नहीं उठता कि उसे किसी भी प्रकार की सावधानी बरतनी चाहिए थी। जबकि एंजी बैचमैन का मामला अलग था। एंजी अपनी आदतों से अच्छी तरह परिचित थी और जब आपको पता होता है कि आपके अंदर कोई मुसीबत खड़ी करनेवाली आदत है, तो यह आपकी जिम्मेदारी है कि आप उस आदत को बदलें। अगर एंजी ने थोड़ी और कोशिश की होती, तो शायद वह अपनी जुए की लत से छुटकारा पाने में कामयाब हो जाती। दुनिया में ऐसे लोगों की कोई कमी नहीं हैं, जिन्होंने अपनी लत से छुटकारा पाया है, भले ही उनकी लत कितनी भी पुरानी रही हो।

एक तरह से यही इस किताब का मुख्य बिंदु भी है। शायद नींद में चलनेवाला एक हत्यारा यह तर्क दे सकता है कि वह अपनी आदत से वाकिफ नहीं था और इसीलिए उसे इसका दोषी नहीं ठहराया जा सकता। पर अन्य लोगों के जीवन में मौजूद बाकी सारे पैटर्न्स - जैसे हम कैसे खाते और सोते हैं, कैसे अपने बच्चों से बात करते हैं, कैसे बिना सोचे-समझे अपना समय और पैसा खर्च करते हैं और कैसे बेवजह किसी चीज़ पर ध्यान केंद्रित कर लेते हैं - ऐसी आदतें हैं, जिनके बारे में वे पहले से जानते हैं। एक बार जब आप समझ जाते हैं कि आदतों को बदला जा सकता है तो आपके पास यह आज़ादी और जिम्मेदारी भी होती है कि आप उन्हें बदलकर नई और बेहतर आदतें विकसित कर लें। एक बार जब आप यह समझ जाते हैं कि आदतों को फिर से विकसित किया जा सकता हैं, तो आदतों की शक्ति को समझना आसान हो जाता है और इसके बाद आपके पास सिर्फ एक ही विकल्प बचता है, उन आदतों पर काम करना।

***

विलियम जेम्स ने प्रस्तावना में हमें बताया कि 'हमारा पूरा जीवन कुछ और नहीं बल्कि व्यावहारिक, भावनात्मक और बौद्धिक आदतों का एक व्यवस्थित समूह है ताकि हम दु:ख और आनंद का अनुभव कर सकें। ये आदतें ही हमें हमारी नियति तक ले जाती हैं, भले ही वह नियति कुछ भी हो।'

सन 1910 में विलियम जेम्स की मृत्यु हो गई थी। वे एक प्रतिष्ठित परिवार से थे। उनके पिता पेशे से एक बड़े थियोलॉजिस्ट (धर्मविज्ञानी) थे और काफी अमीर व्यक्ति थे। उनके भाई हेनरी भी एक बेहद सफल लेखक थे, जिनके लिखे उपन्यासों को आज भी लोग बड़े चाव से पढ़ते हैं। पर विलियम अपने परिवार के एक बेढब और नाकाम व्यक्ति थे। वे बचपन से ही ज़्यादातर बीमार रहा करते थे। करीब तीस साल की उम्र में भी उन्होंने अपने जीवन में अब तक कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं किया था। पहले वे एक पेंटर बनना चाहते थे। फिर उन्होंने एक मेडिकल स्कूल में दाखिला ले लिया। कुछ दिनों बाद उन्होंने उसे भी छोड़ दिया ताकि अमेजॉन नदी के जलयात्रा-अभियान में शामिल हो सकें। फिर उन्होंने उस अभियान को भी छोड़ दिया। अपनी डायरी में उन्होंने खुद को इस बात के लिए बहुत कोसा है कि वे किसी भी चीज़ में अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाते। इसके अलावा उन्हें यह भरोसा भी नहीं था कि वे अपने अंदर सुधार ला सकते हैं। जब वे मेडिकल स्कूल में पढ़ते थे, तो एक बार वे पागलों के अस्पताल में गए, जहाँ उन्होंने एक मानसिक रोगी को दीवार पर सिर मार-मारकर खुद को लहूलुहान करते देखा था। डॉक्टर ने उन्हें बताया कि यह मानसिक रोगी दरअसल हेलुसिनेशंस (मतिभ्रम) से पीड़ित है। पर विलियम डॉक्टर को यह नहीं बता सके कि वे खुद भी एक मानसिक रोगी जैसा महसूस करते हैं।

सन 1870 में अड़तीस साल की उम्र में विलियम ने अपनी डायरी में लिखा था, 'आज मैं अपने जीवन में बहुत नीचे गिर चुका हूँ और आखिरकार मुझे एहसास हुआ कि अब तक जीवन में मेरे चुनाव जैसे भी रहे हों, पर अब मुझे आँखें खोलकर उनका सामना करना होगा। क्या अब मुझे नैतिक कार्य (Moral Bussiness) करने की फिक्र करना बंद कर देना चाहिए क्योंकि वह मेरा स्वाभाविक गुण नहीं है?'

दूसरे शब्दों में कहें, तो क्या आत्महत्या एक बेहतर विकल्प है?

इसके दो महीने बाद उन्होंने तय किया कि कोई भी ऐसा-वैसा कदम उठाने से पहले वे सालभर तक एक प्रयोग करेंगे। उन्होंने निर्णय लिया कि वे 12 महीनों तक इस बात पर विश्वास करेंगे कि उनके अंदर आत्म-नियंत्रण पाने की क्षमता है और उनकी नियति भी उनका साथ दे रही है। उन्हें विश्वास था कि वे खुद को बेहतर बना सकते हैं और उनके अंदर बदलने की मुक्त इच्छा है। हालाँकि इन बातों पर विश्वास करने के लिए उनके पास कोई ठोस कारण नहीं था। इसके बावजूद वे विश्वास कर रहे थे कि उनके जीवन में भी बदलाव लाना संभव है। उस समय उन्होंने अपनी डायरी में लिखा था, 'मुझे लगता है कि

कल तक मेरा जीवन संकट ग्रस्त था।' बदलाव लाने की अपनी क्षमता के बारे में उन्होंने लिखा था, 'कम से कम अगले एक साल तक मेरा यह अनुमान है कि यह मेरा भ्रम नहीं है। अपनी मुक्त इच्छा के साथ मेरी पहली जिम्मेदारी है, इस मुक्त इच्छा पर विश्वास करना।'

अगले एक साल में उन्होंने हर रोज इसका अभ्यास किया। उन्होंने अपनी डायरी लिखने का तरीका भी कुछ ऐसा कर लिया, मानो स्वयं पर और अपने चुनावों पर उनका पूरा नियंत्रण हो। कुछ दिनों में वे हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में पढ़ाने लगे। जल्द ही उन्होंने शादी भी कर ली। फिर वे मेटाफिजिकल क्लब नामक एक समूह में शामिल हो गए, जहाँ उन्होंने ओलिवर वेंडल होम्स जूनियर के साथ समय बिताना शुरू कर दिया, जो बाद में सुप्रीम कोर्ट के जस्टिस बने। इसके अलावा उन्होंने इसी समूह में चार्ल्स सैंडर्स पियर्स के साथ भी काफी समय बिताया, जो सेमिऑटिक्स (लाक्षणिकता) के अध्ययन में अग्रसर थे। डायरी में स्वयं को बदलने की बात लिखने के दो साल बाद विलियम ने दार्शनिक चार्ल्स रेनोवियन को एक पत्र भेजा, जिन्होंने विस्तार से मुक्त इच्छा की व्याख्या की है। विलियम ने अपने पत्र में लिखा, 'आपके निबंध पढ़कर मैं आपके प्रति कृतज्ञता और सराहना से भर गया। मैंने अपने जीवन में आज़ादी की इतनी स्पष्ट, सरल और तर्कशील संकल्पना पहले कभी नहीं पढ़ी थी। इसके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ... आपके बताए दर्शन से मेरी नैतिकता को नया जीवन मिला है और मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि यह कोई साधारण बात नहीं है।'

बाद में उन्होंने ऐसा विचार दिया, जो काफी प्रसिद्ध हुआ कि **'बदलाव में विश्वास करने के लिए सबसे ज़रूरी है, विश्वास करने की इच्छा और इस विश्वास को पैदा करने का सबसे महत्वपूर्ण तरीका है आदत।'** उन्होंने इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया कि 'जब हम कोई काम पहली बार करते हैं, तो वह हमें काफी मुश्किल लगता है, लेकिन फिर धीरे-धीरे वह हमारे लिए आसान हो जाता है। साथ ही जब हम उस काम का अच्छा अभ्यास कर लेते हैं, तो फिर हम उसे यंत्रवत ढंग से या बिना सचेत हुए भी आसानी से कर लेते हैं। ऐसा हम अपनी आदतों के कारण ही कर पाते हैं।' एक बार जब हम यह तय कर लेते हैं कि हमें क्या बनना है, तो फिर हम वही बनते हैं, जो बनने का अभ्यास करते हैं। ठीक वैसे ही जैसे किसी कागज़ या कोट को जिस प्रकार एक बार मोड़ दिया जाता है, वह हमेशा उसी तरह मुड़ने लगता है।

अगर आप इस बात पर विश्वास करते हैं कि आप स्वयं को बदल सकते हैं, तो आप इसे अपनी आदत बना लेते हैं और फिर बदलाव संभव हो जाता है। आदतों की असली शक्ति यह समझ प्राप्त करना है कि आपकी आदतें आपका अपना चुनाव होती हैं। एक बार जब आप चुनाव कर लेते हैं और फिर जब यह चुनाव स्वचालित हो जाता है, तो यह न सिर्फ संभव हो जाता है बल्कि आवश्यक भी लगने लगता है। विलियम लिखते हैं कि 'यही वह चीज़ है, जो हमें हमारी नियति की ओर ले जाती है, भले ही वह नियति कुछ भी हो।'

हम स्वयं को और अपने चारों ओर के वातावरण को आदतन जिस तरह देखते हैं, उसी

से हमारा संसार बनता है। लेखक डेविड फॉस्टर वॉलेस ने सन 2005 में स्नातक की एक कक्षा में छात्रों को बताया, 'दो युवा मछलियाँ तैरती हुई चली जा रही थीं, तभी उनकी नज़र सामने से तैरती चली आ रही एक बुजुर्ग मछली पर पड़ी। उसने उन युवा मछलियों के पास से गुज़रते हुए कहा, 'नमस्कार बच्चों! पानी के क्या हाल हैं?' वे दोनों युवा मछलियाँ बिना रुके तैरती रहीं और फिर उनमें से एक ने दूसरी मछली की ओर देखकर हैरानी से पूछा, 'ये पानी क्या बला है?'

यहाँ पानी कुछ और नहीं बल्कि एक आदत है, बिना सोच-विचार के यूँ ही किया गया चुनाव है और वे छोटे-मोटे अदृश्य निर्णय हैं, जो हम हर रोज लेते हैं। अगर हम इन निर्णयों पर सिर्फ एक नज़र डाल दें, तो वे हमें दिखाई देने लगते हैं।

विलियम जेम्स ने जीवनभर आदतों के बारे में लिखा और बताया कि खुश रहने और सफल होने में आदतें मुख्य भूमिका निभाती हैं। अपनी सबसे महान कृति 'द प्रिंसिपल ऑफ साइकोलॉजी' में उन्होंने इस विषय पर एक पूरा अध्याय लिखा है। उनका कहना था कि 'आदतें कैसे काम करती हैं, यह समझाने के लिए पानी की एनालॉजी सबसे उपयुक्त है। पानी अपना रास्ता खुद-ब-खुद बना लेता है और समय के साथ-साथ उसके वेग से वह रास्ता और चौड़ा व गहरा होता जाता है। जब उसका बहाव रुकता है, तो वह उसी पिछले रास्ते पर फिर से बहना शुरू कर देता है।'

अब आप जानते हैं कि आपको यह रास्ता कैसे बनाना है और आपके पास इस रास्ते पर चलने की भरपूर क्षमता है।

***

यह पुस्तक पढ़ने बाद आप अपना अभिप्राय इस पते पर भेज सकते है:

वॉव पुब्लिशिंग्स प्रा. लि., पुणे

२५२, नारायण पेठ, विजय सिनेमा के करीब, लक्ष्मी रोड, पुणे ३०

1 जुए के खेल में कैसीनो को हराने की बात पर विश्वास करना किसी को भी तर्क से परे लग सकता है। हालाँकि नियमित रूप से जुआ खेलनेवाले जानते हैं कि लगातार जीतना संभव है, खासकर ब्लैकजैक जैसे खेल में। उदाहरण के लिए पेन्सिलवेनिया स्थित बेनसलेम के डॉन जॉनसन ने ब्लैकजैक में ही 2010 में छह महीने की अवधि में कथित रूप से 15.1 मिलियन डॉलर्स जीते थे। इसके बावजूद जुए के खेल में एक तरह से हमेशा कैसीनो ही जीतता है क्योंकि अधिकतर जुआरी जिस तरह दाँव लगाते हैं, उससे उनके जीतने की संभावना बढ़ नहीं पाती और अधिकतर लोगों के पास इतना पैसा भी नहीं होता कि वे दो-चार दाँव हारने के बाद भी खेल जारी रख सकें। अगर कोई जुआरी इस खेल के उन जटिल फॉर्मूलों और अंतरों को याद कर ले, जो उन्हें दाँव खेलने का मार्गदर्शन देता है, तो समय के साथ वह इसमें लगातार जीत भी हासिल कर सकता है। हालाँकि अधिकतर खिलाड़ियों में न तो कैसीनो को मात देने लायक अनुशासन होता है और न ही उनमें गणित का हुनर होता है।

2 हर्राज एंटरटेनमेंट - जिसे अब सीज़र एंटरटेनमेंट के नाम से जाना जाता है - ने बैचमैन के कुछ आरोपों को निराधार बताया है। उनकी टिप्पणियों को नोट्स में देखा जा सकता है।

3 -1990 के दशक के आखिरी दौर में स्लॉट मशीन का निर्माण करनेवाली दुनिया की सबसे बड़ी कंपनियों में से एक ने नई स्लॉट मशीनों के निर्माण में मदद के लिए एक भूतपूर्व वीडियो गेम एग्जिक्यूटिव को नौकरी पर रखा। अब लगभग हर स्लॉट में कई ट्विस्ट होते हैं, जैसे फ्री स्पिन्स और आइकॉन्स के एक बराबरी पर आने पर बजनेवाली ध्वनियाँ। इसके अलावा इनमें जुआरी को कुछ छोटे-छोटे भुगतान भी मिलते रहते हैं ताकि उसे यह लगता रहे कि वह जीत रहा है। जबकि वास्तव में इसी के चलते जुआरी जितना पैसा जीत रहे होते हैं, उससे कहीं ज़्यादा पैसा जुए में लगा रहे होते हैं। सन 2004 में कनेक्टिकट स्कूल ऑफ मेडिसिन में व्यसन से जुड़ी बीमारियों के शोधकर्ता ने न्यूयॉर्क टाइम्स के रिपोर्टर से कहा था, ‘ये मशीनें इंसान के दिमाग को बेहद खूबसूरत ढंग से हेरफेर में फँसा देती हैं। जुए का और कोई भी प्रकार इंसानी दिमाग के साथ इतना हेरफेर नहीं करता, जितना ये मशीनें करती हैं।’

आभार

मैं अपने जीवन में बहुत भाग्यशाली रहा, जो मुझे न सिर्फ स्वयं से ज़्यादा प्रतिभाशाली लोगों के साथ काम करने का मौका मिला बल्कि उनका ज्ञान और शालीनता उधार लेकर उन्हें दूसरों के सामने अपने गुणों की तरह प्रस्तुत करने का मौका भी मिला।

यही कारण है कि आज यह किताब आपके सामने है और इसीलिए आज मैं उन सभी लोगों को धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होंने मुझे सहयोग दिया।

एंडी वार्ड ने रैंडम हाउस प्रकाशन में बतौर संपादक काम शुरू करने से पहले ही इस किताब की जिम्मेदारी अपने कंधों पर ले ली थी। उस समय मैं नहीं जानता था कि वे इतने सहृदय, उदार और प्रतिभाशाली संपादक हैं। हाँ, मैंने अपने कुछ दोस्तों से ज़रूर यह सुन रखा था कि एंडी आपके द्वारा लिखी गई चीज़ों को किसी और स्तर पर ले जाते हैं और इतनी शालीनता से आपका साथ देते हैं कि आपको पता भी नहीं चलता कि आपको किसी की मदद लेनी पड़ रही है। पर चूँकि यह सब कहते समय मेरे दोस्त शराब के नशे में थे इसलिए मुझे लगा कि वे बेवजह ही एंडी की इतनी बढ़ाई कर रहे हैं। लेकिन मेरे प्रिय पाठकों, मेरे दोस्तों ने एंडी के बारे में जो भी कहा, वह बिलकुल सच था। एंडी की विनम्रता, धैर्य और सबसे बढ़कर एक अच्छा दोस्त होने का उनका गुण उनके आसपास के हर व्यक्ति को एक बेहतर इंसान बनने के लिए प्रेरित करता है। यह किताब जितनी मेरी है, उतनी ही एंडी की भी है और मैं इस बात के लिए शुक्रगुज़ार हूँ कि मुझे उन्हें जानने, उनके साथ काम करने और उनसे सीखने का मौका मिला।

इसके साथ-साथ मैं उस ईश्वर को भी धन्यवाद देना चाहता हूँ, जो मुझे रैंडम हाउस तक लेकर आया ताकि यहाँ मैं सुज़ान कैमिल के मार्गदर्शन में, जीना संट्रेलो के नेतृत्व में और अविदा बशिर्राद, टॉम पेरी, सन्यू डिल्लन, सैली मार्विन, बारबरा फिलिऑन, मारिया ब्रेकेल, एरिका ग्रेबर और हमेशा धीरज रखनेवाली काएला मायर्स की महत्वपूर्ण सलाह पर काम कर सकूँ।

ठीक इसी तरह यह भी भाग्य का खेल ही था, जो मुझे स्कॉट मोयर्स, एन्ड्रयू वायली और जेम्स पुलेन के साथ वायली एजेंसी में काम करने का मौका मिला। जैसा कि बहुत से लेखक जानते हैं, स्कॉट की सलाह और दोस्ती जितनी अमूल्य है, उतनी ही उदार भी है। यह पाठकों का सौभाग्य ही है, जो स्कॉट एक बार फिर संपादकीय दुनिया में लौट आए हैं। एन्ड्रयू वायली हमेशा अपने लेखकों का जीवन आसान बनाने में लगे रहते हैं, जिसके लिए मैं उनका बहुत आभारी हूँ। वहीं जेम्स पुलेन ने यह समझने में मेरी मदद की कि मैं उस भाषाशैली में कैसे लिखूँ, जिससे मैं पूरी तरह अंजान हूँ।

इसके साथ ही मैं 'द न्यूयॉर्क टाइम्स' का भी बहुत आभारी हूँ। मैं द टाइम्स के बिजनेस संपादक लैरी इंग्रैसिया को तहेदिल से धन्यवाद देना चाहूँगा, जिनकी दोस्ती, सलाह और ज्ञान की मदद से ही मेरे लिए यह किताब लिखना संभव हो सका। लैरी की मदद से ही मैं ढेर सारे अन्य प्रतिभाशाली रिपोर्टरों के साथ एक ऐसे माहौल में पत्रकारिता कर सका, जो उनके बताए उदाहरणों से निरंतर बेहतर होता रहा है। विकी इंग्रैसिया भी मेरे लिए सहयोग का एक अद्भुत स्त्रोत रही हैं। जैसा कि एडम ब्रायंट से परिचित सारे लेखक जानते हैं कि वे एक शानदार वकील और दोस्त हैं और उनके अंदर बहुत सी खूबियाँ हैं। इसके साथ ही मैं भाग्यशाली हूँ कि मुझे बिल केलर, जिल अब्रामसन, डीन बाक्केट और ग्लेन क्रैमोन जैसे शानदार लोगों के साथ काम करने और पत्रकारिता के क्षेत्र में उनके पदचिन्हों पर चलने का मौका मिला।

इसके अतिरिक्त और भी कई लोग हैं, जिन्हें मैं धन्यवाद देना चाहूँगा। मैं डीन मर्फी, विनी ओ'केली, जेनी एंडरसन, रिक बर्क, एंड्रयू रॉस सोर्किन, डेविड लियोनहार्ट, वॉल्ट बोगडाइनिच, डेविड गिलन, एडुआर्डो पोर्टर, जोड़ी कैंटर, वेरा टाइटुनिक और एमी ओ'लेरी, पीटर लैटमैन, डेविड सेगल, क्रिस्टीन हाउनी, जेनी शसलर, जो नोसेरा और जिम शेक्टेर (दोनों ने मेरे लिए अध्याय पढ़ने का काम किया), जेफ कैने, माइकल बारबेरो जैसे टाइम्स के अपने सहयोगियों का बहुत ऋणी हूँ, जिन्होंने मेरे साथ बड़ा ही उदार व्यवहार किया।

मैं एलेक्स ब्लमबर्ग, एडम डेविडसन, पाउला सुज़ुचमैन, निवी नॉर्ड, एलेक्स बेरेंसन, नाज़नीन रफसंजानी, ब्रेंडन कोएर्नेर, निकोलस थॉम्पसन, केट केली, सारा एलिसन, केविन बेलर, अमांडा शॉफर, डेनिस पोतामी, जेम्स वायन, नोअन का भी शुक्रगुज़ार हूँ। मैं कोट, ग्रेग नेल्सन, केटलिन पाइक, जोनाथन क्लेन, अमांडा क्लेन, डोनानेल स्टील, स्टेसी स्टील, वेस्ले मॉरिस, एडिर वाल्डमैन, रिच फ्रेंकेल, जेनिफर कौजीन, आरोन बेन्डिकसन, रिचर्ड रेम्पेल, माइक बोर, डेविड लेवेकी, बेथ वाल्टेमनाथ, एल्टन रस उमान, एरिन ब्राउन, जेफ नॉर्टन, राज डी दत्ता, रुबेन सिगाला, डैन कोस्टेलो, पीटर ब्लेक, पीटर गुडमैन, एलिक्स स्पीगल, सुसान डोमिनस, जेनी रोसेनस्ट्रैच, जेसन वुडार्ड, टेलर नोगुएरा और मैथ्यू बर्ड का भी धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होंने मुझे अपना भरपूर समर्थन और मार्गदर्शन दिया। मैं इस पुस्तक के मुखपृष्ठ और अद्भुत आंतरिक ग्राफिक्स तैयार करनेवाले बेहद प्रतिभाशाली एंटोन लूकोनोवेट्स का भी तहेदिल से शुक्रगुज़ार हूँ।

मैं और भी कई लोगों का ऋणी हूँ, जिन्होंने इस किताब की रिपोर्टिंग के लिए अपना बहुमूल्य समय दिया। एसवाय पार्टनर्स के टॉम एन्ड्रयूज के साथ-साथ मैं टोनी डूंगी और डीजे स्नेल, पॉल ओ'नील, वॉरेन बेंस, रिक वारेन, ऐनी क्रुम, पैको अंडरहिल, लैरी स्क्वायर, वोल्फ़राम शुल्त्स, एन ग्रेबिल, टॉड हीथरन, जे स्कॉट टोनिगन, टेलर शाखा, बॉब बोमन, ट्रैविस लीच, हॉवर्ड शुल्त्स, मार्क मुरावेन, एंजेला डकवर्थ, जेन ब्रूनो, रेज़ा हबीब, पैट्रिक मुल्की और टेरी नॉसिंगर को भी धन्यवाद देना चाहूँगा। इसके साथ ही मैं डैक्स प्रॉक्टर, जोश फ्रीडमैन, कोल लूईसन, अलेक्जेंडर प्रोवन और नीला सल्डान्हा

जैसे शोधकर्ताओं और तथ्यों की जाँच-पड़ताल करनेवालों का भी शुक्रगुज़ार हूँ, जिन्होंने मेरा बहुत सहयोग किया।

पत्रकारिता के क्षेत्र में मुझे मेरी पहली नौकरी देनेवाले बॉब सिप्चन का मैं हमेशा आभारी रहूँगा। मुझे खेद है कि मैं अपनी इस किताब की खुशी अपने दो दोस्तों, ब्रायन चिंग और एलके केस के साथ नहीं बाँट पाया, जो समय से पहले ही हम सबको छोड़कर इस दुनिया से चले गए।

आखिरकार मैं सबसे ज़्यादा शुक्रगुज़ार हूँ अपने परिवार का। कैटी डुहिग, जैकी जेन्कुस्की, डेविड डुहिग, टोनी, मार्टारेली, डेनियल डुहिग, एलेक्जेन्ड्रा अल्टर और जेक गोल्डसन जैसे मेरे दोस्तों ने भी मेरा बहुत सहयोग किया। मेरे बेटे ओलिवर और जॉन हैरी मेरे लिए प्रेरणा का स्त्रोत रहे हैं। मेरे माता-पिता जॉन और डोरिस ने मुझे मेरी युवावस्था से ही लिखने के लिए बहुत प्रोत्साहित किया, जबकि मैं इतना शरारती लड़का था, जिसका भविष्य सिर्फ जेल में नज़र आ रहा था।

और निश्चित ही मैं अपनी पत्नी लिज़ को भी तहेदिल से धन्यवाद देना चाहूँगा, जिसके प्रेम, सहयोग, मार्गदर्शन, दोस्ती और ज्ञान के कारण ही मेरे लिए यह किताब लिखना संभव हो सका।

लेखक का परिचय

चार्ल्स डुहिग एक खोजी पत्रकार हैं और द न्यूयार्क टाइम्स में कार्यरत हैं। उन्होंने इस संस्थान के अखबार के साथ-साथ पत्रिका के लिए भी लिखा है। वे गोल्डन अपॉर्चुनिटीज (2007) शीर्षक से प्रकाशित किताब में बतौर लेखक अपना योगदान दे चुके हैं। यह ऐसे लेखों की एक श्रृंखला है, जिसमें बताया गया है कि कैसे कई अलग-अलग कंपनियाँ बुजुर्ग अमेरिकियों का फायदा उठाने की कोशिश कर रही हैं। इसके अलावा उन्होंने द रेकनिंग (2007) और टॉक्सिक वॉटर्स (2009) जैसी किताबों में भी अपना योगदान दिया है। द रेकनिंग आर्थिक संकट के कारणों और परिणामों की विवेचना करती है और टॉक्सिक वॉटर्स अमेरिका में बढ़ते जल-प्रदूषण और नियामक संस्थाओं की लापरवाही पर प्रकाश डालती है।

उन्हें अपने क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए नेशनल एकेडमीज ऑफ साइंसेस, नेशनल जर्नलिजम, जॉर्ज पोल्क, गेराल्ड लोएब जैसे कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। वे सन 2009 के पुलित्जर पुरस्कार के अंतिम दौर में पहुँचने वाली टीम के भी सदस्य रहे हैं। वे द अमेरिकन लाइफ, द डॉ. ओज़ शो, एनपीआर, द न्यूजआवर विथ जिम लेहरर और फ्रंटलाइन में भी अपनी उपस्थिति दर्ज करवा चुके हैं।

चार्ल्स डुहिग हार्वर्ड बिजनेस स्कूल और येल यूनिवर्सिटी से ग्रेजुएट हैं। पत्रकार बनने से पहले वे प्राइवेट इक्विटी के क्षेत्र में काम कर चुके हैं। इसके अलावा वे सैन फ्रांसिस्को में एक दिन के लिए बाइक पर चलनेवाले संदेशवाहक के तौर पर भी काम कर चुके हैं, जो उनके लिए एक खौफनाक दिन था।

उनमें कुछ बुरी आदतें भी हैं, जिनमें सबसे प्रमुख है तले हुए भोजन की आदत। यह आदत उन्हें मिनटों में लग जाती है। वे ब्रुकलिन में अपनी पत्नी के साथ रहते हैं, जो पेशे से एक मरीन बायोलॉजिस्ट हैं। उनके दो बेटे भी हैं, जिनकी आदतों में प्रमुख हैं रोज

सुबह 5:00 बजे जागना, डिनर के समय खाने पर टूट पड़ना और चेहरे पर हमेशा एक मुस्कान रखना।